****

ANURAG SAGAR

(Hindi)

****

अनुक्रम

- भूमिका 21
- अनुसागर के महानुरागी कबीरपंथ के ऐतिहासिक महापुरुष नादवंश प्रतापी पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब 34
- अथ अनुराग सागर प्रारंभ 42
- (ज्ञान जिज्ञासा) मंगलाचरणम् 43
- गुरुदेव पूर्ण हैं 43
- अधिकारी कौन है ? 44
- बिना अनुराग वस्तु पा नहीं सकते 44
- अनुराग के लक्षण विषयक प्रश्न 45
- अनुरागी के दृष्टांत 45
- मृगा का दृष्टांत 45
- पतंग का दृष्टांत 46
- सती का दृष्टांत 46
- तत्वानुरागी के लक्षण 49
- काल से कौन छुड़ा सकता है ? 50
- सद्गुरु क्या करते हैं ? 51
- अविचल देश कौन पहुंच सकता है ? 52
- अधिकारी की दुर्लभता 52
- मृतक किसे कहते हैं ? 53
- मृतक के दृष्टांत 53
- भृंगी का दृष्टांत 55
- भृंगी-भाव की प्राप्ति कैसे होती है ? 56
- हंस कौन है ? 56
- मृतक के और दृष्टांत 58
- पृथ्वी का दृष्टांत 58
- ऊख का दृष्टांत 59
- मृतक-भाव कौन धारण कर सकता है ? 60
- मृतक ही साधु होता है 61
- साधु किसे कहते हैं ? 61
- चक्षु वशीकरण 63
- श्रवण वशीकरण 64
- नासिका एवं जिह्वा वशीकरण 64
- जननेंद्रिय वशीकरण 66
- काम वशीकरण 67
- कामदेव लुटेरा है 67
- कामदेव लुटेरे से बचने का उपाय 68
- अनल पक्षी का दृष्टांत 68
- साधु अनल पक्षी के समान कब होता है ? 70
- अविचल धाम की प्राप्ति किससे होती है ? 71
- नाम ध्यान माहात्म्य 71
- नाम पाने वाले को क्या मिलता है ? 74
- सार शब्द क्या है ? 74
- सार शब्द जपने की विधि 78
- धर्मदास का आनंदोद्गार 79
- धर्मदास जी द्वारा सद्गुरु के प्रति आभार 80
- (सृष्टि-विकास) सृष्टि उत्पत्ति विषयक प्रश्न 80
- सृष्टि के आदि में क्या था ? 83

❑ सृष्टि की उत्पत्ति एवं सत्यपुरुष की रचना 84
❑ सोलह सुत का प्रकट होना 85
❑ निरंजन की तपस्या, मानसरोवर तथा शून्य की प्राप्ति 88
❑ निरंजन का जाना तथा पुन: तपस्या करना 88
❑ सहज का निरंजन के पास जाना 89
❑ निरंजन को सृष्टि-रचना का साज मिलने का वृत्तांत 91
❑ सहज का सत्यलोक को जाना 92
❑ सत्यपुरुष की आज्ञा सहज से 93
❑ सहज का निरंजन के पास जाकर सत्यपुरुष की आज्ञा सुनाना 93
❑ निरंजन का कूर्म के पास साज लेने को जाना 93
❑ फिर से सत्यपुरुष का सहज को निरंजन के पास भेजना और सहज का निरंजन के निकट पहुंचना 97
❑ आद्या (अष्टांगी) की उत्पत्ति 99
❑ सत्यपुरुष का आद्या को मूल बीज देना 99
❑ निरंजन का मानसरोवर में आद्या को पाकर मोहवश हो उसे निगल जाना और सत्यपुरुष का शाप पाना 101
❑ पुरुष का शाप निरंजन प्रति 102
❑ सत्यपुरुष का योगजीत को निरंजन के पास भेजकर उसे मानसरोवर से निकाल देने की आज्ञा देना 103
❑ भवसागर की रचना 108
❑ सिंधु-मंथन और चौदह रत्न-उत्पत्ति-कथा 113
❑ प्रथम बार सिंधु-मंथन 115
❑ द्वितीय बार सिंधु-मंथन 116
❑ तृतीय बार सिंधु-मंथन 117
❑ आद्या को तीनों पुत्रों को सृष्टि रचने की आज्ञा देना और सबका मिलकर पांच खानि की उत्पत्ति करना 118
❑ ब्रह्मा का वेद पढ़कर निराकार का पता लगाना 119
❑ विष्णु का पिता की खोज से लौटकर पिता के चरण तक न पहुंचने का वृत्तांत कहना 124
❑ पिता की खोज में गए ब्रह्मा की कथा 125
❑ ब्रह्मा के लिए आद्या की चिंता 126
❑ गायत्री उत्पत्ति 126
❑ गायत्री का ब्रह्मा की खोज में जाना 127
❑ ब्रह्मा का ध्यान से जागकर गायत्री पर क्रोध करना 128
❑ ब्रह्मा का गायत्री को साक्षी देने को कहना 129
❑ सावित्री (पुहुपावति) उत्पत्ति की कथा 131
❑ ब्रह्मा का गायत्री और सावित्री के साथ माता के पास पहुंचना तथा सबको माता का शाप पाना 132
❑ आद्या की चिंता 134
❑ आद्या का ब्रह्मा को शाप देना 135
❑ आद्या का गायत्री को शाप देना 137
❑ आद्या का सावित्री को शाप देना 137
❑ शाप देने पर आद्या का पश्चाताप और निरंजन से डरना 138
❑ निरंजन का आद्या को शाप 138
❑ विष्णु का गौर से श्याम होने का कारण 139
❑ आद्या का विष्णु को ज्योति का दर्शन कराना 141
❑ आद्या का विष्णु को सर्वप्रधान बनाना 146
❑ आद्या का महेश को वरदान देना 147

- शापित ब्रह्मा का विष्णु के पास जाकर अपना दुख कहना और विष्णु का उसे आश्वासन देना 148
- काल प्रपंच 150
- गायत्री का आद्या को शाप देने का वृत्तांत 152
- जगत-रचना का विशेष वृत्तांत 152
- चौरासी लाख योनियों की गिनती 154
- जिस-जिस खानि में जो-जो तत्व है 156
- सब मनुष्यों का ज्ञान एक समान क्यों नहीं 157
- योनि-प्रभाव मेटने का उपाय 159
- चार खानि के लक्षणों की पारख 161
- अण्डज खानि से मनुष्य-देह में आए जीव की पारख 161
- उष्मज खानि से मनुष्य देह में आए हुए जीव की पारख 163
- स्थावर खानि से मनुष्य-देह में आए हुए जीव की पारख 164
- पिण्डज खानि से मनुष्य-देह में आए हुए जीव की पारख 167
- मनुष्य शरीर से मनुष्य-देह में आने वाले जीव की पारख 168
- चौरासी धार क्यों बनी 171
- मनुष्य के लिए चौरासी बनी है 172
- जीवों के लिए काल का फंदा रचना 175
- सतयुग में तप्त शिला पर कष्ट पाकर जीवों का गुहार करना और कबीर साहेब का सत्यपुरुष की आज्ञा से जाकर उन्हें छुड़ाना 182
- जीवों का स्तुति करना 183
- जहां आशा तहां वासा 184
- गुरु महिमा 188
- शुकदेव जी की कथा 191
- सतयुग में कबीर साहेब का सत्यपुरुष की आज्ञा पाकर जीवों को चेताने चलना, काल-निरंजन से भेंट होना और उससे बातचीत कर आगे बढ़ना 194
- काल का अपने बारह पंथ चलाने की बात ज्ञानी जी से कहना 202
- काल-निरंजन का ज्ञानी जी से जगन्नाथ मंदिर की स्थापना का वरदान मांगना 203
- धर्मराय का ज्ञानी जी को धोखा देकर उनके गुप्त भेद पूछना 205
- ज्ञानी जी (कबीर साहेब) की ब्रह्मा से भेंट 207
- ज्ञानी जी का विष्णु के पास पहुंचना 208
- ज्ञानी जी और शेषनाग की वार्ता 209
- ज्ञानी जी (कबीर साहेब) का संसार में आगमन 210
- राम नाम उत्पत्ति 211
- (3-प्राकट्यम् युगे-युगे) सतयुग में सतसुकृत 213
- कबीर साहेब के पृथ्वी पर आने की कथा 213
- धोंधल राजा का वृत्तांत 213
- खेमसरी का वृत्तांत 214
- खेमसरी को लोक का दर्शन कराना 214
- जीवों को उपदेश करने का फल 214
- सबका मिलकर सतसुकृत जी को विनय करना 217
- त्रेतायुग में मुनींद्र (ज्ञानी जी कबीर साहेब) के पृथ्वी पर आने की कथा 222

❑ विचित्र भाट की कथा लंका में 224
❑ विचित्र भाट की वधु का वृत्तांत 227
❑ मुनींद्र साहेब का रावण के पास जाना 227
❑ विप्र मधुकर की कथा 231
❑ द्वापर युग में करुणामय (ज्ञानी जी कबीर साहेब) के पृथ्वी पर आने की कथा 235
❑ रानी इंद्रमती की कथा 239
❑ रानी इंद्रमती के हंस का सत्यलोक में पहुंचना और सत्यपुरुष एवं करुणामय स्वामी को एक समान रूप में देखकर चकित होना 262
❑ इंद्रमती हंस का अपने पति राजा चंद्रविजय को सत्यलोक में लाने के लिए विनती करना 265
❑ श्वपच सुदर्शन की कथा 271
❑ पाण्डव यज्ञ में भक्त सुदर्शन श्वपच की महिमा 273
❑ कलियुग में कबीर साहेब के पृथ्वी पर आने की कथा 280
❑ जगन्नाथ-मंदिर की स्थापना का वृत्तांत 286
❑ चार गुरु की स्थापना का वृत्तांत 292
❑ राय बंकेजी 292
❑ सहते जी, चतुर्भुज 293
❑ धर्मदास के पिछले जन्मों की कथा 296
❑ श्वपच सुदर्शन के माता-पिता का पहला जन्म महेश्वरी और कुलपति की कथा 298
❑ श्वपच सुदर्शन के माता-पिता के दूसरे जन्म में चन्दन साहू और ऊदा की कथा 299
❑ श्वपच सुदर्शन के माता-पिता तीसरे जन्म में नीरू-नीमा हुए 302
❑ सद्गुरु कबीर प्राकट्य 302
❑ श्वपच सुदर्शन के माता-पिता का चौथे जन्म में मथुरा में प्रकट होकर सत्यलोक जाना 305
❑ कबीर साहेब (ज्ञानी जी) का धर्मदास जी को चेताने के लिए लोक से पृथ्वी पर आना 307
❑ (आरती विधि वर्णन) कबीर साहेब का चौका-आरती करके धर्मदास को परवाना देना 314
❑ चौका-आरती का साज 314
❑ सद्गुरु कबीर साहेब का धर्मदास जी को उपदेश देना 317
❑ धर्मदास जी का सबको सद्गुरु की शरण में बुलाना 320
❑ नारायणदास का सद्गुरु कबीर साहेब की अवज्ञा करना 320
❑ सद्गुरु कबीर साहेब का धर्मदास जी को नारायणदास की अवज्ञा करने का कारण बताना 324
❑ द्वादश पंथ का वर्णन 329
❑ 1. मृत्यु अंधादूत का पंथ 330
❑ 2. तिमिरदूत का पंथ 331
❑ 3. अंध अचेत दूत का पंथ 331
❑ 4. मनभंग दूत का पंथ 331
❑ 5. ज्ञानभंगी दूत का पंथ 332
❑ 6. मन मकरंद दूत का पंथ 332
❑ 7. चितभंग दूत का पंथ 333
❑ 8. अकिल भंग दूत का पंथ 334
❑ 9. विशंभर दूत का पंथ 334
❑ 10. नकटानैन दूत का पंथ 334
❑ 11. दुरगदानी दूत का पंथ 335

❑ 12. हंसमुनि दूत का पंथ 336
❑ धर्मदास जी को नौतम अंश (मुक्तामणि) का दर्शन होना 338
❑ चूड़ामणि (मुक्तामणि) की उत्पत्ति की कथा 341
❑ सद्‌गुरु कबीर साहेब का आना तथा मुक्तामणि जी की प्रशंसा करना 343
❑ वंश बयालिस की स्थापना करना 344
❑ चूड़ामणि को सद्‌गुरु कबीर साहेब का उपदेश देना 345
❑ वंश का माहात्म्य 350
❑ भविष्य कथा प्रारंभ 352
❑ निरंजन का अपने चार अंशों को पंथ चलाने की आज्ञा देना 355
❑ चार दूतों का वर्णन 360
❑ 1. रंभ दूत का वर्णन 360
❑ 2. कुरंभ दूत का वर्णन 362
❑ 3. जय दूत का वर्णन 366
❑ 4. विजय दूत का वर्णन 371
❑ कालदूतों से बचने का उपाय 372
❑ भविष्य-कथन अलग व्यवहार 372
❑ नादवंश की बड़ाई 378
❑ गुरु-महिमा और बिंदवंश के प्रति चेतावनी 383
❑ धर्मदास जी का पुत्र नारायणदास के उद्धार के लिए सद्‌गुरु कबीर साहेब से विनती करना 387
❑ धर्मदास के पुत्र नारायणदास के प्रति शुभ सम्मति 395
❑ (मोक्ष-साधन) गुरु-महिमा 397
❑ गुरु-शिष्य की रहनी और गुरु-महिमा 401
❑ गुरु-भक्ति का फल 404
❑ अधिकारी जीवों के लक्षण 406
❑ अनाधिकारी जीवों के लक्षण 406
❑ काया कमल विचार एवं षट्‌चक्र निरूपण 407
❑ मन का व्यवहार वर्णन 413
❑ मन के पाप-पुण्य का विचार 418
❑ निरंजन चरित्र 421
❑ मुक्तिमार्ग (पंथ-सहिदानी) वर्णन 422
❑ पंथ की रहनी 425
❑ वैरागी-विरक्त लक्षण 425
❑ गृही-लक्षण 429
❑ आरती माहात्म्य 432
❑ असावधानी का फल 435
❑ सावधानी-कोयल का दृष्टांत 436
❑ हंस-लक्षण 438
❑ ज्ञानी-लक्षण 439
❑ परमार्थ वर्णन 441
❑ परमार्थी गऊ का दृष्टांत 441
❑ परमार्थी संत-लक्षण 442
❑ ग्रंथ की समाप्ति 444
❑ ग्रंथ का सार निचोड़ 444
❑ सामान्य उपदेश 447

भूमिका

विश्ववंद्य सद्‌गुरु कबीर साहेब के सत्यमत-पंथ का सर्वाधिक विस्तार एवं प्रचार-प्रसार करने वाली धर्मदास-प्रणाली में कबीर दर्शन का महत्वपूर्ण विशाल ग्रंथ 'कबीर सागर' है, जो कि भारत पथिक कबीरपंथी स्वामी श्री युगलानन्द बिहारी जी के द्वारा संपादित किया गया है। यह कबीर सागर कई खण्डों में है और इसी के द्वितीय खण्ड का नाम 'अनुराग सागर' है।

जैसे कि प्राय: हमारे भारतीय धर्मग्रंथ—महाभारत, रामायण, श्रीमद्‌भागवत, गीता तथा सब पुराण आदि संवादात्मक हैं, वैसे ही अनुराग सागर सद्‌गुरु कबीर साहेब एवं धर्मदासजी का संवादात्मक ग्रंथ है। इसके अंतर्गत अनन्य शिष्य धनी धर्मदासजी जीवन कल्याण तथा संसार-सृष्टि आदि के ज्ञान से संबद्ध विभिन्न प्रश्न करते हैं और सद्‌गुरु कबीर साहेब उन सब प्रश्नों का उपदेश रूप में टकसार उत्तर देते हैं। दोनों गुरु-शिष्य का यह प्रश्नोत्तर ही 'अनुराग सागर' का रूप धारण करता है।

यहां पर यह प्रश्न उभरकर सामने आता है कि सद्‌गुरु कबीर साहेब एवं धनी धर्मदासजी का सम्मिलन कब, कहां और कैसे हुआ? इसी के साथ अन्य प्रश्न भी 'अनुराग सागर' के विस्तृत वर्णन में उत्पन्न हो सकते हैं। इसमें यह भी सुस्पष्ट है कि सद्‌गुरु कबीर साहेब कोई सामान्य व्यक्ति नहीं, प्रत्युत अलौकिक दिव्य पुरुष थे। वे समय की मांग के अनुसार सबके नियंता सत्यपुरुष परमात्मा की आज्ञा से सत्यज्ञान द्वारा दुखित जीवों का उद्धार तथा सर्वहितकारी सदाचार-सद्‌गुण युक्त विशुद्ध मानव धर्म का प्रवर्तन करने के निमित्त परम संत-रूप में प्रकट हुए। ऐसे उभरे प्रश्नों का समुचित उत्तर एवं समाधान कबीर साहित्य के अनेक ग्रंथों (सत्कबीर महापुराण, सद्‌गुरु श्री कबीर चरितम्, कबीरपंथी शब्दावली आदि) में पर्याप्त रूप से मिलता है। सद्‌गुरु कबीर साहेब एवं धर्मदास जी का मिलन प्रमाण के तौर पर देखिए— *कबीर मन्शूर पृष्ठ-588 तथा कबीर सागर में बोध सागर की प्रथम तरंग ज्ञानप्रकाश के पृष्ठ-21 पर।* संक्षेप में वृत्तांत इस प्रकार है—

धनी धर्मदासजी का जन्म अत्यंत धनाढ्य वैश्य कुल में हुआ था। धन-संपत्ति से धनी होने के साथ आगे चलकर वे सद्‌गुरु के सत्यज्ञान के भी धनी-

मानी, अर्थात महान ज्ञानवान हुए, इसीलिए उनके नाम के साथ धनी लगाकर उन्हें धनी धर्मदास जी कहकर पुकारा जाता है। वे नीमावत वैष्णव थे और ठाकुर–पूजा किया करते थे। मूर्ति–पूजा के साज–सामान के साथ तीर्थों में घूमने–फिरने का उनका स्वभाव था। एक बार तीर्थाटन करते हुए मथुरा नगरी में आए, तब वहां उनका सद्‌गुरु कबीर साहेब से जिन्दा फकीर के वेष में साक्षात्कार हुआ। मथुरा में सद्‌गुरु कबीर साहेब का वह दर्शन–मिलन धर्मदास जी को चेताने के लिए ही था। उस मिलन का घटनाक्रम आश्चर्य के साथ महान शिक्षाप्रद भी है।

धर्मदास जी बड़े आचारवान होने के कारण अत्यंत पवित्रता के साथ रहा करते थे। किसी के हाथ का छुआ खाना–पीना उन्हें स्वीकार नहीं था। अपने पास अतुल संपत्ति होने पर भी वे स्वयं हाथ से रोटी बनाकर खाया करते थे और इतने सतर्क रहते थे कि भोजन बनाते समय चूल्हे में लकड़ी भी धो–धोकर जलाया करते थे। एक बार मथुरा में जब वे अपना भोजन बना रहे थे, तब उन्हें सद्‌गुरु कबीर साहेब जिन्दा फकीर के वेष में दिखाई दिए। उस समय जब उनका भोजन बन ही चुका था, तो उन्होंने देखा कि चूल्हे की आग में जलती हुई लकड़ियों में से चींटियां निकल रही थीं। असंख्य चीटियां तो जल चुकी थीं, शेष को उन्होंने चूल्हे की आग से लकड़ियां बाहर निकालकर बचा लिया। हरि–हरि कहते हुए वे व्याकुल हो उठे और विक्षुब्ध मन से पश्चाताप एवं विलाप करने लगे कि आज मुझसे बहुत बड़ा पाप हो गया। शोकवश उन्होंने भोजन ग्रहण नहीं किया। भला जिस भोजन के बनाने में इतनी चीटियां जल मरी हों, वे उसे ग्रहण भी कैसे कर सकते थे? वह भोजन तो उनके लिए पूर्णतः दूषित हो चुका था। अतएव उन्होंने वह भोजन किसी बुभुक्षित दीन–हीन अथवा साधु को खिलाने का निर्णय लिया।

ऐसा विचारकर धर्मदास जी अपने वास–स्थान से बाहर निकले। उन्होंने एक वृक्ष की शीतल छाया में जिन्दा बाबा, अर्थात सद्‌गुरु कबीर साहेब को बैठे देखा। उन्होंने वह भोजन उनको ग्रहण करने के लिए निवेदन किया। जिन्दा बाबा ने उनसे कहा, ''हे सेठ धर्मदास! इस भोजन को बनाते समय तुमसे करोड़ों चीटियां मर गई हैं, उस पाप का बोझ क्या तुम मेरे सिर पर लादना चाहते हो? तुम रोज ठाकुर भगवान की मूर्ति की पूजा करते हो, तो फिर उन भगवान से क्यों नहीं पूछा कि इन लकड़ियों के भीतर क्या है?'' धर्मदासजी को महान आश्चर्य हुआ कि इन फकीर बाबा को चूल्हे की आग में लकड़ियों के साथ चीटियां जल जाने का कैसे पता चला? और उस समय तो उनके विस्मय का ठिकाना ही नहीं रहा, जब उन्होंने उस भोजन में से वे मरी हुई चीटियां जीवित निकलते भी दिखलाईं। वे उनके इस रहस्य को समझ न सके और अंततः दुखित होते हुए बोले, ''हे बाबा! यदि मैं इस बारे में भगवान से पूछ सकता अथवा मुझे इतना बोध हुआ होता, तो मुझसे इतना बड़ा पाप क्यों होता?'' अनजान रूप में हुए उस पाप के महाशोक में डूबे धर्मदास को

देखकर जिन्दा बाबा ने उनको गूढ़ ज्ञान की बातें सुनाईं, जिन्हें सुनकर धर्मदास जी अनुरागी हो गए। विनीत भाव से धर्मदास जी ने उनसे उनका परिचय पूछा तो उन्होंने स्वयं को सद्गुरु कबीर सत्यलोक का वासी बताया। इसके पश्चात जिन्दा बाबा मथुरा से लोप हो गए।

जिन्दा बाबा (सद्गुरु कबीर साहेब) के वियोग में व्याकुल धर्मदासजी मारे-मारे फिरते रहे। उनकी दशा पागलों जैसी हो गई। ढूंढ़ते-खोजते उन्हें वे बनारस में मिले, परंतु उस समय वे जिन्दा बाबा के रूप में नहीं, अपितु वैष्णव-वेष में थे। फिर भी धर्मदास जी ने उनको पहचान लिया और उनके चरणों पर गिरकर विनती करने लगे—''हे सद्गुरु! आप मुझे अपनी शरण में लीजिए। मैं आपको तभी से खोजता फिर रहा था जबसे आप मुझे जिंदा बाबा के रूप में मिले थे। आप मुझ पर प्रसन्न होइए और मेरे दुख को दूर कर, शांति प्रदान कीजिए।'' सद्गुरु कबीर साहेब ने कहा, ''हे धर्मदास! तुम बड़े सौभाग्यशाली हो कि जो तुमने मुझे पहचान लिया। अब तुम निश्चिंत हो जाओ तथा धैर्य धारण करो। मैं तुम्हारे आवागमन (जन्म-मरण) का दुख दूर करूंगा। फिर धर्मदास जी सद्गुरु कबीर साहेब को आदर सहित अपने निवास स्थान बांधोगढ़ (छत्तीसगढ़) ले गए। कुछ संत-विद्वानों का ऐसा भी कथन है कि जिन्दा बाबा के रूप में मथुरा से लोप हो जाने पर, सद्गुरु कबीर साहेब सीधे बांधोगढ़ में धर्मदास जी का बृहद भंडारा संपन्न हो जाने के बाद, उन्हें मिले। कहने का मूल तात्पर्य यही है कि सद्गुरु कबीर साहेब बांधोगढ़ में धर्मदास जी के पास आ गए।

सद्गुरु कबीर साहेब को पाकर धनी धर्मदास जी की प्रसन्नता की सीमा न रही। इसी के साथ वहां का समग्र वातावरण भी प्रफुल्लित हो उठा। उनके सान्निध्य में वहां नित्यप्रति सत्संग होने लगा, जिसमें दिनोदिन भीड़ बढ़ती गई। उस धार्मिक सभा-सत्संग में सद्गुरु कबीर साहेब अपने मुखारविंद से शब्द-वाणी एवं सदुपदेश-प्रवचन करते थे तथा सब जन मंत्र-मुग्ध होकर श्रवण करते थे। उस समय अवसर पाते ही धर्मदासजी विविध प्रकार के जो प्रश्न करते थे, उनका सद्गुरु कबीर साहेब यथानुकूल समुचित उत्तर देते थे। कुछ समय पश्चात धर्मदासजी ने अपने घर पर सद्गुरु कबीर साहेब से विधिपूर्वक चौका-आरती (सात्विक यज्ञ) कराया और अपनी स्त्री आमिन के साथ उनसे गुरु-ज्ञान दीक्षा ली। यद्यपि उनके पुत्र नारायणदास ने इस सबका भारी विरोध किया, तथापि धर्मदास जी पर उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा। उन्होंने अगाध भक्ति-भाव के साथ अपना तन-मन-धन सब सद्गुरु कबीर साहेब की सेवा में पूर्णतः समर्पित कर दिया।

इसके पश्चात फिर वहां प्रतिदिन नए से नया सत्संग-कीर्तन चलता रहा। वहां के जनसमुदाय तथा आस-पास के क्षेत्र पर सद्गुरु कबीर साहेब के सदुपदेश का बहुत प्रभाव पड़ा। जिससे वहां संत-महात्मा, योगी, पंडित, मौलवी एवं विभिन्न धर्मात्माओं का समूह जुटने लगा। बहुत लोग वहां के अनुरागी शिष्य-

सेवक होते गए। कहा जाता है कि महाराज बांधोगढ़ नरेश रामसिंह जी भी उस सत्संग-सभा में आने लगे और एक दिन विनम्र भाव से सद्गुरु कबीर साहेब के शिष्य हो गए। महाराज रामसिंह एवं धनी धर्मदास जी सद्गुरु कबीर साहेब के श्रीमुख से उच्चारित गद्य-पद्य उपदेशों को लेखबद्ध कर संग्रह करवाते गए।

अनन्य सेवा, प्रेम, भक्ति, साधना, दान एवं परोपकार आदि सर्व पारमार्थिक-सद्गुणों से संपन्न धर्मदास जी को सद्गुरु कबीर साहेब ने अपना अधिकारी सुयोग्य शिष्य समझकर अपने सत्यज्ञानोपदेश के प्रचार-प्रसार का प्रधान आचार्य पद प्रदान किया। धर्मदास जी तथा उनके बचन वंश को सत्यज्ञान-दीक्षा प्रदान करने का नियत मर्यादित अधिकार दिया, जिससे परम जिज्ञासु एवं मुमुक्षु हंस-जनों का कल्याण हो सके। धनी धर्मदास जी ने सद्गुरु कबीर साहेब के ज्ञानोपदेश के प्रचार में, दीन-दुखियों की सहायता में तथा धार्मिक-कृत्य भोज-भंडारे आदि में अपनी छप्पन करोड़ की संपत्ति खुले हृदय से पानी की भांति बहा दी। वस्तुत: धर्मदास जी धन्य हैं और उनकी गुरु-भक्ति, निष्कामता एवं उदारता महान है, जो किसी पूर्ण समर्थ सद्गुरु के विरले शिष्य ही में हो सकती है।

सद्गुरु कबीर साहेब के शब्द-भजन, रमैनी एवं साखियां आदि पद्य रूप में कितने और कहां-कहां पर रचे गाए गए, इसके बारे में ठीक-ठीक कह पाना संभव नहीं है। उनके पद असंख्य हैं और वे भारत की बहु-प्रांतीय भाषाओं में गाए जाते हैं। जिससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि सद्गुरु कबीर साहेब सर्वत्र घूमे-फिरे, सबसे मिले-जुले और बहुतों के इष्ट-प्रेमी हैं। हां, यह सर्वथा सत्य है कि पद्य रूप में उनकी जो अमृतवाणी प्रवाहित हुई, उसके संग्रह से बीजक, शब्दावली एवं साखी ग्रंथ आदि ग्रंथों की रचना हुई। इसके साथ ऐसे ही समय-समय पर गद्य रूप में जो संवाद सद्गुरु कबीर साहेब से करते थे, उसके संग्रह से चयन कर धनी धर्मदास जी ने 'अनुराग सागर' ग्रंथ संपन्न किया।

'अनुराग सागर' सद्गुरु की सेवा-भक्ति एवं सत्यपुरुष परमात्मा की ध्यान-साधना का अद्वितीय ग्रंथ है। अतएव इसमें आदि से अंत तक सद्गुरु तथा सत्यपुरुष के गुणानुवाद एवं महिमा का सर्वाधिक अनुपम उल्लेख किया गया है। दुर्लभ मनुष्य-जन्म को सार्थक करने के लिए सभी मानव कपटी काल-प्रपंच, कल्पित जड़, देवी-देवों, मिथ्या मान्यताओं एवं माया-मोह से सर्वथा परे हों; कल्याण साधन के लिए सद्गुरु की शरणागत होकर सत्यज्ञान प्राप्त करें और उपदेशानुसार नित्य-निरंतर सदाचार में रहते हुए निष्काम भक्ति-साधना से सत्यपुरुष का साक्षात्कार कर आवागमन से मुक्त हों, यही इस ग्रंथ का मूल प्रयोजन है। अध्यात्म के विभिन्न विषयों को दर्शाता हुआ यह ग्रंथ (अनुराग सागर) मंगलाचरण-गुरु वंदना से प्रारंभ होता है।

इसमें सद्गुरु कबीर साहेब 'अनुराग सागर' की महत्ता को सुस्पष्ट करते हुए

कहते हैं कि असीम भक्ति-प्रेम एवं अध्यात्म-ज्ञान से संपन्न इस 'अनुराग सागर' ग्रंथ को कोई-कोई संत तथा भक्त ही समझेगा। सच्चे अनुरागी का लक्षण समझाने में वे मृग, पतंग एवं सती का दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं। ज्ञान-जिज्ञासा के रूप में एक जिज्ञासु को जो जानना आवश्यक है, वह सब धर्मदास जी के प्रश्नों के उत्तर में सद्गुरु कबीर साहेब इसमें सविस्तार समझाते हैं। कल्याणोद्देश्य की पूर्ति के लिए वे जीवित रहते मृतक-भाव को उपलब्ध होने की बात समझाते हैं, जो सबके लिए संभव नहीं है। तन-मनेंद्रियों का संयमी तथा सत्यनाम-अमृत रात-दिन चखने वाला कोई साधु ही मृतक-भाव को प्राप्त होता है। इसमें एक अद्भुत अनल पक्षी की चर्चा है, जिसका कबीर साहित्य के अतिरिक्त संभवतः अन्य कहीं वर्णन नहीं है। उदाहरणस्वरूप इसे लेकर समझाया गया है कि एक साधु को अनल पक्षी की भांति मोह-मुक्त रहते हुए सद्गुरु प्रभु को प्राप्त होना चाहिए। इसमें विदेह सत्यपुरुष के विदेह सत्यनाम, सारशब्द और विदेह ध्यान पर विशेष जोर दिया गया है, जिससे मोक्ष धाम की प्राप्ति होती है।

इससे आगे सृष्टि-सृजन एवं विकास का महत्वपूर्ण प्रकरण है। इसमें आदिपुरुष द्वारा ब्रह्म-सृष्टि, अर्थात सोलह सुत तथा अष्टांगी (माया) का उत्पन्न होना दर्शाया गया है। फिर काल-निरंजन और अष्टांगी के संयोग से ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश की उत्पत्ति होती है, जिनसे फिर सृष्टि रचना का विस्तार होता है। चार खानि एवं चौरासी लाख योनियों में मनुष्य-योनि को सर्वोत्तम बताया गया है, क्योंकि इसी से कल्याण-मोक्ष की प्राप्ति संभव है। जो मनुष्य सद्गुरु के शब्दोपदेश को धारण न कर काम-मोहादि विषय-विकारों में लिप्त रहता है, उसके लिए चौरासी बनी है, अर्थात उसे चौरासी लाख योनियों के कष्टदायी विषम भोगों को भोगना पड़ता है। जीवों को फंसाने, मारने तथा खाने के लिए काल-निरंजन अनेक फंदे रचता है। जीवों को अशांत रखने के लिए और यह जानकर कि कहीं कोई जीव सत्यपुरुष का ध्यान लगाकर चौरासी से मुक्त होकर सत्यलोक न चला जाए, काल-निरंजन ने सब जीवों के मन में वास किया है। कहीं वह गुप्त रहकर तथा कहीं नाना रूप धारण कर जीवों को पीड़ित करता रहता है। उससे व्यथित हुए जीवों की करुण पुकार सुनकर दयालु सत्यपुरुष ज्ञानी सुत को भेजते हैं, जो ज्ञानोपदेश से सब जीवों को शांति-सांत्वना प्रदान करते हैं। वस्तुतः जीवों (मनुष्यों) के जन्म-मरण का दुख दूर करने वाले सद्गुरु स्वामी ही हैं।

नियति अनुसार सृष्टि का विकास एवं ह्रास युग-परिवर्तन के साथ होता रहता है। सृष्टि के समस्त जीव कालाधीन सदैव भयभीत रहते हैं कि कहीं काल न आ जाए! सब जीवों की देह-मन के भीतर काल वास करता हुआ, इंद्रियों के द्वारा कामादि नाना विषयों को भोगता है और सबको भरमाता भटकाता रहता है। अतः मनवश हुआ अज्ञानी जीव अनेक दुखों को भोगता हुआ काल का ग्रास बनता है।

काल से बचने के लिए जीव का मनेंद्रियों को संयम में करना आवश्यक है, परंतु बिना ज्ञान उन्हें संयमित करना संभव नहीं। काल-जाल से छुड़ाने वाला सामान्य सांसारिक-ज्ञान कैसे हो सकता है ? वह तो सद्गुरु का दिव्य सत्यज्ञान है, जिसे ग्रहण कर यथावत् आचरण करता हुआ मनुष्य सत्यलोक (अविचल मोक्षधाम) को जाता है। फिर वह जन्म-मरण के चक्र में नहीं आता है।

'प्राकट्यम् युगे युगे' अर्थात सद्गुरु का युग-युग में प्राकट्य होता है, जैसे—सतयुग में सत्सुकृत, त्रेतायुग में मुनींद्र, द्वापर में करुणामय और कलियुग में कबीर नाम से प्रकट हुए। जीवोद्धार के लिए जब-जब उन्होंने संसार की ओर प्रयाण किया, तब-तब काल-निरंजन ने उन पर भारी प्रहार किया और उन्होंने उसका सर्वथा मान-मर्दन किया। सद्गुरु के आगमन पर काल-निरंजन के विरोध करने का कारण स्पष्ट है कि जीव काल-निरंजन का ग्रास है, जिसे वह मुक्त होते हुए नहीं देख सकता। काल निरंजन के लिए चौरासी रूप यह संसार किसान के खेत के समान है। जैसे किसान अपने खेत की फसल को बोता, काटता तथा इच्छानुसार उसका उपभोग कर, पुन: उगने के लिए उसका बीज खेत में डाल देता है, वैसे काल-निरंजन जीवों के देह को उत्पन्न कर फिर उन्हें ग्रस लेता है और पुन: उत्पन्न होने के लिए उनका जीव-बीज चौरासी में डाल देता है। अतएव जीवोद्धार की बात पर उसने सदा कड़ा विरोध प्रकट किया। परंतु कालजयी ज्ञानी जी, अर्थात कबीर साहेब के सामने उसे सदा झुकना पड़ा और अपने किए का पश्चाताप करते हुए उनसे क्षमा-याचना भी करनी पड़ी। इस प्रकार काल को परास्त कर प्रत्येक युग में सद्गुरु ज्ञानीजी ने आकर सत्यज्ञान से जीवों को चेताया।

उपर्युक्त कथनानुसार उन्होंने प्रकट होकर सतयुग में राजा धोंधल, खेमसरी; त्रेतायुग में विचित्र भाट, मंदोदरी, विप्र मधुकर, द्वापर युग में रानी इंद्रमती; राजा चंद्र विजय और कलियुग में श्वपच सुदर्शन के साथ उसके माता-पिता को उपदेश, धनी धर्मदास जी एवं उनकी पत्नी आमिन को चेताने की कथा इस ग्रंथ में भली प्रकार समझाई गई है। इनके अतिरिक्त भी उनके चेताए एवं मुक्ताए हुए और बहुत शिष्य हुए हैं, जिन सबको लिख पाना संभव नहीं है और बहुत कुछ कारणों से ऐतिहासिक पट पर अंकित भी नहीं हो सके।

बताया गया है कि वर्तमान कलियुग में जब परम संत सद्गुरु के रूप में कबीर साहेब प्रकट होकर आए तो उन्होंने श्री जगन्नाथ मंदिर की स्थापना कराई, जनोद्धार निमित्त भारत के अंदर चारों दिशाओं में चार गुरुओं को गुरुवाई प्रदान की और अपने अनन्य शिष्य धर्मदास जी को अपना सुयोग्य अधिकारी मानकर, सत्यज्ञान दीक्षा देकर हंस जीवों को भवसागर से पार लगाने का गौरवपूर्ण अधिकार दिया। इसी के साथ उनके पुत्र चूड़ामणि को विधिवत् ज्ञान-दीक्षा दी, जो वचन-वंश कहलाए। फिर उनके वंश बयालिस के ज्ञान राज्य की स्थापना तथा उसके

भविष्य का सविस्तार वर्णन आता है। यह सब इसलिए कि जीव-कल्याण के साथ सत्यज्ञान का व्यापक प्रचार-प्रसार होता रहे। परंतु यह ध्यान रहे कि सद्गुरु कबीर साहेब के वचन उपदेश पर चलने से ही धर्मदासजी के अटल बयालिस बिंद वंश होंगे, न चलने पर उनके बीच ही नष्ट हो जाने की बात भी कही है। इसी के अंतर्गत बिंद एवं नादवंश की अत्यंत महत्वपूर्ण चर्चा है।

बिंद एवं नादवंश दोनों धर्मदास-प्रणाली के विशेषांग हैं। यद्यपि अपनी-अपनी विशुद्ध रहनी में रहते हुए सद्गुरु के सत्यमत-पंथ को चलाने से दोनों वंश गौरवान्वित हैं, तथापि स्वयं सद्गुरु कबीर साहेब ने नादवंश की विशेष महिमा कही है। वे धर्मदास जी को सचेत करते हुए उनके बिंदवंश को समझाने की सम्मति देते हैं कि वे सदैव नादवंश से सादर प्रेम का व्यवहार करें, अन्यथा उनकी हानि होगी। अहंकारवश नादवंश से द्वेष करने पर बिंदवंश काल के धोखे में पड़ेगा और प्रेम करने पर उलटा काल ही उन दोनों को देखकर पछताएगा। धर्मदासजी के यह पूछने पर कि यदि नादवंश की इतनी अधिक महत्ता है तो हे प्रभु! बिंदवंश क्यों प्रकट किया? इसके उत्तर में सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि अंकुश में रखने के लिए नाद-बिंद दोनों वंशों को बनाया, जिससे वे अनुशासित ज्ञान-मर्यादा में रहते हुए ज्ञानोपदेश से जनहित करते रहें। सद्गुरु कबीर साहेब के उद्देश्यपूर्ण दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए दोनों वंशों के पंथाचार्य एवं संत-भक्तों को चाहिए कि वे परस्पर सेवा, सहयोग, सद्भावना और प्रेम के साथ रहें। इससे पंथ के विकास के साथ साथ सद्गुरु के ज्ञान प्रचार-प्रसार को बल मिलेगा और उद्देश्य के अनुरूप जन-कल्याण की संभावना भी बहुत बढ़ेगी।

निष्कर्ष के तौर पर अनुराग सागर में इसके आगे के प्रकरण को मोक्ष-साधन के रूप में मानना चाहिए। इसमें कोई कथा-कहानी अथवा रूपक जैसी कोई बात नहीं है, किंतु सारगर्भित ज्ञानोपदेश है। प्रथम तो इसमें उत्कृष्ट गुरु-महिमा एवं गुरु-शिष्य की रहनी को भली-भांति समझाया गया है। फिर इसके पश्चात काया-कमल विचार में आध्यात्मिक स्तर पर मानव-देह के आंतरिक ज्ञान और मन के पाप-पुण्य के विचार को दर्शाया गया है। महत्वपूर्ण मुक्ति मार्ग पर पंथ-सहिदानी में सद्गुणों को ग्रहण करने का उपदेश और पंथ की रहनी में पले वैरागी फिर गृही का लक्षण कहा गया है। कल्याण के लिए गुरु-दीक्षित गृही को, अधिक न हो सके तो कम से कम एक वर्ष में, चौका-आरती (सात्विक ज्ञान-यज्ञ एवं संत-गुरु पूजन) करने को प्रेरित किया गया है। जीवन में सचेतता के रूप में कोयल का दृष्टांत, हंस एवं ज्ञानी लक्षण और अंत में परमार्थ एवं परमार्थी संत के लक्षण को सुंदर ढंग से वर्णित किया गया है। सद्गुरु के सत्यज्ञानामृत स्वरूप उक्त विषयों को जीवन में उतारने वाला साधक निस्संदेह मोक्ष का अधिकारी होता है।

इस प्रकार सद्गुरु कबीर साहेब द्वारा उपदेशित नाना आध्यात्मिक विषयों के

समावेश से 'अनुराग सागर' महान ग्रंथ है। इसके स्वाध्याय के बिना कबीरपंथ तथा परमेष्ट सद्गुरु कबीर साहेब के विराट ज्ञानस्वरूप से परिचित होना कठिन है। इसके अंतर्गत वर्णित विषयों—सृष्टि-रचना , आदिपुरुष, आद्या-अष्टांगी तथा काल-निरंजन आदि का सांकेतिक वर्णन कबीर साखी एवं बीजक आदि प्रामाणिक सद्ग्रंथों में मिलता है। इसमें जीव को आदिपुरुष का अंश सोहंग कहा गया है, जो अज्ञानवश क्षुद्र मायिक भोगों में लिप्त होकर निज स्वरूप, निज देश तथा निज आदिपुरुष को भूलकर सांसारिक बंधनों में पड़ गया है। बंधन-मुक्त होने के लिए उसे बंदीछोड़ सद्गुरु की शरणागत होकर विधिवत् चौका-आरती एवं सत्यज्ञान पाना चाहिए, यह इसमें भली-भांति समझाया गया है।

सद्गुरु कबीर साहेब के दिव्य प्राकट्य तथा उनके धनी धर्मदास जी से दर्शन-मिलन को लेकर बहुत लोगों की विभिन्न विचारधाराएं हैं। सबके विचार एक समान हों और एक मत से सभी सहमत हों, ऐसा संभव कहां हो पाता है? अनेक जन-समुदायों अथवा धर्म-संप्रदायों में पूर्व से होता आया है कि सबका इष्ट तो एक ही होता है, किंतु उसके मानने-जानने तथा उपासने के ढंग भिन्न-भिन्न होते हैं और सब अपने-अपने को ठीक होने का दावा करते हैं। सद्गुरु कबीर साहेब के संबंध में भी कुछ ऐसा ही हुआ है और वे विभिन्न मान्यताओं के केंद्र हैं। किसी ने उनको महामानव के रूप में देखा तो किसी ने उनको अवतारी सत्यपुरुष कहा; किसी ने उनको देहधारी कहा तो किसी ने उनको पंचभूत से मुक्त अलौकिक प्रकाशस्वरूप कहा, किसी ने उनको कवि, क्रांतिकारी एवं समाज सुधारक कहा तो किसी ने उनको समय के महापुरुष परम संत-सद्गुरु के रूप में स्वीकार किया। जिसकी जैसी मनोभावना, उसने उनको वैसा ही देखा। अतएव किसी के कुछ कहने-सुनने अथवा मानने से उनकी वास्तविकता में कोई अंतर नहीं पड़ता।

पढ़ी-सुनी बातों पर विचार करना आवश्यक है, परंतु भावुकतावश अपनी श्रद्धापूर्ण धारणा को बदलना उचित नहीं। संत-महापुरुषों को देखने-परखने की दृष्टि सभी के पास नहीं होती, उन्हें जानने-समझने के लिए उनके रंग में रंगना पड़ता है। इस आधार पर सद्गुरु कबीर साहेब को दूर से अनुमान-कल्पना करके नहीं, उनके निकट आकर उनके ज्ञान-सत्संग से उन्हें जानने की चेष्टा करनी चाहिए। कबीरपंथी शब्दावली तथा कबीर कसौटी जैसे ग्रंथों में वे अपना प्राकट्योद्देश्य तथा परिचय स्वयं बताते हुए जान पड़ते हैं—

अमरलोक से हम चलि आये, आये जगत मंझारा हो।
सही छाप परवाना लाये, समरथ के कड़िहारा हो।
जीव दुखित देखा भवसागर, ता कारण पगु धारा हो।
बंस ब्यालिस थाना रोपा, जम्बूदीप मंझारा हो।

प्राकट्योद्देश्य के साथ ही वे अपना परिचय इस प्रकार दर्शाते हैं—

अब हम अवगत सों चलि आये।
यह माया तौ जग भरमाया, मेरा भेद नहीं पाये॥ टेक॥
ना मेरे जन्म न गर्भ बसेरा, बालक ह्वै दिखलाये।
काशीपुरी जंगल में डेरा, तहां जुलाहा ने पाये॥ 1॥
ना मेरे गगन धरनि कछु नाहीं, दीखत अगम अपारा।
आत्मरूप प्रगट निज जग में, सो तो नाम हमारा॥ 2॥
ना मेरे अस्थि रक्त नहिं चामा, हम हैं शब्द प्रकाशी।
देह अपार पार पुरुषोत्तम, कहि कबीर अविनाशी॥ 3॥

उपर्युक्त पदों का सहज ही अर्थ लगाया जा सकता है कि सद्‌गुरु कबीर साहेब इस भवसागर के दुखित-जनों को पार लगाने के लिए जंबूदीप (भारत) की काशीपुरी में ज्ञान का छाप-परवाना लेकर प्रकट हुए और वे पंचभूत से मुक्त शब्द-प्रकाशी एवं अपार अविनाशी पुरुषोत्तम सत्य स्वरूपी थे।

प्राय: सभी जानते हैं कि सद्‌गुरु कबीर साहेब का आविर्भाव एवं अंतर्धान दोनों अद्‌भुत रहस्यपूर्ण हैं। और उस काल के घोर संग्राम तथा विषम परिस्थितियों के द्वंद्व में विजयी होकर, वे जिस प्रकार व्यास प्रपंच, पाखंड एवं अंधविश्वासों के विरुद्ध निर्भीकता से सत्यज्ञान प्रदान कर मानवोद्धार का महत्तम कार्य करते रहे, वह और अधिक आश्चर्यजनक है। इस सबसे श्रद्धालु संत-महंत एवं सेवक-भक्त उन्हें सर्वाधार सत्यपुरुष के सदृश समझते हैं। निस्संदेह वे अपने-आप में अद्वितीय हुए हैं, भला उनके अतिरिक्त उन्हें और कौन जान सकता है? और यदि कुछ जानेगा भी तो कोई उनका अनन्य निष्ठावान विरला संत-साधक ही उन्हें जानेगा। उनके विशेष नाम 'कबीर' के अर्थानुसार उनकी महानता का युग ने अभिनंदन किया है और उनकी अमृतवाणी टकसार शब्दोपदेश के सामने जन-जन ने शीश झुकाया है। जिससे वे असाधारण युगपुरुष एवं पूर्ण समर्थ सद्‌गुरु स्वामी सिद्ध होते हैं।

सद्‌गुरु कबीर साहेब की अनंत महिमा से परिपूर्ण यह 'अनुराग सागर' ग्रंथ महान है। यथा नाम तथा गुण, यह अनेक सद्‌गुण, रत्नों एवं जीव-कल्याण के सूत्रों से भरपूर है। इसकी अपरिमित विशालता एवं उत्कृष्टता को देखते हुए मैं एक सामान्य बुद्धि का आदमी इस योग्य कहां था कि मैं इसकी टीका लिख सकूं। मेरे लिए तो आदि से अंत तक इसके गंभीर विषय को सीधे सहज ढंग से समझ पाना भी कठिन था। इसका एक महत् कारण यह था कि इसके पहले मैंने 'अनुराग सागर' का नाम तो सुना था, किंतु इसमें वर्णित विषय को पढ़ा-सुना नहीं था। ऐसी स्थिति में मैं इसके माहात्म्य को कैसे समझ सकता था। कबीरपंथ के वातावरण में घूमने-फिरने से ही मेरे मन में इसके प्रति लगन लगी। तब इसे पढ़ने के साथ-साथ मैंने इसकी टीका को लिखना भी आरंभ किया।

इसके लिखने-समझने में मुझे जो सबसे बड़ी कठिनाई हुई और आदि से अंत तक बनी रही, वह यह कि 'अनुराग सागर' मैंने पढ़ा तो उसमें त्रुटियों की भरमार मिली। इसी कारण उसके ठीक-ठीक समझने तथा लिखने में कठिन परिश्रम के साथ-साथ समय भी बहुत लगा। और जो 'अनुराग सागर' मैंने देखे, उनमें एक तो पूर्ण पक्षपात के आधार पर यथार्थ की परवाह न कर मनचाहा अर्थ लगाकर, अपनी सांप्रदायिक महिमा एवं मान-बड़ाई बटोरने के लिए लिखा गया है और दूसरे में मूल का यथा अर्थ तो है, परंतु उसमें काट-छांट एवं जोड़-तोड़ बहुत अधिक है। इतना ही नहीं वे छंद-चौपाई एवं सोरठों की संख्या से भी पूर्ण नहीं है। यहां मेरा अभिप्राय उन पर दोषारोपण करना कतई नहीं है, किंतु विनम्रतापूर्वक सत्य से कुछ अवगत कराना अवश्य है।

मैंने संकल्पबद्ध होकर प्रस्तुत 'अनुराग सागर' आदि से अंत तक संपूर्ण लिखा है। इसमें समस्त चौपाइयों के साथ कुल छंद एक सौ तीन और सोरठों की संख्या एक सौ चौदह है। हां, बड़ा रूप हो जाने के कारण मैंने इसे चार भागों (ज्ञान-जिज्ञासा, सृष्टि-विकास, प्राकट्यम् युगे-युगे एवं मोक्ष-साधन) में बांटने का सुविधाजनक प्रयास अवश्य किया है, जिनका स्पष्टीकरण ऊपर किया जा चुका है। टीका करते समय जहां भी आवश्यकता जान पड़ी, मैंने विशेष भावों के रूप में कबीर बीजक एवं साखी ग्रंथ के उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जिससे पाठकवर्ग की रुचि भी बराबर बनी रहे और उनके ज्ञान की अभिवृद्धि भी हो।

सविनय कृतज्ञता ज्ञापन—परम वंदनीय सद्गुरु कबीर साहेब और परम पूज्य सत्यलोकवासी ज्ञान प्रदाता सद्गुरु पं. श्री हजूर उदित नाम साहेब की मुझ पर निश्चित ही असीम कृपा हो रही है, जिससे कि सब कठिनाइयों को पार कर मैं 'अनुराग सागर' की टीका विशेष भावों सहित लिख सका। मेरे पास वे शब्द कहां, जिनसे मैं आपकी स्तुति-वंदना कर सकूं। आपका ध्यान-स्मरण करता हुआ मैं आपको शत-शत नमन-बंदगी करता हूं।

परम पूज्य पं. श्री हजूर मुकुन्दमणिनाम साहेब कबीरपंथाचार्य एवं धर्माधिकारी श्री विजयदासजी शास्त्री साहेब (धर्मस्थान—खरसिया, वाराणसी), महंत श्री गुरुशरणदास जी शास्त्री साहेब (मॉरिशस) तथा आदरणीय संत समाज का दयाभाव एवं शुभाशीर्वाद भी मेरे साथ रहा है, जिससे मुझे प्रकाश मिला। मैं आप सबका कृतज्ञ हूं और आपको बारंबार प्रणाम एवं बंदगी करता हूं। जिनकी टीका के प्रकाश से मुझे समझने में कुछ सहायता मिली, उन आदरणीय महंत श्री बंसूदास जी साहेब कबीरपंथी, कानपुर (उ.प्र.) का मैं आभार व्यक्त करते हुए अभिवादन करता हूं।

सद्गुरु की दया से इस जगत में मानवता की सेवा करने वाले ऐसे सहृदय मनुष्य आते हैं, जिनके सहयोग, सद्भावना एवं दान-उपकार से व्यवहार-परमार्थ

के कार्य संपन्न होते हैं। उनसे दूसरों को बल मिलता है और सत्कर्म करने की प्रेरणा भी। ऐसे भक्त सज्जनों का स्मरण आते रहना स्वाभाविक है और जो अपने निकट सहयोगी एवं प्रेरक ही रहे हों, वे तो हृदय में बसते हैं।

ऐसे ही मान्यवर भक्त सतलोकवासी सेठ श्री दीनदयाल गोयल जी थे। आपका मूल जन्म स्थान फिरोजपुर झिरका (हरियाणा) और परिवार के साथ जहां अब रहते थे, वह निवास *E-3 रतनपार्क नई दिल्ली- 15* है। दीनदयाल जी दयावान हृदय के दानशील व्यक्ति थे। दानशील स्वभाव होने के कारण आप कई धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हुए थे, जिनको आप भरपूर सहयोग देते थे। आपके महत्तम सेवा-कार्यों को देखते हुए एक अवसर पर हरियाणा के मुख्यमंत्री ने आपको चादर ओढ़ाकर सम्मानित किया।

सेठ दीनदयाल जी परम पूज्य पं. श्री हजूर उदित नाम साहेब के शिष्य और सद्‌गुरु कबीर साहेब के सत्यमतानुयायी भक्त थे। वे ऐसे निष्ठावान सेवक थे कि सद्‌गुरु के नाम एवं काम की बात आते ही उनका हृदय उमड़ आता और आंखों से आंसू बहने लगते थे। वे खुला कहा करते थे कि इस जगत में पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब जैसा संत और सद्‌गुरु कबीर साहेब जैसा सत्यज्ञान प्रदाता न हुआ और न होगा। वस्तुतः वे कबीरपंथ के सेवक-भक्तों की शृंखला की प्रमुख कड़ी थे। इस नाते सबके प्रिय, मिलनसार, सलाहकार तथा प्रतिक्षण सेवा-सुश्रूषा करने वाले थे। श्री कबीर धर्मस्थान खरसिया, श्री कबीर बाग लहरतारा और सद्‌गुरु कबीर प्राकट्य धाम के प्रबंध-निर्माण एवं भोज-भंडार में उन्होंने अविस्मरणीय योगदान दिया। प्राकट्य धाम में पूज्य पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब की सुंदर श्वेत संगमरमर की समाधि उन्होंने बनवाई। काल बड़ा प्रबल है, जिससे कोई नहीं बच पाता। एक दिन शाम के समय वे सद्‌गुरु की पुण्य-स्मृति के कार्ड वाराणसी भेजते हुए अत्यंत प्रसन्न थे। इस काम में मैं भी उनके साथ था। चलते समय उन्होंने मुझे अलविदा कहा और उसी रात उन्होंने अपना देह-त्याग कर दिया।

वे मुझसे बहुत स्नेह करने वाले मेरे आदरणीय गुरु भाई थे। वे मुझसे सद्‌गुरु कबीर साहेब की महिमा, शब्द-साखी तथा संध्या-पाठ आदि पर लिखने को कहते-उकसाते रहते थे। उनके कथनानुसार मैंने लिखने का वायदा भी किया। सद्‌गुरु कबीर साहेब की वचन-वाणियों को विस्तार सहित लिखने और कबीर चालीसा, गुरु महिमा एवं संध्या पाठ आदि को सरल टीका के साथ लिखने के लिए उन्होंने मुझे बहुत प्रोत्साहित किया। आज वे नहीं हैं, किन्तु मैं उन्हें स्मरण रखते हुए हृदय से उनका आभार व्यक्त करता हूं।

इसी क्रम में—स्मरणीय भक्त सतलोकवासी श्री खूबदास जी कबीरपंथ के महानुभवी, ज्ञान-विचार में परिपक्व तथा बड़े उदार स्वभाव के थे। आप धर्मदास-वंशावली में दीक्षित और पं. श्री गृंधमुनिनाम साहेब (कबीर धर्मनगर दामाखेड़ा,

छत्तीसगढ़) के बहुत श्रद्धालु थे। आपका मूल जन्म-स्थान—लखनपुर, आगरा (उ.प्र.) रहा, परंतु अंत समय में अपने पुत्र-परिवार के साथ रोहिणी, दिल्ली में रहे। सत्यता एवं पवित्रता की मानो सजीव मूर्ति धर्मपरायण आपका जीवन हंसता हुआ-सा जान पड़ता था। सद्‌गुरु कबीर साहेब के सत्यज्ञान की आप मार्मिक बात करते थे। एक बार प्रेमपूर्वक आपने मुझसे पूछा कि निगुरा किसे कहते हैं ? मैंने शीघ्र उत्तर दिया कि जो गुरु की शरण न गया हो। तब आपने हंसते हुए कहा कि नहीं, निगुरा वह है—जो गुरुदीक्षा लेकर भी गुरु के उपदेशानुसार नहीं चलता। आभार मानते हुए मैं आपकी समस्त शिक्षाप्रद बातों के आगे नत-मस्तक हूं।

आप ही के अनुरूप आपके सुपुत्र श्री कैलाशनाथ धर्मपरायण, उदार प्रकृति एवं उत्कृष्ट विचारों के हैं। सेवा, सत्संग, ज्ञान, भक्ति एवं दान-उपकार में जितनी अभिरुचि उनकी है, उतनी आज कठिनाई से ही कहीं देखने को मिलती है। उनकी एक बड़ी विशेषता है कि वे पक्षपाती नहीं हैं और बेझिझक सत्य को स्वीकारते हैं। उनके लिए कबीरपंथ के सब आश्रम एवं संत समादरणीय हैं, जिनकी सेवा करने को वे सदैव तत्पर रहते हैं। वे मेरे परम सहयोगी मित्र, अनुज समान हैं। जीवन के हर मोड़ पर वे साथ निभाते चल रहे हैं। इस ग्रंथ के लिखते समय जब मैं विकट परिस्थितियों में घिर गया था, तब उन्होंने मुझे बहुत सांत्वना एवं अपेक्षित सहयोग दिया। अतएव मैं हृदय से धन्यवाद देते हुए, उनका बहुत-बहुत आभार व्यक्त करता हूं।

ग्रंथ के फोटो विकसित कराने तथा अन्य सहयोग देने में मेरे अनुज समान मित्र श्रद्धालु सेवक श्री ओमप्रकाश धीमान प्रेमी (स्वर्ण पार्क, दिल्ली) का हाथ रहा है। सद्‌गुरु के माननीय भक्त श्री कैलाश पी. सांखला, पाली (राजस्थान) ने पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब का सुंदर चित्र भेजा और सराहना करते हुए मुझे लेखन को प्रोत्साहित किया। आप दोनों को बहुत-बहुत धन्यवाद एवं शुभाकांक्षा।

इसके अतिरिक्त भी मुझे जिन मित्रों से जो शुभकामना एवं सहयोग मिला मैं उन सबका हृदय से आभारी हूं।

क्षमा-याचना

सद्‌गुरु को स्मरण करते हुए निष्पक्ष-भाव से मैंने 'अनुराग सागर' के मूल विषय की यथार्थ टीका का प्रयास किया है। इसमें यदि किसी को कुछ अपनी मान्यता के विपरीत जान पड़े तो उसके लिए मुझे दोष देना उचित न होगा। क्योंकि विषयानुसार अर्थ लिखना मेरी विवशता थी और इसके लिए मैंने अपनी मान्यताओं की भी परवाह न की। संभव है कि कुछ लोगों को इसके प्रति संदेह हो, तो उनके लिए मेरा यह उत्तर है कि पूरी तरह से कहीं कुछ गलत नहीं होता और न ही यह आवश्यक है कि सब जगह अपने मन जैसी बात हो। परंतु यदि विवेक दृष्टि हो तो अपने मन की परवाह न कर हर कहीं से सत्यांश चुना जा सकता है। विषयानुकूल

आचार्यों एवं संत-भक्तों से क्षमा-याचना करता हूं। मेरे लिए ये दोनों क्या, समग्र कबीरपंथ का क्षेत्र ही वंदनीय है। मेरा यह प्रयास कितना सफल रहा, यह तो माननीय पाठक-जन ही बता सकेंगे। अतएव संत-भक्तों एवं सुधि पाठकों से मेरा अनुरोध है कि वे संपूर्ण ग्रंथ को मनोयोग से पढ़ें और पठन-मनन में जैसा लगे, वैसा मुझे पत्र द्वारा नि:संकोच बताने की कृपा करें। इससे संबद्ध सुझावों का भी मैं यथा-सम्मान करूंगा।

परिस्थितिवश कुछ कारणों से मैं इसे धाराप्रवाह रूप में न लिख सका, जिससे संभव है कि इसमें कहीं कुछ अंतर पड़ा हो। पुनरावृत्ति दोष तो इसके मूल ही में दिखाई पड़ता है, तो टीका में उसका आ जाना स्वाभाविक है। प्रमादवश इसमें हुई समस्त त्रुटियों के लिए मैं पाठक-वृंद से क्षमाप्रार्थी हूं। सद्‌गुरु के प्रिय हंस-जन एवं सारग्राही सुधि पाठक इसकी असार त्रुटियों को छोड़कर, केवल सार-गुण ग्रहण करने पर ध्यान देने की कृपा करेंगे।

विनम्र

विजयादशमी
आश्विन मास 2060
रविवार, दि. 5-10-2003

लालचन्द दूहन 'जिज्ञासु'
के-7, मंगोलपुरी
दिल्ली-110083
फोन-(011) 27914001

अनुराग सागर के महानुरागी —

कबीरपंथ के ऐतिहासिक महापुरुष

नादवंश प्रतापी पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब

सद्गुरु कबीर साहेब के पीछे उनका सत्य-पंथ समय के साथ-साथ विकसित एवं व्याप्त होता गया है। उनके सत्यानुयायी प्रति जन-समाज में उनके मत (सिद्धांत) का विस्तार करते रहे हैं। उनके वचन-उपदेश (रमैनी-शब्द-साखी) के आधार पर अनेक पंथ-संप्रदाय प्रचलित हुए और असंख्य जन संतभक्तों के रूप में आध्यात्मिक क्षेत्र में आए। यह प्रसन्नता की बात है कि आज के परिप्रेक्ष्य में उनके प्रवर्तित संत-मत का विभिन्न पंथ-संप्रदायों में बहुत बोलबाला है। जिनमें उनकी सारगर्भित वचन-वाणियों को प्रमुख मानकर, आदर सहित बोला अथवा गाया जाता है। परंतु उन सर्व-मिश्रित पंथों से अलग हटकर, विशुद्ध कबीरपंथ का अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

कबीरपंथ की शाखाओं में अनेक प्रचारक संत-महंत एवं विद्वान साधक भक्त हुए तथा वर्तमान में विद्यमान हैं। वे सब निज ज्ञान गरिमा के अनुसार अपने-अपने स्थान पर बड़े आदरणीय होते आए हैं। उन सबमें धर्मदास प्रणाली के नादवंश प्रतापी पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब कबीरपंथाचार्य (श्री कबीर धर्म स्थान, खरसिया एवं श्री कबीर बाग, लहरतारा, वाराणसी) का विशेष स्थान है। साधुता की अद्वितीय छवि लेकर वे कबीरपंथ के नभ पर उदित हुए हैं। उनका व्यक्तित्व और कर्तृत्व दोनों महान रहे हैं। उन-सी सहज-सरल सादगी कहीं देखने को नहीं मिलती। कठिन तप, उच्च त्याग, निश्छल व्यवहार तथा सहज परमार्थ आदि उनके नैसर्गिक गुण श्लाघनीय हैं। उनका विशाल हृदय करुणा एवं उदारता से परिपूर्ण सदा ममत्व भाव में स्थित रहा। उनका नाम स्मरण आते ही हृदय मंदिर में उनका वैराग्यवान संत स्वरूप दृष्टिगोचर होने लगता है। यद्यपि उनके सामीप्य का भावानुभव तथा उनके उत्कृष्ट जीवन का यथार्थ चित्रण करते नहीं बनता, तथापि उनकी पुण्य-स्मृति में उनके प्रति अपने अंतर मन के उद्गारों को प्रकट किए बिना रहा नहीं जाता। यथा —

वैराग्य-मूर्ति कुशल विवेकी धीर पारखी,
तुम शशि से शीतल, सुमनों से सहज सरल थे।
निष्काम कर्मयोगी, पूर्ण सिद्ध संन्यासी,
भवजल में तुम शांत चित्त के खिले कमल थे॥

वस्तुतः वे संसार में रहते हुए भी सांसारिक विषयों से कमलवत् अलग-अलग दिखाई पड़ते थे। सत्यता एवं पवित्रता का उनमें अपूर्व सामंजस्य था। वे हृदय से कुसुम समान कोमल, किंतु अपने सत्य सिद्धांत में सुदृढ़ थे। वे महान ओजस्वी, निष्काम कर्मयोगी थे। उनमें परमार्थ-कर्म करने का विशेष उत्साह एवं अद्‌भुत साहस था। परिस्थितियों के सामने वे कभी नहीं झुके। काल के सब आघातों को उन्होंने गंभीरता से सहन किया और सब कठिनाइयों का दृढ़ता से सामना किया। उनमें असीम धैर्य एवं क्षमा का बल था। उनका विनम्र-शील स्वभाव सबको अपनी ओर आकर्षित करता था। जो भी एक बार उनके संपर्क में आया, उनसे प्रभावित हुए बिना न रह सका। शरीर की आवश्यकता-भर के लिए वे थोड़ा विश्राम करते थे, परंतु आलस-निद्रा का उन पर जोर न था। वे सजग प्रहरी थे। सब ओर से स्वयं जाग्रत रहते हुए, वे सबको जगाते रहते थे। कर्म-कर्तव्य के क्षेत्र में वे कर्मठ महापुरुष थे और उनका पुण्य-परिश्रम परोपकार के लिए था। उनका संपूर्ण साधनामय जीवन दर्शनीय एवं वंदनीय रहा है।

बहुत खोजने पर भी उनके बाल्य-जीवन के परिचय का कुछ ठीक पता नहीं चल पाता। यही कहा जा सकता है कि उनका परिचय वे आप स्वयं थे, उसे अन्यत्र खोज पाना दुर्लभ है। तथ्यपूर्ण बात यह है कि शुभ-संस्कारों से युक्त भारतीय-संस्कृति में पल्लवित उनका विरक्त संत-जीवन सर्वदा धन्य रहा। महान आदरणीय पं. श्री हजूर मुकुन्द मणिनाम साहेब के कथनानुसार—"दीक्षा गुरु परम पूज्य महंत श्री रमणदास जी साहेब (कबीर मठ, रसीद चक, सिवान, बिहार) की शरणागति में आने के बाद से आपके दिव्य-जीवन का प्रारंभ होता है। उन्होंने आपको संत-वेशभूषा से संपन्न कर, आपका नाम नारायणदास रखा। आपको पूज्य पाद पं. श्री हजूर प्रकाशमणि नाम साहेब आचार्य कबीरपंथ से विशेष आध्यात्मिक चेतना मिली और कबीर धर्म स्थान, खरसिया (छत्तीसगढ़) आचार्य गद्दी के द्वारा कबीरपंथ की महान सेवा करने का शुभाशीर्वाद प्राप्त हुआ, सचमुच आपको इसी सेवा ने महान बनाया है।" उनके पश्चात 'पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब, कबीरवंशाचार्य' हो जाने पर, आपके स्वत्व में पंथ के कार्य-क्षेत्र का विस्तार एवं उत्तरोत्तर विकास होता गया, जिससे आपका सुयश सब ओर फैलता गया। आप में अपने-पराए का [illegible]धाभास न था। आप समदर्शी थे और मानवमात्र को समादरणीय समझते थे। आप सबके थे और सब आपके अपने थे। संत भक्तों का समुदाय ही आपका परिवार था, जिसमें आप [illegible] शोभित थे।

सद्‌गुरु कबीर साहेब को वे (पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब) [illegible]

मानते थे। सद्‌गुरु कबीर साहेब के प्रति उनका सत्यानुराग था और वे उनके सत्यज्ञान के अनन्य उपासक थे। सत्यज्ञान की साधना में रत रहते हुए वे सत्यनाम-ज्ञान का प्रचार-प्रसार करने में व्यस्त रहते थे। जाने कितने जिज्ञासु-जनों को सत्यनाम-ज्ञान की दीक्षा प्रदान कर उन्होंने संत एवं भक्त बनाया। अनेक भटके हुए लोगों को उनसे सन्मार्ग मिला, बहुत अतृप्तों को उनसे तृप्ति मिली और बहुत शरणहीनों ने उनकी शरण में आकर अपना जीवन कृतार्थ किया।

जीवन-कल्याण के लिए सद्‌गुरु कबीर साहेब ने सार्वभौम सत्य का उपदेश किया है, जो नित्य, अजन्मा, अविनाशी, शाश्वत एवं चेतन घट-घट में रम रहा है। समझने की बात यह है कि सत्य देह नहीं, विदेह है और वह देह में विद्यमान सत्यपुरुष है, उससे समस्त जीव संबद्ध हैं। उस सत्य को शब्दों में बांधा जाना अथवा उसका कोई चित्र-मूर्ति बना पाना अशक्य है, भक्ति-साधना की ज्ञान-युक्ति के द्वारा उसके अनुभव को उपलब्ध हुआ जाता है। जगत में जितने भी नाम लिए जाते हैं, वे सब नाशवान जड़-देह के विनाशी नाम हैं। परंतु सत्य तो सत्य है, वह सर्वोपरि अमृतस्वरूप है और उसका अन्य कोई नाम हो ही नहीं सकता। यथार्थ में सत्य का नाम केवल सत्यनाम ही है, या यूं कहिये कि विदेह सत्यपुरुष का नाम विदेह सत्यनाम है। सत्यनाम का उपासक सत्याचरण वाला होता है और सत्यनाम का जाप, ध्यान एवं सुमिरन सत्य के साक्षात्कार की उत्कृष्ट साधना है, बिना इसके सत्य को नहीं पाया जा सकता। सत्यनाम की महिमा को उजागर करने के लिए पूज्यपाद पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब जिस भी संत-समागम एवं सत्संग गोष्ठी में भाग लेते तो सर्व-प्रथम सत्यनाम का ही संकीर्तन करते थे। मंद मधुर स्वर में वे गाते थे—'सत्यनाम सत्यनाम सत्यनाम कहिए, जाहि विधि राखे साहेब ताहि विधि रहिए।' अर्थात सत्यनाम कहो एवं सत्याचरण करो और साहेब की दया (प्रारब्ध-रूप) से जैसा जीवन प्राप्त है, उसकी प्रत्येक स्थिति में सहज-भाव से रहो।

सत्य की विशेषता को वर्णित करते हुए तथा उसके प्रयोग पर जोर देते हुए वे कहते थे, 'गुरु हो तो सद्‌गुरु, नाम हो तो सत्यनाम, ज्ञान हो तो सत्यज्ञान, युग हो तो सत्ययुग और लोक हो तो सत्यलोक। इस प्रकार यदि संपूर्ण जीवन सत्य से ओत-प्रोत हो तो निस्संदेह जीव (मनुष्य) आवागमन (जन्म-मरण) से छूट जाएगा।' किसी भी सेवक की भक्ति की कामना अथवा वेदना को परखकर वे दया भाव से समझाते हुए कहते थे, 'सद्‌गुरु की भक्ति तथा सत्यनाम का प्रचार करो, कल्याण हो जाएगा, तुम्हारी बिगड़ी बन जाएगी।' उनका यह शुभाशीर्वाद भक्तों के लिए वरदान सिद्ध होता था और वे मंगलमय जीवन व्यतीत करते थे। सदाचार एवं सत्यज्ञान का सारोपदेश करते हुए, वे कुछ परमावश्यक नियमों का पालन करने पर सर्वाधिक बल देते थे, यथा—मांस भक्षण न करना, मद्यपान न करना, भांग-तंबाकू का सेवन न करना, जुआ न खेलना, चोरी न करना, सब जीवों पर दया करना अर्थात यथाशक्ति उनकी सेवा-सहायता करना और मन-मनेंद्रियों को संयमित

रखते हुए सद्गुरु की भक्ति करना। इन नियमों को वे जीवन-कल्याण के मंत्र कहते थे। सर्व सुख-शांति तथा बिगड़ी बात को बनाने के लिए वे मन को ज्ञान-गंगा में नहाने की सम्मति देते थे। सदाचार, सत्यज्ञान एवं उक्त सर्व-नियमों के पालन से, वे एक व्यक्ति अथवा एक समाज को ही नहीं, अपितु पूरे भारतवर्ष को बचाने तथा उसके कल्याण (सुख-समृद्धि) की बात करते थे। मानवता के आधार पर वे विश्व में शांति एवं जन-जन में सद्भावना की चर्चा करते थे। सद्गुरु कबीर साहेब के वचनानुसार वे ऐसे आदर्श मानवधर्म की सीख देते थे, जिसमें सभी मानव समान स्नेह एवं आदर पाएं, सबमें पारस्परिक सौहार्द्र-एकता हो तथा सभी सुखी और स्वस्थ हों।

विस्तृत कबीरपंथ के इतिहास में वंदनीय पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब ने जो सर्वोत्कृष्ट कार्य किया, वह परमेष्ट सद्गुरु कबीर साहेब के प्राकट्य स्मारक का निर्माण करना है। आज से लगभग 605 वर्ष पूर्व वि.सं. 1455 में वाराणसी (उ.प्र.) लहरतारा तालाब के कमल-पत्र पर, जहां सद्गुरु कबीर साहेब का दिव्य प्राकट्य हुआ, उन्होंने उनके नाम का विशाल स्मारक बनवाया। हमारे भारत देश में जन-गण-मन को आकृष्ट करने वाला यह स्मारक एकमात्र ऐसा दर्शनीय स्थल है, जहां सद्गुरु कबीर साहेब के ज्योतिर्मय जीवन-दर्शन के साथ-साथ उनके निर्मल, निर्पेक्ष एवं निर्भ्रांत ज्ञान का सुख-लाभ मिलता है। वस्तुत: उनके गहन-चिंतन एवं महान पराक्रम से निर्मित यह स्मारक, सद्गुरु कबीर साहेब के प्रति उनके अद्वितीय प्रेम का प्रतीक है।

विश्ववंद्य सद्गुरु कबीर साहेब की प्राकट्य भूमि 'लहरतारा' काशी (उ.प्र.) में सदियों से उपेक्षित पड़ी हुई थी। व्यापक कबीरपंथ में बहुत संत-महंत एवं पंथ संचालक आचार्य पं. श्री हुए और उन्होंने सद्गुरु कबीर साहेब के नाम-ज्ञान को लेकर अपने-अपने आश्रम, मंदिर, धर्मशाला तथा अस्पताल आदि बनवाए, परंतु आश्चर्य है कि सद्गुरु कबीर साहेब की प्राकट्य-भूमि के विकास की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। यद्यपि यह सभी मानते आए हैं कि सद्गुरु कबीर साहेब का प्राकट्य काशी में लहरतारा तालाब पर हुआ, फिर भी उसकी ओर कोई आकृष्ट क्यों नहीं हुआ अथवा उसके उत्थान का विचार किसी ने क्यों नहीं किया? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, जो समस्त कबीरपंथानुयायियों पर लागू होता है। संभवत: इसके उत्तर में मौन रहने के अतिरिक्त और किसी के पास चारा भी क्या है?

सद्गुरु कबीर साहेब के प्रमुख शिष्यों में अन्यतम शिष्य धर्मदास जी हुए और प्राय: यह सर्वमान्य है कि सद्गुरु कबीर साहेब के सत्य मत का सर्वाधिक प्रचार-प्रसार धर्मदास जी एवं उनके वचन-वंश ने किया। धर्मदास-प्रणाली के वचन-वंश में बिंद एवं नाद-वंश का प्रादुर्भाव हुआ। बिंद-वंश भी उक्त प्राकट्य भूमि की ओर से अनभिज्ञ अथवा शांत रहा। सद्गुरु कबीर साहेब की प्राकट्य भूमि के विकास की ओर ध्यान गया तो केवल एक नादवंश प्रतापी पं. श्री हजूर

उदितनाम साहेब का, जिन्होंने काशी लहरतारा की पड़ी उस उपेक्षित भूमि पर कबीर प्राकट्य स्मारक बनवाकर उसे गौरवान्वित किया। बहुत से संत-भक्तों का कथन है कि स्वयं सद्गुरु कबीर साहेब ने उनको अपना तेज-बल प्रदान कर, स्मारक बनाने को प्रेरित किया। उनके परमानुरागी स्व. सेठ श्री दीनदयाल गोयल (रतनपार्क, नई दिल्ली) तो जोरदार शब्दों में कहते थे कि उन (पं. श्री हजूर साहेब) जैसा संत न तो आज तक हुआ है और न होगा। उनके प्रिय अनुयायी महंत जीवन दास साहेब (सत्यधाम कबीर आश्रम, सोजत सिटी, राजस्थान) का विश्वास है कि वे धर्मदास-वचन-वंश-प्रणाली के तीसरे वंश कुलपतिनाम साहेब के अवतार थे, जो अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए नादवंश में उदित हुए। किंवदन्तियां कुछ भी हों, परंतु यह सत्य है कि उन्होंने जो अनूठा कार्य किया, उसे कोई न कर सका। विवेचनात्मक दृष्टिकोण से उन्हें किसी भी ओर से निहारें, वे हीरे के समान समुज्ज्वल दिखाई पड़ते हैं। अतएव सब ओर से वे स्तुत्य एवं वंदनीय हैं। कबीरपंथ के इतिहास में अपने अपूर्व पुरुषार्थ तथा पारमार्थिक संतजीवन से पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब सदा स्मरणीय रहेंगे।

सद्गुरु कबीर प्राकट्य स्मारक

वाराणसी (उ.प्र.) में सद्गुरु कबीर साहेब का प्राकट्य स्थल लहरतारा तालाब कीचड़-पानी से भरा था, अत: वहां स्मारक-भवन बनाना सहज न था। उसकी कल्पनामात्र से मन चिंतित हो उठता था। उसके लिए कुशल-नीति, प्रचुर धन तथा असीम श्रम-बल की आवश्यकता थी। इसके अतिरिक्त भी कुछ ऐसी समस्याएं थीं, जिनका समाधान कठिन था। परम पूज्य पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब ने यथा-स्थिति पर गंभीरता से विचार किया और इसके बनवाने का निर्णय लिया। उनका संकल्प अटल था तथा उनमें अभूतपूर्व साहस था। उन्होंने सभी कठिनाइयों का डटकर सामना किया। स्मारक की सुदृढ़ स्थिति के लिए 26 फुट गहराई से चौड़ी नींव को उठाया गया, तब उसके ऊपर भवन-निर्माण का कार्य सुचारु रूप से प्रारंभ हुआ। समयानुसार उसका क्रमश: विकास होता गया और वह ऊंचा उठता गया।

पूज्य गुरुवर पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब ने स्मारक-निर्माण में दान-पुण्य एवं भरपूर सहयोग सहायता के लिए अपने समस्त संत-भक्तों का आह्वान किया। जिसके फलस्वरूप उनके अनेकानेक प्रिय अनुयायियों ने इस महान कर्मयज्ञ में भाग लेकर यथाशक्ति निज तन-मन-धन का योगदान किया। स्मारक बनता गया और जो कुछ कहीं से प्राप्त होता, वे इसमें लगाते गए। इस प्रकार स्मारक के निर्माण में बहुत वर्ष व्यतीत हो गए। इस स्मारक के लिए उन्होंने कितने कष्ट उठाए, कितना अथक परिश्रम किया तथा दिन-रात कितना चिंतन-मनन किया, उसे शब्दों में कह पाना कठिन है। अपनी संत-मंडली के साथ सब ओर घूम-घूमकर सत्संग-प्रवचन

एवं धर्म प्रचार-प्रसार करते हुए, वे किस प्रकार इतना धन जुटाकर इस स्मारक-भवन को अंतिम मंजिल तक पहुंचा पाए, उस सबको बस स्वयं वे ही जानते थे। इसके लिए वे विदेशों में भी गए और वहां के उदार-भक्तों से प्राप्त सेवा-धन को लाकर इसमें लगाया। सद्गुरु कबीर साहेब के प्रति उनकी अनन्य श्रद्धा-भक्ति एवं सत्यानुराग को दर्शाते हुए इस सद्गुरु कबीर प्राकट्य-स्मारक में मानो सत्यलोक की आभा व्याप्त है, जो उन्होंने जन-कल्याणोद्देश्य के लिए बनवाया। उनके भावानुसार इस स्मारक से निकलती हुई सत्यज्ञान-रश्मियां चिरकाल तक मानवमात्र को सत्य-पथ दर्शाती रहेंगी।

अपने संकल्प के अनुरूप वंदनीय पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब ने सद्गुरु कबीर प्राकट्य स्मारक को शीर्ष तक निर्मित करा दिया। कदाचित इस स्मारक एवं अपने संत भक्तों के साथ उनको यहीं तक रहना था, इससे आगे विधि अनुसार उनका ठहर पाना संभव नहीं था। इधर वे अपने संकल्प-कर्म से भले संतुष्ट प्रतीत हो रहे थे, उधर उनकी जीवन यात्रा पूर्ण होने को थी। वे अस्वस्थ थे, तो भी कबीर आश्रम जामनगर (गुजरात) के कबीर षट शताब्दी समारोह में भाग लेने गए। वहां और अधिक अस्वस्थ होने की दशा में उनको समर्पण अस्पताल में भर्ती कराया गया, जहां 8 जनवरी, सन् 1998 की रात उन्होंने अपनी नश्वर देह का त्याग कर दिया। अविनाशी चैतन्य सत्ता स्वरूप में समाहित हो गई और वे सदा के लिए मोक्ष धाम सत्यलोक में वास कर गए। सचमुच वे धन्य थे, सद्गुरु कबीर प्राकट्य धाम बनाने तथा इसके प्रागंण में इसकी पावन-स्मृति के साथ विलीन हो जाने का गौरव उन्हीं को प्राप्त हुआ।

चिर स्मरणीय पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब की शाश्वत आत्मा का आलोक सद्गुरु कबीर प्राकट्य स्मारक लहरतारा में विराजता है। इससे बहुत लोग प्रभावित होते हैं और इसके दर्शन से स्वयं को कृतार्थ करते हैं। इस स्मारक के विकास का कार्य आज भी जोरों पर हैं, क्योंकि इसके सजाने-संवारने का कार्य अभी बहुत शेष है। उनके सत्यानुयायी परम पूज्य पं. श्री हजूर मुकुन्दमणिनाम साहेब एवं परमादरणीय श्री धर्माधिकारी विजयदास शास्त्री जी साहेब के सुप्रबंध में पंथ का प्रचार-प्रसार और इस स्मारक का विकास कार्य भली-भांति चल रहा है। इस स्मारक के नीचे के तल पर पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब की सुंदर समाधि उनके अनन्य शिष्य स्व. सेठ श्री दीनदयाल गोयल धर्मपति भक्तिमति आज्ञावती देवी (रतनपार्क, नई दिल्ली) ने बनवाई और ऊपर सद्गुरु कबीर साहेब के प्राकट्य की प्रमुख झांकी के बाईं ओर उनकी मनमोहक मूर्ति उनके कृपापात्र भक्त श्री कैलाश पी. सांखला (पाली, राजस्थान) ने लगवाई। स्मारक के शीर्ष पर स्वर्ण-कलश चढ़ाने का श्रेय महान भक्त श्री पालनभाई गाला (मुंबई, महाराष्ट्र) को है। उनके एक अन्यतम शिष्य श्री कालूराम (सोजत सिटी राजस्थान) हैं, जो उनके अनेक सेवा-कार्यों तथा स्मारक के उत्तरोत्तर विकास में सदा तन-मन-धन से लगे रहे हैं, उन्होंने उनकी मूर्ति उनके

निवास कबीर बाग आश्रम कमरा न. 1 में लगवाई। इस प्रकार सद्‌गुरु कबीर प्राकट्य स्मारक के विकास में अनेकानेक संत-भक्तों का सहयोग है और यह खुली घोषणा है कि कोई भी उदारचित्त सज्जन सेवा-दान देकर उसके महापुण्य का भागीदार बन सकता है।

इस धर्म स्थान सद्‌गुरु कबीर प्राकट्य धाम लहरतारा पर प्रतिवर्ष ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी-त्रयोदशी एवं चतुर्दशी को कबीर जयंती महोत्सव हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस शुभ अवसर पर विराट संत-समागम का सुआयोजन होता है, जिसमें अनेक संत-महंत तथा सुविज्ञ महापुरुष उत्साहपूर्वक भाग लेते हैं। इसमें असंख्य श्रद्धालु सेवक-भक्त यहां आकर सद्‌गुरु कबीर साहेब की शब्द-वाणियों और संतों के सत्संग-प्रवचन का लाभ उठाते हैं। इसी प्रकार प्रति वर्ष जनवरी मास में निर्धारित समय पर सत्यलोकवासी पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब की पुण्य-तिथि अत्यंत श्रद्धा-भाव से मनाई जाती है। जिसमें दूर-दूर से आए बहुत-से श्रद्धालु संत-भक्त, नेमी-प्रेमी एवं सती-सेवक उनकी समाधि पर चादर चढ़ाकर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और भजन-वाणी, सत्संग-प्रवचन तथा सात्विक यज्ञ-चौका आरती का भरपूर आनंद लेते हैं।

प्रस्तुत 'अनुराग सागर' ग्रंथ के प्रति पूज्यपाद पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब की परम आस्था थी। वे इसमें वर्णित समस्त ज्ञान, सिद्धांत एवं विषयों को हृदय से स्वीकारते थे। जीवन-कल्याण निमित्त इसमें उल्लिखित मतानुसार गुरु-पूजा की विशेष विधि चौका-आरती तथा जिज्ञासु-जनों को सत्यज्ञान-दीक्षा प्रदान करते थे। इस ग्रंथ-सृजन के प्रमुख पात्र धनी धर्मदास जी, जो सद्‌गुरु कबीर साहेब से संवाद रूप में प्रदर्शित हैं, उन्हीं की 'वचन-वंश-प्रणाली' में नादवंश के वे तृतीय महान पं. श्री कबीरपंथाचार्य हुए हैं। अतएव उन्होंने जीवन-भर धर्मदास-प्रणाली की मत-मर्यादा का अनुपालन करते हुए सद्‌गुरु कबीर साहेब के उपदेशित सदाचार-सत्यज्ञान का प्रचार-प्रसार किया। मैं अकिंचन उनके दासों का दास उन्हीं की कृपा के फलस्वरूप इस ग्रंथ पर लिखने का साहस जुटा सका। उन अपने पूज्य सद्‌गुरु (पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब) के श्री चरण-कमलों में मेरा शत-शत बार विनम्र प्रणाम।

—जिज्ञासु

॥ सत्यनाम ॥

अथ अनुराग सागर प्रारंभ

(सरल टीका एवं विशेष भावों सहित)

सत्सुकृत आदि अदली अजर अचिंत पुरुष मुनींद्र

करुणामय कबीर सुरतियोग संतायन

धनी धर्मदास चूड़ामणिनाम सुदर्शननाम

कुलपतिनाम प्रमोदगुरुबालापीर केवलनाम

अमोलनाम सुरतिसनेहीनाम हक्कनाम

पाकनाम प्रगटनाम धीरजनाम

उग्रनाम दयानाम साहेब एवम्

पं. श्री ग्रंधमणिनाम

पं. श्री प्रकाशमणिनाम

पं. श्री उदितनाम

पं. श्री मुकुंदमणिनाम

साहेब की दया

सर्व संत-महंतों की दया
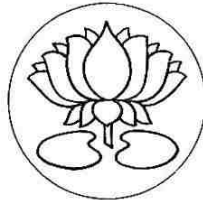
॥ सत्यनाम ॥

सद्गुरवे नमः

ज्ञान-जिज्ञासा

मंगलाचरणम्

॥ छंद ॥*

प्रथम वन्दौं सतगुरु चरण जिन, अगम गम्य लखाइया।
गुरु ज्ञानदीप प्रकाश करि, पट खोलि दरश दिखाइया॥
जिहि कारणे सिद्धया पचे सो, गुरु कृपा ते पाइया।
अकह मूरति अमिय सूरति, ताहि जाय समाइया॥ 1॥

सद्गुरु कबीर साहेब के परम शिष्य श्री धनी धर्मदास जी विनम्रतापूर्वक कहते हैं कि सबसे पहले मैं सद्गुरु के श्रीचरणों की वंदना करता हूं,[1] जिन्होंने कृपा कर मुझे मन-बुद्धि की पहुंच से बाहर तथा भीतर की दोनों स्थितियों को भली-भांति लखा-परखा दिया। सद्गुरु ने अपने सत्यज्ञान रूपी दीपक के दिव्य प्रकाश से मेरे हृदय के अज्ञानांधकाररूपी परदे को हटाकर, मुझे निज चैतन्य स्वरूप एवं सत्यपुरुष का दर्शन (साक्षात्कार) करा दिया।

जिसकी प्राप्ति के लिए बड़े-बड़े सिद्ध योगी-मुनिजन पचते-तपते रहे, अर्थात अंतिम सांस तक प्रयासरत रहे और फिर भी असफल रहे, वह पुण्य-परमात्मा-दर्शन मैंने गुरु कृपा से सहज ही पा लिया। सत्यपुरुष परमात्मा, जिसके आकार-प्रकार को शब्दों में कहा नहीं जा सकता तथा जो अमृत (अविनाशी) सुरतिस्वरूप आनंदमय है, मैं उसमें जाकर समा गया, अर्थात जीवनमुक्त हो गया।

गुरुदेव पूर्ण हैं

॥ सोरठा ॥

कृपासिन्धु गुरुदेव, दीनदयालु कृपालु हैं।
विरले पावहिं भेव, जिन चीन्ह्या परगट तहां॥ 1॥

सद्गुरु देव दया के सागर हैं, दीन-जनों पर दया करने वाले महान कृपालु हैं। वे पूर्ण समर्थ हैं, कोई विरले उनके अनन्य शरणागत-भक्त उनके भेद को जान

---

* हरिगीतिका

1. जीवन में सर्वाधिक महत्व ज्ञान का है। सब कुछ पास होते हुए भी यदि ज्ञान न हो, तो सब व्यर्थ है। ज्ञान से जगत में सुखपूर्वक जीते हुए अंततः मोक्ष-पद की प्राप्ति होती है। ज्ञानप्रदाता गुरु हैं, उन्हीं की कृपा से मुमुक्षु जन ज्ञान प्राप्त कर भ्रम-मुक्त होता है। अतः सर्व-प्रथम गुरु का ध्यान-सुमिरन एवं उनकी सेवा-बंदगी करना परम कर्तव्य है।

पाते हैं और कोई उनकी कृपा से जो जहां पर भक्ति-भाव से उन्हें पहचानता, समझता एवं सुमिरन करता है, वहां वे साक्षात प्रकट होते हैं, अथवा ज्ञान-स्वरूप में उस साधक के अंत:करण में उभर आते हैं।

अधिकारी कौन है?

॥ छंद ॥

कोई बूझई जन जौहरी, जो शब्द की पारख करै।
चित लाय सुनहिं सिखावनो, हित जानि के हृदय धरै॥
मोहतम समज्ञान रवि जब, प्रगट होय तब सूझई।
कहत हूं अनुराग सागर, संत कोई कोई बूझई॥ 2॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जो शब्द की परख करता है और उसके गुण-मूल्य को भली-भांति समझता है, ऐसा कोई श्रद्धावान जिज्ञासु-जौ हरी-जन ही इस ग्रंथ के सत्यज्ञान को जानेगा। सद्गुरु के सदुपदेश को वह (सच्चा ज्ञानाधिकारी) चित्त लगाकर (ध्यानपूर्वक) सुनता है और अपना हित जानकर उसे हृदय में धारण करता है।

जब प्रदीप्त सूर्य के समान सद्गुरु का सत्यज्ञान हृदय में प्रकट (प्रकाशित) होता है, तब मोहांधकार[1] नष्ट होकर सब ठीक-ठीक सूझने लगता है, अर्थात शुद्ध-बुद्धि हो जाती है, भ्रम नहीं रहता। सत्यज्ञान-प्राप्ति के लिए अब मैं अनंत भक्ति एवं प्रेम से परिपूर्ण यह अनुराग सागर (ग्रंथ) कहता हूं, जिसे कोई विरला सच्चा संत ही समझेगा, सामान्य-जन नहीं।

बिना अनुराग वस्तु (लक्ष्य) को पा नहीं सकते

॥ सोरठा ॥

कोई इक संत सुजान, जो मम शब्द बिचारई।
पावै पद निर्बान, बसत जासु अनुराग उर॥ 2॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि असंख्यों में कोई एक ज्ञानवान संत-सज्जन होता है, जो मेरे सार-शब्द को गंभीरतापूर्वक विचार कर धारण करता है। जिसके पवित्र हृदय में सद्गुरु (सत्पुरुष परमात्मा) के प्रति सच्चा अनुराग (भक्ति-प्रेम) बसता है, वही सर्व-बंधनों से छूटकर मोक्ष-पद पाता है।

---

1. मोह अज्ञान का विकट रूप है। मोहांधकार में फंसा विभ्रांत जीव सत्य-असत्य एवं उचित-अनुचित का निर्णय नहीं ले पाता। वह जीवन-भर अपने शरीर, घर-परिवार तथा धन-संपत्ति आदि सांसारिक माया-मोह में भटकता हुआ यूं ही मर जाता है। मोह-कामना से बंधा होने के कारण उसे पुनर्जन्म धारण करना पड़ता है। इस प्रकार वह सदा जन्म-मरण का दुख भोगता रहता है। सद्गुरु के मोह-रहित सत्यज्ञान को विचार कर कोई सच्चा संत साधक ही भवसागर से पार उतरता है। कबीर साहेब कहते हैं—

सब घट मोह समाइया, सबै भया अंधियार।
निर्मोह ज्ञान विचारि के, साधू उत्तरे पार॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

धर्मदास वचन
अनुरागी के लक्षण विषयक प्रश्न
॥ चौपाई ॥

हे सतगुरु विनवौं कर जोरि। यह संशय मेंटहु प्रभु मोरी॥
जाके चित अनुराग समाना। ताकर कहो कवन सहिदाना॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब के आशीर्वचन सुनकर धनी धर्मदास जी बोले कि हे सद्‌गुरु प्रभु! मैं हाथ जोड़कर आपसे विनती करता हूं कि मेरे मन में उत्पन्न हुआ यह संशय मिटाओ। जिसके चित्त में सतपुरुष परमात्मा के प्रति सच्चा अनुराग समाया है, उसका वास्तविक लक्षण अथवा पहचान क्या है?

॥ चौपाई ॥

अनुरागी कैसे लखि परई। बिनु अनुराग जीव नहिं तरई।
सो अनुराग प्रभु मोहिं बताऊ। देइ दृष्टांत भले समुझाऊ।

अनुरागी (प्रेमी) कैसे देखकर समझा जा सकता है? आपके कथनानुसार बिना अनुराग जीव भवसागर नहीं तरेगा। हे प्रभु! वह अनुराग मुझे बताओ, उसके दृष्टांत देकर मुझे भली-भांति समझाओ।

सतगुरु वचन
अनुरागी के दृष्टांत
॥ चौपाई ॥

धर्मदास परखहु चित लाई। अनुरागी लच्छ कहुं समुझाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! चित्त लगाकर परखो, अर्थात भली प्रकार समझो, मैं अनुरागी के लक्षण समझाकर कहता हूं।

मृगा का दृष्टांत
॥ चौपाई ॥

जैसे मृगा नाद सुनि धावै। मगन होय व्याधा ढिग आवै॥
चित कछु संक न आवै ताहि। देत सीस सो नाहीं डराही॥
सुनि सुनि नाद सीस तिन दीन्हा। ऐसे अनुरागी कहं चीन्हा॥

जैसे—हिरन मधुर नाद-शब्द को सुनकर दौड़ता है और उसमें मगन होकर वह स्वयं नाद बजाने वाले शिकारी के पास चला जाता है तथा पकड़ा जाता है।

उस मनोहर नाद स्वर के सुनने में मस्त हिरन के चित्त में अपने पकड़े जाने अथवा मरने की तनिक भी शंका नहीं होती, वह उसमें इतना लवलीन हो जाता है कि शिकारी के पकड़ लेने पर भी अपना शीश देते हुए नहीं डरता।

जिस प्रकार नाद-शब्द को सुन-सुनकर मस्त हुए हिरन ने शिकारी को अपना शीश दे दिया, ऐसे ही सच्चे अनुरागी (प्रेमी) को चीन्हो, अर्थात पहचानो।

विशेष—स्वाभाविक रूप से हिरन नाद शब्द का महान प्रेमी होता है। उसे पकड़ने के लिए शिकारी जाल बिछाकर स्वयं छिप जाता है तथा सुरीला नाद-शब्द गुंजाता है। वह हिरन उस नाद शब्द के सुनने में मग्न हुआ शिकारी के जाल में फंस जाता है और मारा जाता है। आशय यह है कि जैसे नाद-शब्द में मग्न हिरन निर्भीक-भाव से शिकारी को अपना शीश कटवा देता है, वैसे सच्चा अनुरागी अपने परमोद्देश्य सत्यपुरुष परमात्मानुराग में स्वयं को समर्पित कर अपने जीने-मरने की परवाह नहीं करता। सद्गुरु कबीर साहब अनुराग (प्रेम) का घर ऊंचा बताते हुए कहते हैं कि जब अपना सिर काटकर सद्गुरु के चरणों में रखे, तब ही इसमें कोई संत-साधक बैठ सकता है। यथा—

यह तो घर है प्रेम का, ऊंचा अधिक इकंत।
शीष काटि पग तर धरै, तब पैठे कोई संत॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

पतंग का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

औ पतंग को जैसो भाऊ। ऐसे अनुरागी उर आऊ॥

सद्गुरु कबीर साहेब दीपक से पतंग (शलभ-कीट) के अनुराग-प्रेम का ज्ञानवर्धक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि जैसे पतंग का स्वभाव दीप से प्रेम कर जल मरने का होता है, वैसे ही किसी सच्चे अनुरागी का हृदय।

विशेष—जलते हुए दीपक की लौ (शिखा) से पतंग का अत्यंत प्रेम होता है, यहां तक कि वह उससे वशीभूत हुआ उसमें जलकर मर जाता है। दीपक की लौ से लगन लगाए हुए, वह उस पर स्वयं को न्यौछावर करने में तनिक भी नहीं हिचकता तथा न किसी संशय में पड़ता है। ऐसे ही सच्चा अनुरागी अपने इष्ट परमेश्वर को समर्पित हो जाता है। वह अपने इष्टानुराग में जीवन की सांस-सांस को भेंट चढ़ा देता है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जो 'आठ पहर चौंसठ घड़ी लागि रहे अनुराग' वही सच्चा अनुरागी है।

सती का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

और लच्छ सुनियो धर्मदासा। सतगुरु शब्द करो प्रकासा॥

सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे धर्मदास! अनुरागी के और लक्षण ध्यानपूर्वक सुनो तथा सद्गुरु के सुने हुए अनुराग के शब्द, सदुपदेश का पुण्य प्रकाश (प्रचार-प्रसार) करो।

॥ चौपाई ॥

जरत नारि ज्यों भूतपनि संगा। तनिको जरत न मोरत अंगा॥
तजै सुगृह धन धाम सहेली। पिय विरहिन उठि चलै अकेली॥

जिस प्रकार अनन्य प्रेमवश सती नारी अपने मृतक-पति के साथ जलती है, और जलते हुए तनिक भी अपने अंगों को नहीं मोड़ती-सिकोड़ती, अग्नि से बाहर नहीं निकालती, अर्थात किंचित्‌मात्र विचलित नहीं होती। सुंदर घर-परिवार, धन-धाम तथा सब सखी-सहेलियों को विरक्त-भाव से छोड़कर वह अपने प्रिय पति की वियोगिन (सती नारी) पति के मृतक शरीर के साथ स्वयं उठकर अकेली चल पड़ती है।

॥ चौपाई ॥

सुत लै लोगन आगे कीन्हा। बहुत मोह ताकहं पुनि दीन्हा॥
बालक दुर्बल तोहि बिनु मरिहैं। घर भो सुन्न काहि विधि करिहैं॥

सती होने से उसे रोकने के लिए आस-पास के बहुत लोग उसके प्यारे पुत्र (सब बच्चों) को उसके सामने लाते हैं और उनके प्रति उसके मोह-ममता का बार-बार बहुत बखान करते हैं। उसे समझाते हुए वे कहते हैं, देख! तेरे ये छोटे-छोटे अबोध बच्चे बहुत कमजोर हैं, तेरे बिना यूं ही मर जाएंगे। तेरा घर भी सूना हो गया, अब तेरे बिना किस विधि से क्या होगा?

॥ चौपाई ॥

बहुत संपति तुम्हरे घर अहई। पलट चलहु गृह अस सब कहई॥
ताके चित कछु व्यापे नाहीं। पिय अनुराग बसै हिय माहीं॥

विचार कर कि तेरे घर में बहुत धन-संपत्ति है, निराश न हो और वापिस घर लौट चल। ऐसा सब उसे कहते-समझाते हैं। परंतु उसके चित्त में उन लोगों के समझाने का कुछ भी अंश नहीं व्यापा, अर्थात किसी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उसके हृदय में तो केवल अपने प्राण-पति का अद्वितीय प्रेम ही बसता है, और उसे कुछ नहीं सूझता।

॥ छंद ॥

तेहि बहुत कहि समुझावहीं, नहीं नारि समुझत स्यो धनी।
नहिं काम है धन धाम सों, कछु मोहि तो ऐसी बनी॥
जग जीवना दिन चारि है, कोइ नाहिं साथी अंत को।
यह समुझि देखो ऐ सखी, ताते गह्यो पद कंत को॥ 2॥

उसको सबने बहुत कहा-समझाया, परंतु अपने पति-प्रेम की धनी वह वियोगिनी सती नारी किसी की कोई बात नहीं समझी। वह अविचलित भाव से उत्तर देती है, "अपने पति के वियोग में मैं तो कुछ ऐसी दीवानी बनी हूं कि मुझे कुछ नहीं सुहाता, धन-धाम आदि से अब मेरा कोई काम नहीं है, अर्थात मुझे किंचित्‌मात्र भी कोई चाह नहीं है। इस जगत में चार दिन का जीवन जीना है, फिर अंत में मृत्यु के समय कोई किसी का साथी नहीं होता (सब छूट जाते हैं, अकेले

ही जाना होता है)। इस प्रकार हे सखी! मैंने सब भली-भांति विचार-समझकर देख लिया है और तब इसीलिए मैंने अपने पति के श्री चरणों को पकड़ा है, अर्थात पति-संग सती होने का निश्चय किया है।''

॥ सोरठा ॥

लिये पिया कर मांह, जाय सरा ऊपर चढ़ी।
गोद लियो निज नांह, राम नाम कहते जरी॥ 2 ॥

ऐसा कहकर वह पति-प्रेमानुरागिनी सती अपने पति के मृतक-शरीर को हाथों में लिए चिता पर चढ़ गई और प्राण-पति के शव को गोद में लेकर, सर्वाधार अंतर्यामी राम-नाम कहते-जपते हुए चिताग्नि में जल गई।

विशेष—*सती नारी सदा अपने पति के संग परम सुख का अनुभव करती है। हर स्थिति में पति ही उसके लिए सब कुछ होता है। अत: पति के मरणोपरांत भी अनुरागवश उसके साथ सती होने में उसे कोई संकोच नहीं होता। वह अच्छी प्रकार समझती है कि यह मनुष्य जीवन मात्र चार दिन का है, अर्थात बाल्य, कौमार, यौवन एवं बुढ़ापा। मनुष्य-जीवन की इन चार दशाओं को पार करते हुए यह शरीर छूट (मर) जाना है। अत: वह जीवन से मोह कदापि नहीं करती और सांसारिक सुख-साधनों, घर-परिवार तथा जन-समाज की ओर भी आकर्षित नहीं होती। यही उसकी महान तपश्चर्या एवं भक्ति है। अपने पति-परमेश्वर के लिए सती-नारी का ऐसा अनूठा अनुराग धन्य है, जो कि प्रेम एवं भक्ति की पराकाष्ठा है। समस्त संत-भक्तों के लिए यह एक आदर्श उदाहरण है।*

अनुराग अपने इष्ट सद्गुरु के प्रति हो, देश के प्रति हो अथवा अन्य किसी शुभ लक्ष्य के लिए हो—वह अत्यंत प्रभावशाली होता है, उसकी मस्ती एवं मतवालापन अद्भुत होता है। सच्चा अनुरागी अपने इष्टानुराग में संसार की सब मर्यादाओं को लांघकर अपना उत्सर्ग (बलिदान) तक कर देता है। वस्तुत: जब तक हृदय में सच्चा अनुराग उत्पन्न नहीं होता, तब तक यथार्थ साधना-सिद्धि नहीं मिलती। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जिसके चित्त में अनुराग है, उसी मनुष्य को ज्ञान मिलता है। चाहे करोड़ों उपाय करें, किंतु बिना अनुराग (ज्ञान-मोक्ष) नहीं पा सकते। यथा—

जाके चित अनुराग है, ज्ञान मिले नर सोय।
बिन अनुराग न पावई, कोटि करे जो कोय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

प्रमुख निर्देश—*उपर्युक्त दृष्टांत का कृपया कोई अनुचित अर्थ न लगाए। यह सती होने का कोई उपदेश नहीं, अपितु सती-अनुराग का एक उदाहरण मात्र है, जिससे कल्याणेच्छुक साधक-भक्त एवं पाठकवर्ग अनुराग का महत्व समझते हुए अपने इष्ट-सद्गुरु के प्रति भक्ति-प्रेम सुदृढ़ कर सकें।*

तत्वानुरागी[1] के लक्षण

॥ चौपाई ॥

धर्म येह अनुरागी बानी। तुम तत देख कहूं बिलछानी॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! यह अनुराग की मधुर वाणी (उपदेशात्मक-दृष्टांत), मैंने तुम्हारी परम जिज्ञासा को देखते हुए पूर्णतः छानकर, अर्थात शुद्ध निर्णय कर कही है।

॥ चौपाई ॥

ऐसे जो नामहिं लौ लावै। कुल परिवार सभी बिसरावै॥
नारी सुत को मोह न आने। जीवन जनम सपन करि जाने॥

ऐसे (उपर्युक्त दृष्टांतों की भांति) जो कल्याणार्थी सद्‌गुरु परमात्मा का सच्चा अनुरागी है, वह उसके सत्यनाम-ज्ञान से सच्ची लगन (प्रेम) लगाए और (विघ्न एवं मोह उत्पन्न करने वाले) कुल-परिवार (वंश-जाति-गोत्र) सबको भुला दे। पुत्र एवं स्त्री आदि का मोह मन में कदापि न आने दे और जन्म से मृत्यु तक के संपूर्ण जीवन को स्वप्न के समान समझे, अर्थात असार जानकर इसकी आसक्ति में न पड़े।

॥ चौपाई ॥

जग में जीवन थोरो भाई। अंत समय सो नाहिं सहाई॥
बहुत पियारि नारि जग माहीं। मातु पिताहु जाहि सम नाहीं॥

हे भाई! इस जग में जीवन बहुत थोड़ा है और अंत में मृत्यु के समय कोई सहायक नहीं होता। अतः व्यर्थ की आशा-तृष्णा में नहीं पड़ना चाहिए। अंत में सभी साथ छोड़ देते हैं और यह जीव अकेला अपनी करनी अनुसार गति को प्राप्त होता है। इस संसार में प्रायः लोगों को स्त्री बहुत प्यारी होती है, जन्म देने वाले तथा पालन-पोषण करने वाले माता-पिता भी उसके समान प्यारे नहीं लगते।

॥ चौपाई ॥

तिहि कारण नर सीस जु देही। अंत समय सो नाहिं सनेही॥
निज स्वारथ कहं रोदन करई। तुरतहि नैहर को चित धरई॥

उस स्त्री के लिए उसका पति यदि अपना सिर भी कटा दे, तो भी वह जीवन के अंतिम समय में प्रेम करने वाली सहायक सिद्ध नहीं होती। केवल अपने स्वार्थ के लिए रोने का शोर करती है, स्वार्थ पूरा न होने पर वह शीघ्र ही अपने पीहर माता-पिता के पास जाने का चित्त बना लेती है, अर्थात पति को भूलकर पीहर को स्मरण करने लगती है।

---

1. 'तत्वानुरागी से अभिप्राय यहां आत्म-तत्व के अनुरागी से है, अर्थात निज आत्मकल्याण का अनुरागी संत-साधक।'

॥ चौपाई ॥

सुत परिजन धन सपन सनेही। सत्यनाम गहु निज मति एही॥
निज तनु सम प्रिय और न आना। सो तन संग न चलत निदाना॥

(जैसे—कभी सपने में राजपाट, धन-वैभव सब मिल जाता है और बहुत प्रेम करने वाले परिवार के लोग एवं मित्रादि दिखाई पड़ जाते हैं, किंतु नींद टूट जाने पर सब समाप्त हो जाता है। तब पता चलता है कि जो स्वप्न में देखा, वस्तुत: वह कुछ था ही नहीं। वैसे ही—) ये पुत्र, परिवार के लोग तथा धन आदि सब स्वप्न के प्रेमी दिखाई पड़ते हैं, अंतत: ये सब खो जाएंगे। अतएव, ऐसी स्थिति में मेरी सम्मति (राय-शिक्षा) सद्गुरु परमात्मा के सत्यनाम-ज्ञान को ग्रहण करने की है, जो कि सार है तथा लोक-परलोक में सदा सहायक है। इस असार-संसार में अपने शरीर के समान प्रिय और दूसरा कोई नहीं आता, किंतु अपना शरीर भी अंत में साथ नहीं चलता (मर जाता है)।

काल से कौन छुड़ा सकता है ?

॥ चौपाई ॥

ऐसा कोई न दीखै भाई। अंत समय में लेई छुड़ाई॥
अहै एक सो कहौं बखानी। जेहि अनुराग होय सो मानी॥
सतगुरु आहि छुड़ावन हारा। निश्चय मानो कहा हमारा॥

हे भाई! इस संपूर्ण जगत के अंतर्गत (माता-पिता, स्त्री-पुत्र, भाई-बंधु तथा मित्रादि सभी स्वजनों में) ऐसा कोई भी समर्थ दिखाई नहीं पड़ता कि जो जीवन के अंत समय में जीव (मनुष्य) को मृत्यु से छुड़ा ले (उस स्थिति में सभी विवश एवं असमर्थ होते हैं)।

हां, एक अवश्य है, जिसका मैं स्पष्ट वर्णन करता हूं, किंतु जिसके हृदय में सच्चा अनुराग (प्रेम-भक्ति) होगा, वही उसे मानेगा, अर्थात उससे लाभान्वित होगा।

एक वह सद्गुरु है, जो इस जीव को समस्त सांसारिक-बंधनों एवं काल से छुड़ाने वाला है। निस्संदेह, तुम निश्चयपूर्वक यह मेरा कहा मानो।

विशेष—*काल, अर्थात मृत्यु प्रत्येक जीवन में घटने वाली एक सत्य घटना है। काल के बारे में सवर्था स्पष्ट रूप से कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि 'काल-काल' तो सब बहुत कहते हैं, किंतु यथार्थ में काल क्या है, उसे कोई नहीं पहचानता-समझता। देह का छूटना-मरना ही काल नहीं है, वस्तुत: जीव के मन की जितनी भी कल्पना है, वह सब काल ही कहलाती है। यथा—*

काल काल सब कोइ कहे, काल न चीन्हे कोय।
जेती मन की कल्पना, काल कहावे सोय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

कल्पना के जाल में फंसा हुआ विवश जीव काल को प्राप्त होता है। इस जगत में जीव जिस देह को लेकर जन्मता है, उसका मरण अवश्य होता है, परंतु जिसका जन्म ही न हुआ हो, उसका मरण कैसे हो सकता है? यह सिद्ध है कि जो जन्मता है, केवल वही मरता है। अतएव, काल से बचने का सीधा उपाय है कि जीव का जन्म-पुनर्जन्म न हो और इसके लिए जिन कारणों से वह जन्म-पुनर्जन्म में फंसा है, उन्हें समूल नष्ट किया जाना चाहिए।

सांसारिक मोह-बंधनों में बंधा एवं अनंत विषय-कामनाओं के वशीभूत होने के कारण अज्ञानी जीव बार-बार देह धारकर जन्मता एवं मरता है। इस प्रकार आसक्तिवश वह जन्म-मरण (आवागमन) के चक्र में पड़ा हुआ अनेक दुखों को भोग रहा है। जीव की इस अज्ञानता, मोह-बंधनों एवं विषय-कामनाओं को किसी शस्त्र से नहीं, ज्ञान-युक्ति से काटा जाता है। परंतु वह विलक्षण ज्ञान-युक्ति सामान्य सांसारिक जनों के पास नहीं, पूर्ण समर्थ सद्‌गुरु से प्राप्त होती है। कल्याण (मोक्ष) की प्रबल उत्कंठा लिए हुए जिस जिज्ञासु के हृदय में सच्चा अनुराग उत्पन्न होता है, सद्‌गुरु दया-भाव से उसे सत्यज्ञान-दीक्षा प्रदान करते हैं। उसके यथार्थ आचरण (भक्ति-साधना) से जीव आवागमन, अर्थात काल-कल्पना अथवा जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है।

सद्‌गुरु क्या करते हैं?

॥ चौपाई ॥

कालहिं जीत हंस लै जाहीं। अविचल देश पुरुष जह आहीं॥
जहां जाय सुख होय अपारा। बहुरि न आवै यहि संसारा॥

सत्यज्ञान-बल से सद्‌गुरु काल को जीतकर निज शरणागत जीवरूपी हंस[1] को अविचल देश[2], अर्थात सदा सुस्थिर परम शांतिमय सत्यलोक ले जाते हैं, जहां सत्यपुरुष परमात्मा विद्यमान हैं। जहां पर जाकर उसे असीम सुख की प्राप्ति होती है, वह वहां से पुनः लौटकर वापिस इस संसार में नहीं आता (सदा के लिए मुक्त हो जाता है)।

विशेष—*इस जगत में चौरासी लाख योनियां बताई जाती हैं, इसी से जगत को केवल चौरासी कहकर भी पुकारा जाता है। चौरासी के सभी जीव काल से चिंतित एवं भयभीत रहते हुए जन्मते-मरते रहते हैं। सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि शरणागत हुए जीव (मनुष्य) को एकमात्र सद्‌गुरु ही चौरासी के बंधनों से मुक्त करते हैं। सद्‌गुरु सत्यज्ञान-दीक्षा का मुक्त परवाना देकर, शिष्य का मृत्यु से*

---

1. सद्‌गुरु की शरण में समर्पित होकर, यथा-विधि से सत्यज्ञान-दीक्षा ग्रहण करने वाला नीर-क्षीर का विवेकी जीव 'हंसवृत्ति' को प्राप्त हो जाता है।

2. 'सत्यलोक'—आवागमन से मुक्त जीव का वह स्थान, जो सर्वदा परम सत्य, शांति एवं आनंद से परिपूर्ण माना गया है।

तिनका (संबंध) तोड़ देते हैं, अर्थात उसे मृत्यु के भय एवं कल्पना से मुक्त कर देते हैं। यथा—

गुरु मुक्तावै जीव को, चौरासी वद छोर।
मुक्त प्रवाना देहि गुरु, जम सो तिनुका तोर॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

फिर वह हंस-जीव जीवन-भर निश्चयपूर्वक गुरु-दीक्षा का विधिवत् आचरण करता हुआ अनंत सुख-आनंद को उपलब्ध होता है।

अविचल देश को कौन पहुंच सकता है?

॥ छंद ॥

बिसवास कर मम वचन को, तब चढ़ै सत की राह हो।
ज्यों सूरमा रन में धसे, फिर पाछ चितवन नाह हो॥
सती शूरा भाव लखि के, संत सो मग धारिये।
मृतक भाव विचार गुरुगम, काल कष्ट निवारिये॥ 3॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मेरे वचन-उपदेश पर विश्वास कर, अर्थात उसे भली-भांति ग्रहण कर, तब जिज्ञासु-जन को सत्यलोक पहुंचने के लिए सत्य की राह पर चलना चाहिए (क्योंकि सद्गुरु के श्रवण किए हुए वचनोपदेश पर जब तक पूर्ण विश्वास नहीं होता, तब तक उसका न तो यथा आचरण होता है और न ही सफलता मिलती है)। जैसे—शूरवीर योद्धा रणक्षेत्र में घुस जाता है और वह फिर पीछे मुड़कर नहीं देखता, अपितु निर्भीक-भाव से आगे बढ़ता जाता है, वैसे ही कल्याणेच्छुक जिज्ञासु साधक को सत्य की राह पर चढ़कर, पीछे नहीं हटना चाहिए।

अपने पति के संग जलने वाली सती नारी एवं युद्ध में शीश कटाने वाले सूरमा के महान आदर्श-भाव को देख-समझकर और जिस प्रकार संत-जन सत्य, दया, क्षमा, धैर्य, संतोष, विचार, विवेक तथा वैराग्यादि सद्गुणों को धारण कर चलते हैं, उस अनुसार सुदृढ़ संकल्प के साथ सत्य-मत धारण कर जीवन-पथ पर चलना चाहिए। जीवित रहते मृतक-दशा[1] के भाव विचारकर, सद्गुरु के सत्यज्ञान से काल-कष्ट का निवारण करना चाहिए।

अधिकारी की दुर्लभता

सोरठा

कोइ इक शूर जीव, जो ऐसी करनी करै।
ताहि मिलेंगे पीव, कहैं कबीर विचारिके॥ 4॥

1. जीवित रहते पूर्णतः अभिमान से रहित और माया-मोह एवं सर्व विषय-विकारों से मुक्त होना, 'मृतक-भाव' की स्थिति को प्राप्त होना है।

सद्गुरु कबीर साहेब विचारपूर्वक समझाते हुए कहते हैं कि असंख्यों में कोई एक साहसी शूरवीर जीव ऐसा है, जो उपर्युक्त उद्धरण (सती, सूरमा एवं संत) के अनुसार अपनी करनी (आचरण) कर सकेगा, तो उसे सच्चे पिया, अर्थात सत्पुरुष परमात्मा अवश्य मिलेंगे (वह उनके दर्शन-ज्ञान का सच्चा अधिकारी होगा)।

धर्मदास वचन

मृतक किसे कहते हैं?

॥ चौपाई ॥

मृतक भाव प्रभु कहो बुझाई। जाते मन की तपनि नसाई॥
केहि विधि मरत कहो यह जीवन। कहो बिलोय नाथ अमृत घन॥

सद्गुरु कबीर साहेब से जीवित अवस्था में मृतक-भाव विचारने एवं धारण करने का मार्मिक वचन सुनकर श्री धनी धर्मदासजी विनम्रतापूर्वक पूछते हैं कि हे प्रभु! मुझे मृतक भाव को स्पष्ट वर्णन कर बताओ, जिससे मेरे मन की तपन (शोक, चिंता, भय) मिट जाए और मुझे शांति मिले।

हे मधुर वचनामृत बरसाने वाले नाथ! कृपा कर मुझे भली-भांति निर्णय करके समझाकर कहो कि किस प्रकार जीवित रहते यह जीवन मरता है, अर्थात जीवन जीते हुए मृतक-दशा को कैसे उपलब्ध हुआ जाता है?

सद्गुरु कबीर वचन

मृतक के दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

धर्मदास यह कठिन कहानी। गुरुगम ते कोई बिरले जानी॥

सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे धर्मदास! जीवित रहते जीवन में मृतक की दशा की यह कहानी अत्यंत कठिन है, इसे सद्गुरु के सत्यज्ञान से कोई विरला सच्चा संत-भक्त ही जान पाता है, अर्थात ग्रहण किए हुए सद्गुरु के सत्यज्ञानोपदेश के सुप्रभाव से इस स्थिति को प्राप्त हुआ जाता है।

विशेष—*जीवित रहते जीवन में 'मृतक-दशा' का होना किसी सच्चे संत-भक्त की भक्ति-साधना की चरम-स्थिति है, जो कि सद्गुरु के सत्यज्ञानोपदेश के विधिवत् आचरण से उसके जीवन में घटित होती है। इसमें साधक संसार एवं शरीर की आशा-तृष्णा, काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार का सर्वथा त्याग कर सर्वोत्कृष्ट सहज अवस्था को प्राप्त हो जाता है।*

'मृतक-भाव' को उसके माहात्म्य सहित स्पष्ट समझाते हुए सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जब तक शरीर की आशा (आसक्ति) है, तब तक जीवित रहते

मृतक भाव को प्राप्त नहीं हुआ जाता। जब शरीर एवं संसार की माया-मोह का पूर्णतः मन से त्याग किया जाता है, तब ही निश्चिंत होकर (मृतक-स्थिति के) सत्संग-ज्ञानाचरण में ढोल बजाकर रहा जाता है, अर्थात फिर किसी से छिपने, शरमाने या सकुचाने की बात ही नहीं रह जाती। यथा—

जब लग आस शरीर की, मिरतक हुआ न जाय।
काया माया मन तजै, चौड़े रह बजाय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

जीवन में मृतक-स्थिति तब ही समझिए, जब अपने संपूर्ण अहंकार को उठाकर अलग धर दिया जाए, उसे पूर्णतः नष्ट कर दिया जाए और (बाह्य जगत की माया-ममता से मुंह मोड़कर) अपने भीतर सहज-शून्य परमात्मस्वरूप में घर किया जाए, अर्थात अपने चित्त को ठहराया जाए। यथा—

मिरतक तो तब जानिए, आपा धरे उठाय।
सहज सुन्न में घर करे, ताको काल न खाय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

उक्त स्थिति वाले साधक को काल का भय नहीं रहता। विशेष बात यह है कि जो संसार की आशा-तृष्णा को त्यागकर, जीवित रहते मृतक भाव को प्राप्त हो गया, वह दास (भक्त) कभी दुख नहीं पाएगा, क्योंकि उसके रक्षक तो स्वयं समर्थ सद्गुरु हैं। यथा—

जीवत मृतक ह्वै रहे, तजै खलक की आस।
रच्छक समरथ सतगुरु, मति दुख पावै दास॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

निष्कर्ष के तौर पर यह कहना अनुचित नहीं है कि जीवित रहते जीवन में मृतक भाव की स्थिति महानतम कठिन है, जिसे सामान्य मनुष्य प्राप्त नहीं कर सकता। अतएव यह सिद्ध है कि केवल सद्गुरु का कोई सच्चा संत-साधक उनकी ज्ञान-साधना के सतत अभ्यास से मृतक-भाव को प्राप्त होता है।

॥ चौपाई ॥

मृतक होय के खोजहि संता। शब्द विचारि गहैं मगुअंता॥

जीवन में मृतक-भाव को प्राप्त हुआ संत अपने परम लक्ष्य कल्याण (मोक्ष, अमरत्व, सतलोक) को खोजता है। वह सद्गुरु के शब्द-विचारों को भली-भांति ग्रहण कर, उनके परम सत्य-मार्ग का अनुकरण करता है।

भृंगी का दृष्टांत[1]

॥ चौपाई ॥

जैसे भृंग कीट के पासा। कीटहि गहि गुरुगम परकासा॥
शब्दघात कर महि तिहि डारे। भृंगी शब्द कीट जो धारे॥

उदाहरण के रूप में जैसे—भृंगी जब कीट के पास जाकर उसे अपना तेज शब्द-स्वर सुनाता है, तो कीट उसके गुरुज्ञान रूपी शब्द-प्रकाश को ग्रहण करता है। गुंजार करते हुए भृंगी अपने तेज शब्द-स्वर की मार से कीट को पृथ्वी पर डाल देता है और जो कीट उस भृंगी-शब्द को धारण करे—

॥ चौपाई ॥

तब लैगो भृंगी निज गेहा। स्वाति देह कीन्हो समदेहा॥
भृंगी शब्द कीट जो माना। वरण फेर आपन कर जाना॥

तब भृंगी उसे अपने घर ले गया तथा गुंजार-गुंजारकर उसे अपना स्वाति-शब्द-स्वर सुनाकर, उसकी देह को अपने समान (भृंगी) कर लिया। भृंगी के महान शब्दरूपी स्वर-गुंजार को यदि झींगुर-कीट ने मान लिया, अर्थात भली-प्रकार ग्रहण कर लिया, तो भृंगी उसका वर्ण बदलकर अपना कर जान लेता है (फिर उनमें कोई अंतर नहीं रह जाता, समरूप हो जाते हैं)।

विशेष—*स्वाति एक शुभ नक्षत्र होता है, जिसका पानी सीप में पड़ने से मोती बन जाता है। भृंगी के शब्द-गुंजार को उपर्युक्त 'स्वाति' की उपमा इसलिए दी गई है कि उसको सुन-सुनकर कीट झींगुर बदलकर भृंगी बन जाता है।*

॥ चौपाई ॥

बिरला कीट होय सुखदाई। प्रथम आवाज गहे चितलाई॥
कोइ दूजे कोई तीजे मानै। तन मन रहित शब्द हित जानै॥

अगणित झींगुर-कीटों में कोई विरला कीट ही उपयुक्त एवं अनुकूल सुखप्रद होता है, जो भृंगी के पहले शब्द-गुंजार को चित्त लगाकर ग्रहण करता है। अन्यथा, कोई दूसरे और कोई तीसरे शब्द-स्वर को मानकर ग्रहण करते हैं। तन-

---

1. सद्गुरु कबीर की वाणियों में भृंगी एवं कीट का ज्ञान संवर्धक उदाहरण प्रसिद्ध है। एक बड़ी मक्खी के आकार-प्रकार का भृंगी, झींगुर नामक कीट की खोज में उड़ता फिरता है। झींगुर कीट को पाकर वह उसे अपना भीं-भीं शब्द सुनाकर उसकी परख करता है और उसे अपने गुणानुकूल समझने पर घर में रख लेता है। वहां सतत अभ्यास-क्रम से अपना तेज शब्द-गुंजार सुना-सुनाकर, उस कीट को अपने जैसा समरूप भृंगी बना देता है।

भृंगी की भांति समर्थ सद्गुरु अपने सत्संग एवं सत्यज्ञानोपदेश से सुपात्र शिष्य को अपने समान बना लेते हैं। झींगुर कीट के समान जब शिष्य सद्गुरु के वचनोपदेश में समा जाता है, यथावत् ज्ञानाचरण करता है, तो वह गुरु के समान ही उत्कृष्ट पद पाता है।

मन से रहित, अर्थात तन-मन की सुधि भुलाकर भृंगी के उस महान शब्दरूपी स्वर-गुंजार को ग्रहण करने में ही झींगुर कीट अपना हित जानते हैं।

॥ चौपाई ॥

भृंगी शब्द कीट ना गहई। तो पुनि कीट आसरे रहई॥
धर्मदास यह कीट को भेवा। यहि मति शिष्य गहे गुरुदेवा॥

भृंगी के शब्दरूपी स्वर-गुंजार को जो कीट ग्रहण नहीं करता, तो वह फिर कीट-योनि के आश्रय में ही पड़ा रह जाता है, अर्थात उसका कीट-योनि से उद्धार नहीं हो सकता (वह कीट से भृंग नहीं बन सकता)।

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! यह कीट का भृंग में बदलने का अद्‌भुत रहस्य है, जो कि महान शिक्षाप्रद है। इसी प्रकार निर्मल बुद्धि से शिष्य को सद्‌गुरु के सदुपदेश को ग्रहण करना चाहिए (जिससे वह सांसारिक माया-मोह एवं विषय-विकारों के अज्ञानमय पतित जीवन से छूटकर अपने कल्याणमय ज्ञान-स्वरूप को प्राप्त हो सके)।

भृंगी-भाव की प्राप्ति कैसे होती है?

॥ छंद ॥

भृंगी मति दृढ़ कै गहै, तो करौं निज सम ओहि हो।
दुतिया भाव न चित व्यापे, सो लहै जिव मोहि हो॥
गुरु शब्द निश्चय सत्य माने, भृंगी मति तब पावई।
तजि सकल आसा शब्द बासा, काग हंस कहावई॥ 5॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब भृंगी-भाव की श्रेष्ठता समझाते हुए कहते हैं कि भृंगी की मति (निश्चयात्मक बुद्धि-मार्मिक ज्ञान) को जो जन सुदृढ़-भाव से ग्रहण करे, तो उसे मैं (सद्‌गुरु) अपने समान ही कर लेता हूं। जिसके चित्त में मेरे अतिरिक्त कोई दूसरा भाव न व्यापे, अर्थात जो किसी दुविधा में पड़कर इधर-उधर चक्कर न काटता हो और जिसकी अन्य किसी से लगन न हो, जो केवल मुझ (सद्‌गुरु) को समर्पित हो, वह मेरा अनन्य भक्त-जीव मुझे पाता है।

जो गुरु के शब्द सदुपदेश को निश्चयपूर्वक सत्य माने, अर्थात ग्रहण करे, तब वह भृंगी-मति को पाता है। फिर वह सब सांसारिक-आशाओं का परित्याग कर मेरे, अर्थात सद्‌गुरु के कहे हुए शब्द (ज्ञानोपदेश) में वास करता है (भली-भांति उसका आचरण करता है) और नीच-योनि में बसने वाले कौए से बदलकर उत्तम-योनि को प्राप्त 'हंस' कहलाता है।

हंस कौन है

॥ सोरठा ॥

तजै काग की चाल, सत्य शब्द गहि हंस हो।
मुक्ता चुगै रसाल, पुरुष पक्ष गुरु मग गवन॥ 5॥

सद्गुरु कबीर साहेब हंसवृत्ति को समझाते हुए कहते हैं कि कौए की चाल (दुष्प्रवृत्ति) को छोड़कर, सद्गुरु के सार सत्य-शब्द को ग्रहण कर हंस होना चाहिए। अर्थात छल-कपट, चालाकी, अनाचार, कुविचार, हिंसक प्रकृति एवं अभक्ष्य आमिष भोजन आदि कौए जैसे दुर्गुणों को छोड़कर, सद्गुरु के सारोपदेश को ग्रहण कर पूर्णत: मन-वाणी-कर्म से पवित्र, विनम्र, संयमी, उदार, सदाचार, सात्विक एवं सारग्राही आदि सद्गुणों से युक्त हंस के समान होना चाहिए। उत्तम हंसवृत्ति को धारण कर मधुर एवं सुखद ज्ञानरूपी मोतियों को चुगते हुए सत्पुरुष-परमात्मा के पक्ष पर पूर्ण विश्वास कर सदैव गुरु-मार्ग पर चलना चाहिए।

विशेष—*सद्गुरु कबीर साहेब ने अपने वचनोपदेश में विभिन्न मनुष्यों के गुणानुसार उन्हें 'कौआ' और 'हंस' का रूप माना है। जिसमें कौआ—निकृष्ट योनि, सर्वथा आचारहीन, अशुभ एवं आसुरी प्रवृत्ति का प्रतीक माना गया है। कौआ बाहर भीतर से कलुषित, चंचल चालाक, मन-मति से भ्रष्ट, धूर्त हिंसक-प्रवृत्ति तथा सर्वभक्षी प्राय: मैला खान-पान करने वाला होता है और अपने बेसुरे कर्कश स्वर की कांव-कांव से सबका ध्यान भंग करता रहता है। इसके विपरीत हंस—उत्तम योनि, शुभ, सीधा-सरल एवं नाना-सद्गुणों से संपन्न समझा जाता है। वह बाहर-भीतर से बेदाग उज्ज्वल होता है। उसका सबसे बड़ा गुण यह कहा जाता है कि वह नीर को छोड़कर क्षीर (दूध) को ग्रहण करने वाला (हंसो हि क्षीर मादत्ते तन्मिश्रा वर्जयत्यप:) होता है और वह सामान्य आहार नहीं, अपितु मानसरोवर के मोती चुगता है। इस प्रकार हंस पवित्रता, सात्विकता एवं आदर्श-गुणों का प्रतीक माना जाता है।*

उपर्युक्त कथनानुसार जो लोग आचार-विचार से भ्रष्ट, काम-मोहादि विषयों में लवलीन, मांसाहारी, मादक-पदार्थों का सेवन करने वाले, झूठ, कपट, राग-द्वेष, हिंसा आदि पाप-कर्मों में प्रवृत्त तथा गुरु-ज्ञान से हीन कुमार्ग पर दौड़ते-फिरते हैं, उन्हें कौआ-वृत्ति के अंतर्गत माना जाता है। इसके विपरीत जो संत सज्जन आचार-विचार, आहार-विहार से शुद्ध सदाचारी, सात्विक हैं एवं सदैव सेवा, सत्संग, भक्ति तथा दान-पुण्यादि पारमार्थिक सत्कर्म करते हैं और गुरु-ज्ञान से दीक्षित सदा सन्मार्ग पर चलते हुए असार को छोड़कर सार गुण को ही ग्रहण करते हैं, उन्हें 'हंस' कहकर पुकारा जाता है।

दुर्लभ मानव-जीवन के कल्याण हेतु सदुपदेश करते हुए सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे मानव! तू सारी दुर्बुद्धि को दूर कर दे, अर्थात असत्य, हिंसा, चोरी एवं अनाचार आदि सब अमानवीय पाप-कर्मों को छोड़कर, सत्कर्मों से अपना यह मानव जीवन अच्छा बना ले। कौए जैसी चाल (दुष्प्रवृत्ति) को छोड़कर, हंस जैसी चाल (सद्वृत्ति) को धारण कर, तभी तेरा यह जीवन सार्थक होगा। यथा—

सकलो दुर्मति दूर करू, अच्छा जन्म बनाव।
काग गौन गति छाड़ि के, हंस गौन चलि आव॥

(स.क. बीजक)

वे कहते हैं कि इस जगत में 'जंत्र-मंत्र' सब झूठ-प्रपंच है, इनसे कोई साधना-सिद्धि अथवा जीवन-कल्याण नहीं हो सकता, अतः इनमें कोई मत भरमो (भूल से इनके चक्कर में मत पड़ो)। सद्गुरु का सार-शब्द जाने बिना काग से हंस नहीं हुआ जा सकता, अर्थात मलिन बुद्धि को त्यागकर सद्गुरु के सार-शब्द उपदेश को धारण करने से ही 'हंस' हो सकते हो। यथा—

जंत्र मंत्र सब झूठ है, मति भरमो जग कोय।
सार सब्द जाने बिना, कागा हंस न होय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

मृतक के और दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

सुनहु संत यह मृतक सुभाऊ। बिरला जीव पीव मग धाऊ॥
औरै सुनहु मृतक का भेवा। मृतक होय सतगुरु पद सेवा॥
मृतक छोह निभाव उर धारे। छोह निभावहि जीव उबारे॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे संत धर्मदास! जीवित रहते यह मृतक का अनुपम स्वभाव तुम ध्यानपूर्वक सुनो। इसे धारण कर कोई विरला मुमुक्षु जीव ही सत्पुरुष परमात्मा के साधना-मार्ग पर चल सकता है। तुम मुझसे इस मृतक-भाव के गहन-रहस्य को और सुनो। शिष्य मृतक होकर सत्यज्ञान प्रदाता सद्गुरु के श्री चरण-कमलों की सेवा करे।

मृतक-भाव को प्राप्त होने वाला कल्याणेच्छुक जिज्ञासु अपने हृदय में क्षमा, दया एवं प्रेम के गुण को भली-भांति धारण करे और जीवन में क्षमा, दया तथा प्रेम के व्रत-नियम को निभाते हुए अपने जीव का, अर्थात स्वयं का इस संसार के आवागमन से उद्धार करे।

पृथ्वी का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

जस पृथ्वी के गंजन होई। चित अनुमान गहे गुण सोई॥
कोइ चन्दन कोइ विष्ठा डारे। कोइ कोइ किरषी अनुसारे॥
गुण औगुण तिन सम कर जाना। महाविरोध अधिक सुख माना॥

जैसे—पृथ्वी को तोड़ा-खोदा जाता है, किंतु वह शांत एवं सदा सुखप्रद रहती है, अर्थात उसके तोड़ने-खोदने या जोतने पर वह कभी उदास तथा कुपित नहीं होती, अपितु अधिक अन्न-फल-फूल आदि प्रदान करती है। वैसे अपने चित्त में पृथ्वी के उस गुण को भली प्रकार अनुमान-विचार कर ग्रहण करना चाहिए।

अपने-अपने भावानुसार पृथ्वी पर कोई चंदन तो कोई विष्ठा (मल-पाखाना) आदि डालता है और कोई-कोई मजूदर-किसान खेती करने के लिए उसे खोदता-जोतता है (किंतु उससे पृथ्वी कभी विचलित नहीं होती)।

वह सहज शांत-भाव से सब दुख सहन करती हुई सबके गुण-अवगुण को समान जानती है और अपने प्रति किए गए मान-अपमान के व्यवहार का विरोध नहीं करती, अपितु उलटे अत्यधिक सुख मानती है, अर्थात और अधिक उपजाऊ तथा सुफलदायी होती है।

आशय— *उपर्युक्त दृष्टांत के अनुसार जीवन में मृतक भाव को धारण करने वाले संत-साधक को पृथ्वी की भांति धैर्यवान, सहनशील, त्याग एवं क्षमा के महान सद्‌गुणों से संपन्न होना चाहिए। अपने साथ दूसरों के द्वारा किए गए मान-अपमान को ध्यान में न रखकर, स्वयं को शांत-स्थिर रखते हुए परोपकार करना चाहिए।*

ऊख का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

ओरो मृतक भाव सुनि लेहू। निरखि निरखि गुरुमग पग देहू॥
जैसे ऊख किसान बनावै। रती रती कर देह कटावै॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! अब और मृतक-भाव को ध्यानपूर्वक सुन लो। यह मृतक-भाव अत्यंत कठिन है, अतः इसे भली-भांति सोच-विचारकर एवं जांच-परखकर अपनाओ और तब गुरु के निर्देशित मार्ग में पांव दो, अर्थात जीवोद्धार के लिए सद्‌गुरु ने जो ज्ञान-मार्ग दर्शाया है, उस पर पूर्णतः सचेत होकर चलो।

(सद्‌गुरु के उपदेशित नियम-संयम, आदर्श सदाचार, ज्ञान एवं भक्ति-साधना की युक्ति-युक्त ठोस प्रणाली ही उनका सच्चा मार्ग है, जिस पर उनके अनुयायी सदा चलते जाते हैं और इस प्रकार सद्‌गुरु के नाम पर उनके मत-पंथ का विस्तार होता जाता है, जैसे—सद्‌गुरु कबीर साहेब के नाम पर प्रचलित है '**कबीरपंथ**')।

(मृतक-भाव में स्थित संत-साधक ईख-गन्ने की भांति होता है) जैसे—किसान गन्ने को पहले कांट-छांटकर खेत में बोकर उगाता है, तो उत्पन्न हुआ तैयार गन्ना उसके हाथों में पड़कर पोरी-पोरी से छिल-छिलकर अपने शरीर, अर्थात स्वयं को कटवाता है, वैसे मृतक भाव का संत सब दुख सहता है।

॥ चौपाई ॥

कोल्हू मंह पुनि आप पिरावे। पुनि कड़ाह में आप ऊंटावे॥
निज तनु दाहे गुड़ तब होई। बहुरि ताव दे खांड बिलोई॥

फिर वह कटा-छिला हुआ गन्ना अपने-आपको कोल्हू में पिरवाता है,

जिसमें वह पूरी तरह कुचला जाता है और उसमें से समूचा रस निकल जाने से शेष जीर्ण-शीर्ण होकर खोयी बन जाता है। फिर आपस्वरूप अपने रस को वह कड़ाहे में औटाता है। उसके अपने तनरूपी रस को कड़ाहे में पकाने-जलाने से तब गुड़ बनता है और उसमें फिर से अधिक ताव (आंच) देने-पकाने से रगड़कर खांड बनाई जाती है।

॥ चौपाई ॥

ताहू माहिं ताव पुनि दीन्हा। चीनी तबै कहावन लीन्हा॥
चीनी होय बहुरि तन जारा। ताते मिसरी ह्वै अनुसारा॥

खांड होने पर फिर से उसमें ताव दिया गया और तब उससे जो दाना बना वह चीनी कहलाने लगा। चीनी होकर तब फिर से उसके चीनीरूपी तन को जलाया-पकाया गया तो उस क्रमानुसार वह मिश्री हो गई।

॥ चौपाई ॥

मिसरी ते जब कंद कहावा। कहैं कबीर सबके मन भाया।
याही विधि ते जो शिष सहई। गुरुकृपा सहजे भव तरई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मिश्री से बनकर जब वह कंद कहलाया तो फिर सबके मन को अच्छा लगा। इसी विधि से गन्ने की भांति जो शिष्य गुरु-आज्ञानुसार ज्ञानाचरण करता हुआ सब दुख-संतापों को सहता है, वह सद्‌गुरु की कृपा से सहज ही संसार-सागर को तर जाता है (मुक्त हो जाता है)।

मृतक-भाव कौन धारण कर सकता है?

॥ छंद ॥

मृतक भाव है कठिन धर्मनि, लहे बिरला शूर हो।
कायर सुन तेहि तन मन दहै, पाछे न चितवत कूर हो॥
ऐसे शिष्य आप सम्हारे, ताव सही गुरुज्ञान को।
लहै भेदी भेद निश्चय, जाय दीप अमान को॥ 6॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! जीवन में यह मृतक-भाव अत्यंत कठिन है, इसे असंख्यों में कोई एक विरला शूरवीर संत-सज्जन ही स्वीकार कर सकता है। इसे सुनते ही सांसारिक-विषयों में लिप्त कायर का तो डर से तन-मन ही दहकने-जलने लगता है (स्वीकारना-अपनाना तो बहुत दूर की बात है) और वह भागते हुए इसकी ओर पीछे मुड़कर भी नहीं देखता।

(जैसे—ईख-गन्ना सब दुख-तापों को सहता हुआ अपने आपको मारकर भी सबको मनभाया मिठास ही प्रदान करता है) ऐसे ही शरणागत शिष्य गुरुज्ञान के ताव (कसौटी) को सहता हुआ अपने-आपको संवारे, अर्थात गुरु-सेवा में समर्पित अविचलित-भाव से सर्व दुख-तापों को सहते हुए स्वयं को ज्ञान-साधना में

परिपक्व करे और सदैव सुखदायी सर्व-हित के कर्म करे। वह मृतक-भाव को प्राप्त गुरु-ज्ञान के भेद को जानने वाला मर्मज्ञ संत-साधक निश्चय ही अमान-दीप (सत्यलोक) को जाता है, अर्थात इस असार संसार से छूटकर वह सत्य के अमर लोक में वास करता है।

विशेष—*स्वयं के अहंकार को मारकर जगत के सब दुख-तापों को सहते हुए, गन्ने की भांति क्षमावान, सहनशील एवं परोपकारी होने का मृतक-भाव जीवन में धारण करना, महानतम कठिन जान पड़ता है, यह केवल गुरु की शरण में ही संभव है। गुरु की भक्ति एवं ज्ञान-साधना ही इसकी प्राप्ति का एकमात्र उपाय है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जो संत-गुरु को सर्वस्व समर्पण कर शिष्य-भाव से मिलता है तथा उनकी ज्ञान-कसौटी को विनम्रतापूर्वक सहता है, तो राम की सौगंध मैं सत्य कहता हूं कि वह फिर मां के गर्भ में नहीं समाता, अर्थात वह जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है। यथा—*

संत सरबस दे मिले, गुरु कसौटी खाय।
राम दोहाई सत कहूं, फेरि न उदर समाय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

गुरु-कसौटी पर टिकने वाला समर्पित साधक उक्त मृतक-भाव को प्राप्त हो जाता है।

मृतक ही साधु होता है

॥ सोरठा ॥

मृतक होय सो साधु, सो सद्गुरु को पावई।
मेटे सकल उपाध, तासु देव आशा करें॥ 6॥

जीवित रहते जो अपने जीवन में मृतक-भाव को प्राप्त हो जाता है, वह सच्चा साधु होता है और वह सद्गुरु को पाता है, अर्थात अपने उद्दिष्ट परमात्म-लक्ष्य को प्राप्त हो जाता है। वह साधु सांसारिक-क्लेशों एवं निज मनेंद्रियों के विषय-उत्पात को मिटा देता है (सब पर विजय पा लेता है), ऐसी उत्तम वैराग्य-स्थिति को प्राप्त साधु से सामान्य-जन तो क्या देवता भी अपने कल्याण की आशा करते हैं।

साधु किसे कहते हैं?

॥ चौपाई ॥

साधुमार्ग कठिन धर्मदासा। रहनी रहै सो साधु सुवासा॥
पांचों इन्द्री सम करि राखे। नाम अमीरस निशि दिन चाखे॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! साधु का मार्ग अत्यंत कठिन है। जो साधुता की उत्तम रहनी-आचरण (सत्यता, पवित्रता एवं निष्कामता में स्थित तथा निरंतर भक्ति-साधना में संलग्न) रहे, वह साधु है।

वही सच्चा शूरवीर साधु है, जो अपनी पांचों इंद्रियों (आंख, कान, नाक, जिह्वा एवं कामेंद्रिय) को सदा संयमित रखे और सद्गुरु प्रदत्त सत्यनाम-ज्ञान के अमृत-रस को रात-दिन चखता रहे।

विशेष—*इस जगत में साधु होना, अर्थात साधुता के नियत आचरण का ठीक-ठीक पालन करना सर्वाधिक कठिन कार्य है। इसीलिए माया-मोह से ग्रस्त सामान्य संसारी-जन साधुता के मैदान में नहीं आते। इस असार-संसार से उदासीन कोई कल्याणेच्छुक जिज्ञासु ही साधु बनता है। साधु कौन है और कौन साधु-वेश धारण करने पर भी अपने परमोद्देश्य में सफल नहीं होता? इसके उत्तर में सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि उस साधु को सराहिए तथा मानिए, जो अपनी पांचों ज्ञानेंद्रियों को दबाकर वश में रखे। जिनके वश में ये पांचों ज्ञानेंद्रियां नहीं, उनसे साहेब (परमात्मा-परमेश्वर) कोसों दूर हैं। यथा—*

साधु सोई सराहिये, पांचों राखै चूर।
जिनके पांचों बस नहीं, तिनतै साहिब दूर॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

बिलकुल स्पष्ट है कि साधु को स्वयं को संयमित करने की नितांत आवश्यकता है। केवल भेष धारण कर लेने से कोई साधु नहीं हो सकता, जब तक कि उसमें साधुता के गुण न हों। सद्गुरु कबीर साहेब ने अपनी अमृत-वाणी में साधु के उत्तम गुण-लक्षण एवं अनंत महिमा का विस्तृत वर्णन किया है, जो कि सामान्य जनों के लिए ही नहीं, साधु-जगत के लिए भी महान आदर्श शिक्षाप्रद है। साधु के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि साधु मनेंद्रियों का निग्रह करने वाला, हृदय से कोमल, दयावान होता है और सदैव शुद्ध आचार-विचार में स्थित रहता है। यथा—

इन्द्रिय मन निग्रह करन, हिरदा कोमल होय।
सदा शुद्ध आचार में, रह विचार में सोय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

उन्हीं को संत जानो, जो आशा, माया, मोह और मान-अभिमान को त्याग दें तथा जीवन में उत्पन्न हर्ष, शोक एवं निंदा का सर्वथा त्याग कर दें। यथा—

आशा तजि माया तजै, मोह तजै अरु मान।
हरख शोक निन्दा तजै, कहैं कबीर संत जान॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

उस साधु की सराहना करनी चाहिए, जिसने कनक-कामिनी, अर्थात अनावश्यक धन-संपत्ति एवं काम-विषय में प्रवृत्त करने वाली मोहिनी-स्त्री को त्याग दिया है। जिसकी और कोई इच्छा शेष नहीं रह गई है, जो पूर्णतः तृप्त और रात-दिन परमात्म-प्रेम (ध्यान-साधना) में लवलीन रहता है। यथा—

साधू सोइ सराहिये, कनक कामिनी त्याग।
और कछु इच्छा नहीं, निशि दिन रह अनुराग॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि सद्भाव, दया, दीनता, विनय, समता और शील स्वभाव ये सब साधु के लक्षण हैं। यथा—

दया गरीबी बन्दगी, समता शील सुभाव।
येते लच्छन साधु के, कहैं कबीर सदभाव॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

चक्षु वशीकरण

॥ चौपाई ॥

प्रथमहिं चक्षु इन्द्री कहं साधे। गुरु गम पंथ नाम अवराधे॥

सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि साधना के क्षेत्र में साधु सबसे पहले आंख-इंद्री को साधे, अर्थात वह कहीं चलायमान न हो, किसी विषय पर अटके-भटके नहीं, उसे भली-भांति अपने वश में करे और गुरु-ज्ञान के मार्ग पर चलता हुआ सदैव सत्यनाम का सुमिरन करे।

विशेष—*पांच तत्वों से निर्मित शरीर में ज्ञानेंद्री आंख अग्नि-तत्व से है। आंख का विषय रूप है, अतएव इससे सारे जगत का रूप-दृश्य दिखाई पड़ता है। जीव का सारा जीवन देखने पर, अर्थात आंख के आश्रित है। जैसे रूप-दृश्यों को आंख देखती है, वैसे भाव अंतर्मन में जगते हैं। देखने में बहुत अच्छा लगता है तो बहुत कुछ बुरा भी, इससे कहीं राग उत्पन्न होता है तो कहीं द्वेष। अनेक मायिक-विषय-पदार्थ ऐसे हैं, जिन्हें देखते ही भोगने अथवा पाने की तीव्र लालसा से तन-मन व्याकुल हो उठते हैं और उनमें फंसकर स्वयं का पतन हो जाता है। अतः सर्वप्रथम आंख को संयमित करना परमावश्यक है, तभी जीवनोद्धार संभव है। आंख-दृष्टि को वश में करने का अभिप्राय है कि उससे मन में कोई विकार, अर्थात बुरे विचार उत्पन्न न हों। इसको साधना केवल गुरु के ज्ञानोपदेश से ही संभव है। अतएव गुरु-उपदेशानुसार साधना-सुमिरन करते हुए समदृष्टि से ज्ञानमार्ग पर चलना, साधु का कर्तव्य है।*

॥ चौपाई ॥

सुन्दर रूप चक्षु की पूजा। रूप कुरूप न भावे दूजा॥
रूप कुरूपहि सम कर जाने। दरस विदेह सदा सुख माने॥

सुंदर रूप देखने में आंखों को प्रिय लगता है, इसीलिए सुंदर रूप को आंख की पूजा कहा गया है और जो दूसरा रूप कुरूप है वह देखने में नहीं भाता (अच्छा नहीं लगता), अतः उसे कोई देखना नहीं चाहता।

साधु को चाहिए कि वह नाशवान देह के सुंदर रूप एवं कुरूप को एक समान समझे (किसी को अच्छा या बुरा समझकर उनसे आसक्ति या घृणा न करे) और स्थूल-दृष्टि से ऊपर उठकर अंतर्दृष्टि से देह के भीतर जो विदेह-रूप अविनाशी शाश्वत एवं चेतन सत्यात्मा विद्यमान है, उसके दर्शन से सुख माने, अर्थात सब देहों के भीतर समान आत्मा जानकर प्रेम-भाव से सबका सम्मान करे।

श्रवण वशीकरण

॥ चौपाई ॥

इंद्री श्रवण वचन शुभ चाहै। उत्कट वचन सुनत चित दाहै॥
बोल कुबोल दोउ सह लेखै। हृदय शुद्ध गुरुज्ञान विशेखै॥

(श्रवण-ज्ञानेंद्री आकाश तत्व से है और इसका विषय शब्द है)। यह श्रोत्रेंद्रिय कान हमेशा शुभ वचन, अर्थात अनुकूल हितकर एवं मधुर-सुरीले शब्द सुनना चाहती है (कटु वचन इसे कदापि नहीं सुहाते), इसके द्वारा कठोर वचन सुनकर क्रोधाग्नि से चित्त दहकने लगता है, जिससे घोर अशांति हो जाती है।

साधु को चाहिए कि वह बोल-कुबोल, अर्थात मीठे-कड़ुवे दोनों प्रकार के बोल-वचनों को समान भाव से सह ले (सुनकर विचलित न हो)। सद्गुरु के ज्ञानोपदेश को विचारते हुए हृदय को शुद्ध रखे तथा शांत रहे।

नासिका वशीकरण

॥ चौपाई ॥

नासिका इंद्री बास अधीना। यहि सम राखै संत प्रवीना॥

(घ्राण ज्ञानेंद्री नाक पृथ्वी तत्व से है और इसका विषय गंध है।) यह गंध के अधीन रहती है, अर्थात इसे दुर्गंध तनिक भी नहीं सुहाती और सुगंध पाने के लिए सदैव लालायित रहती है। बुद्धिमान चतुर संत को चाहिए कि वह ज्ञान-विचार से इसको समान संयम (वश) में रखे (सुगंधित विषय-पदार्थों की आसक्ति में न पड़कर, सद्गुरु के उपदेशानुसार स्वयं को सहज शुद्ध-भाव में रखे)।

जिह्वा वशीकरण

॥ चौपाई ॥

जिभ्या इंद्री चाहे स्वादा। खट्टा मीठा मधुर सवादा॥
सहज भाव में जो कछु आवै। रूखा फीका नहिं बिलगावै॥

(स्वाद ज्ञानेंद्री जिह्वा जल तत्व से है और इसका विषय रस है) यह सदा अच्छे-अच्छे विभिन्न प्रकार के स्वाद वाले रस-व्यंजनों को पाना चाहती है। जैसे—जगत में खट्टा, मीठा कड़ुवा, नमकीन, चरपरा एवं कसैला छः रस कहे जाते हैं, जीभ इन रसों के मधुर स्वाद को पाने के लिए उत्सुक रहती है।

साधु जन को चाहिए कि वह स्वाद-रसों की आसक्ति में न पड़े। स्वत: सरलता से समयानुसार जो भी कुछ सुपाच्य एवं शुद्ध-सात्विक भोजन मिल जाए, उसे प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करे। रूखे-सूखे भोजन को स्वादहीन समझकर अलग न करे, अर्थात उसे ठुकराए नहीं अपितु समभाव से सानंद ग्रहण करे।

विशेष *—नाना स्वाद-रसों के चक्कर में पड़ना, स्वयं का पतन करना है। जीभ की स्वादासक्ति में पड़े रहने से कल्याण-साधना नहीं हो सकती। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं जब तक जीभ स्वादरूपी कुएं में लटकी है, जहां वह तीक्ष्ण विषरूपी विषयों का पान कर रही है, तब तक जीवन में अविद्या, स्मिता, राग एवं द्वेषादि दोष उत्पन्न होंगे और हृदय से रामनाम-ज्ञान चला जाएगा। यथा—*

जीभ स्वाद के कूप में, जहां हलाहल काम।
अंग अविद्या ऊपजै, जाय हिये ते नाम॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

यह भी समझना चाहिए कि रूखा-फीका सुपाच्य शुद्ध भोजन सदैव लाभदायक होता है। वह स्वादिष्ट कहे जाने वाले विभिन्न पकवानों एवं मिष्ठानों से कहीं अधिक गुणकारी, स्वास्थ्यवर्धक एवं सुखदायी होता है। किसी भी संत-साधक के भक्ति-साधना संपन्न जीवन में तो वह और भी अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। स्वादासक्ति को छोड़कर सहज सामान्य-स्थिति में जीना ही श्रेयस्कर है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि प्रारब्ध के अनुसार प्राप्त अपना रूखा-सूखा खाकर, संतोषरूपी शीतल जल पीओ, किंतु दूसरों की चिकनी-चुपड़ी रोटी को देखकर जी मत ललचाओ। यथा—

रूखा सूखा खाय के, ठंडा पानी पीव।
देखि पराई चूपड़ी, मत ललचावै जीव॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

जहां तक विभिन्न रसों के पीने के स्वाद की बात है तो समस्त सांसारिक-विषयों के रस विष-रूप ही हैं, उन सबसे अलग हटकर केवल हरि-रस (परमात्मा का भक्ति-रस) सर्वोत्तम है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जिसने एक बार अंतर्मुखी चित्त-वृत्ति से लगन लगाकर हरि-रस का पान कर लिया, तो उसके रोम-रोम एवं अंग-प्रत्यंग में वह आनंद-रूप में ऐसे रम गया कि वह और अम्ल (रसायन) क्या खाए? अर्थात इस जगत में हरि-रस से बढ़कर और कोई अन्य रस सुखप्रद नहीं है। यथा—

कबीर हरि रस जिन पिया, अंतरगति लौ लाय।
रोम रोम में रमि रहे, और अमल क्या खाय॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

॥ चौपाई ॥

जो कोइ पंचामृत लै आवै। ताहि देख नहिं हरष चढ़ावै॥
तजै न रूखा साग अलूना। अधिक प्रेम सो पावै दूना॥

इसलिए—जो कोई (दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर के मिश्रण से बने) पंचामृत को भी खाने के लिए लेकर आए तो उसे देखकर अपने मानस-मन में हर्ष एवं रुचि नहीं बढ़ाना चाहिए। और रूखे-सूखे साग-आलू का त्याग न करे, अपितु उसे दूने प्रेम के साथ पेट-भर खाना चाहिए।

जननेंद्रिय वशीकरण

॥ चौपाई ॥

इंद्री दुष्ट महा अपराधी। कुटिल काम कोइ विरले साधी॥
कामिनी रूप काल की खानी। तजहु तासु संग हो गुरु ज्ञानी॥

(जननेंद्रिय, अर्थात लिंग इंद्री जल-तत्व की कर्मेंद्रिय है और जिसका कर्म है मूत्र-वीर्य का त्याग तथा मैथुन (काम-विषय-भोग) करना)। यह मैथुन-विषय भोग के पाप-कर्म में प्रवृत्त करने की महान अपराधी है। इसके द्वारा जो कामोत्पत्ति होती है, उस दुष्ट प्रबल कामदेव को कोई विरला साधु ही साध (जीत) पाता है।

काम-वासना में प्रवृत्त करने वाली कामिनी-स्त्री का मोहिनी-रूप भयंकर काल की खान है, अर्थात वह काम-विषय भोग से काल-रूपी विभिन्न दुख एवं रोगों की उत्पत्ति का स्थान है, जिससे ग्रसित हुआ जीव यूं ही मर जाता है, अपना कल्याण साधन नहीं कर पाता। अतः कामिनी स्त्री का संग त्यागकर गुरु के ज्ञानोपदेश का यथावत् आचरण करके गुरु-ज्ञान से समृद्ध होओ।

विशेष—*जीवन-कल्याण का अधिकार स्त्री-पुरुष दोनों को समान है। इस संदर्भ में जहां कामिनी-स्त्री पुरुष-कल्याण में बाधक है, वहां कामी-पुरुष भी स्त्री-कल्याण में बाधक है। अतएव, ऐसी स्थिति में साधु-पुरुष की भांति साध्वी स्त्री को भी कामी-पुरुष का साथ छोड़ देना चाहिए।*

काम-विषय एक अत्यंत भयंकर विकार है। किसी न किसी रूप में प्रायः सभी जीवन काम से ग्रसित होते हैं। कामाग्नि जगने पर मानो देह का रोम-रोम सुलग उठता है। उससे कुछ भी सूझ नहीं पड़ता। यहां तक कि उससे बहुतों के महान व्रत एवं तप भंग हुए हैं। कामातुर-दशा में मन विकृत तथा बुद्धि कुंठित हो जाती है। उससे शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक शक्ति का पतन होता है। अतः जब तक जीवन में काम-वासना प्रबल है, तब तक परम सुख-शांति की आशा कैसे की जा सकती है? सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि कामी, क्रोधी और लालची मनुष्य से कभी भक्ति नहीं होती। भक्ति तो कोई शूरवीर संत-भक्त ही करता है, जो (कामादि विषयों को जीतकर) जाति, वर्ण एवं कुल की मर्यादा से परे हो गया है। यथा—

कामी क्रोधी लालची, इनसे भक्ति न होय।
भक्ति करै कोई सूरमा, जाति बरन कुल खोय॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

काम जीवन-कल्याण का महान शत्रु है। अतएव, साधु-पुरुष एवं साध्वी स्त्री का इसे वश में करना परमावश्यक है।

काम वशीकरण

॥ चौपाई ॥

जबहिं काम उमंग तन आवै। ताहि समय जो आप जुगावै॥
शब्द विदेह सुरति लै राखै। गहि मन मौन नामरस चाखै॥
जब निहत्त्व में जाय समाई। तबहीं काम रहै मुरझाई॥

काम को वश में करने का उपाय सद्गुरु कबीर साहेब समझाकर बताते हैं कि जब काम उमड़कर शरीर में आए, अर्थात कोमोत्तेजना प्रबल हो, उस समय जो अपने आपको बचाए तो सावधान होकर ज्ञान-युक्ति से बचाए।

उसके लिए वह (मिथ्या जड़-देहाभिमान को दूर कर) स्वयं के विदेह-आत्म-स्वरूप पर अपनी सुरति ले जाकर रखे, अर्थात यह जानकर कि मैं देह नहीं हूं विशुद्ध-चित्त से अपने चैतन्य आत्मस्वरूप का ध्यान करे और मन तक मौन-स्थिति को ग्रहण कर (पूर्णतया शांत होकर) उस ध्यानावस्था में सद्गुरु के सत्यनाम का अमृत रस चखे।

जब साधना की शांत-स्थिति में साधक देह के पांचों-तत्वों (पृथ्वी, जल अग्नि, वायु तथा आकाश) से परे अपने विशुद्ध चैतन्य आत्मस्वरूप में समा जाता है, उसी समय देह में उमड़ा हुआ काम मुरझा जाता है (समाप्त हो जाता है)।

विशेष—*काम-विषय शरीर में उमड़ता है तथा शरीर से ही भोगा जाता है। स्वयं को देह जानकर ही अज्ञानी जीव काम-भोग में प्रवृत्त होता है। जब वह भली-भांति यह जान लेगा कि वह दृश्यमान जड़ देह नहीं, अपितु विदेह अविनाशी, चैतन्य एवं शाश्वत आत्मा है, तब वह काम से मुक्त हो जाएगा। अत: इसे वश में करने के लिए मन को पूर्ण शांत करके सद्गुरु के दिए हुए नाम-ज्ञान की विधिवत् साधना से अपने आत्मस्वरूप में स्थित होना चाहिए।*

कामदेव लुटेरा है

॥ छंद ॥

काम परबल अति भयंकर, महादारुण काल हो।
सुर नर मुनि गण यक्ष गन्धर्व, सबहिं कीन्ह बिहाल हो॥
सबहिं लूटे विरले छूटे, ज्ञान गुण जिन दृढ़ गहे।
गुरु ज्ञानदीप समीप सतगुरु, भेद मारग तिन लहे॥ 7॥

देह में उमड़ने वाला विषय कामदेव अत्यंत बलवान, भयंकर और महाकठोर निर्दयी-कालरूप है। उसने देवता-राक्षस, मनुष्य, मुनिगण, यक्ष एवं गंधर्व आदि सभी जनों को बेहाल-व्याकुल किया है। उसने सबको लूटा है, अर्थात सबको पतित किया है, कोई विरला संत-साधक ही उससे छूट सका है, जिसने सत्य, क्षमा, धैर्य, विचार एवं विवेक आदि ज्ञान-गुणों को दृढ़ता से ग्रहण किया है और सद्‌गुरु के ज्ञानदीप के पास बैठकर, अर्थात सद्‌गुरु के सत्यज्ञानोपदेश के अनुसार जीव से लेकर सत्पुरुष परमात्मा एवं जड़-चेतन तक के भेद को जान लिया तथा वह उस ज्ञान-मार्ग पर चला।

कामदेव लुटेरे से बचने का उपाय

॥ सोरठा ॥

दीपक ज्ञान प्रकास, भवन उजेरा करि रहो।
सतगुरु शब्द बिलास, भाजै चोर अंजोर जब॥ 7॥

जो संत-साधक अपने हृदयरूपी भवन में ज्ञान-दीपक का पुण्य-प्रकाश करता है और सद्‌गुरु के सार-शब्द में सदैव आनंद-मग्न रहता है, उससे डरकर कामदेव रूपी चोर भागता है।

अनल पक्षी का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

गुरुकृपा सों साधु कहावै। अनल पच्छ ह्वै लोक सिधावै।
धर्मदास यह परखो बानी। अनल पच्छ गम कहौं बखानी॥

(संसार से विरक्त साधु के लिए गुरु-कृपा से बढ़कर कुछ नहीं होता) गुरु की महान कृपा से 'साधु' कहलाता है और वह अनल पक्षी के समान होकर सत्य लोक (मुक्त-धाम) को जाता है।

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम अनल पक्षी की उपदेशात्मक-वाणी ध्यानपूर्वक सुनो, परखो-समझो। (जिस प्रकार अनल पक्षी निरंतर आकाश में रहता है और उसका बच्चा जन्म कर पृथ्वी पर आते हुए वापिस अपने घर लौट जाता है) अनल पक्षी की यह रहस्यमय ज्ञान-वाणी मैं तुम्हें भली प्रकार वर्णन करता हूं।

॥ चौपाई ॥

अनल पच्छ जो रहै अकाशा। निशि दिन रहै पवन की आशा॥
दृष्टि भाव तिन रति विधि ठानी। यहि विधि गरभ रहै तिहि जानी॥

अनल पक्षी जो सदा आकाश में रहते हैं, वे रात-दिन केवल पवन की आशा करते हैं, अर्थात आकाश में वे वायु के सहारे आस लगाकर रहते हैं।

अनल पक्षी नर-मादा की रति-प्रक्रिया (मैथुन) मात्र दृष्टि भाव है, अर्थात रति की इच्छा से जब वे परस्पर मिलते हैं तो प्रेमपूर्वक एक-दूसरे को रति-भावना की गहन-दृष्टि से देखते हैं। उनकी इस पारस्परिक रति- भावना की दृष्टि की विधि से मादा अनल को गर्भ रहा समझो।

॥ चौपाई ॥

अण्ड प्रकाश कीन्ह पुनि तहवां। निराधार आलंबहि जहवां॥
मारग माहिं पुष्ट भो अंडा। मारग माहिं बिरह भौ खण्डा॥

(गर्भ धारण करने के कुछ समय पश्चात) फिर वहां मादा अनल पक्षी ने अपना अंडा प्रकाशित किया, जहां पर अंडा ठहरने का कोई आधार नहीं, पूर्णतः निराधार शून्य- ही-शून्य है।

निरालंब (आधारहीन) होने के कारण उसका वह अंडा पृथ्वी की ओर नीचे गिरने लगा, गिरते हुए नीचे जाते मार्ग में सर्वथा पककर तैयार हो गया, मार्ग में ही वह अंडा फूट गया तथा उसमें से अनल-शिशु बाहर निकल आया।

॥ चौपाई ॥

मारग माहिं चक्षु तिन पावा। मारग माहिं पंख परभावा॥
महि ढिग आवा सुधि भइ ताही। इहां मोर आश्रम नहिं आही॥

नीचे गिरते- गिरते मार्ग में ही शिशु- अनल ने अपनी आंखें खोलीं तथा मार्ग में ही उसके पंख निकलकर मजबूत हो गए, अर्थात वह उड़ने योग्य हो गया।

गिरते हुए जब वह शिशु-अनल पृथ्वी के पास आया तो उसे यह स्मरण (होश) आया कि यहां मेरा आश्रम नहीं आया, अर्थात वह समझ गया कि यह मेरे रहने का स्थान नहीं है।

॥ चौपाई ॥

सुरति सम्हार चलै पुनि तहवां। मात पिता को आश्रम जहवां॥
अनल पच्छ तिहि लेन न आवै। उलट चीन्ह निज घरहि सिधावै॥

तब वह अनल पक्षी का शिशु अपना चित्त संभालकर (सचेत होकर) फिर वहां उड़ चला, जहां उसके माता-पिता का आश्रम (निवास) था। अनल पक्षी कभी भी अपने बच्चे को लेने पृथ्वी की ओर नहीं आता, परंतु उसका शिशु पहचान लेता है कि यह मेरा घर नहीं है और वह उलटकर वापिस अपने घर की ओर (माता-पिता के पास) चला जाता है।

॥ चौपाई ॥

बहु पंछी जग माहिं रहावैं। अनल पच्छ सम नाहिं कहावैं॥
अनल पच्छ जस पच्छिन माहीं। अस विरले जीव नाम समाहीं॥

संसार में बहुत पक्षी रहते हैं, परंतु वे सब अनलपक्षी के समान गुणवान नहीं

कहलाते। जैसे पक्षियों में अनल पक्षी है वैसे विरले ही कुछ जीव (मनुष्य) हैं, जो सद्गुरु के नाम-ज्ञान में समाते हैं, अर्थात भली प्रकार उसका आचरण करते हैं।

॥ चौपाई ॥

यहि विधि जो जिव चैते भाई। मेटि काल सतलोक सिधाई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे भाई! इस विधि से, अर्थात अनल पक्षी की भांति जो जीव ज्ञान-युक्त होकर चेते (होश में आए) तो वह काल-कल्पना (मृत्यु एवं दुखदायी विषय-कामनाओं) को पार कर सत्लोक (मुक्ति-धाम) चला जाता है।

विशेष—*सद्गुरु कबीर साहेब की अमृत-वाणी में सत्यज्ञानोपदेश के अंतर्गत अनल पक्षी का दृष्टांत वर्णित है। वे कहते हैं कि जहां पृथ्वी, अग्नि, वायु तथा आकाश तत्वों का आधार नहीं, वहां अनल पक्षी एवं सत्य शब्द का प्रकाश निराधार रहता है। यथा—*

पृथ्वी आपहु तेज नहिं, नहीं वायु आकास।
अनल पच्छि तहां ह्वै रहै, सत्य शब्द परकास॥

अनल पक्षी के बारे में वे कहते हैं कि अनल पक्षी निरंतर आकाश के मध्य में निवास करता है। वह पृथ्वी-निवास से सदा विरक्त और निराधार विश्वासपूर्वक रहता है। यथा—

अनल अकासै घर किया, मध्य निरंतर बास।
वसुधा वास विरक्त रहै, बिना ठौर विस्वास॥

अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार अनल पक्षी पृथ्वी से अलग निराधार आकाश में विश्वासपूर्वक रहते हैं और नीचे गिरते हुए अपने बच्चे तक का भी मोह नहीं करते, उसी प्रकार सच्चे संत-साधक किसी घर-परिवार आदि के मोह में नहीं पड़ते। वे इस असार जगत के आधार पर नहीं, अपितु विश्वासपूर्वक सद्गुरु की भक्ति के सहारे पर रहते हैं और जैसे अनल पक्षी का बच्चा पृथ्वी के पास आने पर चेत जाता है और शुद्ध चित्त से स्वयं को संभालकर वापिस अपने घर की ओर माता-पिता के पास चला जाता है, वैसे ही विरक्त संत-साधक सद्गुरु के सत्यज्ञान में पूर्णतः समायुक्त होकर, अपने वास्तविक निवास सत्यलोक सत्पुरुष परमात्मा के पास चले जाते हैं।

साधु अनल पक्षी के समान कब होता है?

॥ छंद ॥

निरालम्ब आलम्ब सतगुरु, एक आसा नाम की।
गुरुचरण लीन अधीन निशि दिन, चाह नहिं धन धाम की॥

सुत नारि सकल बिसारि विषया, गुरुचरण दृढ़ कै गहे।
सतगुरु कृपा दुख दुसह नाशै, धाम अविचल सो लहे॥ 8॥

साधु संसार के सब आधारों को छोड़कर एक सद्गुरु का आधार और उनके सत्यनाम की एक आशा रखे (विश्वासपूर्वक उसी से लगन लगाए)। अभिमान त्यागकर रात-दिन गुरु-चरणों के अधीन रहता हुआ, दास-भाव से उनकी सेवा में लगा रहे और धन एवं घर की कदापि चाह न रखे। पुत्र-स्त्री तथा समस्त विषयों को भुलाकर (मन से मिटाकर), विनम्रतापूर्वक गुरु-चरणों को दृढ़ता से पकड़े, जिससे कि उनसे कभी अलग न हो सके। इस प्रकार जो साधु सद्गुरु की भक्ति के आचरण में रहता है, सद्गुरु की कृपा से उसका जन्म-मरण का अत्यंत कठिन दुख नाश हो जाता है और वह सत्यलोक को प्राप्त करता है (तब वह साधु अनल पक्षी के समान होता है और सद्गुरु उसे मोक्ष प्रदान करते हैं)।

अविचल धाम की प्राप्ति किससे होती है?

॥ सोरठा ॥

मन वच कर्म गुरु ध्यान, गुरु आज्ञा निरखत चलै।
देहि मुक्ति गुरु दान, नाम विदेह लखाय कै॥ 8॥

साधक पवित्र मन-वचन-कर्म से सद्गुरु का ध्यान करे और सद्गुरु की आज्ञानुसार सचेत होकर चले। तब सद्गुरु उसे जड़-देह से परे नाम-विदेह, जो शाश्वत सत्य है एवं जिसका नाम सत्यनाम है, उस सत् पुरुष को लखाकर, मुक्ति दान देते हैं (जब तक देहासक्ति होगी तब तक मुक्ति संभव नहीं)।

विशेष—*अविचल धाम अर्थात सत्यलोक की प्राप्ति सद्गुरु को पूर्णतः समर्पित होने से होती है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जो गुरु की आज्ञानुसार आता-जाता है, अर्थात गुरु-आज्ञानुसार सब कर्म एवं आचरण करता है, वह सच्चा संत है और वह जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है। यथा—*

गुरु की आज्ञा आवई, गुरु की आज्ञा जाय।
कहैं कबीर सो संत है, आवागवन नसाय॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

नाम ध्यान माहात्म्य

॥ चौपाई ॥

जब लग ध्यान विदेह न आवे। तब लग जिव भव भटका खावे॥
ध्यान विदेह औ नाम विदेहा। दोउ लखि पावे मिटे संदेहा॥

सद्गुरु कबीर साहेब ध्यान-साधना के बारे में समझाते हुए कहते हैं कि जब तक देह से परे विदेह का ध्यान करना नहीं आता या ध्यान होने में नहीं आता, तब तक जीव इस असार-संसार में भटकता रहता है।

ध्यान विदेह और नाम विदेह, इन दोनों को जो यथार्थरूप से समझ पाता है, तो उसका सब संदेह (भ्रम-अज्ञान) मिट जाता है।

विशेष—*तन-मन इन्द्रियों को पूर्ण संयमित कर विशुद्ध एकाग्र-चित्त से अपने इष्ट-सद्गुरु, सत्पुरुष अथवा निज आत्मस्वरूप का लखना-साक्षात्कार करना, ध्यान कहलाता है।*

पृथ्वी-जल आदि पांच तत्वों से निर्मित देह जड़, परिवर्तनशील एवं नाशवान है। यह अनित्य, अर्थात बनता-बिगड़ता तथा जन्मता-मरता है। देह का नाम-रूप होता है, किंतु वह स्थायी नहीं रहता। राम, कृष्ण, लक्ष्मी, दुर्गा, हनुमान, भैरव तथा ईसा आदि जगत में जितने भी नाम बोले जाते हैं, सब भिन्न-भिन्न देहों के रखे गए नाम हैं, अतः वे सब देह-नाम कहे जाते हैं।

इसके विपरीत जड़ एवं नाशवान देह से परे—नित्य, अविनाशी, चैतन्य एवं शाश्वत निज-आत्मस्वरूप एवं सत्पुरुष को विदेह कहा गया है, जिसमें आत्मस्वरूप अपरोक्ष और सत्पुरुष परमात्मा परोक्ष है। विदेह आत्मस्वरूप तथा सत्पुरुष का ध्यान ही विदेह ध्यान कहा जाता है।

सत्य तो केवल सत्य है, वह सर्वोपरि है तथा उसकी समानता किसी से नहीं की जा सकती। सत्य अविनाशी है, अर्थात वह हर काल में विद्यमान रहता है और उसका कोई नाम-रूप नहीं होता। सत्य का रूप स्वयं सत्य है और सत्य ही का नाम सत्यनाम है। सत्य विदेह सत्पुरुष परमात्मा है, अतः उसका नाम ही विदेह सत्यनाम है।

सत्यनाम की स्थिति को समझाने के लिए सत्यनाम की रमैनी में कहा गया है कि मन में सत्यनाम का सुमिरन करो। वहां रात-दिन की स्थिति तथा पृथ्वी आदि पांचों तत्वों का निवास नहीं है—वहां ध्यान लगाने से फिर योनि-संकट, अर्थात किसी योनि के जन्म-मरण का दुख नहीं आएगा। वहां का सुख वर्णन नहीं किया जा सकता, सद्गुरु मिले तो वे उसे लखा-समझा देते हैं। जैसे गूंगे को सपना दिखता है, वैसे जीवित जन्म को देखो। यथा—

रमैनी-सत्यनाम

(कबीरपंथ-शब्दावली पृ. 426)

सत्यनाम सुमिरो मन माहीं। जहवां रजनी वासर नाहीं॥
आदि अंत नहिं धरनि अकासा। पावक पवन न नीर निवासा॥ 1॥
चन्द सूर तहवां नहिं कोई। प्रात सांझ तहवां नहिं दोई॥
कर्म भर्म पुण्य नहि पापा। तहवां जपियो अजपा जापा॥ 2॥
झलमलाट चहुं दिस उजियारा। वरषे तहां अगर की धारा॥
तहं सतगुरु को आसन होई। कोटि माहिं जन पहुंचे कोई॥ 3॥

दसों दिसा झिलमिल तहं छाजा। बाजै तहां सु अनहद बाजा॥
तहवां हंसा ध्यान लगावे। बहुरि न जोनी संकट आवे॥ 4॥
जहवां को सुख वरनि न जाइ। सतगुरु मिलै तो देह लखाई॥
ज्यों गुंगा को सुपना देखो। ऐसो जीवत जनम को लेखो॥ 5॥

इस प्रकार विदेह-ध्यान और विदेह-नाम का ज्ञान समझ लेने पर, हृदय में उठने वाले सब संदेह समाप्त हो जाते हैं।

॥ चौपाई॥

छन इक ध्यान विदेह समाई। ताकी महिमा वरणि न जाई॥
काया नाम सबै गोहरावे। नाम विदेह बिरले कोई पावे॥

ध्यान-साधना करते हुए जब एक क्षण-भर में साधक का ध्यान विदेह-परमात्मा-स्वरूप में समा जाता है, तो उसकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता[1] (वह अकथनीय है)। देह के रूप तथा नामों को सब स्मरण कर पुकारते हैं, परंतु विदेह-स्वरूप के विदेह सत्यनाम को तो कोई विरला संत-साधक ही जान पाता है।

॥ चौपाई॥

जो युग चार रहे कोई कासी। सार शब्द बिन यमपुर वासी॥
नीमषार बद्री पर धामा। गया द्वारका प्राग अस्नाना॥

जो कोई चार युगों (सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलियुग) में पवित्र कही जाने वाली काशी (वाराणसी) नगरी में वास करे, नीमसार (नैमिषारण्य), बद्रीनाथ आदि तीर्थों पर जाए और गया, द्वारका तथा प्रयाग (त्रिवेणी संगम) का स्नान करे, परंतु सार-शब्द के जाने बिना वह जन्म-मरण के दुख यातनारूपी यमपुर में ही वास करेगा (उसकी मुक्ति नहीं होगी)।

॥ चौपाई॥

अड़सठ तीरथ भू परिकरमा। सार शब्द बिन मिटै न भरमा॥
कहं लग कहों नाम परभाऊ। जो सुमरे जमत्रास नसाऊ॥

चाहे कोई अड़सठ तीर्थों (हरिद्वार, कनखल, कुरुक्षेत्र, अयोध्या, मथुरा, पुष्कर, अमरकंटक, गंगाद्वार, जगन्नाथपुरी तथा रामेश्वरम आदि) में स्नान कर ले,

---

1. जब तन-मन-वचन के स्थिर होने के साथ, चित्त-वृत्तियां भी शांत-स्थिर हो जाती हैं (ध्यान-कृति परमात्मस्वरूप में लीन हो जाती हैं), सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि उस क्षण के सुख का कोई कल्प भी नहीं पा सकता अथवा उसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। यथा—

तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरति निरति थिर होय।
कहैं कबीर उस पलक को, कल्प न पावै कोय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

सारे भूमण्डल की परिक्रमा कर आए, किंतु सार-शब्द के ज्ञान-बिना उसका भ्रम-अज्ञान नहीं मिट सकता।

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मैं कहां तक सार-शब्द (सत्यनाम) के प्रभाव का वर्णन करूं? जो उसका यथा-विधि सुमिरन करेगा, उसका मृत्यु का भय नष्ट हो जाएगा।

नाम पाने वाले को क्या मिलता है?

॥ चौपाई ॥

सार नाम सतगुरु सो पावे। नाम डोर गहि लोक सिधावे॥
धर्मराय ताको सिर नावे। जो हंसा निःतत्व समावे॥

सब नामों में अद्वितीय सत्पुरुष का सार-नाम (विदेह सत्यनाम) सद्गुरु से प्राप्त किया जाता है। उस सार-नाम की डोर पकड़कर अर्थात उसका विधिवत् ध्यान-स्मरण करते हुए संत-साधक सत्यलोक जाता है।

उस सार-नाम की ध्यान-साधना करने से जो सद्गुरु का हंस-भक्त पांचों तत्वों से परे परम आत्मस्वरूप में समा जाता है, उसके आगे मृत्यु के देवता धर्मराज भी सिर झुकाते हैं, अर्थात वह मृत्यु से मुक्त हो जाता है।

सार शब्द क्या है?

॥ चौपाई ॥

सार शब्द विदेह स्वरूपा। निअच्छर वहि रूप अनूपा॥
तत्व प्रकृति भाव सब देहा। सार शब्द निःतत्व विदेहा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मोक्षदायी सार-शब्द विदेह-स्वरूप वाला है और उसका वह अनुपम रूप निःअक्षर है अर्थात उसे अक्षरों में लिखकर वर्णित नहीं किया जा सकता। पांच तत्व एवं पच्चीस प्रकृति के संयोजन से सब देह (शरीर) बने हैं, परंतु सार-शब्द पांचों तत्वों से मुक्त विदेह-स्वरूप वाला है।

विशेष—*सार-शब्द सामान्य शब्द नहीं है, वह सब शब्दों से परे है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि शब्द के मानने वाले शब्द-शब्द तो बहुत कहते हैं, परंतु वह सार-शब्द तो सब शब्द-जाल एवं देह से परे परमात्म-स्वरूप है। वह जिह्वा पर नहीं आता, उसको भली-भांति निरख-परख लो। यथा—*

शब्द-शब्द सब कोई कहैं, वो तो शब्द विदेह।
जिभ्या पर आवै नहीं, निरखि परखि करि लेह॥

(स.क.बीजक)

सार-शब्द की महिमा में सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि अनेक प्रकार के शब्द-शब्द में बहुत अंतर है, उनसे अलग हटकर सार-शब्द में चित्त लगाओ।

जिस शब्द से साहिब (सत् पुरुष परमात्मा) मिलें, उस सार-शब्द को ग्रहण कर लो। यथा—

शब्द शब्द बहुत अंतरा, सार शब्द चित्त देह।
जा शब्दै साहिब मिलैं, सोइ शब्द गहि लेह॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

वे कहते हैं कि जो सद्‌गुरु ने बताया, वही अपना कल्याणदायी सार-शब्द है। उसी गुरु की बलिहारी है, जिसके सार-शब्दोपदेश से उसका शिष्य व्यर्थ नहीं जाता, अर्थात उसका जीवन सार्थक हो जाता है। यथा—

सोइ शब्द निज सार है, जो गुरु दिया बताय।
बलिहारी वा गुरुन की, सीष बियोग न जाय॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

सार-शब्द के ज्ञान बिना जीव प्रलय (मृत्यु) के चक्कर में पड़ जाता है। काया-माया (देह एवं सांसारिक धन-संपत्ति आदि) स्थिर नहीं हैं (ये सब क्षणिक एवं छूट जाने वाले हैं) अतः शब्द से सही अर्थ विचार-समझ लो। यथा—

सार शब्द जाने बिना, जिव परलै में जाय।
काया माया थिर नहीं, शब्द लेहु अरथाय॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

निज आत्मस्वरूप एवं सत्पुरुष का ज्ञान कराने वाला सार-शब्द जानकर, जिसने उस पर विश्वास किया, वह कौए जैसी कुमति (दुर्बुद्धि) को छोड़ हंस की सुमति को धारण कर भवसागर से पार हो जाता है। यथा—

सार शब्द निज जानि के, जिन कीन्ही परतीति।
काग कुमत तजि हंस है, चलै सु भौजल जीति॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

इस प्रकार सार-शब्द की जितनी महिमा कही जाए, कम है। कल्याणेच्छुक जिज्ञासुओं को सार-शब्द का महत्व समझते हुए सद्‌गुरु की शरण में सार-शब्द का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

॥ चौपाई ॥

कहन सुनन को शब्द चौधारा। सार शब्द सों जीव उबारा॥
पुरुष सु नाम सार परवाना। सुमिरण पुरुष सार सहिदाना॥

संत-भक्तों को कहने-सुनने के लिए यूं तो लोक-वेदादि के कर्मकांड, ज्ञानकांड, उपासना कांड एवं मंत्र योग संबंधी चारों धाराओं के चारों ओर के शब्द हैं, किंतु वास्तव में विदेह सार-शब्द से ही जीव का उद्धार होता है।

सत्यपुरुष परमात्मा का सुंदर सत्यनाम-ज्ञान ही सार प्रमाणित है, अर्थात वह

सत्यलोक-मुक्तधाम जाने का सही प्रमाण है और सत्पुरुष का सुमिरन ही सार एवं उसकी मोक्षदायिनी निशानी है।

विशेष—*वस्तुत: इस जगत में कहने-सुनने के लिए चारों ओर के बहुत शब्द एवं उपदेश हैं। उनसे जीवन-सुधार की प्रेरणा मिलती है तथा वे जीवन में बहुत सहायक हैं और लाभदायक सिद्ध होते हैं। तो भी उनसे जीवन का भवसागर से उद्धार नहीं हो पाता। उद्धार के लिए तो विदेह सार-शब्द रूप सत्पुरुष का सुमिरन ही है। सद्गुरु सब संदेहों का निवारण कर शांति प्रदान करने वाले सत्य दर्शाने वाले होते हैं। अतएव, कल्याणेच्छुक को चाहिए कि वह अपने साकार सद्गुरु को सत्पुरुष के रूप में देखे और उनसे सार-शब्द की दीक्षा ग्रहण करे।*

॥ चौपाई ॥

बिनु रसना के जाप समाई। तासों काल रहे मुरझाई॥
सूच्छम सहज पंथ है पूरा। तापर चढ़ो रहे जन सूरा॥

बिना जीभ हिलाए, अर्थात बाह्य जगत से ध्यान हटाकर तथा अंतर्मुखी होकर शांत चित्त-वृत्ति से जो सार-शब्द के अजपा-जाप-सुमिरन में समा जाता है (लीन हो जाता है), उससे काल उदास हो जाता है, अर्थात लज्जित होकर काल उससे पीछे हट जाता है।

अजपा-जाप-सुमिरन अति सूक्ष्म एवं संपूर्ण सहज मार्ग है (जिस पर सामान्य जन टिका नहीं रह सकता)। उस सहज मार्ग पर शूरवीर संत-साधक चढ़ा रहे, अर्थात साधना-यात्रा करता रहे।

॥ चौपाई ॥

नहिं वह शब्द न सुमिरन जापा। पूरन वस्तु काल दिखदापा॥
हंस भार तुम्हरे शिर दीन्हा। तुमको कहों शब्द को चीन्हा॥

सद्गुरु! कबीर साहेब कहते हैं कि धर्मदास! सार-शब्द मुख से बोलकर सुमिरन-जाप का नहीं है और सार-शब्द-स्वरूप पूर्ण पुरुष के सामने काल दिखाई नहीं पड़ता। तुमको जो सार-शब्द कहा है, हे हंस! उसके आचरण का भार तुम्हारे सिर पर दिया है।

॥ चौपाई ॥

पदम अनंत पंखुरी जाने। अजपा जाप डोर सो ताने॥
सूच्छमद्वार तहां जब दरसे। अगम अगोचर सत्पद परसे॥

देह के भीतर अनंत पंखुड़ियों वाले कमल हैं, जो अजपा-जाप की डोर को पकड़ने से जाने जाते हैं। तब वहां सूक्ष्म द्वार दिखाई पड़ता है, जिससे मन-बुद्धि से परे दिखाई न पड़ने वाले (मोक्षस्वरूप) सत्य-पद को पाया जाता है।

विशेष—*मानव-देह के भीतर अनेक पंखुड़ियों वाले कमलों की उक्त चर्चा*

योग-शास्त्र में भली भांति व्यापक रूप से वर्णित की गई है। अनुभवी योगियों के योग मतानुसार मानव-देह षट-चक्र पर आधारित है। उन भिन्न-भिन्न छः चक्रों को नाना पंखुड़ियों वाले कमल कहा गया है, जिनकी स्थिति इस प्रकार बताई गई है—

*1. **मूलाधार चक्र**—यह चार पंखुड़ियों वाला कमल है। इसका स्थान गुदा है और इसी पर समस्त शरीर का ढांचा आधारित है, इसलिए इसको आधार चक्र भी कहते हैं।*

*2. **स्वाधिष्ठान चक्र**—यह छः पंखुड़ियों वाला कमल है, जिसका स्थान लिंग है।*

*3. **मणिपूरक चक्र**—यह दस पंखुड़ियों वाला कमल है, इसका स्थान नाभि है।*

*4. **अनहद चक्र**—यह बारह पंखुड़ियों का कमल है और इसका स्थान हृदय के मध्य में है।*

*5. **विशुद्ध चक्र**—यह सोलह पंखुड़ियों के आकार का कमल है, जो कण्ठ में स्थापित है।*

*6. **आज्ञा चक्र**—यह दो पंखुड़ियों का कमल है। इसका स्थान युगल भृकुटियों के मध्य में है।*

इन षट-चक्रों के अतिरिक्त सातवां एक सहस्त्र दल कमल-चक्र और भी है, जो सिर के मध्य-भाग में है। मूलाधार से मेरुदण्ड के भीतर से गई इड़ा-पिंगला नाड़ियों के मध्य सुषुम्ना नाड़ी का यहीं पर अंत होता है। कोई-कोई योगी ही इस चक्र का वर्णन करता है, इसे भंवर गुफा भी कहते हैं। प्रायः षट-चक्र की ही चर्चा की जाती है।

हृदय के मध्य में अवस्थित अनहद चक्र पर मन की गति निर्भर है। योग-शास्त्र में आठ कमल-दल अनहद-चक्र को, आठ दिशाओं में विभाजित कर दिया है। जिस समय मन कमल-पुष्प के छिद्र के बाहर होता है, तो वह मनुष्य की जाग्रत अवस्था मानी गई है। उसी समय मनुष्य विभिन्न कार्य करता है, परंतु मन ऐसा नटखट अथवा चंचल है कि वह क्षण-क्षण में प्रत्येक पंखुड़ी पर भ्रमण करता है, जिससे मनुष्य के कार्य भी कमल-पंखुड़ियों की गणनानुसार होते हैं और मन के साथ इंद्रियां भी उस कार्य में प्रवृत्त होती हुई चली जाती हैं। जितनी तीव्र-गति मन की है, उतनी शीघ्रता से गमन करने वाली संसार की कोई शक्ति नहीं है। मन की प्रबल गति के निरोध करने, अर्थात मन को संयमित करने तथा कैवल्य पद पाने के लिये योगियों ने राजयोग का वर्णन किया है।

॥ चौपाई ॥

अंतर शून्य महं होय प्रकासा। तहवां आदि पुरुष का वासा॥
ताहिं चीन्ह हंस तहं जाई। आदि सुरत तहं लै पहुंचाई॥

(देह के भीतर) शून्य-आकाश में अलौकिक प्रकाश होता है। वहां आदि पुरुष, अर्थात सत् पुरुष परमात्मा का वास है। उसे पहचान-समझकर सद्‌गुरु का हंस-साधक वहां जाता है, (अंतर्मुखी होकर ध्यान की स्थिति में) आदि सुरत (आदि चित्त-वृत्ति) वहां ले जाकर पहुंचाती है।

॥ चौपाई ॥

आदि सुरत पुरुष को आही। जीव सोहंगम बोलिये ताही॥
धर्मदास! तुम संत सुजाना। परखो सार शब्द निरबाना॥

(ध्यान करते हुए साधक को) आदि सुरत जिस सत्पुरुष परमात्मा के पास लेकर आती है, उसे जीव सोहं कहकर बोलते हैं। हे धर्मदास! तुम बुद्धिमान संत हो, कल्याणदायी सार-शब्द को भली-भांति परखो-समझो।

सार शब्द (नाम) जपने की विधि

॥ छंद ॥

अजपा जाप हो सहज धुनि, परखि गुरुगम लागिये।
मन पवन थिर कर शब्द निरखै, कर्म मनमथ त्यागिये॥
होत धुनि रसना बिना, करमाल बिन निरवारिये।
शब्द सार विदेह निरखत, अमरलोक सिधारिये॥ ९॥

अजपा-जाप की साधना-विधि के अनुसार भीतर शून्य में सहज स्वाभाविक ध्वनि होती है, उसे परखने-समझने के लिए स्वयं को गुरु-ज्ञान में लगाना चाहिए। उसके लिए अपने मन-पवन (प्राण) को स्थिर कर तथा मन के विषय-कर्म-इंद्रियों को मारकर, उस सार-शब्द-स्वरूप को देखना चाहिए। वह सहज-स्वाभाविक ध्वनि बिना जीभ के हिलाए स्वतः ही होती है और हाथ में माला लिए बिना अजपा-जाप जपा जाता है। इस प्रकार विदेह सार-शब्द को पूर्णतः निरखते हुए, अमरलोक (सत्यलोक) पहुंचना चाहिए।

विशेष—*विदेह सार-शब्द के अजपा-जाप जपने की उपयुक्त विधि के लिए गुरु-ज्ञान-दीक्षा ग्रहण करना चाहिए। गुरु-ज्ञानानुसार विधिवत् आचरण (भक्ति साधना) करने से उसमें सफलता प्राप्त होती है। उसमें हाथ में माला लेने और जिह्वा से कुछ बोलने की आवश्यकता नहीं। उसके लिए मनेंद्रियों के विषय-कर्मों का त्याग, अर्थात अनासक्ति एवं ब्रह्मचर्य धारण करें और अपने भीतर मन एवं प्राण को शांत स्थिर कर साक्षी भाव से सार-शब्द स्वरूप का साक्षात्कार करना चाहिए। अजपा-जाप की उस सहज-साधना में सहज स्वाभाविक अनहद-ध्वनि स्वतः होती हैं। इस प्रकार साधना करते हुए अमरधाम-सत्यलोक की प्राप्ति करना चाहिए। इसी से जीवन सार्थक होता है।*

॥ सोरठा ॥

शोभा अगम अपार, कोटि भानु शशि रोम इक।
षोडश रवि छिटकार, एक हंस उजियार तनु॥ ९॥

(विदेह सार-शब्द के अजपा-जाप की विधिवत् साधना करने से प्रत्यक्ष अनुभूति होती है कि—)सत्यपुरुष की शोभा मन-बुद्धि की पहुंच से परे वर्णनातीत अपार है। उसके एक रोम में करोड़ों सूर्य एवं चन्द्रमा के समान प्रकाश है और सत्यलोक पहुंचने वाले सद्गुरु के एक हंस के ज्ञानस्वरूपी तन का प्रकाश सोलह सूर्य के समान है।

धर्मदास का आनंदोद्गार

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु, तव चरणन बलिहारी। किये सुखी सब कष्ट निवारी॥
चक्षुहीन जिमि पावै नैना। तिमि मोहि हरष सुमत तव बैना॥

(सद्गुरु कबीर साहेब के सार-वचनोपदेश को सुनकर धर्मदास जी आनंद विभोर होकर बोले—)हे प्रभु! आपके श्री चरणों की बलिहारी है, अर्थात मैं आपके श्रीचरणों पर न्योछावर हूं, आपने सर्वोत्तम कल्याणमय सदुपदेश सुनाकर मेरे सब कष्टों का निवारण कर मुझे सुखी किया है।

जैसे—आंखहीन-अंधा मनुष्य आंख पाने पर आनंदित होता है, वैसे ही आपके अमृत-वचनों को सुनकर मुझे अपार हर्ष (आनंद) हो रहा है।

सद्गुरु कबीर वचन

चौपाई

धर्मदास तुम अंस अंकूरी। मोहि मिलेउ कीन्हे दुख दूरी॥
जस तुम कीन्हे मोसन नेहा। तजि धन धामरु सुत पितु गेहा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम धर्मात्मा अंश-अंकुरी जीव[1] हो। तुम मुझे मिले और मेरे वचनोपदेश को सुनकर तुमने अपने जन्म-मरण रूपी दुख को दूर किया।

जैसे तुमने धन, स्थान, पुत्र एवं पिता के घर को त्याग कर, मुझसे अनन्य भक्ति-भाव से प्रेम किया है—

---

1. पूर्व के धार्मिक संस्कारों से युक्त जो जीव सांसारिक माया-मोह एवं कामादि विषय-विकारों को त्यागकर, एक नूतन अंकुर की भांति नया पवित्र जीवन पाता है तथा गुरु-ज्ञान को शीघ्र ग्रहण करके चेत जाता है, उसे अंश-अंकुरी जीव कहते हैं। धर्मदास को सद्गुरु कबीर साहेब मिले तो धर्मदास ने मन-माया के समस्त बंधनों को तोड़कर उनके चरण पकड़ लिए और उनसे सत्यज्ञान-दीक्षा पाई, अतः धर्मदास को अंश-अंकुरी कहा गया।

॥ चौपाई ॥

आगे शिष्य जो अस विधि करिहैं। गुरु चरण मन निश्चल धरिहैं॥
गुरु के चरण प्रीति चित धारै। तन मन धन सतगुरु पर वारै॥

आगे भी जो शिष्य इसी विधि से, अर्थात तुम्हारी भांति गुरु चरणों में अपना स्थिर मन धरेगा। अपने चित्त में गुरु-चरणों की प्रीत (प्रेम-भक्ति) धारे तथा तन-मन-धन सर्वस्व सद्गुरु पर न्योछावर (समर्पित) कर दे—

॥ चौपाई ॥

सो जिव मोहिं अधिक प्रिय होई। ताकहं रोक सकै नहिं कोई॥

ऐसा वह गुरु-भक्त जीव मुझे सर्वाधिक प्यारा होगा। उसे सत्यलोक (मोक्ष-धाम) जाने से कोई नहीं रोक सकेगा।

॥ चौपाई ॥

शिष्य होय सरबस नहिं वारे। हृदय कपट मुख प्रीति उचारे॥
सो जिव कैसे लोक सिधाई। बिन गुरु मिलै मोहि नहिं पाई॥

शिष्य होकर जो गुरु पर तन-मन-धन सर्वस्व न्योछावर नहीं करता, प्रत्युत गुरु के प्रति हृदय में कपट (धोखा) रखता है और मुंह पर सामने उनकी सेवा-प्रीत की मीठी बातें करता है, वह कपटी जीव सत्य लोक कैसे जा सकता है ? बिना गुरु मिले वह मुझे, अर्थात सत्यपुरुष परमात्मा को कदापि नहीं पा सकता।

धर्मदास जी द्वारा सद्गुरु के प्रति आभार

॥ चौपाई ॥

यह सब तो प्रभु आपहिं कीन्हा। नहिं तो हतो मैं परम मलीना॥
करके दया प्रभु आपहिं आये। पकड़ि बांह प्रभु काल छुड़ाये॥

धर्मदास जी विनम्रतापूर्वक कहते हैं कि हे सद्गुरु प्रभु ! यह सब तो आप-ही ने किया है, नहीं तो मैं अनेक मोह-बंधनों एवं विषय-वासनाओं में फंसा हुआ बहुत ही मैला था। अर्थात, मुझमें सेवा, समर्पण तथा त्याग की सामर्थ्य कहां थी ? जैसा भी मैं अब हूं, सब आप ही ने किया हूं।

हे प्रभु ! मुझ पर आपने महान दया की कि आप ही स्वयं मेरे पास आए और मेरी बांह पकड़कर मुझे काल-रूपी दुखों से छुड़ाया।

सृष्टि विकास

सृष्टि उत्पत्ति विषयक प्रश्न

॥ चौपाई ॥

अब साहब मोहिं देउ बताई। अमर लोग सो कहां रहाई॥
लोक दीप मोहिं बरनि सुनावहु। तृषावन्त को अमी पियावहु॥

धर्मदास जी सविनय कहते हैं कि हे साहेब! अब आप मुझे यह बताइए कि अमर लोग, अर्थात मुक्त हुए लोग कहां रहते हैं? आप मुझे अमर लोक एवं द्वीपों का वर्णन करके सुनाओ, मुझ प्यासे को आप अपना सदुपदेश रूपी अमृत पिलाओ, अर्थात मेरे प्रश्नों का उत्तर देकर मेरी जिज्ञासा शांत करो।

॥ चौपाई ॥

कौन द्वीप हंसन को वासा। कौने द्वीप पुरुष रह वासा॥
भोजन कौन हंस तहं करई। और बानी कहं पुनि उच्चरई॥

कौन से द्वीप में सद्गुरु के हंस-जीवों का वास है और कौन से द्वीप में सत्यपुरुष का निवास है? वहां पर हंस कौन-सा तथा कैसा भोजन करते हैं तथा वे कौन-सी वाणी बोलते हैं?

॥ चौपाई ॥

कैसे पुरुष लोक रचि राखा। द्वीपहिं कर कैसे अभिलाखा॥
तीन लोक उत्पत्ती भाखो। वर्णहु सकल गोय जनि राखो॥

आदि पुरुष ने लोक कैसे रच रखा है तथा उन्हें द्वीप रचने की इच्छा कैसे हुई? तीनों लोकों की उत्पत्ति बताओ और वह सब वर्णन करो जो गुप्त रखा है, अर्थात मुझसे कुछ न छिपाकर स्पष्ट वर्णन कर बताओ।

॥ चौपाई ॥

काल निरंजन केहि विधि भयऊ। कैसे षोडश सुत निर्मयऊ॥
कैसे चार खानि विस्तारी। कैसे जीव कालवश डारी॥

काल निरंजन किस विधि से उत्पन्न हुआ और सोलह सुतों का निर्माण कैसे हुआ? कैसे चार खानि की सृष्टि (स्थावर, अण्डज, पिण्डज एवं उष्मज) का विस्तार हुआ तथा कैसे जीव काल के वश डाल दिया?

॥ चौपाई ॥

कैसे कूर्म शेष उपराजा। कैसे मीन बराहहिं साजा॥
त्रय देवा कौने विधि भयऊ। कैसे महि आकाश निरमयऊ॥

कूर्म एवं शेषनाग उपराजा कैसे हुए और कैसे मत्स्य तथा वराह जैसे अवतार हुए। प्रमुख तीन देव ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश किस प्रकार हुए और पृथ्वी-आकाश का निर्माण कैसे हुआ?

॥ चौपाई ॥

चन्द्र सूर्य कहु कैसे भयऊ। कैसे तारागण सब ठयऊ॥
किहि विधि भइ शरीर की रचना। भाषो साहब उत्पत्ति बचना॥

धर्मदास जी विनम्रतापूर्वक कहते हैं कि हे साहेब! कहो चंद्रमा एवं सूर्य कैसे

हुए, कैसे तारों का समूह प्रकट होकर आकाश में ठहर गया और चारों खानि के जीवों के शरीरों की रचना कैसे हुई? उपरोक्त सबकी उत्पत्ति के वचन स्पष्ट कहिए।

॥ चौपाई ॥

जाते संशय हो उच्छेदा। पाय भेद मन होय अखेदा॥

जिससे मेरा सारा संशय मिट जाए और उपरोक्त की उत्पत्ति के रहस्य को जानकर मन दुख-रहित हो जाए, अर्थात मैं पूर्णत: निश्चिंत हो जाऊं।

॥ छंद ॥

आदि उत्पत्ति कहो सतगुरु, कृपा करि निज दास को।
वचन सुधा सु प्रकाश कीजै, नाश हो यम त्रास को॥
एक एक विलोय वर्णहु, दास मोहि निज जानिकै।
सत्य वक्ता सद्गुरु तुम, लेव निश्चय मानिकै॥ 10॥

विनम्र धर्मदास जी अत्यंत अनुराग-भाव से कहते हैं कि हे सद्गुरु! आप अपने मुझ दास पर कृपा करके आदि उत्पत्ति का वर्णन कर कहो। अपने अमृतमय वचनों का सुंदर प्रकाश कीजिए, अर्थात अपने कल्याणमय वचनोपदेश को सविस्तार कहो, जिससे मृत्यु के भय-दुख का नाश हो जाए। मुझे अपना दास जानकर, मेरे मन के एक-एक प्रश्न का समुचित निर्णय कर वर्णन करो। हे सद्गुरु! आप सदा सत्य का उपदेश करते हो, मैं आपके निर्भ्रांत वचनों को निश्चयपूर्वक मानकर ग्रहण करूंगा।

॥ सोरठा ॥

निश्चय बचन तुम्हार, मोहिं अधिक प्रिय ताहिते।
लीला अगम अपार, धन्य भाग दर्शन दिये॥ 10॥

आपके वचनों पर मुझे निश्चय (विश्वास) है, इसलिए वे मुझे अधिक प्रिय लगते हैं। (जैसे मैंने अनुभव किया है) आपकी लीला अगम-अपार, अर्थात सामान्य मन-बुद्धि से परे अनंत है, मेरे धन्य भाग्य हैं कि जो आपने मुझे दर्शन दिया।

सद्गुरु कबीर वचन

॥ चौपाई ॥

धर्मदास अधिकारी पाया। ताते मैं कहि भेद सुनाया॥
अब तुम सुनहु आदि की बानी। भाषैं उत्पति प्रलय निशानी॥

सद्गुरु कबीर साहेब प्रसन्न भाव से बोले कि हे धर्मदास! मैंने तुम्हें सत्यज्ञान एवं मोक्ष पाने का सच्चा अधिकारी पाया है, अर्थात तुम परम जिज्ञासु हो, तुममें

सच्चे ज्ञानाधिकारी की श्रद्धा एवं भक्ति है तथा तुम्हें ज्ञान-प्राप्ति का सच्चा अनुराग है। इसलिए मैंने तुम्हें सत्यज्ञानानुभव के सार-शब्द का रहस्य कहकर सुनाया है। अब तुम मुझसे आदि-सृष्टि के वर्णन की वाणी सुनो, मैं सबकी उत्पत्ति से प्रलय तक की बात कहता हूं।

सृष्टि के आदि में क्या था?

॥ चौपाई ॥

तब की बात सुनहु धर्मदासा। जब नहिं महि पाताल अकासा॥
जब नहिं कूर्म बराह औ शेषा। जब नहिं शारद गौरि गणेशा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तब की बात सुनो, जब पृथ्वी पाताल और आकाश नहीं थे। जब कूर्म, वराह, शेषनाग, सरस्वती और गणेश नहीं थे।

॥ चौपाई ॥

जब नहिं हते निरंजन राया। जिन जीवन कहं बांधि झुलाया॥
तैंतिस कोटि देवता नाहीं। और अनेक बताऊं काही॥

जब सबके राजा निरंजन भी नहीं थे, जिन्होंने सबके जीवन को माया-मोह के बंधन में बांध कर झुलाया हुआ है। तेंतीस करोड़ देवता भी नहीं थे और मैं तुम्हें अनेक क्या बताऊं?

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश न तहिया। शास्त्र वेद पुराण न कहिया।
तब सब रहे पुरुष के माहीं। ज्यों बट वृक्ष मध्य रहे छांही॥

(यहां तक कि—) तब ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी न थे और न कहीं शास्त्र, वेद एवं पुराण थे। तब सब आदि पुरुष (सत्यपुरुष परमात्मा) में थे, जैसे बरगद के वृक्ष के बीच में छाया रहती है।

॥ छंद ॥

आदि उत्पति सुनहु धर्मनि, कोइ न जानत ताहि हो।
सबहिं भो बिस्तार पाछे, खास देऊं मैं काहि हो॥
वेद चारों नाहिं जानत, सत्य पुरुष कहानियां।
वेद को तब मूल नाहीं, अकथ कथा बखानियां॥ 11॥

हे धर्मदास! तुम आरंभ की आदि-उत्पत्ति को सुनो, जिसे प्रत्यक्ष रूप से कोई ... जानता। उसके पीछे अखिल सृष्टि का विस्तार हुआ है, उसके लिए मैं तुम्हें किसकी गवाही दूं कि जिसने उसे देखा हो? चारों वेद (ऋग, यजु, साम और अथर्ववेद) सत्यपुरुष की यथार्थ बोध कहानियों को नहीं जानते। क्योंकि तब वेद का मूल (आरंभ-आधार) ही नहीं था (तो फिर वेदों में उसका प्रत्यक्ष वर्णन कैसे

हो सकता है?) इसी कारण वेद सत्यपुरुष परमात्मा को अकथनीय कहकर पुकारते हैं।

॥ सोरठा ॥

निराकार तै वेद, आदि भेद जाने नहीं।
पण्डित करत उछेद, मते वेद के जग चले॥ 11॥

चारों वेद निराकार निरंजन से उत्पन्न हुए हैं, जो कि सृष्टि-उत्पत्ति के आदि रहस्य को जानते ही नहीं। इसी कारण पंडित जन उसका खण्डन करते हैं और आदि-रहस्य से अनजान वेद के मत पर यह संसार चलता है।

सृष्टि की उत्पत्ति-सत्यपुरुष की रचना

॥ चौपाई ॥

सत्यपुरुष जब गुप्त रहाये। कारण करण नहीं निरमाये॥
सम्पुट कमल रह गुप्त सनेहा। पुहुप मांहि रह पुरुष विदेहा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि (सृष्टि से पूर्व) जब सत्यपुरुष गुप्त रहते थे, उस समय जिनसे कार्य होता है वे निमित्त कारण एवं उपादान कारण और करण (साधन) उत्पन्न नहीं किए थे। उस समय गुप्त रूप से कारण और करण संपुट कमल में थे, उनका संबंध सत्यपुरुष से था। विदेह सत्यपुरुष उस कमल में थे।

॥ चौपाई ॥

इच्छा कीन्ह अंश उपजाये। अंशन देखि हरष बहुत पाये॥
प्रथमहिं पुरुष शब्द परकासा। दीप लोक रचि कीन्ह निवासा॥

सत्यपुरुष ने स्वयं इच्छा जाग्रत कर अपने अंशों (पुत्रों) को उत्पन्न किया और अपने अंश-पुत्रों को देखकर वे बहुत खुशी पाए। सर्व-प्रथम सत्यपुरुष ने शब्द को प्रकाशित (उच्चरित) किया और उससे लोक-द्वीप रचकर उनमें निवास किया।

॥ चौपाई ॥

चारि कर सिंहासन कीन्हा। तापर पुहुप दीपकर चीन्हा॥
पुरुष कला धरि बैठे जहिया। प्रगटी अगर वासना तहिया॥

फिर सत्यपुरुष ने चार-पांवों के एक सिंहासन की रचना की और उसके ऊपर पुष्प-द्वीप का निर्माण किया। जब सत्यपुरुष अपनी संपूर्ण कलाओं को धारण कर उस पर बैठे, तब उनसे अगर-वासना (सुगंध) प्रकट हुई।

॥ चौपाई ॥

सहस अठासी दीप रचि राखा। पुरुष इच्छा ते सब अभिलाखा॥
सबै द्वीप रह अगर समायी। अगर वासना बहुत सुहायी॥

सत्यपुरुष ने अपनी इच्छा से सब कामना की और उससे अठासी हजार द्वीपों को रच दिया। उन सभी द्वीपों में वह चंदन जैसी सुगंध समा गई, जो बहुत अच्छी (सुहावनी) लगी।

सोलह सुत का प्रकट होना

चौपाई

दूजे शब्द जु पुरुष प्रकाशा। निकसे कूर्म चरण गहि आशा॥
तीजे शब्द जु पुरुष उच्चारा। ज्ञान नाम सुत उपजे सारा॥
टेकि चरण सम्मुख ह्वै रहेऊ। आज्ञा पुरुष दीप तिन्ह दएऊ॥

सत्यपुरुष ने जब दूसरे शब्द को प्रकाशित किया, उससे कूर्म जी प्रकट हुए और उन्होंने आशा (विश्वास) कर सत्यपुरुष के चरणों को पकड़ कर वंदना की। जब सत्यपुरुष ने तीसरे शब्द का उच्चारण किया, तो उससे ज्ञान[1]-नाम के सुत उत्पन्न हुए (जो सब सुतों में सार, अर्थात श्रेष्ठ थे)।

ज्ञान-नाम के सुत सत्यपुरुष के चरणों में प्रणाम कर सामने खड़े रहे, तब सत्यपुरुष ने उनको एक द्वीप में रहने की आज्ञा दी।

चौपाई

चौथे शब्द भये पुनि जबहीं। विवेक नाम सुत उपजे तबहीं॥
पांचवे शब्द जब पुरुष उचारा। काल निरंजन भौ औतारा॥

सत्यपुरुष ने जब जैसे-ही चौथे शब्द का उच्चारण किया, तब ही विवेक-नाम के सुत उत्पन्न हुए। सत्यपुरुष ने जब पांचवें शब्द को उच्चारा, तो उससे काल-निरंजन का अवतार हुआ।

॥ चौपाई ॥

तेज अंग ते काल ह्वै आवा। ताते जीवन कह संतावा।
जीवरा अंश पुरुष का आहीं। आदि अंत कोउ जानत नाहीं॥

काल-निरंजन अत्यंत तेज-अंग (तेज रूप-भीषण प्रकृति) वाला होकर आया। उसी से, अर्थात अपने उग्र-स्वभाव से उसने सब जीवों को कष्ट दिया है।

जीव सत्यपुरुष का अंश है। जीव के आदि-अंत को कोई नहीं जानता है (क्योंकि जीव नित्य-अविनाशी है। यह आदि-अंत से रहित शाश्वत है। नाशवान का आदि-अंत एवं जन्म-मरण होता है, किंतु यह तो अजन्मा है। परंतु अज्ञानवश यह अपने अविनाशी स्वरूप को भूलकर काम-मोहादि विषयों में भटक जाता है, जिससे काल द्वारा अनंत दुख पाता है)।

---

1. ये ही सतयुग में सत्सुकृत, त्रेता में मुनींद्र, द्वापर में करुणामय और कलियुग में कबीर बनकर आए। इन्हीं को ज्ञानी, सुरति योग सन्तायन और योगजीत भी कहा जाता है।

॥ चौपाई ॥

छठे शब्द पुरुष मुख भाषा। प्रगटे सहजनाम अभिलाषा॥
सतयें शबद भयो संतोषा। दीन्हों द्वीप पुरुष परितोषा॥

सत्यपुरुष ने इच्छा कर जब मुख से छठे शब्द का उच्चारण किया, तो उससे सहज-नाम के सुत प्रकट हुए। सातवें शब्द के उच्चारण से संतोष-नाम के सुत उत्पन्न हुए, जिनको सत्यपुरुष ने द्वीप देकर संतुष्ट किया।

॥ चौपाई ॥

अठयें शब्द पुरुष उचारा। सुरति सुभाव द्वीप बैठारा॥
नवमें शब्द आनंद अपारा। दशयें शब्द क्षमा अनुसारा॥

सत्यपुरुष ने आठवें शब्द को उचारा, तो उससे सुरति सुभाव नाम के सुत हुए, उन्हें भी एक द्वीप में बैठा दिया। नवें शब्द के उच्चारण में अपार आनंद-नाम के सुत हुए तथा दसवें शब्द के अनुसार क्षमा-नाम के सुत उत्पन्न हुए।

॥ चौपाई ॥

ग्यारहें शब्द नाम निष्कामा। बारहें शब्द जलरंगी नामा॥
तेरहें शब्द अचिंत सुतजाने। चौदहें शब्द सुत प्रेम बखाने॥

सत्यपुरुष के ग्यारहवें शब्द से निष्काम-नाम और बारहवें शब्द से जलरंगी-नाम के सुत उत्पन्न हुए। उनके तेरहवें शब्द से अचिंतनाम के सुत समझो तथा चौदहवें शब्द से प्रेमसुत का उत्पन्न होना समझो।

चौपाई

पन्द्रहें शब्द सुत दीनदयाला। सोलहें शब्द भे धिरज विसाला॥
सत्रहवें शब्द सुत योग संतायन। एक नाल षोडशसुत पायन॥

सत्यपुरुष के पंद्रहवें शब्द से दीनदयाल-नाम के सुत और सोलहवें शब्द से धीरज नाम के विशाल सुत उत्पन्न हुए। उनके सत्रहवें शब्द-उच्चारण से योग संतायन सुत[1] हुए। एक ही नाल से सत्यपुरुष के शब्द-उच्चारण से सोलह सुतों की उत्पत्ति हुई।

॥ चौपाई ॥

शब्दहि ते भयो सुतन अकारा। शब्द ते लोक द्वीप विस्तारा॥
अग्र अमी दिव्य अंश अहारा। द्वीप द्वीप अंशन बैठारा॥

सत्यपुरुष के शब्द ही से उन सुतों के आकार का विकास हुआ और शब्द से ही सब लोक-द्वीपों का विस्तार हुआ (अभिप्राय यह है कि सत्यपुरुष के शब्द से अमरलोक, सोलह-सुतों की उत्पत्ति और अठासी हजार लोक-द्वीपों की रचना) का फैलाव हुआ।

---

1. योग-संतायन-सुत कोई भिन्न सुत नहीं, अपितु सोलह-सुत ही मिलकर योग-संतायन सुत कहलाते हैं, ऐसा कुछ संत-विद्वानों का मत है।

सत्यपुरुष ने अपने प्रत्येक दिव्य-अंश (पुत्र) को अगर अमृत का आहार दिया और प्रत्येक को द्वीप-द्वीप का अधिपति बनाकर बैठाया।

(कबीर साहित्य में यहां तक की रचना को ब्रह्मसृष्टि शब्द से उत्पन्न माना है)।

॥ चौपाई ॥

अंशन शोभा कला अनंता। होत तहां सुख सदा बसंता॥
अंशन शोभा अगम अपारा। कला अनंत को वरणै पारा॥

सत्यपुरुष के उन अंशों (पुत्रों) की शोभा एवं कला अनंत है, वहां उनके द्वीपों में सदा माया-रहित अलौकिक वसंत-सुख होता है। उन अंशों की शोभा मन से परे असीम है और उनकी अनंत कला का वर्णन कर कौन पार पा सकता है? अर्थात कोई नहीं।

॥ चौपाई ॥

सब सुत करैं पुरुष को ध्याना। अमी अहार सदा सुख माना॥
याही बिधि सोलह सुत भेऊ। धर्मदास तुम चित धरि लेऊ॥

सब पुत्र सत्यपुरुष का ध्यान करते हैं और अमृत-आहार कर सदा सुख मानते हैं। इस प्रकार सत्यपुरुष से सोलह (सुत) उत्पन्न हुए। हे धर्मदास! तुम इस आदि सृष्टि के वर्णन को अपने चित्त में धारण करो।

॥ छंद ॥

द्वीप करी को अनतं शोभा, नाहिं बरणत सो बनै।
अमित कला अपार अद्भुत, सुतन शोभा को गनै॥
पुरुष के उजियार से सुन, सबै द्वीप अंजोर हो।
सतपुरुष रोम प्रकाश एकहि, चन्द्र सूर्य करोर हो॥ 12॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! उन द्वीपों की अनंत सुदंरता क्या कहें, वह वर्णन करने से नहीं बनती। उनमें सुतों की शोभा की गणना कौन कर सकता है? उनकी माप-रहित कला अपार एवं अद्भुत है। सत्यपुरुष के दिव्य-उजाले से सभी द्वीप प्रकाशित हो रहे हैं। सत्यपुरुष के एक ही रोम का प्रकाश करोड़ों चन्द्रमा एवं सूर्य के समान है।

॥ सोरठा ॥

सतपुर आनन्द धाम, शोक मोह दुख तहं नहीं।
हंसन को विश्राम, पुरुष दरश अंचवन सुधा॥ 12॥

सतपुर, अर्थात सत्यलोक आनंद का धाम है, वहां शोक-मोहादि कोई दुख नहीं हैं। वहां सदा मुक्त हंसों का विश्राम होता है, सत्यपुरुष स्वामी का दर्शन तथा अमृत का पान होता है।

निरंजन की तपस्या और मानसरोवर तथा शून्य की प्राप्ति

॥ चौपाई ॥

यहि विधि बहुत दिवस गये बीती। ता पीछे ऐसी भइ रीती॥
धरमराय अस कीन्ह तमासा। सो चरित्र बूझहु धर्मदासा॥

आदि-सृष्टि की रचना के बाद ऐसे ही बहुत दिन बीत गए। फिर उसके पीछे ऐसे हुआ कि धर्मराज, अर्थात काल-निरंजन ने ऐसा तमाशा किया कि हे धर्मदास! उस चरित्र को तुम समझो!

॥ चौपाई ॥

युग सत्तर सेवा तिन कीन्हा। इक पद ठाढ़ पुरुष चित दीन्हा॥
सेवा कठिन भांति तिन कीन्हा। आदि पुरुष हर्षित होय चीन्हा॥

निरंजन ने सत्यपुरुष में चित्त (ध्यान) लगाकर एक पांव पर खड़ा होकर सत्तर-युग तक उनकी सेवा-तपस्या की। उसने इस भांति कठिन सेवा-तपस्या की कि आदि पुरुष (सत्यपुरुष) उसे देखकर प्रसन्न हो गए।

सत्यपुरुष वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष आवाज उठी तब बानी। कहा जानि तुम सेवा ठानी॥

तब सत्यपुरुष की आवाज उठकर वाणी रूप में प्रकट हुई कि क्या जानकर तुमने मेरी सेवा-तपस्या की है, अर्थात इसका क्या कारण है?

निरंजन वचन

॥ चौपाई ॥

कहै धरम तब शीश नवायी। देहु ठौर जहं बैठों जायी॥

तब धर्मराज, अर्थात निरंजन ने शीश झुकाकर कहा कि हे प्रभु! आप मुझे वह स्थान दो, जहां जाकर मैं बैठूं, अर्थात निवास करूं।

सत्यपुरुष वचन

॥ चौपाई ॥

आज्ञा किये जाहु सुत तहवां। मानसरोवर द्वीप है जहवां॥

निरंजन की प्रार्थना सुनकर सत्यपुरुष ने आज्ञा दी कि हे पुत्र! तुम वहां जाओ, जहां मानसरोवर द्वीप है।

निरंजन का जाना तथा पुन: तपस्या करना

॥ चौपाई ॥

चल्यो धर्म तब मानसरोवर। बहुत हरष चित करत कलोहर॥
मानसरोवर आये जहिया। भये आनन्द धरम पुनि तहिया॥

सत्यपुरुष की आज्ञा से निरंजन का चित्त प्रसन्न होकर क्रीड़ा करने लगा और तब वह मानसरोवर की ओर चला। जब वह मानसरोवर द्वीप आया, तब वह फिर आनंद से भर गया।

॥ चौपाई ॥

बहुरि ध्यान पुरुष का कीन्हा। सत्तर जुग सेवा चित दीन्हा॥
यक पगु ठाढ़े सेवा लायी। पुरुष दयाल दया उर आयी॥

वहां मानसरोवर पर निरंजन ने फिर से सत्यपुरुष का ध्यान किया और उनकी सेवा-तपस्या में सत्तर युग तक अपना चित्त लगाया। एक पांव पर खड़े होकर उनकी कठिन सेवा-तपस्या की, उसकी तपस्या को देखकर दयालु सत्यपुरुष का हृदय दया से भर गया।

सत्यपुरुष वचन सहज-सुत प्रति

॥ चौपाई ॥

विकस्यो पुहुप उठी तब बानी। बोलत बचन उठेउ अगरानी॥
जाहु सहज तुम धरम के पासा। अब कस ध्यान कीन्ह परकासा॥

निरंजन की कठिन तपस्या एवं सेवा-आराधना से पुष्प-द्वीप के पुष्प विकसित हो उठे, अर्थात अधिकाधिक खिल उठे और तब सत्यपुरुष की वाणी प्रस्फुटित हुई। उनके वचन बोलते-ही वहां सुगन्धि उठी।

सत्यपुरुष ने सहज-सुत से कहा कि हे सहज! तुम निरंजन के पास जाओ, अब उसने किसलिए ध्यान-तप किया है ?

॥ चौपाई ॥

सेवा बहु कीन्हा धर्मराऊ। दियो ठौर वहि जहां रहाऊ॥
अब का चाहे पूछो जाई। जो कछु कहै सो देउ सुनाई॥

निरंजन ने बहुत सेवा-तप किया था, इसलिए उसे वही स्थान दिया, जहां वह रहता है। उससे जाकर पूछो कि वह अब क्या चाहता है ? जो कुछ वह कहता है उसे तुम आकर मुझे सुनाओ।

सहज का निरंजन के पास जाना

॥ चौपाई ॥

चले सहज तब शीश नवाई। धरमराय पहं पहुंचे जाई॥
कहे सहज सुनु भ्राता मोरा। सेवा पुरुष मान लइ तोरा॥
अब का मांगहु सो कह मोही। पुरुष आवाज दीन्हा यह तोही॥

तब सहज-सुत सत्यपुरुष को शीश झुकाकर चले और निरंजन के पास जा पहुंचे। सहज ने प्रेम-भाव से निरंजन से कहा कि हे मेरे भाई सुन! तुम्हारे सेवा-

तप को सत्यपुरुष ने स्वीकार कर लिया है, अर्थात उससे वे बहुत प्रसन्न हैं। अब तुम क्या मांगते हो मुझे कहो, सत्यपुरुष ने तुम्हें यह आवाज (अनुमति) दी है।

निरंजन वचन सहज प्रति

चौपाई

अहो सहज तुम जेठे भाई। करो पुरुष सो विनती जाई॥
इतना ठांव न मोहि सुहाई। अब मोहि बकसि देहु ठकुराई॥

सहज की बात सुनकर निरंजन प्रसन्न होकर बोला कि हे सहज! तुम समझ में मेरे बड़े भाई हो। मेरी ओर से जाकर सत्यपुरुष से प्रार्थना करो कि इतना-सा स्थान (मानसरोवर) यह मुझे अच्छा नहीं लगता, अर्थात मैं इससे संतुष्ट नहीं हूं। अब वे मुझे कहीं किसी बड़े स्थान का स्वामी बना दें।

॥ चौपाई ॥

मोरे चित अस भौ अनुरागा। देउ देश मोहि करहु सभागा॥
कै मोहि देवलोकअधिकारा। कै मोहि देहु देश यक न्यारा॥

मेरे चित्त में ऐसा मोहानुराग एवं चाह है कि मुझे कोई देश देकर सौभाग्यशाली करें। जिसमें या तो मुझे देवलोक पर अधिकार दें या मुझे न्यारा (अलग) एक देश दें, अर्थात उस देश पर एकमात्र मेरा अधिकार हो।

सहज वचन सत्यपुरुष प्रति

॥ चौपाई ॥

चले सहज सुन धर्म की बाता। जाय पुरुष सो कहे विख्याता॥
जो कछु धर्मराय अभिलाषी। तैसे सहज सुनाये भाषी॥

निरंजन की बात सुनकर सहज चले और जाकर सत्यपुरुष से निरंजन की विशेष बात कही। जो कुछ निरंजन ने अपनी मांग की इच्छा प्रकट की थी, वैसी-ही सहज ने कहकर सुना दी।

सत्यपुरुष वचन सहज प्रति

॥ छंद ॥

सुन्यो सहज के वचन, जबहीं पुरुष बैन उच्चारेऊ।
धरम से संतुष्ट हैं हम, वचन मम उर धारेऊ॥
लोक तीनों ताहि दीन्हों, शून्य देश बसावहू।
करहु रचना जाय तहवां, सहज वचन सुनावहू॥ 13॥

सहज के वचन सुनकर, उसी समय सत्यपुरुष ने अपने स्पष्ट शब्दों में कहा

कि हम निरंजन के सेवा-तप से पूर्ण संतुष्ट हैं, वह हमारे वचन को अपने हृदय में धारण करे। हमने उसे तीनों लोक दिए, उसमें वह अपनी चाह अनुसार शून्य देश बसाए। वहां जाकर वह सृष्टि-रचना करे, हे सहज! तुम निरजंन के पास जाकर हमारे वचन सुना दो।

सोरठा

जाहु सहज तुम वेग, अस कहि आवो धर्म सो।
दिया शून्य कर थेग, रचना रचहु बनाइके॥ 13॥

सत्यपुरुष ने कहा कि हे सहज! तुम शीघ्र जाओ और जैसा मैंने कहा ऐसा निरंजन से कह आओ कि उसको उसके कथनानुसार शून्य का राज्य दिया, वहां जाकर वह (निरंजन) सुंदर सृष्टि-रचना करे।

निरंजन को सृष्टि-रचना का साज मिलने का वृत्तांत

सहज वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई॥

आये सहज वचन सुनावा। सत्यपुरुष जस कहि समुझावा॥

निरंजन के पास आकर सहज ने वचन सुनाया, सत्यपुरुष ने जैसा कहा था उसे वैसा ही समझाया।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई॥

तीन लोक जब पल में दीन्हा। लखि सेवकाइ दया अस कीन्हा।
सुनतहि वचन धर्म हरषाना। कछुक हर्ष कछुक विस्मय आना॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास को कहते हैं कि निरंजन की सेवा-भक्ति देखकर सत्यपुरुष ने जब ऐसी दया की कि उसे पल में तीन लोक दे दिए। सहज से यह वचन सुनते ही निरंजन हर्ष (खुशी) से भर गया। इस पर उसे हर्ष के साथ कुछ आश्चर्य भी हुआ (इसलिए कि उसे इतना सब कुछ कैसे मिल गया)।

निरंजन वचन सहज प्रति

॥ चौपाई॥

कहै धरम सुनु सहज पियारा। कैसे रचौं सृष्टि विस्तारा॥
पुरुष दयाल दीन्ह मोहि राजू। जानू न भेद करौं किमि काजू॥

निरंजन कहता है कि हे प्रिय सहज! मेरी बात सुन। मैं कैसे सृष्टि की रचना कर उसका विस्तार करूं? दयालु सत्यपुरुष ने मुझे तीनों लोकों का राज्य दिया है, परंतु मैं सृष्टि-रचना का भेद नहीं जानता तो फिर कैसे यह कार्य करूं?

॥ चौपाई ॥

गम्य अगम मोहे नहिं आयी। करौं दया सो युक्ति बतायी॥
विन्ती करौ पुरुष सो मोरी। अहो भ्रात बलिहारी तोरी॥

जो सृष्टि, गम्य-अगम, अर्थात मन-बुद्धि की पहुंच एवं पहुंच से परे अत्यंत दुरूह है, वह मुझे रचनी नहीं आती। अत: दया कर मुझे उसकी युक्ति बताई जाए। हे भाई सहज! तेरी बलिहारी है (मैं तुझ पर न्योछावर हूं) तुम मेरी ओर से सत्यपुरुष को यह मेरी विनती करो।

॥ चौपाई ॥

किहि विधि रचूं नव खण्ड बनाई। हे भ्रात सो आज्ञा पाई॥
मो कहं देहु साज प्रभु सोई। जाते रचना जगत की होई॥

हे भाई! जो आज्ञा मिली है, उस अनुसार किस प्रकार रचकर नवखण्ड बनाऊं? मुझे सत्यपुरुष स्वामी वही साज-सामान दें, जिससे जगत की रचना हो।

सहज का सत्यलोक को जाना

॥ चौपाई ॥

तबहीं सहज लोक पगु धारा। कीन्ह दंडवत बारम्बारा॥

(निरंजन की विनती सुनकर) उसी समय सहज सत्यलोक को गए और वहां सत्यपुरुष को बारंबार दण्डवत-प्रणाम किया।

सत्यपुरुष वचन सहज प्रति

॥ चौपाई ॥

अहो सहज कस इहवां आई। सो हमसो तुम शब्द सुनाई॥

सत्यपुरुष ने कहा अरे सहज! तुम यहां कैसे आए? वह तुम हमसे कह सुनाओ।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

कही सहज तब धर्म की बाता। जो कछु धर्म कही विख्याता॥
धर्मराय जस विनती लायी। तैसे सहज सुनायउ जायी॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास जी को सुनाते हुए कहते हैं कि तब सहज ने निरंजन की बात सत्यपुरुष को कही, जो कुछ निरंजन ने सहज से कहा था, वह सब कहा। निरंजन ने जैसी विनती सत्यपुरुष से की थी, वैसी ज्यों की त्यों जाकर सहज ने सुना दी।

सत्यपुरुष की आज्ञा सहज से

चौपाई

आज्ञा पुरुष दीन्ह तेहि वारा। सुनौ सहज तुम वचन हमारा॥
कूर्म के उदर आहि सब साजा। सो ले धर्म करे निज काजा॥
विनती करे कूर्म सौ जाई। मांगि लेहि तेहि माथ नवाई॥

सहज की बात सुनकर उसी समय सत्यपुरुष ने आज्ञा दी और सहज से कहा कि तुम हमारा वचन सुनो। कूर्म के भीतर पेट में सृष्टि रचना की सब साज-सामग्री है, उसे लेकर निरंजन अपना कार्य करे। उसके लिए वह कूर्म के पास जाकर विनती करे तथा उसके सामने माथा नवाकर मांग ले।

सहज का निरंजन के पास जाकर सत्यपुरुष की आज्ञा सुनाना

॥ चौपाई ॥

गये सहज पुनि धरम के पासा। आज्ञा पुरुष कीन्ह परकासा॥
विनती करो कूर्म सो जाई। मांगि लेहु तिहि सीस नवाई॥
जाय कूर्म ढिग सीस नवावहु। करिहैं कृपा बहुत तब पावहु॥

फिर सहज निरंजन के पास गए और उसके सामने सत्यपुरुष की आज्ञा प्रकट की। आज्ञानुसार जाकर कूर्म से विनती करो और शीश झुकाकर उससे सृष्टि-रचना संबंधी सामग्री मांग लो। जब कूर्म के पास जाकर शीश झुकाओगे और वे तुम पर बहुत कृपा करेंगे तब उनसे सब साज-सामग्री पाओगे।

निरंजन का कूर्म के पास साज लेने को जाना

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चलि भो धरम हरष तब बाढ़ो। मनहि कीन गुमान अति गाढ़ो॥
जाय कूर्म के सम्मुख भयऊ। दण्ड परनाम एक नहिं कियऊ॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि सहज से सत्यपुरुष की आज्ञा सुनकर निरंजन का चलते हुए हर्ष बढ़ गया और उसने मन में बहुत अभिमान किया। वह जाकर कूर्म के पास खड़ा हो गया। परंतु समझाए अनुसार दण्ड-प्रणाम एक भी नहीं किया।

॥ चौपाई ॥

अमी स्वरूप कूर्म सुखदाई। तपन न तनिको अति शितलाई॥
करि गुमान देख्यो जब काला। कूर्म धीर अति है बलवाला॥

अमृत-स्वरूप कूर्म जी सबको समान सुख देने वाले हैं और उनमें क्रोध एवं

अभिमान आदि की तपन तनिक भी नहीं है, अपितु वे अत्यंत शीतल-शील स्वभाव के हैं। जब काल-निरंजन ने अभिमान कर देखा, तो उसे पता चला कि कूर्म जी अत्यंत धैर्यवान एवं बलशाली हैं।

॥ चौपाई ॥

बारह पालंग कूर्म शरीरा। छः पालंग धरम बलबीरा॥
धावै चहुं दिशि रहे रिसाई। किहि विधि लीजे उत्पत्ति भाई॥

बारह पालंग कूर्म का विशाल शरीर है और छः पालंग बलवान निरंजन का शरीर है। निरंजन क्रोध करता हुआ कूर्म के चारों ओर दौड़ता रहा और मन में सोचता रहा कि किस प्रकार इससे उत्पत्ति का साज-सामान लूं?

॥ चौपाई ॥

कीन्हों शेष कोपि धर्म धीरा। जाय कूर्म से सन्मुख भीरा॥
कीन्हों काल शीश नख घाता। उदर से निकसे पवन अघाता॥
तीन सीस के तीनहू अंशा। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंशा॥

तब निरंजन ने बहुत रोष एवं क्रोध किया और जाकर कूर्म के सन्मुख भिड़ गया। अंततः काल निरजंन ने अपने तेज-नखों से कूर्म के शीश पर आघात किया। आघात करने से उसके उदर से पवन निकले। उसके तीन शीश के तीन अंश सत-रज-तम गुण निकले, आगे फिर जिनके वंश ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश हुए।

॥ चौपाई ॥

पांच तत्व धरती आकाशा। चन्द्र सूर्य उडगन रहि वासा॥
निसरयो नीर अग्नि शशि सूरा। निसरयो नभ ढाकन महि थूरा॥

धरती-आकाश आदि पांच तत्व, चन्द्रमा, सूर्य एवं तारागण उसके उदर में थे। अतः उसके आघात से पानी, अग्नि, चन्द्रमा तथा सूर्य निकले और पृथ्वी-जगत को ढकने के लिए आकाश निकला।

॥ चौपाई ॥

मीन शेष वराह महि थम्भन। पुनि पृथ्वी को भयो अरम्भन॥
छीना सीस कूर्म को जबही। चले प्रसेव ठांव पुनि तबही॥

और उसके उदर से पृथ्वी को थामने वाले वराह, शेष तथा मत्स्य निकले। पृथ्वी-सृष्टि का फिर आरंभ हुआ। जब काल निरंजन ने कूर्म के शीश काटे, तब ही उस स्थान पर उसके रक्त-जल के स्रोत बह चले।

॥ चौपाई ॥

जबही प्रसेव बुंद जल दीन्हा। उंचास कोट पृथ्वी को कीन्हा॥
क्षीर ताय जस परत मलाई। अस जल पर पृथ्वी ठहराई॥

जब उसका रक्त स्वेद एवं जल मिला तो उससे समुद्र बने तथा उनचास

कोटि पृथ्वी का निर्माण हुआ। जैसे दूध पर मलाई पड़ जाती है, ऐसे जल पर पृथ्वी ठहर गई।

॥ चौपाई ॥

वराह दंत रहु महि के मूला। पवन प्रचण्ड मही स्थूला॥
अंडस्वरूप आकाश को जानो। ताके बीच पृथ्वी अनुमानो॥

वराह के दांत पृथ्वी के मूल में रहे। पवन प्रचण्ड था और पृथ्वी स्थूल थी। आकाश को अंडास्वरूप समझो, उसके बीच में पृथ्वी स्थित हुई।

॥ चौपाई ॥

कूर्म उदर सुत कूर्म उत्पानो। तापर सेस वराह को थानो॥
शेष सीस या पृथ्वी जानो। ताके हेठ कूर्म बरियानो॥
किरतम कूर्म अंड के मांही। कूर्म अंस सो भिन्न रहाही॥
आदि कूर्म रह लोक मंझारा। तिन पुनि पुरुष ध्यान अनुसारा॥

कूर्म के उदर से कर्म-सुत उत्पन्न हुए। उस पर शेष एवं वराह का स्थान हुआ। शेष के शीश पर पृथ्वी को समझो। उसके (निरंजन के) चोट करने से कूर्म बरियाया। सृष्टि-रचना की सब साज-सामग्री कूर्म-उदर के अंडे में थी, परंतु वह कूर्म के अंश से भिन्न थी। आशय यह है कि निरंजन के आघात करने पर कूर्म के उदर से सब सामग्री बाहर निकल आई। पांच तत्व, तीन गुण, सूर्य-चन्द्रमा एवं नक्षत्र आदि सब बाहर निकले और अपने-अपने स्थान पर व्यवस्थित हुए। आदि कूर्म सत्यलोक के बीच में रहता था। निरंजन के उक्त आघात से पीड़ित होने पर, फिर उसने सत्यपुरुष का ध्यान किया।

॥ चौपाई ॥

निरंकार कीन्हो बरियाया। काल कला धरि मो पहं आया॥
उदर विदार कीन्ह उन मोरा। आज्ञा जानि कीन्ह नहिं थोरा॥

सत्यपुरुष से शिकायत करते हुए कूर्म ने कहा कि काल-निरंजन ने मेरे साथ धृष्टता की है। उसने मुझ पर अपने कला-कौशल का बल प्रयोग किया है। (संघर्ष करते हुए मेरे तीन शीश काट लेने के साथ) उसने मेरे पेट को फाड़ दिया है। आपकी आज्ञा जानते-समझते हुए भी उसने उसका थोड़ा भी पालन नहीं किया है।

सत्यपुरुष वचन कूर्म प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष आवाज कीन्ह तेहि बारा। छोटे बंधु वह आहि तुम्हारा॥
आही यही बड़न की रीति। औगुन ठांव करहिं वह प्रीति॥

कूर्म की विनती सुनकर सत्यपुरुष ने उसे अपनी आवाज (वाणी) में समझाते

हुए उस समय कहा कि हे कूर्म! वह तुम्हारा छोटा भाई है (तुम उसे क्षमा कर दो) यही बड़ों की रीति होती है कि वे छोटे के अवगुण छोड़कर (भुलाकर) उनसे प्रीत करते हैं।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष वचन सुनि कूर्म अनन्दा। अमी सरूप सो आनंदकंदा॥
पुरुष ध्यान पुनि कीन्ह निरंजन। जुग अनेक किये सेवा संजन॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास जी को समझाते हुए कहते हैं कि सत्यपुरुष के वचन सुनकर कूर्म आनंदित हो गया, सत्यपुरुष के वचन अमृतस्वरूप आनंद के कंद हैं (जिन्हें पाकर कूर्म सुखी हो गया)।

और काल-निरंजन ने फिर से सत्यपुरुष का ध्यान किया, उसने अनेक युगों तक सेवा-तपस्या की।

॥ चौपाई ॥

स्वार्थ जानि सेवा तिन लाई। करि रचना बैठे पछताई॥
धर्मराय तब कीन्ह विचारा। कहवालो त्रयपुर विस्तारा॥

धर्मराय, अर्थात निरंजन ने अपना स्वार्थ जानकर स्वयं को सेवा-तपस्या में लगाया। सृष्टि-रचना को लेकर वह बैठकर पछताया। उसने विचार किया कि अब तीनों लोकों का विस्तार कहां तक कैसे किया जाए?

चौपाई

स्वर्ग मृत्यु कीन्हो पाताला। बिना बीज किमि कीजै ख्याला॥
कौन भांति कस करव उपाई। किही विधि रचौं शरीर बनाई॥

(निरंजन सोचता है कि—) स्वर्ग, मृत्यु एवं पाताल लोक रच दिए, किंतु बिना बीज एवं जीव के सृष्टि विस्तार का क्या विचार करें, अर्थात कैसे संभव हो? किस प्रकार कैसा उपाय किया जाए? जीवों के धारण करने का शरीर बनाकर किस विधि से सजीव सृष्टि की रचना करूं?

॥ चौपाई ॥

कर सेवा मांगों पुनि सोई। तिहुं पुर जीवित मेरो होई॥
करि विचार अस हठ तिन धारा। लाग्यो करने पुरुष विचारा॥
एक पांव तब सेवा कियेऊ। चौंसठ युग लों ठाढ़े रहेऊ॥

सत्यपुरुष की सेवा-तपस्या करके (जीव-बीज की) सब विधि मांगनी चाहिए, जिसके द्वारा सृष्टि का विस्तार कर इन तीनों लोकों पर मेरा अधिकार हो। ऐसा विचार कर वह हठपूर्वक सत्पुरुष का ध्यान-चिंतन करने लगा। तब वह एक पांव पर खड़ा होकर तपस्या करने लगा और चौंसठ युगों तक खड़ा रहा।

फिर से सत्यपुरुष का सहज को निरंजन के पास भेजना

॥ छंद ॥

दयानिधि सतपुरुष साहिब, बस सुसेवा के भये।
बहुरि भाष्यो सहज सेती, कहा अब याचत नये॥
जाहु सहज निरंजना पहं, देउ जो कुछ मांगई।
करहि रचना पुरुष वचना, छलमता सब त्यागई॥ 14॥

दयालु सत्यपुरुष स्वामी निरंजन की उत्तम सेवा-भक्ति के वश हो गए। उन्होंने सहज से कहा कि अब वह नई मांग क्या कहता है ? हे सहज! तुम फिर निरंजन के पास जाओ और जो वह मांगता है उसे दे दो। उसे कहो कि वह हमारे वचन-आज्ञानुसार सृष्टि-रचना करे तथा छल-मत का त्याग कर दे।

सहज का निरंजन के निकट पहुंचना

॥ सोरठा ॥

सहज चले सिर नाय, जबहिं पुरुष आज्ञा कियो।
तहंवा पहुचे जाय, जहां निरंजन ठाढ़ रहो॥ 14॥

जब सत्यपुरुष ने निरंजन के पास जाने की आज्ञा सहज को दी, तब सहज उन्हें सिर झुकाकर चल पड़े। वे वहां पहुंच गए, जहां निरंजन सेवा-तपस्या में खड़ा था।

॥ चौपाई ॥

देखत सहज धर्म हरषाना। सेवा बसहिं पुरुष तब जाना॥

सहज को देखते ही धर्म (निरंजन) बहुत खुश हुए और वह अच्छी प्रकार समझ गया कि सत्यपुरुष मेरी सेवा-भक्ति के वश में हैं (इसीलिए सहज को उन्होंने यहां भेजा है)।

सहज वचन

॥ चौपाई ॥

कहै सहज सुनु धर्मराया। केहि कारण अब सेवा लाया॥

सहज ने कहा हे निरंजन! सुन और बता कि अब तुमने किस कारण स्वयं को सेवा-तपस्या में लगाया हुआ है। अर्थात अब तुम क्या चाहते हो ?

निरंजन वचन

॥ चौपाई ॥

धर्म कहै तब सीस नवायी। देहु ठौर जहं बैठो जायी॥

तब निरंजन ने सहज के सामने शीश नवाकर कहा, (इतना सब होने पर) मुझे वह स्थान दो जहां पर जाकर मैं बैठ जाऊं।

सहज वचन

॥ चौपाई ॥

तब सहज अस भाषै लीन्हा। सुनहु धर्म तोहि पुरुष सब दीन्हा॥
कूर्म उदर सो जो कछु आवा। सो तोहि देन पुरुष फरमावा॥
तीनों लोक राज तोहि दीन्हा। रचना रचहु होहु जनि भीना॥

तब सहज ने स्पष्ट शब्दों में ऐसा कहा कि निरंजन! सुन, तुम्हें सत्यपुरुष ने पहले ही सब दे दिया है। कूर्म के उदर से जो कुछ भी निकलकर बाहर आया है, उसे तुम्हें देने के लिए सत्यपुरुष ने कह दिया था। तीनों लोकों का राज्य तुम्हें दिया है। अब तुम प्रसन्न होकर सब साज-सामग्री से सृष्टि की रचना करो।

निरंजन वचन

॥ चौपाई ॥

तबै निरंजन विनती लायी। कैसे रचना रचूं बनायी॥
पुरुषहिं कहौं जोरि युग पानी। मैं सेवक दुतिया नहिं जानी॥

सहज की बात सुनकर तब निरंजन ने विनती की कि मैं कैसे क्या बनाकर रचना रचूं? आप मेरी ओर से सत्यपुरुष को दोनों हाथ जोड़कर कहो कि मैं आपका सेवक हूं, दूसरी बात नहीं जानता।

॥ चौपाई ॥

पुरुष सो विनती करो हमारा। दीजै खेत बीज निज सारा॥
मैं सेवक दुतिया नहीं ठानूं। ध्यान पुरुष को निशि दिन आनूं॥
पुरुषहिं कहो जाय यह बानी। देहु बीज अम्मर सहिदानी॥

निरंजन ने पुनः कहा कि आप सत्यपुरुष से मेरी विनती करो कि मुझे अपना सारा खेत-बीज दे दीजिए। मैं दिन-रात सत्यपुरुष का ध्यान करता हूं, मैं उन्हीं का एकमात्र सेवक हूं, दूसरे को नहीं मानता। आप जाकर सत्यपुरुष से मेरी यह विनम्र वाणी कहो कि मुझे अपना सेवक समझकर रचना की अमर निशानी जीव-बीज दें।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सहज कह्यो पुनि पुरुषहि जाई। जस कछु कह्यो निरंजन राई॥
गयो सहज निज दीप सुखासन। जबहिं पुरुष दीन्हें अनुशासन॥
सेवा वश सत्पुरुष दयाला। गुण औगुण नहिं चित किरपाला॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास को समझाते हुए कहते हैं कि जो कुछ निरंजन राव ने कहा था, वह सब सहज ने जाकर सत्यपुरुष को कहा। जब सत्यपुरुष ने आज्ञा दे दी तो सहज पूर्ण सुख देने वाले अपने सुखासन द्वीप को चले गए।

सत्यपुरुष दयालु तो सेवा-भक्ति के वश में हैं, वे अपने भक्त के गुण-अवगुण को चित्त में नहीं लाते, वे महान कृपालु हैं।

आद्या (अष्टांगी) की उत्पत्ति

॥ चौपाई ॥

इच्छा कीन पुरुष तेहि बारा। अष्टांगी कन्या अवतारा॥
अष्ट बाहु कन्या होय आई। बायें अंग सो ठाढ़ रहाई॥

उस समय सत्यपुरुष ने इच्छा की। उस इच्छा से अष्टांगी नाम की कन्या उत्पन्न हुई। वह कन्या आठ भुजाओं की होकर आई और वह सत्यपुरुष के बाएं अंग की ओर जाकर खड़ी हो गई।

आद्या वचन सत्यपुरुष प्रति

॥ चौपाई ॥

माथ नाय पुरुष सो कहई। अहो पुरुष आज्ञा कस अहई॥

उस अष्टांगी कन्या ने माथा झुकाकर, अर्थात प्रणाम कर कहा कि हे सत्य-पुरुष! मुझे कैसी (क्या) आज्ञा है?

सत्यपुरुष का आद्या को मूल बीज देना

सत्यपुरुष वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

तबहीं पुरुष वचन परकासा। पुत्री जाहु धरम के पासा॥
देहुं वस्तु सो लेहु सम्हारी। रचहु धर्म मिलि उत्पत्ति वारी॥

तब सत्यपुरुष ने अपने वचन प्रकट कर कहा कि हे पुत्री! तुम निरंजन के पास जाओ। मैं तुम्हें जो वस्तु देता हूं, उसे संभाल कर लो। उससे तुम निरंजन से मिलकर सृष्टि रूपी फुलवारी की रचना करो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

दीन्हों बीज जीव पुनि सोई। नाम सोहंग जीव कर होई॥
जीव सोहंगम दूसर नाहीं। जीव सो अंस पुरुष को आहीं॥
शक्ति पुनि तीन पुरुष उत्पाना। चेतनि उलंघनि अभया जाना॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास को कहते हैं कि फिर सत्यपुरुष ने अष्टांगी कन्या को जीव-बीज दिया, जीव का नाम सोहंग है। जीव ही सोहंगम है, दूसरा नहीं और वह जीव सत्यपुरुष का अंश (पुत्र) है। फिर सत्यपुरुष ने तीन शक्तियों को उत्पन्न किया, उन्हें चेतन, उलंघनि तथा अभया नाम से जानो (ये तीनों शक्तियां अष्टांगी के सहयोग के लिए सत्यपुरुष ने उत्पन्न कीं)।

॥ छंद ॥

पुरुष सेवा वश भये तब, अष्ट अंगहि दीन्ह हो।
मानसरोवर जाहु कहिया, देहु धर्महि चीन्ह हो॥
अष्टांगी कन्या हती जेहि, रूप शोभा अति बनी॥
जाहु कन्या मानसरवर, करहु रचना अति घनी॥ 15॥

जब सत्यपुरुष निरंजन की सेवा-भक्ति के वश हुए, तब उन्होंने निरंजन के लिए अष्टांगी को दिया। उन्होंने अष्टांगी को निरंजन के पास मानसरोवर-द्वीप जाने को कहा और कहा कि निरंजन को पहचान-समझकर यह जीव-बीज दो। वह जो अष्टांगी कन्या थी, रूप एवं शोभा से अत्यंत सुंदर बनी-ठनी थी। सत्यपुरुष ने कहा कि कन्या तुम मानसरोवर जाओ और (निरंजन के साथ मिलकर) अत्यधिक सृष्टि की रचना करो।

सोरठा

चौरासी लख जीव, मूल बीज तेहि संग दे।
रचना रचहु सजीव, कन्या चलि सिर नायके॥ 15॥

सत्यपुरुष ने चौरासी लाख जीवों का मूल बीज अष्टांगी के साथ देकर भेजा और उसे कहा कि जाओ सजीव, अर्थात चैतन्य-सृष्टि की रचना करो। तब अष्टांगी-कन्या उन्हें सिर झुकाकर निरंजन के पास चल दी।

॥ चौपाई ॥

यह सब दीन्हो आदि कुमारी। मानसरोवर चलि भई नारी॥
तत छन पुरुष सहज टेरावा। धावत सहज पुरुष पहिं आवा॥

यह सब जीव-बीज उस आदि कुमारी अष्टांगी को दिया और वह मानसरोवर चली गई। उसी क्षण सत्यपुरुष ने सहज को पुकारा, तो सहज दौड़ते हुए सत्यपुरुष के पास आए।

सत्यपुरुष वचन सहज प्रति

॥ चौपाई ॥

जाहु सहज धरम यह कहेहु। दीन्ह वस्तु जस तुम चहेहु॥
मूल बीज तुम पहं पठवावा। करहु सृष्टि जस तुव मन भावा॥
मानसरोवर[1] जाहि रहाहू। ताते होइ है सृष्टि उराहू॥

सत्यपुरुष ने कहा हे सहज! तुम निरंजन के पास जाओ और उसे यह कहो

1. कुछ संत-विद्वानों का यह कथन है कि 'मानसरोवर' के स्थान पर 'शून्यदेश' होना चाहिए क्योंकि पूर्व में यह कहा गया है कि सत्यपुरुष ने निरंजन को तीन लोक दिए, जहां उसे शून्य देश बसाकर सृष्टि रचना की आज्ञा दी। 'शून्यदेश', अर्थात तीन लोक में निरंजन का वह स्थान जहां से चैतन्य सृष्टि का आरंभ होना कहा है। सत्यपुरुष उसे वहीं जाने को कहते हैं।

कि सत्यपुरुष से जो वस्तु तुम चाहते थे, वह तुम्हें दे दी है। जीव-बीज तुम्हारे पास भिजवा दिया है, अब जैसा तुम्हारा मन भाए वैसी सुंदर सृष्टि की रचना करो। मानसरोवर में जाकर रहो, वहीं से सृष्टि का आरंभ होना है।

पुनः सहज का निरंजन के पास जाना

॥ चौपाई ॥

चले सहज तहवां तब आये। धरम धीर जहं ठाढ़ रहाये॥
कहेउ सुवचन पुरुष केजबहीं। धरमराय सिर नायो तबहीं॥

सत्यपुरुष की आज्ञा मानकर सहज चलकर तब वहां आए, जहां पर साहसी निरंजन खड़े हुए थे। जैसे ही उन्होंने सत्यपुरुष के सुंदर वचन कहे, तो तब ही निरंजन ने शीश झुका लिया, अर्थात सत्यपुरुष के वचनों को स्वीकार कर प्रणाम किया।

निरंजन का मानसरोवर में आद्या को पाकर मोहवश हो उसे निगल जाना और सत्यपुरुष का शाप पाना

॥ चौपाई ॥

पुरुष वचन सुन तबही गाजा। मानसरोवर आन विराजा॥
आवत कामिनी देख्यो जबही। धर्मराय मन हरष्यो तबही॥

सहज के द्वारा सत्यपुरुष के वचन सुनकर निरंजन उसी समय अभिमान से भर गया और फिर निश्चिंत होकर मानसरोवर में विराजमान हो गया। जब वहां पर सुंदर कामिनी (अष्टांगी) को आते हुए देखा, तब निरंजन का मन हर्षित हो गया।

॥ चौपाई ॥

कला देखि अष्टंगी केरी। धरमराय इतरान्यो हेरी॥
कला अनंत अंत कछु नाही। काल मगन ह्वै निरखत ताही॥

अष्टांगी-कामिनी की सौंदर्य-कला को देखकर, निरंजन इतरा गए, अर्थात मुग्ध हो गए। उसकी सुंदरता की कला का अंत नहीं था, वह तो अनंत थी। निरंजन मन-मग्न होकर उस अनुपम सुंदरता को देखता है।

॥ चौपाई

निरखत धरम सुभयो अधीरा। अंग अंग सब निरख शरीरा॥
धरमराय कन्या कह ग्रासा। काल स्वभाव सुनो धर्मदासा॥

अष्टांगी के अंग-अंग एवं संपूर्ण शरीर की असीम सुदंरता को देख-देख कर निरंजन अधीर (उत्तेजित) हो गया। सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! काल-निरंजन का क्रूर-स्वभाव सुनो, वह अष्टांगी कन्या को निगल ही गया।

॥ चौपाई ॥

कीन्हो ग्रास काल अन्यायी। तब कन्या चित विस्मय लायी॥
तत छण कन्या कीन्ह पुकारा। कालनिरंजन कीन्ह अहारा॥

जब अन्यायी काल निरंजन अष्टांगी कन्या का ग्रास करने लगा, तब उसके प्रति उस कन्या को चित्त में बहुत आश्चर्य हुआ। जब वह निगल रहा था उसी क्षण अष्टांगी कन्या ने सत्यपुरुष को पुकारा कि काल-निरंजन ने मुझे आहार कर लिया है, अर्थात मुझे निगल लिया है।

॥ चौपाई ॥

तबहिं पुरुष चित दाया आई। काल कठिन यह भो अन्याई॥

(कन्या की करुण पुकार सुनकर) तब सत्यपुरुष के चित्त में उसके प्रति दया भर आई और उन्होंने सोचा कि यह काल-निरंजन बहुत कठोर अन्यायी है।

॥ चौपाई ॥

पुरुष ध्यान कूर्म अनुसारा। मोसन काल कीन्ह अधिकारा॥
तीन शीश मम भच्छण कीन्ह्यो। हो सतपुरुष दया भल चीन्ह्यो॥

(इस कन्या की भांति निरंजन से पीड़ित होकर पहले भी—) कूर्म ने विधि अनुसार सत्यपुरुष का ध्यान किया था, 'काल निरंजन ने मुझ पर बलपर्वूक अधिकार किया है और उसने मेरे तीन शीश खा लिए हैं, हे सत्यपुरुष! आप मेरे दुख को समझते हुए मुझ पर दया कीजिए, अर्थात मेरी रक्षा कीजिए।'

॥ चौपाई ॥

यही चरित्र पुरुष भल जानी। दीन्ह शाप सो कहों बखानी॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास को संबोधित करते हैं कि काल-निरंजन का यह ऐसा क्रूर-चरित्र भली प्रकार जानकर, सत्यपुरुष ने उसे जो शाप दिया, मैं बखान कर कहता हूं।

पुरुष का शाप निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

लच्छ जीवनित ग्रासन करहू। सवा लच्छ नित प्रति विस्तरहू॥

सत्यपुरुष ने अभिशाप दिया कि यह काल-निरंजन प्रति दिवस लाख जीव खाएगा और सवा लाख उत्पन्न (विस्तार) करेगा।

॥ छंद ॥

पुनि कीन्ह पुरुष तिषान तिही, किमि मेटि डारों काल हो।
कठिन काल कराल जीवन, बहुत करई बिहाल हो॥
यही मेटत अब ना बनै मुहिं, नाल इक सुत षोड़सा।
एक मेटत सबै मिटिहैं, वचन डोल अडोल सा॥ 16॥

फिर सत्यपुरुष ने उस समय विचार किया कि किसी प्रकार काल-निरंजन को मिटा डालें। क्योंकि यह काल-निरंजन बहुत ही कठोर एवं भयंकर है, यह सब जीवों का जीवन बेहाल, अर्थात दुखी एवं व्याकुल करेगा।

किंतु यह अब मिटाने से भी नहीं बनता है, अर्थात इसका मिटाना भी ठीक नहीं है, क्योंकि एक ही नाल से सोलह सुत हैं। उनमें से एक को मिटाने से सब मिट जाएंगे और मैंने सबको अमुख लोक-द्वीप देकर जो रहने का वचन दिया है, वह डांवा-डोल हो जाएगा तथा मेरी समस्त रचना भी नष्ट हो जाएगी। अतएव, उन सब सुतों को बचाने हेतु, इसे मारना उचित नहीं।

॥ सोरठा ॥

डोले वचन हमार, जो अब मेटो धरम को।
वचन करौ प्रतिपाल, देश मोर अब ना लहै॥ 16 ॥

इस प्रकार सत्यपुरुष सोच-विचार करते हैं कि जो अब काल-निरंजन को मिटाऊं तो हमारा वचन भंग हो जाएगा। अत: अपने वचन का पालन करते हुए उसे न मारकर यह कहता हूं, कि अब वह हमारा देश नहीं पाएगा, अर्थात वह भविष्य में हमारे दर्शन को नहीं पाएगा।

सत्यपुरुष का योगजीत को बुलाना और योगजीत को निरंजन के पास भेजकर उसे मानसरोवर से निकाल देने की आज्ञा देना

॥ चौपाई ॥

जोगजीत कह पुरुष बुलावा। धर्मचरित सब कहि समुझावा॥

सत्यपुरुष ने कहकर योगजीत को बुलाया और उसे काल-निरंजन का सब चरित्र कहकर समझाया, अर्थात निरंजन का कूर्म पर अत्याचार एवं उसके तीन शीश खा जाना और अष्टांगी कन्या को निगल जाना, ये सब भली-प्रकार समझाया।

सत्यपुरुष वचन योगजीत प्रति

॥ चौपाई ॥

जोगजीत तुम बेगि सिधारो। धरमराय को मारि निकारो॥
मानसरोवर रहन न पावै। अब यहि देश काल नहिं आवै॥

सत्यपुरुष ने कहा कि योगजीत! तुम शीघ्र मानसरोवर-द्वीप जाओ और वहां से निरंजन को मारकर (दण्डित कर) निकाल दो। अब वह मानसरोवर में रहने न पाए और अब वह मेरे इस देश, अर्थात सत्यलोक में कभी न आए।

॥ चौपाई ॥

जाकर रहे धरम वहि देशा। स्वर्ग मृत्यु पाताल नरेशा॥
धरम के उदर माहिं है नारी। तासो कहो निज शब्द सम्हारी॥

निरंजन के पेट में अष्टांगी-नारी है, उससे कहो कि मेरे शब्दों का संभालकर यथावत् पालन करे। निरंजन जाकर उसी देश में रहे (जो मैंने पहले ही उसे दिया था, अर्थात स्वर्ग, मृत्यु एवं पाताल लोक का राज करे)।

॥ चौपाई ॥

उदर फारिकै बाहर आवै। कूर्म उदर विदारि फल पावै॥
धरमराय सों कहो बिलोई। वह नारि अब तुम्हरी होई।

वह अष्टांगी नारी निरंजन का पेट फाड़कर बाहर आए, जिससे निरंजन का पेट फटने से वह अपने किए कर्मों का फल पाए। निरंजन से यह निर्णय कर कह दो कि अब वही अष्टांगी नारी तुम्हारी स्त्री होगी।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

जोगजीत चलि भे शिर नाई। मानसरोवर पहुंचे जाई॥
जोगजीत कहं देखा जबहीं। अति भो काल भयंकर तबहीं॥

धर्मदास को सद्गुरु साहेब कहते हैं कि योगजीत सत्यपुरुष को शीश नवाकर चल पड़े और मानसरोवर जा पहुंचे। निरंजन ने योगजीत को वहां देखा, तो वह उस समय अत्यंत भयंकर रूप हुआ (कि यह यहां पर क्यों आया है ?

निरंजन वचन योगजीत प्रति

॥ चौपाई ॥

पूछा काल कौन तुम आई। कौन आज तुम यहां सिधाई॥

काल-निरंजन ने योगजीत से पूछा कि तुम कौन यहां आए हो ? किसने आज तुम्हें यहां भेजा है (तुम्हारे आने का कारण क्या है) ?

योगजीत वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

जोगजीत अस कहें पुकारी। अहो धरम तुम ग्रासेहु नारी॥
आज्ञा पुरुष दीन्ह यह मोही। इहिं ते बेगि निकारो तोही॥

योगजीत ने निरंजन को पुकारकर ऐसा कहा कि अरे निरंजन! तुम नारी को ग्रस गए हो। इसलिए सत्यपुरुष ने मुझे यह आज्ञा दी है कि तुम्हें यहां से शीघ्र निकालूं।

योगजीत वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

जोगजीत कन्या सों कहिया। नारि काहे उदर महं रहिया॥
उदर फारि अब आवहु बाहर। पुरुष तेज सुमिरो तेहि ठाहर॥

योगजीत ने निरंजन के पेट में गई अष्टांगी से कहा कि हे अष्टांगी नारी! तुम क्यों पेट में रहती हो? तुम वहां ठहर कर सत्यपुरुष के तेज-स्वरूप का सुमिरन करो और निरंजन का पेट फाड़कर अब बाहर आ जाओ।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनिके धर्म क्रोध उर जरेऊ। जोगजीत सों सन्मुख भिरेऊ॥
जोगजीत तब कीन्हें ध्याना। पुरुष प्रताप तेज उर आना॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास को कहते हैं कि योगजीत की बात सुनकर निरंजन का हृदय क्रोध से जलने लगा और वह योगजीत से आमने-सामने भिड़ गया। तब योगजीत ने सत्यपुरुष का ध्यान किया, जिससे सत्यपुरुष का प्रताप एवं तेज उसके हृदय में आ गया।

॥ चौपाई ॥

पुरुष आज्ञा भई तेहि काला। मारहु माझ लिलाट कराला॥
जोगजीत पुनि तैसो कीन्हा। जस आज्ञा पुरुष तेहि दीन्हा॥

सत्यपुरुष ने उस समय योगजीत को आज्ञा दी कि निरंजन के माथे के मध्य में जोर से घूंसा मारो। फिर योगजीत ने वैसा ही किया, जैसी सत्यपुरुष ने उसे आज्ञा दी।

॥ छंद ॥

गहि भुजा फटकार दीन्हों, परेउ लोक ते न्यार हो।
भयो त्रासित पुरुष डर ते, बहुरि उठेउ सम्हार हो॥
निकसि कन्या उदर ते पुनि, देखि धर्महि अति डरी।
अब नाहिं देखौं देश वह, कहौं कौन विधि कहवां परी॥ 17 ॥

योगजीत ने निरंजन की भुजा पकड़कर उसे उठाकर फेंक दिया, तो वह सत्य लोक के मानसरोवर द्वीप से अलग कहीं दूर जाकर पड़ा। सत्यपुरुष के डर से डरता हुआ, वह फिर संभलकर उठा। फिर अष्टांगी-कन्या निरंजन के पेट से निकली और वह काल-निरंजन को देखकर बहुत डरी। वह सोचने लगी कि अब मैं वह देश (अमर देश के अंतर्गत मानसरोवर) नहीं देख सकूंगी, न जाने किस प्रकार मैं यहां आकर गिर पड़ी, यह कौन कहे अथवा कौन बताए?

॥ सोरठा ॥

कामिनी रही सकाय, त्रासित काल के डर अधिक।
रही सो सीस नवाय, आस-पास चितवत खड़ी॥ 17 ॥

निरंजन से अष्टांगी सकपका रही है, सशंकित होकर वह उसके डर से बहुत डरी हुई है। वह निरंजन को शीश नवा रही है और खड़ी हुई आस-पास देखती है (वहां और कोई नहीं है)।

निरंजन वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै धरम सुनु आदि कुमारी। अब जनि डरपो त्रास हमारी॥
पुरुष रचा तोहि हमरे काजा। इकमति होय करहु उपराजा॥
हम हैं पुरुष तुमहि हो नारी। यहि मानो तुम बात हमारी॥

निरंजन ने कहा कि हे आदि कुमारी (अष्टांगी)! सुनो, अब तुम मेरे डर से मत डरो। सत्यपुरुष ने तुम्हें मेरे काम के लिए रचा है। हम-तुम एक मति होकर सृष्टि की रचना करें। मैं पुरुष हूं और तुम मेरी स्त्री हो, अतएव तुम मेरी यह बात मान लो।

आद्या (अष्टांगी) वचन निरजन प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै कन्या कस बोलहु बानी। भ्राता जेठ प्रथम हम जानी॥
कन्या कहै सुनो हो भ्राता। ऐसी विधि जनि बोलहु बाता॥

अष्टांगी निरंजन से कहती है कि तुम कैसी वाणी बोलते हो, मैं तो तुम्हें प्रथम ज्येष्ठ-भ्राता जानती हूं। वह अष्टांगी-कन्या कहती है कि हे भ्राता! इस प्रकार समझते हुए तुम मुझसे ऐसी बात मत करो।

॥ चौपाई ॥

अब मैं पुत्री भई तुम्हारी। जब ते उदर मांझ लियो डारी॥
ज्येष्ठ बंधु प्रथमहि के नाता। अब तो अहो हमारे ताता॥

जब से तुमने मुझे अपने पेट में डाल लिया था (उससे उत्पन्न होने पर) अब तो मैं तुम्हारी पुत्री हो गई हूं। बड़े भाई का नाता तो मेरा तुमसे पहले से ही है, अहा! अब तो तुम मेरे पिता भी हो गए हो।

॥ चौपाई ॥

निरमल दृष्टि अब चितवहु मोही। नहिं तो पाप होय अब तोही॥
मंद दृष्टि जनि चितवहु मोही। ना तो पाप होय अब तोही॥

अष्टांगी कहती है कि अब तुम मुझे निर्मल दृष्टि से देखो, अन्यथा अब तुमसे पाप हो जाएगा। मुझे मंद-दृष्टि अर्थात विषयी-दृष्टि से मत देखो, नहीं तो अब तुमसे पाप होगा।

निरंजन वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै निरंजन सुनो भवानी। यह मैं तोहि कहों सहिदानी॥
पाप पुण्य डर हम नहिं डरता। पाप पुण्य के हमहीं करता॥

निरंजन कहता है कि हे भवानी! सुनो, यह मैं तुम्हें सत्य समझाकर अपनी पहचान कहता हूं। पाप-पुण्य के डर से मैं नहीं डरता, क्योंकि पाप-पुण्य का मैं ही कर्ता हूं।

॥ चौपाई ॥

पाप पुण्य हमहीं से होई। लेखा मोर न लेहै कोई॥
पाप पुण्य हम करब पसारा। जो बाझे सो होय हमारा॥

पाप-पुण्य मुझसे ही होंगे और मेरा लेखा (हिसाब) कोई नहीं लेगा। मैं ही पाप-पुण्य को फैलाऊंगा, जो उसमें फंस जाएगा, वही मेरा होगा।

॥ चौपाई ॥

ताते तोहि कहौं समुझाई। सीख मोर लो सीस चढ़ाई॥
पुरुष दीन तुहिं हम कह जानी। मानहु कहा हमार भवानी॥

इसलिए मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं कि मेरी सीख (शिक्षा) को सिर पर चढ़ा लो, अर्थात जो मैं कहता हूं सहर्ष स्वीकार करो। सत्यपुरुष ने मुझे कह-समझाकर तुझे दिया है, अतः हे भवानी! तुम मेरा कहा मान लो।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

बिहंसी कन्या सुन अस बाता। इक मति होय दोई रंग राता॥
रहस वचन बोली मृदु बानी। नारी नीच बुधि रति विधि ठानी॥
रहस वचन सुनि धरम हरषाना। भोग करन को मन में आना॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास को कहते हैं कि अष्टांगी निरंजन की ऐसी बात सुनकर हंस दी और दोनों एक मति होकर एक-दूसरे के रस-रंग में मिल गए। अष्टांगी मीठी वाणी से रहस्यमय वचन बोली और नीच बुद्धि उस स्त्री ने विषय-भोग की इच्छा प्रकट की। उसके रति-विषय के रहस्यमय वचन सुनकर निरंजन बहुत हर्षित हुआ और उसके मन में विषय-भोग करने की प्रवृत्ति जाग उठी।

॥ छंद ॥

दोऊ भये रति लीन, तिहुंको सब खास आरंभनी।
आदि उत्पत्ति सुनहु धर्मनि, कोउ नहिं जानत भर्मनी॥

त्रयबार कीन्ही रति तबै, भये ब्रह्मा विष्णु महेस हो।
जेठे विधि विष्णु लघु तिहि, तीजे शंभु शेष हो॥ 18॥

निरंजन और अष्टांगी दोनों परस्पर रति-लीन (काम-प्रवृत्त) हो गए, तब कहीं चैतन्य-सृष्टि का विशेष प्रारंभ हुआ। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम चैतन्य की आदि-उत्पत्ति का यह भेद सुनो, जिसे भ्रमवश कोई नहीं जानता। उन दोनों ने तीन बार रति-प्रसंग किया, जिससे ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश हुए। उनमें ज्येष्ठ ब्रह्मा, उनसे छोटे विष्णु और अंत में तीसरे महेश (शंकर) हुए।

॥ सोरठा ॥

उत्पति आदि प्रकास, यहि विधि तेहिं प्रसंग भो।
कीन्हों भोग विलास, इक मति कन्या काल है॥ 18॥

इस प्रकार अष्टांगी और निरंजन का रति प्रसंग हुआ। उन दोनों ने एक मति होकर भोग-विलास किया, तब उससे आदि उत्पत्ति का प्रकाश हुआ।

भवसागर की रचना

॥ चौपाई ॥

तेहि पीछे ऐसा भो लेखा। धर्मदास तुम करो विवेका॥
अग्नि पवन जलमहि अकासा। कूर्म उदर ते भयो प्रकासा॥
पांचों अंस ताहि सन लीन्हा। गुण तीनों सीसन सो कीन्हा॥
यहि विधि भये तत्व गुन तीनों। धर्मराय तब रचना कीनों॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम विवेक-विचार करो, इससे पीछे ऐसा उल्लेख हो चुका है (कहा जा चुका है) कि अग्नि, पवन, जल, पृथ्वी, एवं आकाश कूर्म के उदर से प्रकट हुए। उसके उदर से ये पांचों अंश लिए तथा उसके तीनों शीश काटने से तीनों गुण (सत, रज और तम) प्राप्त किए। इस प्रकार पांच तत्व तथा तीनों गुण हुए, तब निरंजन ने सृष्टि-रचना की।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

गुण तत सम कर देविहिं दीन्हा। आपन अंश उत्पन कीन्हा॥
पांच तत्व गुण तीनों दीन्हा। यहि विधि जग की रचना कीन्हा॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि पारस्परिक रति-प्रसंग में निरंजन ने अष्टांगी देवी को गुण एवं तत्व समान करके दिए और अपने अंश (पुत्र) उत्पन्न किए। पांच तत्व और तीनों गुणों को इस प्रकार देने से, फिर उसने संसार की रचना की।

॥ चौपाई ॥

प्रथम बुंद ते ब्रह्मा भयऊ। रज गुण तत्व तेहि दयऊ॥
दूजो बुंद विष्णु जो भयऊ। सत गुण पंच तत्व तिन पयऊ॥
तीजे बुंद रुद्र उत्पाने। तम गुण पंच तत्व तेहि साने॥

वीर्य-शक्ति की प्रथम बूंद से ब्रह्मा जी हुए, उन्हें रजोगुण एवं पांच तत्व दिए। दूसरी बूंद से विष्णु जी हुए, उन्हें सतोगुण और पांच तत्व दिए। तीसरी बूंद से रुद्र (शंकर) जी को उत्पन्न किया और उन्हें तमोगुण तथा पांच तत्व से संपन्न किया।

॥ चौपाई ॥

पंच तत्व गुण तीन खमीरा। तीनों जन को रच्यो सरीरा॥
ताते फिरि फिरि परलय होई। आदि भेद जाने नहिं कोई॥

पांच तत्व और तीन गुण के मिश्रण से (गर्भ में) तीनों जन ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश के शरीर रचे (और इसी प्रकार अन्य सब जीवों के शरीरों की रचना हुई)। उससे ये पांच तत्व तथा तीन गुण परितर्वनशील एवं विकारी होने से पुनः-पुनः सृजन-प्रलय अर्थात जीवों के शरीर का जन्म-मरण होता है, सृष्टि रचना के इस आदि भेद को यथार्थ रूप से कोई नहीं जानता।

निरंजन वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै धर्म कामिनी सुन बानी। जो मैं कहूं लेहु सो मानी॥
जीव बीज आहै तुव पासा। सो ले रचना करहु प्रकासा॥

निरंजन कहता है कि हे अष्टांगी-कामिनी! मेरी वाणी सुन और जो मैं बात कहूं उसे मान लो। अब जीव-बीज तुम्हारे पास है, उसके द्वारा तुम सृष्टि-रचना का प्रकाश करो।

॥ चौपाई ॥

कहै निरंजन पुनि सुनु रानी। अब कस करहू आदि भवानी॥
त्रय सुत सौंप तोहि कहं दीना। अब हम पुरुष सेव चित्त लीन्हा॥
राज करहु तुम लै तिहुं बारा। भेद न कहियो काहु हमारा॥

निरंजन पुनः कहता है कि हे रानी आदि भवानी सुन। अब मैं कैसे क्या करूं? ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों पुत्र मैंने तुमको सौंप दिए हैं। अब मैंने तो सत्यपुरुष की सेवा-भक्ति में अपना चित्त लगा दिया है। तुम इन तीनों बालकों को लेकर राज्य करो, किंतु मेरा भेद किसी से मत कहना।

॥ चौपाई ॥

मोर दरस त्रय सुत नहिं पैहें। जो मुहि खोजत जन्म सिरै हैं॥
ऐसो मता दिढैहो जानी। पुरुष भेद नहिं पावै प्रानी॥
त्रय सुत जबहिं होहिं बुधिवाना। सिंधु मथन दे पठहु निदाना॥

मेरा दर्शन ये तीनों पुत्र नहीं पा सकेंगे, चाहे ये मुझे खोजते-खोजते अपना जन्म (जीवन) समाप्त कर दें। सोच-समझकर सब लोगों को ऐसा मत-उपदेश सुदृढ़ कराना कि जिससे सत्यपुरुष का भेद प्राणी न पाए। जब ये तीनों पुत्र बुद्धिमान हो जाएं तब उन्हें समुद्र मंथन का ज्ञान देकर, समुद्र-मंथन के लिए भेजना।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ छंद ॥

कहेउ बहुत बुझाय देविहि, गुप्त भये तब आहि हो।
शून्य गुफहिं निवास कीन्हों, भेद लह को ताहि हो॥
वह गुप्त भा पुनि संग सबके, मनहिं निरंजन जानिये।
मन पुरुष भेद उच्छेद देवे, आपु परगट आनिये॥ 18॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि निरंजन ने अष्टांगी देवी को बहुत समझाया-बुझाया और फिर आप गुप्त हो गया। उसने शून्य-गुफा में निवास किया, अर्थात उसने गुप्त होकर जीवों के हृदयाकाश रूपी शून्य-गुफा में स्वयं को ठहराया, उसका भेद कौन ले सकता है?

वह गुप्त होकर भी सबके साथ है, जो सबके भीतर है उस मन को ही निरंजन समझो। प्राणियों के हृदय में रहने वाला यह मन-निरंजन सत्यपुरुष परमात्मा के रहस्यमय-ज्ञान के प्रति संदेह उत्पन्न कर उसे मिटाता है और अपने मत से सबको वशीभूत करता हुआ अपने-आपको प्रकट करता है।

विशेष—*वस्तुतः सब प्राणियों के हृदय-शून्य में बसने वाला मन काल-निरंजन का ही रूप है। सबके साथ रहता हुआ भी मन गुप्त है, किसी को दिखाई नहीं पड़ता। मन के वशीभूत होने से सब अशांत एवं दुखी रहते हैं। मन स्वभावतः अति चंचल है और यह सदैव सांसारिक प्रवृत्ति की ओर अग्रसर रहता है। मायिक-विषय-सुख-भोगों की आशा तृष्णा में इसे चैन कहां? यह तो निशि-दिन स्वप्न एवं जाग्रत में अनंत कामनाओं की पूर्ति के लिए इधर-उधर दौड़ता रहता है। सांसारिक माया-मोह एवं विषय वासनाओं के गर्त में पड़े रहने से ही जीव का पतन होता है, जिसके कारण वह जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहता है। इस प्रकार जीव का मन-निरंजन ही उसके दुख भोगों एवं जीवन-मृत्यु का कारण है। येन-केन-प्रकारेण मन को वश में करना ही सब दुख-द्वंद्वों एवं आवागमन से मुक्त होने का एकमात्र उपाय है।*

मन से सावधान करते हुए सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि यह मन बहुत मतवाला तथा विषयगामी है। अतः मन के मत-मार्ग में मत चलो, इस मन के अनेक मत एवं इच्छाएं हैं, जिनका अंत होना अथवा पूर्ति होना संभव नहीं है। जो अपने मन को भली प्रकार वश में कर उस पर सवार हो जाता है, वह साधु तो कोई एक, अर्थात कोई-कोई होता है। यथा—

मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर असवार है, सो साधु कोय एक॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

काल-निरंजन का वास्तविक रूप बताते हुए वे कहते हैं कि काल-काल सब कोई कहते हैं, किंतु काल को पहचानता-समझता कोई नहीं है। मन एवं मन की जितनी कल्पनाएं हैं, वे सब काल हैं। यथा—

काल काल सब कोइ कहे, काल न चीन्हे कोय।
जेती मन की कल्पना, काल कहावै सोय॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

मन रूपी काल-निरंजन का तीनों लोकों के सब जीवों पर राज्य करने का आशय इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि यह (मन-काल) सब जीवों के भीतर गुप्त रूप से वास करता है और सबको अपने अधीन रखते हुए, सबकी देहों की रचना (जन्म) एवं प्रलय (मरण) का कारण बनता है। मनुष्य क्या, ऋषि-मुनि तथा देवी-देवता सभी तो इसके चंगुल में हैं। यथार्थ में इस मन-निरंजन को समझने एवं पहचानने के लिए सद्गुरु कबीर साहेब सद्ग्रंथ बीजक में उदाहरण सहित समझाते हुए कहते हैं—

ता मन को चीन्हों मोरे भाई, तन छूटे मन कहां समाई।
सनक सनन्दन जैदेव नामा, भक्ति सही मन उनहुं न जाना।
अम्बरीष प्रहलाद सुदामा, भक्ति हेतु मन उनहुं न जाना।
भरथरि गोरख गोपीचन्दा, ता मन मिलि-मिलि कियो अनन्दा।
जा मन को कोइ जान न भेवा, ता मन मगन भये शुकदेवा।
शिव सनकादिक नारद शेषा, तन के भीतर मन उनहुं न पेखा।
एकल निरंजन सकल शरीरा, तामहं भ्रमि-भ्रमि रहल कबीरा।

भावार्थ—हे मेरे भाई! उस मन को समझो-परखो जो तुम्हें सांसारिक-विषयों में भटकने को विवश करता है। यह सोचो कि जब शरीर छूट जाता है तब मन कहां समा जाता है। सनक-सनंदन, जयदेव तथा नामदेव आदि संत-महापुरुषों ने भक्ति तो की, परंतु मन उन्होंने भी नहीं जाना। अंबरीष, प्रह्लाद और सुदामा आदि भक्तों ने भी अधिक भक्ति की, परंतु मन उन्होंने भी नहीं समझा। भर्तृहरि,

गोरखनाथ एवं गोपीचंद आदि योगी-जन भी उस मन से मिल-मिलकर आनंद करते रहे। जिस मन का कोई भेद न जान पाया, उसी मन में शुकदेव मुनि भी मग्न हो गए। शिव, सनकादि, नारद और शेष आदि ने भी देह के भीतर रहने वाले उस मन को नहीं परखा। एक मन-निरंजन ने सभी जीव-देहों में अपना जाल फैला रखा है, उसी में सब जीव भ्रमित हो-होकर भटक रहे हैं।

इस प्रकार मन-निरंजन ने सबको अपने वश में कर रखा है। यही सबका स्वामी तथा उत्पत्ति का हेतु है। अतः जीवन कल्याण के लिए परमावश्यक है कि सद्गुरु की सत्यज्ञान-युक्ति के अनुसार मन को शांत-निश्चल कर भक्ति-साधना करनी चाहिए।

॥ सोरठा ॥

जीव भये मति हीन, परसि अंग सो काल को।
जनम जनम भये खीन, मुरुचा कर्म अकर्म को॥ 19॥

जीव तथा उसके हृदय के भीतर मन दोनों एक साथ हैं। चंचल एवं विषयी मन-काल के अंग स्पर्श करने से जीव बुद्धिहीन अथवा मंदबुद्धि हो गए (क्योंकि मन ही विषयरस-भोगों के लिए पांचों ज्ञानेंद्रियों को प्रेरित करता है, जिससे हृदय एवं बुद्धि मलिन हो जाते हैं, तब उचित-अनुचित कुछ भी सूझ नहीं पड़ता और अज्ञानवश जीव पाप-कर्म करने लगता है)। इसी से अज्ञानी जीव कर्म-अकर्म के मोर्चों पर जूझते हुए जन्म-जन्म से दुर्बल हो जाते हैं, अर्थात अच्छे-बुरे कर्मों के करते रहने तथा उनका फल भोगते रहने से जन्म-जन्मांतर तक जीवों का उद्धार नहीं हो पाता।

॥ सोरठा ॥

जीव सतावै काल, नाना कर्म लगाय के।
आप चलावै चाल, कष्ट देय पुनि जीव को॥ 20॥

यह मन-काल जीव को सताता है। यह इंद्रियों को प्रेरित कर नाना पाप-कर्मों में लगाता है। यह स्वयं पाप-पुण्य के कर्मों की चाल-कुचाल चलाता है और फिर जीव को दुख देता है। अर्थात, यह मन-काल स्वयं ही कुछ कराकर, फिर निर्णायक बनकर उसका दण्ड देता है।

विशेष—*सद्गुरु कबीर साहेब सद्ग्रंथ बीजक में चंचल मन-काल की चाल को समझाते हुए कहते हैं कि प्राणी (मनुष्य) ने तो अपनी जिह्वा को डगमगा रखा है और वह बिना विचारे बोल-कुबोल बोलता है। वह मन के चक्कर में भरमता फिरता है, उसे काल-कल्पनाओं ने हर्ष-शोक एवं राग-द्वेष के झूले में झुला रखा है। यथा—*

प्राणी तो जिभ्या डिगा, छिन छिन बोल कुबोल।
मन के घाले भरमत फिरे, कालहिं देत हिंडोल॥

जैसे बाजीगर का बंदर उसके संकेत पर नाचता है तथा नाना खेल करता है, वैसे ऐसा जीव मन के साथ है। मन जीव को अनेक नाच नचाकर उसे अपने वश में रखता है यथा—

बाजीगर का बांदरा, ऐसा जीव मन के साथ।
नाना नाच नचाय के, ले राखे अपने हाथ॥

आगे वे कहते हैं कि यह मन चंचल है, यह मन चोर है, यह मन वास्तव में ठगने वाला है। मन-मन करते, अर्थात मन की चर्चा करते हुए सब देवता, मनुष्य एवं ऋषि-मुनि मन के ही प्रवाह में बह गए, क्योंकि मन के दौड़-भागने के लाखों द्वार हैं। यथा—

ई मन चंचल ई मन चोर, ई मन शुद्ध ठगहार।
मन-मन करते सुर नर मुनि जहंड़े, मन के लक्ष दुवार॥

अतएव, मन-काल से सदैव सावधान रहते हुए उसे सहज-भाव से शांत एवं नियम-संयम में रखना चाहिए। वास्तव में मन जीव को भरमाने तथा आवागमन में डालने वाला काल का रूप है।

सिंधु-मंथन और चौदह रत्न-उत्पत्ति की कथा

॥ चौपाई ॥

त्रय बालक जब भये सयाने। पठये जननी सिंधु मथाने।
बालक माते खेल खिलारी। सिंधु मथन नहिं गयउ खरारी॥

वे तीनों बालक ब्रह्मा, विष्णु और महेश जब सयाने हुए, तब उनकी माता अष्टांगी-देवी ने उन्हें सिंधु मथने के लिए भेजा। वे बालक खेल-खिलारी में मस्त थे, अतएव वे खारे सिंधु को मथने नहीं गए।

॥ चौपाई ॥

तेहि अंतर इक भयो तमासा। सो चरित्र बूझो धर्मदासा॥
धारयो योग निरंजन राई। पवन अरंभ कीन्ह बहुताई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! इसी बीच एक तमाशा हुआ, उस चरित्र को तुम ध्यानपूर्वक समझो। निरंजन राव ने योग धारण किया, उसमें उसने पवन खींचकर पूरक प्राणायाम से प्रारंभ कर, पवन ठहराकर कुंभक प्राणायाम बहुत अधिक किया।

॥ चौपाई ॥

त्यागो पवन रहित पुनि जबहीं। निकसेउ वेद स्वांस संग तबहीं।
स्वांस संग आयउ सो वेदा। बिरला जन कोई जाने भेदा॥

फिर निरंजन जब कुंभक त्यागकर रेचक क्रिया से पवन रहित हुआ, तब उसके श्वास के साथ ही वेद निकले। (सत्यपुरुष की भक्ति-साधना में चित्त

लगाने के लिए निरंजन की योग-माया से) उसके श्वास के साथ वेद बाहर आए, वेद-उत्पत्ति के इस रहस्य को यथार्थ रूप से कोई विरला विद्वान-जन ही जानेगा।

॥ चौपाई ॥

अस्तुति कीन्ह वेद पुनि ताहां। आज्ञा का मोहिं निर्गुण नाहां।
कह्यौ जाव करु सिंधु निवासा। जिहि भेटे जैहो तिहि पासा॥

फिर वेद ने वहां पर निरंजन की स्तुति (गुणगान) की और कहा कि हे निर्गुण नाथ! मुझे क्या आज्ञा है? तब वेद से निरंजन ने कहा कि तुम जाकर सिंधु में निवास करो तथा जो तुमसे भेंटे अर्थात जिससे मिलन हो उसके पास जाना।

॥ चौपाई ॥

उठी आवाज रूप नहिं देखा। ज्योति अंग दिखलावत भेखा।
चलेउ वेद मुनि तेज अपाने। तेज अंत पुनि विष संधाने॥

वेद को आदेश देते हुए काल-निरंजन की आवाज तो उठी (सुनाई पड़ी) परंतु वेद ने उसके स्थूल-रूप को नहीं देखा। निरंजन ने केवल अपना ज्योति-रूप दिखलाया। उसके तेज से प्रभावित होकर आदेशानुसार फिर वेद चले। फिर अंत में उस तेज से विष की उत्पत्ति हुई।

॥ चौपाई ॥

चले वेद तहंवा कहं जाई। जहंवा सिंधु-रचा धर्मराई॥
पहुंचे वेद तब सिंधु मंझारा। धर्मराय तब युक्ति विचारा॥

चलते हुए वेद वहां पर जा पहुंचे। जहां निरंजन ने सिंधु रचा था। तब वेद सिंधु में पहुंच गए और निरंजन ने फिर सिंधु-मंथन की युक्ति को विचारा।

॥ चौपाई ॥

गुप्त ध्यान देविहि समुझावा। सिंधु मथन कहं कस बिलमावा॥
पठवहु बेगि सिंधु त्रय बारा। दृढ़ कै सोचहु वचन हमारा॥

निरंजन ने गुप्त-ध्यान से अष्टांगी-देवी को स्मरण कराते हुए समझाया और कहा कि बताओ समुद्र को मथने के लिए देर कैसे कर रही हो? ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों पुत्रों को शीघ्र समुद्र मथने को भेजो। (यह मैंने पहले भी कहा था) मेरे वचन दृढ़ता से सोचो, अर्थात मान लो।

॥ चौपाई ॥

बहुरि आप पुनि सिंधु समाना। देवी कीन्ह मथन अनुमाना॥

निरंजन ने अष्टांगी से आगे कहा कि इसके पश्चात फिर तुम स्वयं समुद्र में समा जाना (विलीन हो जाना)। तब अष्टांगी देवी ने समुद्र-मंथन का विचार किया।

॥ चौपाई ॥

तिहुं बालक कहं कह समुझायी। आशिष दे पुनि तहां पठायी॥
पैहौ वस्तु सिन्धु के मांहीं। जाहु वेगि तीनों सुत ताहीं॥
चलि भौ ब्रह्मा मानि सिखाई। दोउ लहुरा पुनि पाछे जाई॥

माता अष्टांगी ने तीनों बालकों को कह-कहकर अच्छी प्रकार समझाया और फिर आशीर्वाद देकर वहां (समुद्र मथने को) भेजा। उन्हें भेजते हुए उसने फिर कहा कि समुद्र में से तुम्हें अनमोल वस्तुएं प्राप्त होंगी, इसलिए तुम अतिशीघ्र वहां जाओ। तब माता की सीख मानकर ब्रह्मा चल पड़े और उनके पीछे फिर दोनों छोटे भाई विष्णु तथा महेश चले।

॥ छंद ॥

त्रय सुत भले खेलत चले, ज्यों सुभग बाल मराल हो।
एक छोड़त पुनि एक कर गहि, चलत लटपट चाल हो॥
क्षणहि धावत क्षण स्थिर खड़े, क्षण भुजहि गर लावहीं।
तेहि समय की शोभा भली, नहिं वेद ताकहं गावहीं॥ 20॥

बहुत भले तीनों पुत्र ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश खेल खेलते हुए चले, जैसे वे हंस के सुंदर बच्चे हों। चलते-खेलते वे एक को छोड़कर फिर एक का हाथ पकड़ लेते हैं और पृथ्वी पर चलते हुए उनकी प्यारी लटपट-चाल है। क्षण में वे दौड़ते हैं, क्षण में स्थिर खड़े हो जाते हैं, क्षण में अपनी भुजाएं एक-दूसरे के गले में डालते हैं। उस समय की शोभा बहुत सुंदर अनूठी है, उसे कहकर वेद नहीं गाते हैं।

॥ सोरठा ॥

गये सिंधु के पास, भये ठाढ़ तीनों जने।
युक्ति मथन परकास, एक एक को निरखहीं॥ 21॥

वे समुद्र के पास गए और तीनों जने खड़े हो गए। एक-दूसरे को देखते हुए वे समुद्र मथने की युक्ति करते हैं।

प्रथम बार सिंधु-मंथन

॥ चौपाई ॥

तीनों कीन मथन तब जाई। तीन वस्तु तीनों जन पाई॥
ब्रह्मा वेद तेज तेहि छोटा। लहुरा तासु मिले विष खोटा॥

तब जाकर तीनों ने मिलकर समुद्र-मंथन किया। समुद्र-मंथन से तीनों जनों ने तीन वस्तुएं पाईं। ब्रह्मा को वेद, विष्णु को तेज और सबसे छोटे महेश को हलाहल विष की प्राप्ति हुई।

॥ चौपाई ॥

भेंटि वस्तु त्रय तीनों भाई। चलि भये हर्ष कहत जहं माई॥
माता पहं आये त्रय बारा। निज निज वस्तु प्रगट अनुसारा॥
माता आज्ञा कीन्ह प्रकाशा। राखु वस्तु तुम निज निज पासा॥

तीन वस्तुएं (वेद, तेज एवं विष) प्राप्त कर तीनों भाई खुशी मनाते हुए वहां चल पड़े, जहां उनकी मां अष्टांगी थी। तीनों बालक माता के पास आए और अपनी-अपनी वस्तु मां को दिखाई तथा जिस प्रकार उन्हें प्राप्त किया, वह सब बताया। माता ने उनको आज्ञा दी कि तुम अपनी वस्तु अपने-अपने पास रखो।

द्वितीय बार सिंधु मंथन

॥ चौपाई ॥

पुनि तुम मथहु सिन्धु कहं जाई। जो जेहि मिले लेउ सो भाई॥

माता ने उन तीनों से कहा कि तुम फिर जाकर समुद्र मथो और जो जिसे मिले, वह भाई उसे ले ले।

॥ चौपाई ॥

कीन्ह चरित अस आदि भवानी। कन्या तीन कीन्ह उत्पानी॥
कन्या तीन उत्पान्यो जबहीं। अंस वारि महं नायो तबहीं॥

उसी समय आदि भवानी अष्टांगी ने ऐसा अनूठा चरित्र किया कि उसने तीन कन्या उत्पन्न कीं। जब वे तीन कन्या उत्पन्न कीं, तो तब ही अपनी उन अंश-पुत्रियों को उसने समुद्र में प्रवेश कर दिया।

॥ चौपाई ॥

पठयो सिंधु माहि पुनि ताहीं। त्रय सुत मर्म सो जानत नाहीं॥
पुनि तिन मथन सिंधु को कीन्हा। भेंटयो कन्या हर्षित ह्वै लीन्हा॥

जब उन तीन अंश-कन्याओं को समुद्र में प्रवेश के लिए भेजा तब तीन पुत्रों, ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश ने इस रहस्य को नहीं जाना। फिर उन्होंने समुद्र-मंथन किया और तब उन्हें तीन कन्याएं मिलीं। उन्होंने खुशी के साथ कन्याओं को लिया।

॥ चौपाई ॥

कन्या तीनहु लीन्हे साथा। आय जननि कहं नायहु माथा॥
माता कहे सुनहु सुत मोरा। यह तो काज भये सब तोरा॥

उन तीनों कन्याओं को साथ लेकर ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश आए और आकर माता को माथा झुकाया, अर्थात प्रणाम किया। माता अष्टांगी कहती है कि हे मेरे पुत्रो! ये सब कार्य तो तुम्हारे पूर्ण हो गए।

॥ चौपाई ॥

इक इक बांटि तिनहु को दीन्हा। करहु भोग अस आज्ञा कीन्हा॥
सावित्री ब्रह्मा तुम लेऊ। है लक्ष्मी विष्णु कहं देऊ॥

माता ने उन तीन कन्याओं को एक-एक बांट कर तीनों पुत्रों को दिया और कौन किसके योग्य है यह आज्ञा की। माता ने कहा कि हे ब्रह्मा! यह सावित्री तुम लो और यह लक्ष्मी है, इसे विष्णु को दो।

॥ चौपाई ॥

पारवती शंकर कहं दीन्हीं। ऐसी माता आज्ञा कीन्हीं॥
तीनउ जन लीन्हीं सिरनाई। दीन्ह अद्या जस भाग लगाई॥

पार्वती तीसरी कन्या शंकर को दो। इस प्रकार तीनों कन्याओं को लेने को माता ने आज्ञा की। तीनों-जनों ने सिर नवाकर उन कन्याओं को वैसे-ही लिया, जैसा माता आद्या ने भाग लगाकर (बांटकर) उनको दिया।

॥ चौपाई ॥

पाई कामिनी भये अनन्दा। जस चकोर पाये निशि चन्दा॥
भये काम बस तीनों भाई। देव दैत दोनों उपजाई॥

ब्रह्मा, विष्णु और शंकर कामिनी स्त्री पाकर बहुत आनंदित हुए, जैसे चकोर पक्षी रात में चंद्रमा को देखकर प्रसन्न होता है। तीनों भाई उन स्त्रियों के साथ काम-विषय के वशीभूत हुए और उन्होंने देव तथा दैत्य दोनों प्रकार की संतानें उत्पन्न कीं।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास परखो यह बाता। नारी भयी हटती सो माता॥
माता बहुरि कहै समुझाई। अब फिर सिंधु मथो तुम जाई॥
जो जेहि मिलै लेहु सो जाई। अब जनि करो विलंब तुम भाई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम यह बात परखो-समझो कि जो माता थी वह स्त्री हो गई। माता अष्टांगी उन तीनों पुत्रों को फिर समझाकर कहती है कि अब फिर तुम भाई मिलकर समुद्र मथो। जाकर समुद्र मथने से जो जिसे मिले वह ले ले और अब तुम तीनों भाई समुद्र मथने में देर मत करो।

तृतीय बार समुद्र मंथन

॥ चौपाई ॥

त्रय सुत चले तब माथ निवायी। जो कछु कहेउ करब हम जायी॥
मथ्यो सिंधु कछु विलम्ब नकीना।निकसे चौदह रतन सो लीन्हा॥
चौदह रतन की निकसी खानी। ले माता पहं पहुंचे आनी॥

तब तीनों पुत्र ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश माता अष्टांगी को माथा नवाकर चले और उन्होंने संकल्प किया कि जो कुछ माता ने कहा है, उसे हम जाकर पूर्ण करते हैं। उन्होंने समुद्र मथा, उसमें कुछ भी देर नहीं की, समुद्र मथने से चौदह-रत्न निकले, वे उन्होंने ले लिए। चौदह रत्न की खान निकली अथवा पूर्व तथा अबकी बार में किए गए समुद्र-मंथन से कुल चौहद रत्नों की प्राप्ति हुई। उन रत्नों को लेकर वे माता के पास आ पहुंचे।

॥ चौपाई ॥

तीनहु बंधु हरषि ह्वै लीन्हा। विष्णु सुधा पायउ हर विष दीन्हा॥

अभिप्राय यह है कि माता अष्टांगी की आज्ञानुसार तीनों भाइयों ने समुद्र-मंथन से प्राप्त रत्न हर्षित होकर लिए। विशेषतः ब्रह्मा को वेद मिला, तो विष्णु ने अमृत पाया और शंकर (महेश) को हलाहल विष दिया।

आद्या का तीनों पुत्रों को सृष्टि रचने की आज्ञा देना और सबका मिलकर पांच खानि की उत्पत्ति करना

॥ चौपाई ॥

पुनि माता अस वचन उचारा। रचहु सृष्टि तुम तीनों बारा॥

फिर माता आद्या-अष्टांगी ने अपने पुत्रों ब्रह्मा, विष्णु और महेश को ऐसा वचन कहा कि तुम तीनों मिलकर सृष्टि की रचना करो।

॥ चौपाई ॥

अण्डज उत्पत्ति कीन्हा माता। पिंडज ब्रह्मा कर उत्पाता॥
ऊष्मज खानि विष्णु व्यवहारा। शिव अस्थावर कीन्ह पसारा॥

अण्डज खानि की उत्पत्ति स्वयं माता अष्टांगी ने की और पिंडज खानि को ब्रह्मा ने उत्पन्न किया। ऊष्मज खानि को विष्णु तथा अस्थावर खानि को शिव ने उत्पन्न कर, सृष्टि का विकास किया।

॥ चौपाई ॥

चौरासी लख योनिन कीन्हा। आधा जल आधा थल कीन्हा॥
एक तत्व अस्थावर जाना। दोय तत्व ऊष्मज परवाना॥

उन्होंने चौरासी लाख योनियों की रचना की और उनके अनुसार, अर्थात उनके स्वाभावानुकूल निवास के लिए आधा जल तथा आधा थल बनाया। स्थावर खानि को एक तत्व की समझो और ऊष्मज खानि का दो तत्वों का प्रमाण है।

॥ चौपाई ॥

तीन तत्व अण्डज निरमाई। चार तत्व पिंडज उपजाई॥
पांच तत्व मानुष विस्तारा। तीनों गुण तिहि माहिं संवारा॥

तीन तत्वों से अण्डज-खानि का निर्माण हुआ तथा चार तत्वों से पिंडज खानि को उपजाया। पांचवीं मनुष्य-खानि को पांच तत्व से निर्मित एवं तीन गुणों से संपन्न कर सजा-संवारकर फैलाया।

विशेष—*इस प्रकार अण्डज, पिंडज, ऊष्मज तथा स्थावर इन चार खानि के साथ पांच तत्व तीन गुण से संयुक्त, ज्ञान-प्रधान सर्वश्रेष्ठ मनुष्य योनि को मिलाकर पांच खानि का विस्तार हुआ। सृष्टि-रचना का उक्त कार्य यहां तक निर्विघ्न चला, परंतु आगे चलकर ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश का अपने पिता निरंजन (एक निराकार-अलख निरंजन) की खोज में लग जाने से अवरुद्ध हो गया।*

ब्रह्मा का वेद को पढ़कर निराकार (निरंजन) का पता लगाना

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा वेद पढ़न तब लागा। पढ़त वेद तब भा अनुरागा॥
कहे वेद पुरुष इक आही। है निराकार रूप नहिं ताही॥

इसके पश्चात आगे चलकर, तब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगे। वेद पढ़ते हुए ब्रह्मा को निराकार के प्रति अनुराग (भक्ति-प्रेम) हुआ। वेद कहता है कि एक पुरुष है, वह निराकार है, उसका कोई रूप नहीं है।

॥ चौपाई ॥

शून्य माहिं वह जोत दिखावे। चितवत देह दृष्टि नहिं आवे॥
स्वर्ग सीस पग आहि पताला। येहि मत ब्रह्मा भौ मतवाला॥

वह शून्य में ज्योति दिखाता है, अर्थात प्रकाश दिखता है, परंतु देखते हुए उस की देह दृष्टि में नहीं आती। उस निराकार-निरंजन का शीश स्वर्ग है और पांव पाताल है। इस वेद-मत से ब्रह्मा मतवाला (प्रसन्न) हो गया।

ब्रह्मा वचन विष्णु-शिव प्रति

॥ चौपाई ॥

चतुरानन कहे विष्णु बुझावा। आदि पुरुष मोहिं वेद लखावा॥
पुनि ब्रह्मा शिव सों अस कहई। वेद पठन पुरुष एक अहई॥
अहै पुरुष इक वेद बतावा। वेद कहे हम भेद न पावा॥

ब्रह्मा ने विष्णु को बताया कि वेद ने मुझे आदि पुरुष लखा दिया। फिर ब्रह्मा ने शिव से ऐसा कहा कि वेद पढ़ने से पता चलता है कि पुरुष एक है। सबका स्वामी केवल एक निराकार पुरुष है यह तो वेद ने बताया, किंतु वेद ने कहा कि हमने उसका भेद (रहस्य) नहीं पाया।

ब्रह्मा वचन आद्या (अष्टांगी) प्रति

॥ चौपाई ॥

तब ब्रह्मा माता पहं आवा। करि प्रणाम तब टेके पांवा॥
हे माता मोहि वेद लखावा। सिरजनहार और बतलावा॥

तब ब्रह्मा माता आद्या-अष्टांगी के पास आए और उनके पांवों में मस्तक रख प्रणाम कर बोले कि हे माता! मुझे वेद ने लखा एवं बतलाया है कि सृष्टि का रचने वाला, सबका स्वामी कोई और है।

॥ छंद ॥

ब्रह्मा कहे जननी सुनो, कहु कौन कन्त तुम्हार है॥
कीजे कृपा जनि मोहि दुरावो, कहां पिता हमार है॥

आद्या वचन ब्रह्मा प्रति

कहे जननी सुनहु ब्रह्मा, कोउ नहिं जनक तुम्हार हो।
हमहि ते भई सब उत्पति, हमहि सब कीन सम्हार हो॥ 21 ॥

ब्रह्मा कहते हैं कि हे माता! सुनो, कहो कौन तुम्हारा पति है ? हे माता! कृपा कीजिए और मुझे बताओ कि हमारा पिता कहां है ?

तब माता अष्टांगी कहती है कि हे ब्रह्मा! सुनो, मेरे अतिरिक्त तुम्हारा अन्य कोई पिता नहीं है। मुझसे ही सब उत्पत्ति हुई है और मैंने ही सबकी संभाल (देखभाल) की है, अर्थात सकल-सृष्टि की कर्ता मैं ही हूं।

ब्रह्मा वचन आद्या प्रति

॥ सोरठा ॥

ब्रह्मा कहे पुकार, सुनु जननी तैं चित्त दे।
कहत वेद निरुवार, पुरुष एक सो गुप्त है॥ 22 ॥

ब्रह्मा पुकारकर कहते हैं कि हे माता! चित्त लगाकर मेरी बात सुनो। वेद पूर्णतः निर्णय कर कहता है कि केवल एक पुरुष है और वह गुप्त है।

आद्या वचन ब्रह्मा प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै अद्या सुनु ब्रह्मकुमारा। मोसे नहिं कोउ सृष्टा न्यारा॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल बनाई। सात समुन्दर हम निरमाई॥

माता आद्या-अष्टांगी कहती है कि हे पुत्र ब्रह्मा! सुन, मुझसे न्यारा कोई सृष्टि-रचयिता नहीं है। मैंने ही स्वर्ग लोक, मृत्युलोक तथा पाताल लोक बनाए हैं और मैंने ही सात समुद्रों का निर्माण किया है।

ब्रह्मा वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

माना वचन तुमहिं सब कीन्हा। प्रथम गुप्त तुम कस रख लीन्हा॥
जबै वेद मोहि कहै बुझाई। अलख निरंजन पुरुष बताई॥

माता के वचन सुनकर ब्रह्मा ने कहा हे माता! मैंने तुम्हारे कहे वचन को मान लिया कि तुम ही ने सब किया है? अर्थात सृष्टि को उत्पन्न किया है, किंतु तुमने पहले से ही पुरुष को गुप्त कैसे रख लिया? जबकि वेद मुझे कहकर समझाता है और साफ यह बताता है कि एक पुरुष अलख निरंजन है।

॥ चौपाई ॥

अब तुम आप बनो करतारा। प्रथम काहे न किया विचारा॥
जो तुम वेद आप कथि राखा। तो कस अलख निरंजन भाखा॥

ब्रह्मा कहते हैं कि हे माता! अब तुम आप कर्ता बनो तो बनो, किंतु पहले (वेद रचते समय) यह विचार किसलिए नहीं किया? जो तुमने वेद आप कहा-रचा है, तो उसमें गुप्त अलख निरंजन कैसे कहा?

॥ चौपाई ॥

आपे आप आप निरमाई। काहे न कथन कीन तुम माई॥
अब मोसन तुम छल जनि करहू। सांचे सांच सब कहि उच्चरहू॥

जब तुमने अपने-आप को आप बनाया, तो हे माई! तुमने वेद में इसका कथन किसलिए नहीं किया, अर्थात वेद की रचयिता आप हो तो उसमें अपना स्पष्ट कथन क्यों नहीं किया और उसमें पुरुष निरंजन क्यों बताया? अब तुम मेरे से छल न करो और सब सच-सच वर्णन कर बताओ।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

जब ब्रह्मा यहि विधि हठ ठाना। तब अद्या मन कीन्ह तिवाना॥
केहि विधि याहि कहूं समझाई। विधि नहिं मानत मोर बड़ाई॥
जो यहि कहौं निरंजन बाता। केहि विधि समझे यह विख्याता॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि जब ब्रह्मा ने इस प्रकार हठ ठान लिया तो आद्या माता ने अपने मन में विचार किया कि किस प्रकार इसे कहूं, समझाऊं, ब्रह्मा मेरी बड़ाई (महिमा) को नहीं मानता। जो निरंजन से यह बात कहूं, तो किस प्रकार यह ठीक-ठीक समझेगा।

॥ चौपाई ॥

प्रथम कह्यो निरंजन राई। मोर दरश काहू नहि पाई॥

अबै जो यहीं अलख लखावो। केहि विधि कहि ताको दिखलावो॥
अस विचार पुत्र ब्रह्मै समझावा। अलख निरजंन नहिं दरस दिखावा॥

आद्या सोचती है कि निरंजन राव ने मुझे पहले ही कहा है कि मेरा दर्शन कोई नहीं पाएगा। अब जो यहां ब्रह्मा को अलख-निरंजन के बारे में कुछ नहीं बताया, तो किस प्रकार उसे कहकर दिखलाया जाए? ऐसा विचार कर उसने पुत्र ब्रह्मा को समझाया कि अलख-निरंजन अपना दर्शन (स्वरूप) नहीं दिखाता।

ब्रह्मा वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा कहे मोहि ठौर बतावो। आगा पीछा जनि तुम लावो॥
मैं नहिं मानौ तुम्हरी बाता। ऐसी बात न मोहि सुहाता॥

आद्या की बात सुनकर ब्रह्मा कहते हैं कि मुझे सही राह अथवा स्थान बताओ। आगे-पीछे की उलटी-सीधी बात तुम मेरे सामने मत लाओ। मैं तुम्हारी इस प्रकार की बात नहीं मानता, ऐसी बात मुझे नहीं सुहाती (अच्छी नहीं लगती)।

॥ चौपाई ॥

प्रथम तुम मुहिं दीन भुलावा। अब तुम कहो न दरस दिखावा॥
तासु दरस न पैहो पूता। ऐसी बात कहो अजगूता॥

पहले तो तुमने मुझे भुलावा दिया कि मैं ही सृष्टि का कर्ता हूं और मुझसे न्यारा कुछ नहीं है और अब तुम कहती हो कि अलख-निरंजन तो है किंतु वह अपना दर्श नहीं दिखाता। उसका दर्शन पुत्र नहीं पाएगा, ऐसी न पैदा होने वाली बात क्यों कहती हो?

॥ छंद ॥

दरस दिखाय तत्काल दीजै, मोहि न भरोस तुम्हार हो।
संशय निवार यहि काल दीजै, कीजे न विलंब लगार हो॥

आद्या वचन ब्रह्मा प्रति

कह जननी सुनो ब्रह्मा, कहों तोसों सत्त ही।
सात स्वर्ग है माथ ताको, चरण पताल सप्त ही॥ 22॥

ब्रह्मा कहते हैं कि हे माता! मुझे तुम्हारे कहने पर भरोसा नहीं है। इसी समय उस कर्ता अलख-निरंजन का दर्शन दिखा दीजिए। इसी समय मेरे संशय को निवार दीजिए, इसमें तनिक भी देर मत करो।

माता आद्या कहती है कि हे पुत्र ब्रह्मा! सुनो, मैं तुझसे सत्य ही कहती हूं कि उस अलख-निरंजन का सात स्वर्ग माथा है और सात पाताल चरण है।

॥ सोरठा ॥

लेहु पुष्प तुम हाथ, जो इच्छा तेहि दरस की।
जाय नवाओ माथ, सुनि ब्रह्मा हरषित भये॥ 23 ॥

जो तुम्हें उसके दर्शन की इच्छा है, तो तुम हाथों में फूल लेकर जाओ और जाकर उसको फूल चढ़ाओ तथा माथा झुकाओ। माता की यह बात सुनकर ब्रह्मा बहुत प्रसन्न हुए।

॥ चौपाई ॥

जननी गुन्यो वचन चित माहीं। मोरि कहौ यह मानति नाहिं॥
या कहं वेद दीन्ह उपदेशा। पै दरस ते नहिं पावै भेसा॥

आद्या माता ने अपने चित्त में विचार किया कि यह ब्रह्मा मेरा कहा मानता नहीं है। यह कहता है कि वेद ने मुझे उपदेश दिया है कि एक पुरुष निरंजन है, परंतु कोई उसके दर्शन नहीं पाता।

॥ चौपाई ॥

कह अष्टंगि सुनो रे वारा। अलख निरंजन पिता तुम्हारा॥
तासु दरश नहिं पैहे पूता। यह मैं वचन कहौं निज गूता॥

तब अंततः आद्या अष्टांगी माता ने ब्रह्मा से कहा कि रे बालक! सुन, अलख निरंजन तुम्हारा पिता है। परंतु तुम पुत्र! उसके दर्शन नहीं पा सकते, यह मैं तुम्हें अपने सत्य एवं आश्चर्यजनक वचन कहती हूं।

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा सुनि व्याकुल ह्वै धावा। परसन सीस ध्यान हिय लावा॥
ब्रह्मा चले जननि सिर नाई। शीस परसि आवौं तुहि ठांई॥
तुरतहि ब्रह्मा दीन्ह रिंगायी। उत्तर दिशा बेगि चलि जायी॥

अष्टांगी माता की बात सुनकर ब्रह्मा जी व्याकुल हो गए और दौड़कर माता के चरणों में अपना सिर रख दिया और हृदय से ध्यान-स्तुति करने लगे। ब्रह्मा जी माता को सिर झुकाकर यह कहकर चले कि मैं पिता का शीश स्पर्श एवं दर्शन करके तुम्हारे पास वापिस आता हूं।

माता अष्टांगी ने शीघ्र ही ब्रह्मा को उसके पिता निरंजन के दर्शनार्थ भेज दिया और ब्रह्मा शीघ्र उत्तर दिशा की ओर चले गए।

॥ चौपाई ॥

आज्ञा मांगि विष्णु चले बाला। पिता दरस को चले पताला॥
इत उत चितय महेश न डोला। सेवा करत कछू नहिं बोला॥

माता से आज्ञा मांगकर उनके लड़के विष्णु भी चले, वे पिता निरंजन के

दर्शनार्थ पाताल चले गए। केवल इधर-उधर महेश का चित्त नहीं डोला और वह माता की सेवा करते हुए कुछ नहीं बोला।

॥ चौपाई ॥

तेहि सिव मन अस चिंत अभावा। सेवा करन जननि चित लावा॥
यहि विधि बहुत दिवस चलि गयऊ। माता सोच पुत्र कह कियऊ॥

उस शिव ने माता की सेवा करने में ही अपना चित्त लगाया और वहां सेवा करते-करते उसके मन में ऐसी-वैसी कोई चिंता नहीं थी।

इस प्रकार बहुत दिन चले गए, अर्थात बीत गए। माता सोचती है कि मेरे गए हुए पुत्रों ब्रह्मा-विष्णु ने क्या किया? और वे लौटकर अब तक क्यों नहीं आए?

विष्णु का पिता की खोज से लौटकर पिता के चरण तक न पहुंचने का वृत्तांत कहना

॥ चौपाई ॥

प्रथम विष्णु जननी ढिग आये। अपनी कथा कहि समुझाये।
भेटयो नहिं मोहि पगु ताता। विष ज्वाला स्यामल भौ गाता॥

सबसे पहले विष्णु माता के पास आए और उसने अपनी जाने की सब कथा कहकर समझाई। मुझे पिता के चरण नहीं मिले, उल्टे मेरा शरीर विष ज्वाला से श्याम हो गया।

॥ चौपाई ॥

व्याकुल भयउ तबै फिर आवा। पिता पगु दरश मैं नहिं पावा॥
सुनि हरषित भइ आदि कुमारी। लीन्ह विष्णु कहं निकट दुलारी॥
चूमेउ बदन सीस दिये हाथा। सत्य सत्य बोलेउ सुत बाता॥

हे माता! मैं पिता निरंजन के दर्शन नहीं पाया, तब मैं व्याकुल हो गया फिर लौट आया। विष्णु की बात सुनकर आदि कुमारी अष्टांगी प्रसन्न हो गई और उसने विष्णु को अपने पास बैठाकर दुलार (प्यार) किया। उसने विष्णु के बदन को चूमा तथा उसके सिर पर हाथ रखा और कहा कि हे पुत्र! तुमने सत्य-सत्य सब बात बोली हैं (इसलिए तुम बहुत प्यारे एवं श्रेष्ठ हो)।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे धरमनि यह संशय बीती। साहब कहहु ब्रह्म की रीति॥
पिता सीस तिन परसन कीन्हा। कि होय निरास पीछे पग दीन्हा॥

धर्मदास ने विनम्रतापूर्वक सद्‌गुरु कबीर साहेब से कहा कि मेरा यह संशय मिटाओ। हे साहेब! ब्रह्मा की रीति, अर्थात उपाय को मुझे कहिए। क्या ब्रह्मा ने

अपना शीश झुकाकर सेवा–भक्ति से अपने पिता अलख–निरंजन को प्रसन्न किया, या कि निराश होकर पीछे पांव हटाकर लौट आए (वह अपने पिता का दर्शन पाए कि नहीं) ?

॥ छंद ॥

गयउ ब्रह्मा सीस परसन, कथा ता दिन की कहो।
भयो द्रिष्टि में राव कि नहिं, तासु दरसन तिन लहो॥
यह बरनि सब कहो सतगुरु, एक एक विलोय के।
निज दास जानि प्रकास कीजे, धरहु निज जनि गोयके॥ 23॥

धर्मदास जी कहते हैं कि हे साहेब! ब्रह्मा जी पिता का शीश स्पर्श करने एवं उनका दर्शन पाने गए, उस दिन की कथा कहो। उनकी दृष्टि में निराकार निरंजन हुए या कि नहीं, अर्थात उसके दर्शन वे पाए कि नहीं? हे सद्गुरु! एक–एक बात का निर्णय कर यह वर्णन सब कहो। मुझे अपना दास जानकर मुझे सब समझाइए, मुझसे कुछ भी छिपाकर न रखो।

॥ सोरठा ॥

प्रभु हम हैं तुव दास, जन्म कृतारथ मोरि करि।
करहु वचन परकास, तेहि पीछे जो चरित भौ॥ 24॥

धर्मदास कहते हैं कि हे प्रभु! मैं तो तुम्हारा दास हूं, तुम्हारी शरण में हूं। मेरा जन्म कृतार्थ (सफल) कीजिए। अपने अमृत वचनों से मेरे जीवन में ज्ञान–प्रकाश करो और पिता दर्शनार्थ गए ब्रह्मा के पीछे जो घटित हुआ, उसे कहिए।

पिता की खोज में गए ब्रह्मा की कथा
सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धरमदास मुहिं अतिप्रिय अहहू। कहौ संदेश परखि दृढ़ गहहू॥
चलत ब्रह्म तब वार न लावा। पिता दरस कहं अति मन भावा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम मुझे बहुत प्रिय हो, अब मैं तुम्हें ब्रह्मा का सब संदेश–समाचार कहता हूं, उसे सोच–समझकर ग्रहण करो। मां अष्टांगी के पास से चलकर तब ब्रह्मा ने वार नहीं लगाई, पिता निरंजन के दर्शन को उसका मन अत्यंत उत्सुक हुआ था।

॥ चौपाई ॥

तेहि स्थान पहुंचिगे जाई। नहिं तहं रवि शशि शून्य रहाई॥
बहु विधि अस्तुति करे बनायी। ज्योति प्रभाव ध्यान तहं लायी॥

चलते–चलते ब्रह्मा उस स्थान पर पहुंच गए, न वहां सूर्य था न चन्द्रमा, केवल

शून्य (एकांत) था। वहां उसने बहुत प्रकार पिता निरंजन की स्तुति (भक्ति-साधना) की, जहां ज्योति का प्रभाव होता है, वहां उसने निश्चल ध्यान लगाया।

॥ चौपाई ॥

ऐसे बहुत दिन गये बितायी। नहिं पायो ब्रह्म दरश पितायी॥
शून्य ध्यान युग चार गमावा। पिता दरस अजहुं नहिं पावा॥

इस प्रकार ऐसे स्तुति- ध्यान करते हुए बहुत दिन बीत गए, किंतु ब्रह्मा ने पिता के दर्शन नहीं पाए। उस शून्य-एकांत में उसे ध्यान करते हुए चार युग बीत गए, परंतु पिता के दर्शन फिर भी नहीं पाए।

ब्रह्मा के लिए आद्या की चिंता

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा तात दरस नहिं पाई। शून्य ध्यान महं जुग बहु जाई॥
माता चिंता करत मन मांहा। जेठ पुत्र ब्रह्मा रहु कांहा॥
किहि विधि रचना रचहुं बनाई। ब्रह्मा आवै कौन उपाई॥

ब्रह्मा ने पिता का दर्शन नहीं पाया। शून्य ध्यान में यूं ही बहुत युग चले गए। माता आद्या अष्टांगी मन में बहुत चिंता करती है कि मेरा ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा कहां रह गया? किस प्रकार सृष्टि की रचना करूं? और कौन उपाय किया जाए कि ब्रह्मा आए?

गायत्री उत्पत्ति

॥ चौपाई ॥

उबटि शरीर मैल गहि काढ़ी। पुत्री रूप कीन्ह रचि ठाढ़ी॥
शक्ति अंश निज ताहि मिलावा। नाम गायत्री ताहि धरावा॥
गायत्री मातहि सिर नावा। चरण चूमि निज सीस चढ़ावा॥

तब आद्या माता ने अपने शरीर में उबटन लगाकर मैल निकाला और उस मैल से एक पुत्री-रूपी कन्या की रचना की। उस कन्या में उसने अपनी दिव्य-शक्ति का अंश मिलाया, इस कन्या का नाम गायत्री रखा। गायत्री ने माता को सिर नवाकर प्रणाम किया तथा उनके चरण चूमकर सादर अपने सिर पर चढ़ाए।

गायत्री वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

गायत्री विनवै कर जोरी। सुनु जननी यक विनती मोरी॥
कौन काज मो कहं निरमाई। कहो वचन लेउं सीस चढ़ाई॥

गायत्री हाथ जोड़कर विनती करती है कि हे माता! मेरी एक विनती सुन। तुमने मुझे किस काम के लिए बनाया है? आज्ञा कीजिए। वह वचन मुझे कहो, मैं शीश चढ़ाकर तुम्हारा कार्य पूरा करूं।

आद्या वचन गायत्री प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे आद्या पुत्री सुनु बाता। ब्रह्मा आहि जेठहि तुव भ्राता॥
पिता दरस कहं गयो अकाशा। आनौ ताहि वचन प्रकाशा॥

माता आद्या ने कहा कि हे पुत्री! मेरी बात सुन, ब्रह्मा तुम्हारा ज्येष्ठ (बड़ा) भाई है। वह पिता के दर्शन को आकाश (शून्य) की ओर गया है, उसे बुलाकर लाओ।

॥ चौपाई ॥

दरस तात कर वह नहिं पावे। खोजत खोजत जनम गंवावे॥
जौने विधि ते इहवां आई। करो जाय तुम तौन उपाई॥

वह अपने पिता के दर्शन नहीं कर पाएगा, चाहे खोजते-खोजते अपना सारा जन्म गंवा दे। जिस विधि से वह यहां आए, तुम जाकर वही उपाय करो, अर्थात येन-केन-प्रकारेण उसे मेरे पास ले आओ।

गायत्री का ब्रह्मा की खोज में जाना
सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चलि गायत्री मारग आई। जननी वचन प्रीति चितलाई॥
चलत भई मारग सुकुमारी। जननी वचन ध्यान उर धारी॥

गायत्री ने माता आद्या की आज्ञा के वचनों में प्रीतपूर्वक चित्त लगाया तथा ध्यान से अपने हृदय में धारण किया। वह सुकुमारी ब्रह्मा की खोज में चल दी और मार्ग चलकर वहां आई, जहां ब्रह्मा थे।

॥ छंद ॥

जाय देखो चतुरमुख कहं, नाहिं पलक उघारई।
कछुक दिन सो रही तहवां, बहुरि युक्ति विचारई॥
कौन विधि यह जागि है, अब करौं कौन उपाय हो।
मन गुनित सोच बहुत विधि, ध्यान जननी लाय हो॥ 24॥

गायत्री ने वहां जाकर ब्रह्मा को देखा कि ब्रह्मा ध्यान में लीन अपनी आंखों की पलक नहीं उघारते। कुछ दिन वह वहां रही और बहुत युक्ति विचारती रही। अब कौन उपाय हो, किस विधि से ब्रह्मा ध्यान से जागेंगे-उठेंगे? बहुत उपाय मन से मनन करती हुई, सोचती रही, (किंतु जब कोई उपाय न सूझा) अंततः उसने माता आद्या का ध्यान किया।

ब्रह्मा को ध्यान से जगाने के लिए आद्या का गायत्री को युक्ति बताना

॥ सोरठा ॥

अद्या आयसु पाइ, गायत्री तब ध्यान महं।
निज कर परसेउ जाय, ब्रह्मा तबहीं जागिहैं॥ 25॥

तब गायत्री ने अपने ध्यान में आद्या माता की आज्ञा पाई कि जाकर अपने हाथों से ब्रह्मा को स्पर्श करो, तब ही ब्रह्मा ध्यान से जागेंगे।

॥ चौपाई ॥

गायत्री पुनि कीन्हीं तैसी। माता जुगति बताई जैसी॥
गायत्री तब चित्त लगाई। चरण कमल कहं परसेउ जाई॥

गायत्री ने फिर वैसा ही किया, जैसी आद्या माता ने युक्ति बताई। गायत्री ने तब चित्त लगाया और ब्रह्मा के चरण-कमलों को जाकर छुआ।

ब्रह्मा का ध्यान से जागकर गायत्री पर क्रोध करना

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा जाग ध्यान मन डोला। व्याकुल भयो वचन तब बोला॥
कवन अहै पापिन अपराधी। काह छुड़ायहु मोरि समाधी॥
शाप देहुं तो कहं मैं जानी। पिता ध्यान मम खण्डयो आनी॥

ब्रह्मा ध्यान से जाग गया, उसका मन डोल गया। तब वह व्याकुल होकर वचन बोला कि तू ऐसा कौन अपराधी है, मेरी ध्यान-समाधि किसलिए छुड़ाई है? मैं तुझे पापी एवं अपराधी जानकर शाप देता हूं, क्योंकि तूने आकर पिता के दर्शन का मेरा सतत ध्यान खण्डित कर दिया है।

गायत्री वचन ब्रह्मा प्रति

॥ चौपाई ॥

कहि गायत्री मोहि न पापा। बूझि लेहु तब देहहु शापा॥
कहौं तोहि सो सांची बाता। तोहि लेन पठयी तुव माता॥
चलहु वेगि जनि लावहु बारे। तुम बिन रचना को विस्तारे॥

ब्रह्मा की शोकपूर्ण बात सुनकर गायत्री ने कहा कि मुझसे कोई पाप नहीं हुआ है। पहले तुम सब बात भली प्रकार समझ-बूझ लो, तब उचित जान पड़े तो शाप दो। मैं तुमसे सच्ची बात कहती हूं कि तुम्हें लेने, अर्थात वापिस बुलाने के लिए तुम्हारी माता ने मुझे भेजा है। शीघ्र चलो, देर मत लगाओ, तुम्हारे बिना सृष्टि रचना का कौन विस्तार करे?

ब्रह्मा वचन गायत्री प्रति

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा कहे कौन विधि जाऊं। पिता दरश अजहुं नहिं पाऊं॥

ब्रह्मा गायत्री से कहते हैं कि मैं माता के पास किस प्रकार जाऊं? पिता के दर्शन मैं आज तक नहीं पाया हूं।

गायत्री वचन ब्रह्मा प्रति

चौपाई

गायत्री कह दरश न पैहो। वेगि चलहु नहिं तो पछतैहो॥

गायत्री ने कहा कि तुम पिता का दर्शन नहीं पाओगे, इसलिए हठ छोड़ शीघ्र चलो, अन्यथा पछताओगे।

ब्रह्मा का गायत्री को साक्षी देने को कहना

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा कहै देहु तुम साखी। परस्यो सीस देख मैं आंखी॥
ऐसे कहो मातु समुझायी। सो तुम्हरे संग हम चलि जायी॥

ब्रह्मा ने गायत्री से कहा कि तुम झूठी साक्षी (गवाही) दो कि मैंने अपनी आंखों से देखा है—पिता निरंजन प्रकट हुए और ब्रह्मा ने सादर उनका शीश स्पर्श किया। यदि तुम माता से इस प्रकार समझाकर कहो, तो मैं तुम्हारे साथ चल सकता हूं।

गायत्री वचन ब्रह्मा प्रति

॥ चौपाई ॥

कह गायत्री सुनु श्रुति धारी। हम नहिं मिथ्या वचन उचारी॥
जो मम स्वारथ पुरवहु भाई। तो हम मिथ्या कहब बनायी॥

गायत्री ने कहा कि हे वेद सुनने एवं धारण करने वाले ब्रह्मा! सुन, मैं झूठ वचन नहीं बोलूंगी। हां, यदि हे भाई! तुम मेरा स्वार्थ पूरा करो तो मैं इस प्रकार की बात बताकर झूठ कह दूंगी।

ब्रह्मा वचन गायत्री प्रति

॥ चौपाई ॥

कह ब्रह्मा नहिं लखी कहानी। कहौ बुझाय प्रगट की बानी॥

ब्रह्मा ने कहा कि मैं तुम्हारे स्वार्थ की कहानी को समझा नहीं, इसलिए अपनी वाणी प्रकट कर मुझसे समझाकर स्पष्ट कहो।

गायत्री वचन ब्रह्मा प्रति

॥ चौपाई ॥

कह गायत्री देहु रति मोही। तौ कहि झूठ जिताऊं तोही॥

गायत्री ने ब्रह्मा से कहा कि तुम मुझे रतिदान दो, तो मैं माता के सामने झूठ कहकर तुम्हें जितवा दूं।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

गायत्री कहै है यह स्वारथ। जानि कहौं मैं पुनि परमारथ॥
सुनि ब्रह्मा चित करे विचारा। अब का जतन करहूं इहि बारा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि गायत्री कहती है, ''यह मेरा स्वार्थ है। फिर भी तुम्हारे लिए परमार्थ जानकर मैं यह कहती हूं।'' गायत्री की बात सुनकर ब्रह्मा अपने चित्त में विचार करते हैं कि इस समय अब मैं क्या यत्न करूं?

॥ छंद ॥

जो विमुख या कह करौं, अब तो नहीं बनि आवई।
साखी तो यह देय नाहीं, जननी मोहि लजावई॥
यहां नाहिं पिता पायो, भयो न एको काज हो।
पाप सोचत नहिं बने, अब करौं रति विधि साज हो॥ 25॥

ब्रह्मा मन में विचार करते हैं कि यदि मैं गायत्री को विमुख करता हूं, अर्थात इसकी रतिदान की बात नहीं मानता हूं, तो फिर अब मेरी बात नहीं बनती है। इसे मना करने पर यह साक्षी (गवाही) नहीं देगी और माता भी मुझे लजाएगी (धिक्कारेगी)। यहां मैंने न तो पिता के दर्शन पाए और न कोई एक भी कार्य सिद्ध हुआ। यदि मैं इसकी बात को पाप सोचता हूं तो मेरा काम नहीं बनता है, इसलिए अब इसे रतिदान देने का उपाय होना चाहिए अर्थात गायत्री को रतिदान देने का निश्चय किया।

॥ सोरठा ॥

कियो भोग रति रंग, बिसर्‌यो सो मन दरश को।
दोउ कहं बढ़यो उमंग, छल मति बुद्धि प्रकाश किये॥ 26॥

फिर ब्रह्मा और गायत्री ने मिलकर विषय भोग किया, उन दोनों पर रति-सुख का रंग चढ़ गया और ब्रह्मा के मन में जो पिता के दर्शन की चाह थी वह बिसर गई। दोनों की काम-विषय की प्रबल उमंग हृदय में बढ़ गई, फिर दोनों ने अपनी छलपूर्ण बुद्धि बनाई।

सावित्री उत्पत्ति की कथा

॥ चौपाई ॥

कह ब्रह्मा चलु जननी पासा। तब गायत्री वचन प्रकाशा॥
औरों करो युक्ति इक ठानी। दूसरि साखि लेहु उत्पानी॥

फिर ब्रह्मा ने गायत्री से कहा कि अब माता अष्टांगी के पास चलें, तब गायत्री ने कहा कि एक और युक्ति करो जो मैंने ठान ली है। वह युक्ति है कि एक दूसरी साक्षी और उत्पन्न कर लो।

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा कहे भली है बाता। करहु सोइ जिहि मानै माता॥
तब गायत्री यतन विचारा। देह मैल गहि कीन्ह नियारा॥

गायत्री की युक्ति वाली बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि बहुत अच्छी बात है, तुम वही करो जो माता माने, अर्थात उस पर विश्वास कर ले। तब गायत्री ने दूसरी साक्षी उत्पन्न करने के उपाय पर विचार किया। इसके लिए उसने अपनी देह से मैल निकालकर अलग कर लिया।

॥ चौपाई ॥

कन्या रचि निज अंश मिलावा। नाम सावित्री[1] तासु धरावा॥
गायत्री तेहि कहि समुझावा। कहियो दरश ब्रह्म पितु पावा॥

उस मैल में अपना शक्ति-अंश मिलाया और उससे गायत्री ने एक कन्या रच दी। ब्रह्म ने उस कन्या का नाम सावित्री रखवाया। फिर गायत्री ने उस सावित्री कन्या से कहकर समझाया कि तुम भी हमारे साथ चलकर माता आद्या से कहना कि ब्रह्मा ने पिता का दर्शन पाया है।

॥ चौपाई ॥

कह सावित्री हम नहिं जानी। झूठ साखि दे आपनि हानी॥
यह सुनि दोउ कहं चिन्ता व्यापा। यह तो भयो कठिन संतापा॥

गायत्री की बात सुनकर सावित्री ने कहा कि जो तुम कह रही हो उसे मैं नहीं जानती और झूठी साक्षी (गवाही) देने से तो अपनी हानि है। यह सुनकर तथा सोचकर उन दोनों को चिंता हो गई कि यह तो बहुत बड़ा दुख हुआ।

॥ चौपाई ॥

गायत्री बहु विधि समुझाई। सावित्री के मन नहिं आई॥
पुनि गायत्री कहा बुझाई। तब सावित्री वचन सुनाई॥

गायत्री ने बहुत प्रकार से समझाया, परंतु सावित्री के मन में वह झूठ बात

---

1. सावित्री का ही दूसरा नाम पुहुपावती है।

बोलने की नहीं आई। फिर गायत्री ने उसे समझाकर कहा, तब सावित्री ने अपने मन का वचन-विचार उसे सुनाया।

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा कर मोसों रति साजा। तौ मैं झूठ कहौं यहि काजा॥
गायत्री ब्रह्महि समुझावा। दै रति या कहं काज बनावा॥

ब्रह्मा मुझसे रति-प्रसंग करे, यही मेरा काम है, यदि स्वीकार करे तो मैं ब्रह्मा के लिए झूठ बोलूं। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया कि सावित्री को रतिदान देकर अपना काम बनाओ।

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा रति सावित्रिहि दीन्हा। पाप मोट आपन सिर लीन्हा॥
सावित्री कर दूसर नाऊं। कहि पुहुपावति वचन सुनाऊं॥
तीनों मिलिके चलिभे तहंवा। कन्या आदि कुमारी जहवां॥

गायत्री के समझाने पर ब्रह्मा ने सावित्री को रतिदान दिया और बहुत भारी पाप अपने सिर पर लिया। सावित्री का दूसरा नाम बदल कर, उसे पुहुपावती कह कर उसकी बात सुनाते हैं। वे तीनों मिलकर वहां गए, जहां कन्या आदि कुमारी, अर्थात उनकी माता अष्टांगी थी।

ब्रह्मा का गायत्री और सावित्री के साथ माता के पास पहुंचना तथा सबको माता का शाप पाना

॥ चौपाई ॥

करि प्रणाम सन्मुख रहे जाई। माता सब पूछी कुशलाई॥

ब्रह्मा, गायत्री एवं सावित्री ने माता अष्टांगी के सामने जाकर प्रणाम किया, तब माता ने उनसे सब कुशल-क्षेम पूछा।

आद्या वचन ब्रह्मा प्रति

॥ चौपाई ॥

कहु ब्रह्मा पितु दरशन पाये। दूसरि नारि कहां से लाये॥

माता आद्या-अष्टांगी कहती हैं कि हे ब्रह्मा! कहिए, क्या तुम अपने पिता के दर्शन पाए और यह दूसरी स्त्री कहां से लाए?

ब्रह्मा वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

कह ब्रह्मा दोऊ हैं साखी। परस्यो सीस देखि इन आंखी॥

ब्रह्मा ने आद्या माता से कहा कि ये दोनों साक्षी हैं। मैंने पिता का दर्शन पा

लिया है। इन दोनों साक्षियों (गवाहों) की आंखों के सामने मैंने उनका शीश स्पर्श किया है।

आद्या वचन गायत्री प्रति

॥ चौपाई ॥

तब माता बूझे अनुसारी। कहु गायत्री वचन विचारी॥
तुम देखा इन दर्शन पावा। कहो सत्य दर्शन परभावा॥

तब माता ने सही ढंग से पूछा कि हे गायत्री! सही विचार कर कहो। क्या तुमने अपनी आंखों से देखा कि ब्रह्मा ने पिता का दर्शन पाया और सत्य बताओ कि पिता के दर्शन से इस पर क्या प्रभाव पड़ा?

गायत्री वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

तब गायत्री वचन सुनावा। ब्रह्मा दरश सीस पितु पावा॥
मैं देखा इन परसेउ शीशा। ब्रह्महि मिले देव जगदीशा॥

तब गायत्री ने माता आद्या से कहा कि ब्रह्मा ने पिता के शीश का दर्शन पाया है। मैंने अपनी आंखों से देखा कि ब्रह्मा ने उनके शीश को सादर स्पर्श किया। सत्य ही ब्रह्मा जगतपति अपने पिता निरंजन देव से मिले।

॥ छंद ॥

लेइ पुहुप परसेउ शीश पितु, इन दृष्टि मैं देखत रही।
जल ढार पुहुप चढाय दीन्ह, हे जननि यह है सही॥
पुहुप ते पुहुपावती भयी, प्रगट ताहि ठामते।
इनहु दर्शन लह्यो पितु को, पूछहू यहि वाम ते॥ 26॥

गायत्री कहती है कि ब्रह्मा ने फूल लेकर पिता के शीश को स्पर्श किया। मैं अपनी इन आंखों से सब देखती रही। हे माता! यह सब सत्य है कि ब्रह्मा ने जल ढार कर फूल चढ़ाए। फूल से ही यह पुहुपावती उस स्थान पर प्रकट हुई। इसने भी पिता का दर्शन पा लिया है, इस स्त्री से पूछिए।

॥ छंद ॥

हे जननी यह है सही, तुम पूछि लो पुहुपावती।
सबही सांच मैं तोसों कहूं, नहिं झूठ है एको रती॥

आद्या वचन पुहुपावती प्रति

माता कह पुहुपावती सों, कहो सत्यहि मो सना॥
जो चढ़े सीसहि पिता के, तुम वचन बोलहु तत खना॥ 27॥

गायत्री कहती है कि हे माता! यह जो मैंने कहा है सही है, तुम इस पुहुपावती स्त्री से पूछ लो। मैंने तुम्हें सब ही सत्य कहा है, इसमें एक रत्ती भी झूठ नहीं है।

आद्या माता पुहुपावती से कहती हैं कि मुझसे सत्य कहो। इसी क्षण तुम मुझे बोल कर बताओ, जो ब्रह्मा ने पिता के शीश पर चढ़ाया।

॥ सोरठा ॥

कहु पुहुपावती मोहि, दरश कथा निरवार के।
यह मैं पूछौं तोहि, किमि ब्रह्मा दरशन किये॥ 27॥

आद्या माता कहती हैं कि हे पुहुपावती! मैं तुझसे पूछती हूं कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किस प्रकार किए? पिता के दर्शन की कथा का वर्णन मुझे सत्य-सत्य कहो।

पुहुपावती वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

सावित्री अस वचन उचारी। मानो निश्चय बात हमारी॥
दर्शन सीस लह्यो चतुरानन। चढ़े सीस यह धर निश्चय मन॥

सावित्री (पुहुपावती) ने ऐसा वचन-उच्चारण कर कहा कि हे माता! तुम मेरी बात निश्चयपूर्वक मानो। चतुर्मुख-ब्रह्मा ने पिता के शीश के दर्शन पाए और शांत-स्थिर मन से पिता के शीश पर जल एवं फूल चढ़ाए।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

साखि सुनत अद्या अकुलानी। भा अचरज यह मर्म न जानी॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि साक्षी (गवाही) को सुनते ही माता आद्या व्याकुल हो गई। इस पर उसे आश्चर्य हुआ तथा इस छलपूर्ण रहस्य को वह न समझी।

आद्या की चिंता

॥ चौपाई ॥

अलख निरंजन अस प्रण भाखी। मो कहं कोउ न देखै आंखी॥
ये तीनहुं कस कहहिं लबारी। अलख निरंजन कहहु सम्हारी॥
ध्यान कीन्ह अष्टंगी तिहि क्षण। ध्यान मांहि अस कह्यो निरंजन॥

आद्या-अष्टांगी मन में चिंता करती हुई कहती है कि अलख निरंजन ने तो ऐसा प्रण कर कहा था कि कोई मुझे आंखों से नहीं देख पाएगा। परंतु ये तीनों

लबारी कैसे कहते हैं कि पिता-निरंजन का दर्शन पाया है। हे अलख निरंजन! अब तुम ही इस स्थिति को संभालो। उसी क्षण अष्टांगी ने ध्यान किया और ध्यान में निरंजन से ऐसा कहा कि मुझे सत्य बताओ।

निरंजन वचन अष्टांगी प्रति

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा मोर दरश नहिं पाया। झूठि साखि इन आन दिवाया॥
तीनों मिथ्या कहा बनाई। जनि मानहु यह है लबराई॥

निरंजन ने अष्टांगी के ध्यान में कहा कि ब्रह्मा ने मेरा दर्शन नहीं पाया। इसने तुम्हारे पास आकर झूठी साक्षी दिलवाई है। ब्रह्मा, गायत्री और पुहुपावती इन तीनों ने झूठ बनाकर सब कहा है। इनकी बात मत मानो, यह सब झूठ है।

आद्या का ब्रह्मा को शाप देना

॥ चौपाई ॥

यह सुनि माता कीन्हों दापा। ब्रह्मा कहं तब दीन्हों शापा॥
पूजा तोरि करै कोई नाहीं। जो मिथ्या बोलेउ मम पाहीं॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि आद्या ने ध्यान करते हुए निरंजन की सत्य बात सुनकर बहुत क्रोध किया और तब उसने ब्रह्मा को शाप दिया। उसने कहा कि हे ब्रह्मा! तुम्हारी पूजा कोई नहीं करेगा, क्योंकि मेरे पास आकर तुम झूठ बोले हो।

॥ चौपाई ॥

इक मिथ्या अरु अकरम कीन्हा। पाप मोट अपने सिर लीन्हा॥
आगे ह्वै जो शाख तुम्हारी। मिथ्या पाप करहिं बहु भारी॥

एक तो तुम झूठ बोले और न करने योग्य (व्यभिचार) दुष्कर्म किया, इससे तुमने अपने सिर पर भारी पाप ले लिया है। आगे जो तुम्हारी शाखा-संतति होगी, वह बहुत झूठ एवं पाप करेगी।

॥ चौपाई ॥

प्रगट करहिं बहु नेम अचारा। अंतर मैल पाप विस्तारा॥
विष्णु भक्तों सों करहि हंकारा। ताते परिहैं नरक मंझारा॥

तुम्हारी संतति (ब्रह्मा के वंशधर अथवा ब्रह्मा के नाम पर कहे जाने वाले ब्राह्मण) प्रकट में, अर्थात बाहर से दिखावे में तो बहुत नियम-धर्म, व्रत, उपवास, पूजा एवं शुचि आदि करेंगी, परंतु उनके भीतर मन में विषयादि पाप-मैल का विस्तार (फैलाव) रहेगा। वे तुम्हारी संतानें विष्णु-भक्तों से अहंकार करेंगी, इससे नरक में पड़ेंगी।

॥ चौपाई ॥

कथा पुराण औरहिं समुझैहैं। चाल बिहून आप दुख पैहैं॥
उनसे और सुने जो ज्ञाना। करि सो भक्ति कहैं परमाना॥

(हे ब्रह्मा! तुम्हारे वंशधर) पुराणों की धर्म-कथाओं को औरों को समझाएंगे, परंतु स्वयं उसका आचरण न कर आप दुख पाएंगे। उनसे जो और लोग ज्ञानवार्ता सुनेंगे, उस अनुसार वे भक्ति कर उसे प्रामाणिक कहेंगे।

॥ चौपाई ॥

और देव को अंश लखै हैं। औरन निन्दि काल मुख जैहैं॥
देवन पूजा बहु विधि लैहैं। दछिना कारण गला कटैहैं॥

परमात्म-ज्ञान एवं भक्ति को छोड़कर दूसरे देवताओं को ईश्वर-अंश बताकर, उनकी पूजा भक्ति लखाएंगे। औरों की, अर्थात आत्मज्ञानी सज्जन पुरुषों की निंदा कर विकराल-काल के मुख में जाएंगे। अनेक देवी-देवताओं की बहुत प्रकार से पूजा करके यजमानों से दक्षिणा लेंगे और दक्षिणा के कारण पशु-बलि में पशुओं का गला कटवाएंगे अथवा दक्षिणा के लोभ में औरों का गला काटेंगे।

॥ चौपाई ॥

जाकहं शिष्य करैं पुनि जाई। परमारथ तिहि नाहिं लखाई॥
परमारथ के निकट न जैहैं। स्वारथ अर्थ सबै समुझैहैं॥

फिर जाकर वे जिसको शिष्य करेंगे, उसे परमार्थ-पथ नहीं लखाएंगे। परमार्थ (उपकार-कल्याण) के तो वे पास नहीं जाएंगे, परंतु अपने स्वार्थ के लिए सबको अपनी बात समझाएंगे।

॥ चौपाई ॥

आप स्वारथी ज्ञान सुनैहैं। आपनि पूजा जगह दृढ़ैहैं॥
आप ऊंच औरहि कहं छोटा। ब्रह्मा तोर शाख होइ खोटा॥

वे आप स्वार्थी होकर सबको अपनी स्वार्थ-सिद्धि का ज्ञान सुनाएंगे और जगत में अपनी सेवा-पूजा दृढ़ (मजबूत) करेंगे। अपने-आपको ऊंचा औरों को छोटा कहेंगे। इस प्रकार हे ब्रह्मा! तेरे वंश एवं वंशज तुम्हारे जैसे ही खोटे, अर्थात झूठे लबारी-रंचक होंगे।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

जब माता अस कीन्ह प्रहारा। ब्रह्मा मूर्छित महि कर धारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! जब आद्या माता ने क्रोध में भरकर शाप का ऐसा प्रहार किया, तो ब्रह्मा मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

आद्या का गायत्री को शाप देना

॥ चौपाई ॥

गायत्री शाप्यो तेहि वारा। होइहैं तोर पंच भरतारा॥
गायत्री तोर होई वृषभ भरतारा। सात पांच औ बहुत पसारा॥

फिर महामाया आद्या माता ने उसी समय गायत्री को शाप दिया कि हे गायत्री! मनुष्य-जन्म में तेरे पांच पति होंगे (इसलिए कि तुम ब्रह्मा के साथ कामवश हुई हो)। हे गायत्री! तेरे गाय के शरीर में सांड (बैल) पति होंगे तथा वे पांच-सात से और भी अधिक होंगे।

॥ चौपाई ॥

धर औतार अखज तुम खायी। कस तुम मिथ्या वचन सुनायी॥
निज स्वारथ तुम मिथ्या भाखी। कहा जानि यह दीन्ही साखी॥

पशु-योनि में तू गाय बनकर जन्मेगी और अभक्ष्य (न खाने योग्य) पदार्थ खाएगी, तुमने झूठे वचन क्यों सुनाए, अर्थात तुमने झूठ क्यों बोला? अपने स्वार्थ के लिए तुमने मुझसे झूठ बोला। क्या समझकर तुमने यह झूठी साक्षी (गवाही) दी है।

॥ चौपाई ॥

मानि शाप गायत्रि लीन्ही। सावित्रिहि तब चितवन कीन्ही॥

स्थिति को समझते हुए गायत्री ने अपनी गलती मानकर आद्या माता का शाप स्वीकार कर लिया। इसके बाद माता आद्या ने सावित्री की ओर दृष्टि की।

आद्या का सावित्री (पुहुपावती) को शाप देना

॥ चौपाई ॥

पुहुपावती निज नाम धरायेहु। मिथ्या कह निज जन्म नशायेहु॥
सुनहु पुहुपावति तुम्हरो विश्वासा। नहिं पूजिहैं तुम्हसे कछु आशा॥

आद्या माता ने सावित्री से कहा कि तुमने अपना सुंदर नाम पुहुपावती रखवा लिया, परंतु झूठ बोलकर अपने जन्म (जीवन) का नाश कर लिया है। हे पुहुपावती सुन! तुम्हारे विश्वास पर, तुमसे कुछ भी आशा रखकर, तुम्हें कोई नहीं पूजेगा।

॥ चौपाई ॥

होय कुगंध ठौर तव बासा। भुगतहु नरक काम गहि आसा॥
जो तोहि सींच लगावे जानी। ताकर होय वंश की हानी॥
अब तुम जाय धरौ अवतारा। क्योडा केतकी नाम तुम्हारा॥

अब दुर्गंध के स्थान पर तुम्हारा वास होगा। काम-विषय की तृष्णा लेकर नरक-यातना भोगो। जान-बूझकर जो तुम्हें सींचकर लगाएगा, उसके वंश की

हानि होगी। अब तुम जाओ वृक्ष बनकर (जड़-योनि में) जन्मो, तुम्हारा नाम केवड़ा-केतकी होगा।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ छंद ॥

भये शापवश तीनों विकल, मतिहीन छीन कुकर्म ते।
यह काल कला प्रचंड कामिनी, डस्यो सब कहं चर्म ते॥
ब्रह्मादि शिव सनकादि नारद, कोउ न बचि भागि हो।
सुनु धरमनि विरला बचिहैं, शब्द सत सो लागि हो॥ 28॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि माता आद्या अष्टांगी के शाप से वशीभूत ब्रह्मा, गायत्री एवं सावित्री तीनों बहुत व्याकुल (दुखी) हो गए, अपने पाप-कुकर्म से वे बुद्धिहीन एवं दुर्बल हो गए। वस्तुतः काम-विषय में प्रवृत्त कराने वाली कामिनी स्त्री काल-रूप काम की अत्यंत तीव्र (भीषण) कला है, इसने सबको अपनी देह के सुंदर चर्म से डसा है।

शिव, ब्रह्मादि, सनकादि एवं नारद मुनि जैसे, कोई भी भागकर इससे बच नहीं पाए। हे धर्मदास! सुन, इससे तो कोई विरला संत-भक्त बच पाता है, जो सद्गुरु के सत्य-शब्दोपदेश का भली-भांति आचरण करता है।

॥ सोरठा ॥

सत्य शब्द परताप, काल कला व्यापै नहीं।
निकट न आवै पाप, मन वच कर्म जो पद गहे॥ 28॥

सद्गुरु के सत्य-शब्दोपदेश के प्रताप से, यह काल रूप काम-कला जीवन में नहीं व्यापती। जो कल्याणेच्छुक भक्त मन-वचन-कर्म से सद्गुरु के श्रीचरणों को ग्रहण करता है (पूर्णतः समर्पित हो जाता है), पाप उसके पास नहीं आता।

शाप देने पर आद्या का पश्चाताप और निरंजन से डरना

॥ छंद ॥

शाप तीनों को दै लियो, मन माहीं तब पछतावई।
कस करहि मोहि निरंजना, पल छमा मोहि न आवई॥

निरंजन का आद्या को शाप

आकाश बानी तबै भयी, यहु काह कीन भवानिया।
उत्पत्ति कारण तोहि पठाई, कहा चरित यह ठानिया॥ 29॥

तीनों को शाप दे चुकने के बाद माता आद्या मन में पछताने लगी। निरंजन से डरती हुई वह सोचती है कि मुझे पल-भर भी क्षमा नहीं आई, अर्थात मेरे हृदय में तनिक भी उनके प्रति क्षमा की बात नहीं आई, अब न जाने निरंजन मेरे साथ कैसे क्या व्यवहार करेगा?

तब उसी समय निरंजन की आकाशवाणी हुई कि हे भवानी! यह तुमने क्या किया? मैंने तो तुम्हें सृष्टि-उत्पत्ति के लिए रख भेजा था, परंतु तुमने सृष्टि-रचना न कर, यह (इन्हें शाप देने जैसा) क्या चरित्र कर डाला?

॥ सोरठा ॥

नीचहि ऊंच सताय, बदल मोहि सो पावई।
द्वापर युग जब आय, तुम्हेंहि पंच भरतार हों॥ 29॥

हे आद्या-भवानी! ऊंचा-बलवान ही नीचे-दुर्बल को सताता है और यह निश्चित है कि इसके बदले में फिर वह मुझसे दुख पाता है। (तुम बड़ी थीं और वे छोटे थे, तुम्हें उनको क्षमा करना चाहिए था, किंतु तुमने तो उनको शाप दे डाला) इसलिए द्वापरयुग जब आएगा, तब तुम्हें भी पांच पति होंगे।

आद्या का निडर होना

॥ चौपाई ॥

शाप ओयल जब सुनेउ भवानी। मन सन गुने कहा नहिं बानी॥
ओयल प्रभाव शाप हम पाया। अब कहा करब निरंजन राया॥
तोरे वस परी हम आई। जस चाहौ तस करौ उताई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! जब आद्या भवानी ने अपने दिए शाप के बदले में निरंजन का शाप सुना, तो उसने मन के साथ उसका सोच-विचार तो किया, पर मुंह से कुछ नहीं बोली। वह सोचती है कि मैंने बदले में शाप पाया, अब हे निरंजन राव! मैं क्या करूं? मैं तो तेरे वश में पड़ी हूं, जैसा चाहो वैसा मेरा उपाय करो जैसा चाहो वैसा मुझसे व्यवहार करो (इससे फिर उसका डर जाता रहा)।

विष्णु का गौर से श्याम होने का कारण

॥ चौपाई ॥

पुनि कहि माता विष्णु दुलारा। सुनहु पुत्र इक वचन हमारा॥
सत्य सत्य तुम कहो बुझाई। पितु पद परसन जब गै भाई॥
प्रथमहु तो तुव गौर शरीरा। कारण कौन श्याम भये धीरा॥

फिर आद्या माता ने विष्णु को दुलारते हुए कहा कि हे पुत्र! तुम मेरी यह एक बात सुनो। तुम मुझे सत्य-सत्य समझाकर बताओ कि हे भाई! जब तुम पिता के चरण स्पर्श करने, अर्थात उनके दर्शनार्थ गए थे, तब क्या हुआ। पहले तुम्हारा शरीर गोरा था, हे धैर्यवान! ऐसा कौन कारण हुआ कि तुम श्याम-रंग हो गए? (वह सब घटना बताओ)।

विष्णु वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

आज्ञा पाय हम तत्काला। पितु पद परसन चले पताला।
अक्षत पुहुप लीन्ह करमाहां। चले पताल पंथ मग जाहां॥

विष्णु ने आद्या माता से कहा कि हे माता! तुम्हारी आज्ञा पाकर मैं उसी समय पिता के चरण स्पर्श करने पाताल लोक की ओर चल दिया। मैंने अपने हाथों में अक्षत एवं पुष्प लिए और उस ओर चला, जहां पाताल की ओर जाने का मार्ग था।

॥ चौपाई ॥

पहुंचि शेषनाग पहं गयऊ। विष के तेज हम अलसयऊ॥
भयो श्याम विष तेज समावा। भइ आवाज अस वचन सुनावा॥

चलते हुए मैं शेषनाग के पास पहुंच गया, वहां उसके विष के तेज से मैं अलसा गया, अर्थात सुस्त-ढीला हो गया। मेरे शरीर में उसके विष का तेज समा गया, जिससे वह श्याम (काला) हो गया। तब एक आवाज हुई और उसने वचन सुनाया कि—

॥ चौपाई ॥

अहो विस्नु माता पहं जाई। बचन सत्य कहियो समझाई॥
सतयुग त्रेता जैहैं जबहीं। द्वापर ह्वै तीसर[1] पद तबही॥
तब तुम होहु कृष्ण अवतारा। लैहो ओयल सो कहों विचारा॥

अरे विष्णु! तुम अपनी माता के पास लौट जाओ, तुम्हें सत्य वचन समझाकर कहा जाता है कि जैसे ही सतयुग एवं त्रेतायुग बीत जाएंगे तब ही तीसरा पद द्वापर युग होगा। तब तुम्हारा कृष्ण-अवतार होगा, उस समय तुम शेषनाग से अपना बदला लोगे, मैंने यह विचार कर कहा है।

॥ चौपाई ॥

नाथहु नाग कलिन्दी जाई। अब तुम जाहु विलंब न लाई॥
ऊंच होइके नीच सतावे। ताकर ओयल मोहि सो पावे॥

(द्वापर युग के कृष्णावतार में) तुम यमुना नदी पर जाकर उसमें रहने वाले शेषनाग को नाथोगे। अब तुम जाओ देर मत लाओ। जो ऊंचा होकर अपने से नीचे वाले को, अर्थात बलवान दुर्बल को सताता है, उसका बदला वह मुझसे पाता है।

॥ चौपाई ॥

जो जिव देइ पीर पुनि काहू। हम पुनि ओयल दिखावै ताहू॥
पहुंचे हम तबही तुव पासा। कीन्हेउ सत्य बचन परकासा॥

---

1. 'तीसर' के स्थान पर यदि 'चौथा' ही रखें, अर्थात 'द्वापर ह्वै चौथा पद तबहीं' का अर्थ तब होगा कि द्वापर युग होकर जब चौथे पद का आरंभ होगा तब ही...।

जो जीव जब दूसरों को दुख देता है, तब हम बदले में उसे दुख दिखाते हैं। हे माता! उस आवाज को सुनकर तब ही मैं तुम्हारे पास पहुंचा हूं और जो भी मैंने किया, वह सब सत्य-सत्य कह दिया है।

॥ चौपाई ॥

भेटउ नाहिं मोहिं पद ताता। विष ज्वाला सांवल भो गाता॥
व्याकुल भयो तबै फिर आयो। पितु पद दर्शन मैं नहिं पायो॥

मुझे पिता के चरण नहीं मिले और शेषनाग की विष ज्वाला से मेरा शरीर भी सांवला हो गया। जब मैंने पिता के श्री चरणों का दर्शन नहीं पाया, तब व्याकुल एवं दुखी होकर आया हूं।

आद्या का विष्णु को ज्योति का दर्शन कराना

॥ चौपाई ॥

इतना सुनि हर्षित भइ माई। लीन्ह विष्णु कहं गोद उठाई॥
पुनि अस कहेउ आदि भवानी। अब सुनहु पुत्र प्रिय मम बानी॥

विष्णु की इतनी सत्य बात सुनकर माता प्रसन्न हो गई, उसने प्यार से विष्णु को गोद में उठा लिया। फिर वह माता आदि भवानी ऐसा कहती है कि हे प्रिय पुत्र! अब तुम मेरी बात सुनो।

॥ चौपाई ॥

देख पुत्र तोहि पिता भिटावों। तोरे मन कर धोख मिटावों।
प्रथमहि ज्ञान दृष्टि सों देखो। मोर वचन निज हृदय परेखो॥

हे पुत्र विष्णु! देख, मैं तुम्हें पिता से मिलाती हूं और तुम्हारे मन का धोखा मिटाती हूं। बाहर की स्थूल-चर्म-दृष्टि को छोड़कर तुम भीतर की ज्ञान-दृष्टि से देखो और अपने हृदय में मेरे वचन की परख करो।

॥ चौपाई ॥

मन स्वरूप करता कहं जानो। मन ते दूजा और न मानो॥
स्वर्ग पताल दौर मन केरा। मन अस्थिर मन अहै अनेरा॥

स्थूल-देह के भीतर सूक्ष्म-मन के स्वरूप को ही कर्ता समझो, मन से दूसरा और किसी को कर्ता न मानो। यह मन बहुत चंचल एवं तीव्र गतिशील है, यह क्षण-भर में स्वर्ग-पाताल की दौड़ लगाता है, यह मन स्वछंद सब ओर विचरता है।

॥ चौपाई ॥

क्षण महं कला अनंत दिखावे। मन कहं देख कोइ नहि पावे॥
निराकार मन ही को कहिये। मन की आश दिवस निशि रहिये॥

मन क्षण-भर मे अनत कला दिखाता है और इस मन को कोई देख नहीं पाता। मन को ही निराकार निरंजन कहो। दिन-रात मन की आशा एवं सहारे पर रहो, अर्थात सबको मन के अधीन रहना पड़ता है।

॥ चौपाई ॥

देखहु पलटि शून्य महं जोती। जहवां झिलमिल झालर होती॥
फेरहु श्वास गगन कह धायो। मार्ग अकाशहि ध्यान लगायो॥
जैसे माता कहि समुझावा। तैसे विष्णु ध्यान मन लावा॥

आद्या माता ने कहा कि बाहर से ध्यान हटाकर अंतर्मुखी होओ और अपनी सुरति एवं दृष्टि को पलटकर भृकुटी अथवा हृदय के शून्य में ज्योति को देखो (शून्य में ज्योति-स्वरूप निरंजन है), जहां झिलमिल ज्योति झिलमिलाती झालर-सी अनंत प्रकाशित होती है[1]। विष्णु ने अपने श्वास को फिराकर भीतर आकाश की ओर दौड़ाया और आकाश मार्ग में ध्यान लगाया।

जैसे आद्या माता ने कहकर समझाया, वैसे विष्णु ने मन का ध्यान लगाया।

॥ छंद ॥

पैठि गुफा ध्यान कीन्हो, श्वास संयम लायके।
पवन धूंका दियो जबते, गगन गरज्यो आयके॥
बाजा सुनत तब मगन भा, पुनि कीन्ह मन कस ख्याल हो।
शून्य स्वेत पीत सब्ज लाल, दिखाय रंग जगाल हो॥ 30॥

विष्णु ने गुफा में प्रवेश कर ध्यान किया। ध्यान-प्रक्रिया में उसने पहले अपने श्वास का संयम प्राणायाम-विधि (पूरक-कुंभक-रेचक) से किया। कुंभक की स्थिति में जब उसने श्वास को रोक दिया तो श्वास ऊपर उठकर ध्यान के केंद्र मस्तक के शून्य में आया, वहां उससे अनहद-नाद की गर्जना हुई। तब अनहद बाजा की ध्वनि सुनते ही विष्णु प्रसन्न हो गए। फिर मन ने कैसे अनूठे भाव का खेल किया? उसने श्याम, श्वेत, पीला, हरा तथा लाल पांच-तत्वों के रंग दिखाकर अनेक मिश्रित रंग दिखाए।

***विशेष**—जिन पांच तत्वों पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु एवं आकाश से स्थूल देह की रचना हुई है, उन्हीं तत्वों के क्रमशः पीला, श्वेत, लाल, हरा एवं श्याम पांच रंग हैं, जो ध्यान साधना के अंतर्गत दिखाई पड़ते हैं।*

॥ सोरठा ॥

तेहि पीछे धर्मदास, मन पुनि आप दिखायऊ।
कीन्ह ज्योति परकास, देखि विष्णु हर्षित भये॥ 30॥

---

1. सद्गुरु की शरणागत होकर इस ध्यान-योग को भली-भांति जानकर, इसका विधिवत् सतत अभ्यास करना चाहिए।

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! उसके बाद, मन ने फिर अपने आपको दिखाया, अर्थात अपना ज्योति-स्वरूप प्रकट किया। जो ज्योति-प्रकाश किया, उससे विष्णु हर्षित (खुश) हो गए।

॥ सोरठा ॥

मातहि नायो शीश, बहु अधीन पुनि विष्णु भा।
मैं देखा जगदीश, हे जननी प्रसाद तव॥ 31॥

विष्णु ने आद्या माता को शीश नवाया, फिर विष्णु माता के बहुत अधीन हुए। विष्णु ने विनम्रता से कहा कि हे माता! तुम्हारी कृपा से मैंने जगत के ईश्वर को देखा।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास गहि टेके पाया। हे साहिब इक संशय आया॥
कन्या मन कहं ध्यान बतावा। सो यह सकल जीव भरमावा॥

धर्मदास ने सद्गुरु कबीर साहेब के चरण पकड़ और चरणों में माथा टेककर सविनय कहा कि हे साहिब! मुझमें एक संशय उत्पन्न हुआ है। आद्या-अष्टांगी ने जो मन का ध्यान बताया, उससे तो जगत का यह समस्त जीव भरमा गया है। अर्थात, आप इसका स्पष्टीकरण कर मुझे भ्रम से मुक्त कीजिए।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास यह काल स्वभाऊ। पुरुषभेद विष्णु नहिं पाऊ॥
कामिनी की यह देखहु बाजी। अमृत गोय दियो विष साजी॥

सद्गुरु कबीर साहेब ने कहा कि हे धर्मदास! यह काल का स्वभाव है कि जिसके चक्कर में पड़ने से विष्णु सत्यपुरुष के भेद को नहीं पाया। (अष्टांगी को निरंजन का पहले से ही आदेश था कि वह उपाय करना जिससे कोई सत्यपुरुष के भेद को न जान पाए। अतएव—) कामिनी अष्टांगी का यह दांव देखो, उसने अमृत स्वरूप सत्यपुरुष को छिपाकर विषरूपी काल-निरंजन को प्रस्तुत किया, अर्थात उसी के नाम का उपदेश किया।

॥ चौपाई ॥

जोति काल दूजा जनि जानहू। निरखि धर्म सत्यहि उर आनहू॥
प्रगट सु तोहि कहो समुझाई। धर्मदास परखहु चितलाई॥

जिस ज्योति का ध्यान अष्टांगी-माया ने बताया है, उस ज्योति से काल-निरंजन को दूसरा न समझो, अर्थात वे दोनों एक ही हैं, हे धर्मदास! इसे सत्य

मानकर अपने हृदय में धारण करो। मैं उसे प्रत्यक्ष-रूप में तुम्हें समझाकर कहता हूं, तुम चित्त लगाकर परखो-समझो।

॥ चौपाई ॥

जस परगट तस गुपुत सुभाऊ। जो रह हिय सो बाहर आऊ॥
जब दीपक बारे नर लोई। देखहु ज्योति सुभाव बिलोई॥
देखत ज्योति पतंग हुलासा। प्रीति जान आवै तिहि पासा॥

ज्योति का स्वभाव जैसा प्रकट वैसा ही गुप्त है, जो हृदय के भीतर है वह बाहर भी देखने में आता है। जब कोई मनुष्य दीपक जलाता है, तो उस ज्योति के भाव-स्वभाव को देखो और निर्णय (सोच-विचार) करो। उस ज्योति को देखकर पतिंगा (शलभ) बहुत खुश होता है, वह प्रीतिवश अपना हित जानकर उसके पास आता है।

॥ चौपाई ॥

परसत होवे भसम पतंगा। अनजाने जरि मरहि मतंगा॥
ज्योति स्वरूप काल अस आही। कठिन काल वह छांडत नांही॥

ज्योति को छूते ही पतिंगा भस्म हो जाता है। इस प्रकार बिना जाने वह उसका मतवाला पतिंगा उसमें जल मरता है। ज्योति स्वरूप काल-निरंजन भी ऐसा ही है, जो उसके चक्कर में आ जाता है वह क्रूर-काल छोड़ता नहीं है। (अथवा कोई उससे बच पाता नहीं है)।

॥ चौपाई ॥

कोटि विष्णु औतारहि खाया। ब्रह्मा रुद्रहि खाय नचाया॥
कौन विपति जीवन की कहऊं। परखि वचन निज सहजहि रहऊं॥
लाख जीव वह नित्यहि खाई। अस विकराल सो काल कसाई॥

इस काल ने करोड़ों विष्णु-अवतारों को खाया और अनेक ब्रह्मा-रुद्र को खाया तथा अपने संकेत पर नचाया। काल द्वारा दिया जाने वाला जीवों का कौन दुख कहूं? हे धर्मदास! मेरे शब्द-वचन को समझकर अपने सहज-भाव में रहो। वह लाखों जीव नित्य ही खाता है, ऐसा भयंकर वह निर्दयी काल है।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास कह सुनहुं गुसाईं। मोरे चित्त संशय अस-आई॥
अष्टंगीहि पुरुष उतपानी। जिहि विधि उपजी सो मैं जानी॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे स्वामी! मेरी बात सुनो, मेरे चित में एक ऐसा संशय उत्पन्न हुआ है कि अष्टांगी को सत्यपुरुष ने उत्पन्न किया और जिस प्रकार उत्पन्न किया, वह भी मैंने जाना।

॥ चौपाई ॥

पुनि तिहि ग्रास लीन्ह धर्मराई। पुरुष प्रताप सु बाहर आई॥
सो अष्टंगीहि अस छल कीन्हा। गोयसि पुरुष प्रकट यम कीन्हा॥

फिर उसे काल-निरंजन ने ग्रस लिया और सत्यपुरुष के प्रताप से वह उसके पेट से बाहर आई। उस अष्टांगी ने ऐसा छल क्यों किया कि सत्यपुरुष को गुप्त रखा तथा निरंजन को प्रकट किया।

॥ चौपाई ॥

पुरुष भेद नहिं सुतन बतावा। काल निरंजन ध्यान करावा॥
यह कस चरित कीन्ह अष्टंगी। तजा पुरुष भई काल की संगी॥

उसने सत्यपुरुष का भेद अपने पुत्रों ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश को नहीं बताया और उनसे काल-निरंजन का ध्यान कराया। यह कैसा चरित्र अष्टांगी ने किया कि सत्यपुरुष को छोड़ निरंजन की साथिन हो गई? अर्थात सत्यपुरुष ने उस पर इतना उपकार किया, फिर भी उसने सत्यपुरुष का ज्ञान-ध्यान क्यों नहीं कराया?

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्म सुनहु जन नारि सुभाऊ। अब तुहि प्रगट वरणि समझाऊं॥
होय पुत्री जेहि घर माहीं। अनेक जतन परितोषै ताहीं॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, नारी का स्वभाव जैसा होता है, वह मैं अब तुम्हें प्रत्यक्ष वर्णन कर समझाता हूं। जिसके घर में पुत्री उत्पन्न होती है, वह अनेक यत्न से उस पुत्री को पालता-पोसता है।

॥ चौपाई ॥

वस्त्र भक्ष सुख सेज निवासा। घर बाहर सब तिहि विश्वासा॥
यज्ञ कराय देय पितु माता। विदा कीन्ह हित प्रीति सों ताता॥

वह उसे पहनने को वस्त्र, खाने को भोजन, शैया, रहने को घर एवं सब सुख देता है, और घर-बाहर सब जगह उस पर विश्वास करता है। पुत्री के माता-पिता उसके विवाह में यज्ञ कराकर उसे वर को देते हैं। फिर प्रेमपूर्वक विधि-विधान से उस पुत्री को विदा करते हैं।

॥ चौपाई ॥

गयी सुता जब स्वामी गेहा। रात्सो तासु संग गुण नेहा॥
माता पिता सबै बिसरावा। धर्मदास अस नारि स्वभावा॥

माता-पिता के घर से विदा होकर जब वह पुत्री अपने स्वामी के घर गई, तो उसके साथ गुण एवं प्रेम में लवलीन हो गई। फिर उसने माता-पिता सबको भुला

दिया, हे धर्मदास! ऐसा नारी का स्वभाव है, अर्थात वह अपने पति के पक्ष में रहती है।

॥ चौपाई ॥

ताते अद्या भई बिगानी। काल अंग है रही भवानी॥
ताते पुरुष प्रगट नहिं लायी। काल रूप विष्णुहि दिखलायी॥

इसीलिए नारी-स्वभाव के कारण आद्या पराई हो गई, वह काल-निरंजन के साथ होकर उसी की होकर रह गई, अर्थात उसने काल का ही पक्ष लिया। अतएव उसने सत्यपुरुष के ज्ञान-रहस्य को प्रकट नहीं किया और अपने पुत्र विष्णु को काल-रूप ही दिखाया।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहेब यह जान्यो भेदा। अब आगे का करहु उछेदा॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे साहेब! यह भेद तो मैंने जान लिया, अब आगे का भेद बताओ कि फिर आगे क्या हुआ?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

पुनि माता कहि विष्णु दुलारा। मरद्यो मान जेठ निज बारा॥
अहो विष्णु तुम लेहु अशीशा। सब देवन में तुमहीं ईशा॥
जो इच्छा तुम चित में धरिहौं। सो सब तोर काज मैं करिहौं॥

सद्गुरु कबीर कहते हैं कि फिर माता आद्या-अष्टांगी ने विष्णु को प्यार किया और कहा कि अपने समय में ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा ने तो मान-मर्यादा खो दी है। हे प्रिय पुत्र विष्णु! तुम मुझसे आशीर्वाद लो, सब देवताओं में तुम्हीं ईश्वर होगे। जिसकी इच्छा तुम चित्त में रखोगे, वह काम मैं तुम्हारा पूरा करूंगी।

माया-आद्या का विष्णु को सर्वप्रधान बनाना

॥ चौपाई ॥

प्रथम पुत्र ब्रह्मा दुरि गयऊ। अकरम झूठ ताहि प्रिय भयऊ॥
देवन श्रेष्ठ तुमहिं कहं मातहिं। तुम्हरी पूजा सब कोई ठानहिं॥

महामाया आद्या माता ने विष्णु से फिर कहा कि मेरा प्रथम पुत्र ब्रह्मा तो अपने-आप से तथा अपने धर्म एवं मान-मर्यादा से गिर गया, क्योंकि उसे व्यभिचार जैसा अकर्म तथा झूठ प्रिय लगे। सब देवता तुम्हीं को श्रेष्ठ मानेंगे और तुम्हारी पूजा सब कोई करेंगे।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

कृपा वचन अस मातै भाखा। सबते श्रेष्ठ विष्णु कहं राखा॥
माता गयी रुद्र के पासा। देख रुद्र अति भये हुलासा॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि अपने आशीर्वाद के फलस्वरूप माता आद्या ने ऐसा कृपा-वचन बोला कि उसने सबसे श्रेष्ठ विष्णु को रखा। फिर माता, रुद्र, अर्थात शंकर के पास गई, उसे अपने पास आया देखकर शंकर बहुत प्रसन्न हुए।

आद्या का महेश को वरदान देना

॥ चौपाई ॥

पुनि लहुरा कहं पूछे माता। तुम शिव कहो हृदय की बाता॥
मांगहु जो तुम्हरे चित भावे। सो तोहि देऊ माता फुरमावे॥
दोउ पुत्रन कहं मात दृढावा। मांग महेश जोइ मन भावा॥

फिर सबसे छोटे पुत्र को आद्या माता पूछती है कि हे शिव! तुम मुझे अपने हृदय की बात कहो। जो तुम्हारे चित्त को भाता है मांगो, वही मैं तुझे दूंगी, मैं तुम्हारी माता प्रसन्न होकर कहती हूं। दोनों पुत्रों को उनके कर्मानुसार मैंने दृढ़तापूर्वक दे दिया, हे महेश! जो तुम्हारे मन भाता है, मुझसे मांग लो।

महेश वचन आद्या प्रति

॥ चौपाई ॥

जोरि पानि शिव कहबे लीन्हा। देहु जननि जो आज्ञा कीन्हा॥
कबहुं न विनसे मेरी देही। हे माता मांगो वर येही॥
हे जननी यह कीजे दाया। कबहु न विनसे मेरी काया॥

माता आद्या के वचन सुनकर शिव ने दोनों हाथ जोड़कर कहा कि हे माता! जैसी तुमने आज्ञा की, मुझे दीजिए। हे माता! मेरी देह कभी नष्ट न हो, मैं यही वर मांगता हूं। हे जननी माता! मुझ पर दया कीजिए कि मेरी यह काया कभी नष्ट न हो।

आद्या वचन महेश प्रति

॥ चौपाई ॥

कह अष्टंगी अस नहीं होई। दूसर अमर भयो नहिं कोई॥
करहु योग तप पवन सनेहा। रहै चार युग तुम्हरी देहा॥
[1]जो लौ पृथ्वी अकाश सनेही। कबहु न विनसै तुम्हरी देही॥

---

1. कुछ विद्वान इस पंक्ति को स्वीकार नहीं करते।

अष्टांगी माता ने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि आदि पुरुष के अतिरिक्त दूसरा कोई अमर नहीं हुआ[1]। तुम प्रेमपूर्वक प्राण-पवन का संयम कर योग-तप करो, तो तुम्हारी देह चार युग रहेगी। तब जहां तक पृथ्वी-आकाश होंगे, तुम्हारी देह कभी नष्ट न होगी।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास विनती चित्त लाई। ज्ञानी मोहि कहो समुझाई॥
यह तो सकल भेद हम पायी। अब ब्रह्मा को कहो उपायी॥
अद्या शाप ताहि कहं दीन्हा। तेहि पीछे ब्रह्मा कस कीन्हा॥

धर्मदास ने चित्त लगाकर विनती की कि हे ज्ञानी सद्‌गुरु कबीर साहेब! मुझे समझाकर आगे कहो। आपकी कृपा से यह सारा भेद तो मैंने पा लिया, अब ब्रह्मा का वर्णन करो। आद्या माता ने उसे शाप दिया, उसके पश्चात ब्रह्मा ने कैसे किया?

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

विष्णु महेश जबै वर पाये। भये आनंद अतिहि हरषाये॥
दोनों जने हरख मन कीन्हा। ब्रह्मा भयो मान मद हीना॥
धर्मदास मैं सब कुछ जानों। भिन्न भिन्न कर प्रगट बखानों॥

विष्णु और महेश दोनों जब आद्या माता से वर पाए, तब उन्हें बहुत सुख-आनंद हुआ तथा वे बहुत ही हर्षित हुए। दोनों जनों ने प्रसन्न होकर मन से विचार किया कि ब्रह्मा अपने झूठ-कुकर्म के कारण मान-मर्यादा से हीन हो गया। सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! मैं उनके बारे में सब कुछ जानता हूं, उसे अलग-अलग कर वर्णन करता हूं।

शाप पाने के कारण दुखित हो ब्रह्मा का विष्णु के पास जाकर अपना दुख कहना और विष्णु का उसे आश्वासन देना

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा मन में भयो उदासा। तब चलि गयो विष्णु के पासा॥

आद्या माता से शाप पाकर ब्रह्मा मन में बहुत उदास हुए, तब विष्णु के पास चलकर गए।

---

1. यहां इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि एक अविनाशी चेतन आत्मा के अतिरिक्त दूसरा कोई शरीर अमर नहीं हुआ।

ब्रह्मा वचन विष्णु प्रति

॥ चौपाई ॥

जाय विष्णु से बिन्ती ठाना। तुम हो बंधु देव परधाना॥
तुम पर माता भई दयाला। शाप विवश हम भये बिहाला॥

ब्रह्मा ने जाकर विष्णु से विनती की कि हे भाई! माता के वरदान से देवताओं में तुम प्रधान एवं श्रेष्ठ हो। तुम पर माता बहुत दयालु हुई, किंतु माता के शाप से विवश हुआ मैं बहुत बेहाल, अर्थात दुखी हुआ हूं।

॥ चौपाई ॥

निज करनी फल पायउ भाई। किहि विधि दोष लगाऊं माई॥
अब अस जतन करो हो भ्राता। चले परिवार वचन रह माता॥

हे भाई! मैंने अपनी करनी का फल पाया है, मैं किस प्रकार माता को दोष लगाऊं? हे भ्राता! अब कोई ऐसा यत्न (उपाय) करो, जिससे मेरा परिवार (वंश) भी चले और माता का वचन, अर्थात शाप भी रहे।

विष्णु वचन ब्रह्मा प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे विष्णु छोड़ो मन भंगा। मैं करिहौं सेवकाई संगा॥
तुम जेठे हम लहुरे भाई। चित संशय सब देहु बहाई॥
जो कोई होवे भक्त हमारा। सो सैवे तुम्हरो परिवारा॥

विष्णु ने कहा कि हे भाई ब्रह्मा! तुम मन का दुख एवं भय छोड़ दो कि माता ने मुझको श्रेष्ठ होने का या देवताओं में प्रधान होने का वर दिया है, मैं तुम्हारे साथ सदा तुम्हारी सेवा करूंगा। तुम बड़े भाई हो मैं तुम्हारा छोटा भाई हूं, अपने चित्त का सब संशय बहा दो, क्योंकि मैं तुम्हारा मान-सम्मान मर्यादा अनुसार बराबर रखूंगा। जो कोई मेरा भक्त होगा, वह तुम्हारे परिवार की सेवा करेगा।

॥ छंद ॥

जग मांहि अस दिढाईहौं, फल पुन्य आशा जोय हो।
यज्ञ धर्म अरु करे पूजा, द्विज बिना नहिं होय हो॥
जो करे सेवा द्विजन की, तेहि महा पुन्य प्रभाव हो।
सो जीव मोकहं अधिक प्यारे, राखि हौं निज ठांव हो॥ 31॥

विष्णु ने कहा कि मैं संसार में ऐसा दृढ़ मत, शिक्षा अथवा विश्वास करा दूंगा—जो कोई पुण्य-फल की आशा करता है और उस निमित्त वह जो यज्ञ, धर्म और पूजा आदि कुछ भी करता है, बिना ब्राह्मण नहीं होंगे। जो ब्राह्मणों की सेवा करेगा, उस पर महापुण्य का प्रभाव होगा। वह जीव मुझे अधिक प्यारा होगा और मैं उसे अपने स्थान (बैकुंठ) में रखूंगा।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ सोरठा ॥

ब्रह्मा भये अनंद, जबहि विष्णु अस भाषेऊ।
मेटउ चितकर द्वन्द्व, साख मोर सब सुखी भौ॥ 32॥

जब विष्णु ने ऐसा कहा तो ब्रह्मा बहुत आनंदित हुए। विष्णु ने उनके चित्त में चल रहे दुख द्वंद्व को मिटा दिया। ब्रह्मा ने कहा कि मेरी यही चाह थी कि मेरा सब परिवार सुखी हो।

काल-प्रपंच

॥ चौपाई ॥

देखहु धर्मनि काल पसारा। इन ठग ठग्यो सकल संसारा॥
आशा दै जीवन बिलमावै। जन्म जन्म पुनि ताहि सतावै॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! काल-निरंजन के फैलाए जाल के विस्तार को देखो। उसने खानी-वाणी के मोह से मोहित कर संसार को ठग लिया है और सब इसके चक्कर में पड़कर आप ही इसके बंधन में बंध गए हैं तथा पुरुष परमात्मा को, स्वयं को तथा अपने कल्याण को भूल गए हैं। यह काल-निरंजन विभिन्न सुख-भोगों एवं स्वर्ग आदि की आशा देकर सब जीवों को भरमाता हुआ उनसे अनेक कर्म करवाता है (जिससे कर्म-भोग एवं विषय-वासना के कारण जीव जन्मते-मरते रहते हैं) तथा फिर जन्म-जन्म में उन्हें सताता है।

विशेष—*संत-महापुरुषों ने इस जगत में खानी एवं वाणी के दो बंधन बताए हैं। जिनमें स्त्री, पुत्र, परिवार, घर, धन-संपत्ति आदि खानी-बंधन कहा जाता है और कल्पित-अदृश्य भूत प्रेत, देव-पिशाच, स्वर्ग-नरक, मान-बड़ाई आदि जहां तक जितनी भी भ्रमित करने वाली कल्पित वाणी है, उसे वाणी-बंधन कहा जाता है। खानी बंधन को मोटी माया तथा वाणी-बंधन को झीनी माया भी कहा जाता है। इन बंधनों से जीव का छूटना अत्यंत कठिन है। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि खानी बंधन के अंतर्गत मोटी माया का तो बहुत लोग त्याग कर देते हैं। परंतु वाणी बंधन के अंतर्गत झीनी माया का त्याग नहीं हो पाता। क्योंकि कामना-वासना रूपी झीनी माया का बंधन बहुत ही जटिल एवं दुस्तर है। पीर-पैगंबर-औलिया आदि सबको यह झीनी माया खाती है यथा—*

मोटी माया सब तजैं, झीनी तजी न जाय।
पीर पैगम्बर औलिया, झीनी सबको खाय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

काल-निरंजन ने माया को साथ लेकर सबको भ्रम में डाला हुआ है। भ्रम के हिंडोले पर आकर जगत के सब जीव झूलते हैं। छः शास्त्र, चार वेद, चौदह

विद्याएं, सात द्वीप, इक्कीस भुवन तथा तीनों लोकों की बनी हुई रचनाएं सब भ्रम-झूले पर झूल रहे हैं। खोज कर देखो, खानी-वाणी के जाल में फंसे हुए जीवों में कोई स्थिर नहीं रहता है। यथा—

भरम हिण्डोला झूले, सब जग आय॥ 1॥
छव चारि चौदह सात इकइस, तीनि लोक बनाय॥ 10॥
खानी बानी खोजि देखऊ, थिर न कोउ रहाय॥ 11॥

(स.क. बीजक)

इस प्रकार निरंजन-काल के जाल का बहुत फैलाव है, जिसमें फंसाकर यह सब जीवों को सताता, अर्थात दुख देता है।

॥ चौपाई ॥

बलि हरिचन्द बेनु बइरोचन। कुंती सुत औरों महि सोचन॥
ये सब त्यागी दानि नरेशा। इन कहं ले राखे किहि देशा॥

राजा बलि, हरिश्चंद्र, वेणु, विरोचन, कुंती-पुत्र कर्ण-युधिष्ठिर आदि तथा और भी पृथ्वी के प्राणियों का हित-चिंतन करने वाले ये सब त्यागी एवं दानी राजा हुए, इनको काल-निरंजन ने न जाने किस देश अथवा लोक में ले जाकर रखा है? अर्थात, ये भी काल के गाल में समा गए।

॥ चौपाई ॥

जस गंजन इन सबकी कीन्हा। सो जग जाने काल अधीना॥
जानत है जग होय न शुद्धी। काल प्रबल सबकी हर बुद्धी॥
मन तरंग में जीव भुलाना। निज घर उलट न चीन्ह अजाना॥

काल-निरंजन ने इन सब राजाओं की जो दुर्दशा की अर्थात दुख दिया, वह संसार जानता है कि वे सब विवश काल के अधीन थे। उक्त राजाओं के इतिहास को संसार के लोग जानते हैं, पर निरंजन से अलग न हो पाने के कारण उनके हृदय की शुद्धि नहीं होती। काल-निरंजन बहुत प्रबल है। उसने सबकी बुद्धि हर ली है।

काल-निरंजन अभिमानी मन-रूप हुआ जीवों की देह के भीतर रहता है। उसके प्रभाव के अनुकूल जीव मन की तरंग में, विषय-वासना में भूला हुआ रहता है। जिससे वह अपना कल्याण-साधन नहीं कर पाता। अज्ञानी जीव अपने घर (अमर लोक) को वापिस उलट कर नहीं देखता-समझता, उससे तो वह सदा अनजान रहता है (वह उसका स्मरण नहीं करता)।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास कह सुनो गुसाईं। तब की कथा मोहि समुझाई॥
तुम प्रसाद जम को छल चीन्हा। निश्चय तुम्हरे पद चित दीन्हा॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे स्वामी! मुझे अब तब की कथा समझाओ। आपकी कृपा से मैंने यम (काल-निरंजन) का छल पहचान-समझ लिया है और दृढ़ निश्चयपूर्वक आपके श्री चरणों में अपना चित्त लगा दिया है।

॥ चौपाई ॥

भव बूड़त तुमही गहि राखा। शब्द सुधारस मोसन भाखा॥
अब वह कथा कहो समुझाई। शाप अंत किया कौन उपाई॥

हे सद्गुरु! भव-सागर में डूबते हुए आपने मुझे पकड़ कर रखा है, अन्यथा मैं डूब ज़ाता। आपने अमृत-रस से पूर्ण शब्दोपदेश को मुझे सुनाया, जिससे मैं कृतार्थ हुआ। अब मुझे वह कथा समझाकर कहो कि कौन उपाय से उन्होंने शाप का अंत किया?

गायत्री का आद्या को शाप देने का वृत्तांत

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि तुम सन कहों बखानी। भाषा ज्ञान अगम की बानी॥
मातु शाप गायत्री लीन्हा। उलटि शाप पुनि मातहिं दीन्हा॥
हम जो पांच पुरुष की जोई। पांचों की तुम माता होई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! मैं तुम्हारे सामने अगम ज्ञान की वाणी कहता हूं। माता आद्या-अष्टांगी का शाप जब गायत्री ने स्वीकार कर लिया[1], तब उसने भी उलटकर माता को शाप दिया कि हे माता! मनुष्य जन्म में मैं जब पांच पुरुषों की स्त्री होऊं, तो तुम उन पांचों पुरुषों की माता होओ।

॥ चौपाई ॥

बिना पुरुष तू जनि है बारा। सो जानही सकल संसारा॥
दुहुन शाप फल पायो भाई। उगरह भयो देह धरि आई॥

उस समय तुम बिना पुरुष पुत्र उत्पन्न करोगी और उस बात को सारा संसार जानेगा। हे भाई! आगे फिर द्वापर युग आने पर वे मनुष्य-देह लेकर माता कुंती एवं द्रोपदी के रूप में जन्मीं और उन दोनों ने एक-दूसरे के शाप का फल पाया।

जगत की रचना का विशेष वृत्तांत

॥ चौपाई ॥

यह सब द्वंद्व बाद ह्वै गयऊ। तब पुनि जग की रचना भयऊ॥
चार खानि चरिहु निरमाऊ। चौरासी लख योनिन भाऊ॥

---

1. पहले यह वर्णन किया जा चुका है। यह भी याद रहे कि ब्रह्मा, गायत्री एवं पुहुपावती तीनों को अष्टांगी के शाप देने पर फिर निरंजन ने अष्टांगी को भी शाप दिया।

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि शाप देने- भुगतने का यह सब झगड़ा तो समाप्त हो गया, तब फिर से जगत की रचना हुई। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा अष्टांगी इन चारों ने अण्डज, पिण्डज, उष्मज और स्थावर चार खानियों को रचा। फिर चार खानियों के अंतर्गत भिन्न-भिन्न स्वभाव की चौरासी लाख योनियां रचीं।

॥ छंद ॥

प्रथम अण्डज रच्यो जननी, चतुरमुख पिण्डज कियो।
विष्णु उष्मज रच्यो तबहीं, रुद्र अस्थावर लियो॥
लीन्ह रचि जेहि खानि चारों, जीव बंधन दीन्ह हो।
होन लागी कृषी कारण, करण कर्ता चीन्ह हो॥ 32॥

(पूर्व की भांति) पहले अष्टांगी ने अण्डज (अंडे से उत्पन्न होने वाले जीव) खानि की रचना की, चतुर्मुख ब्रह्मा ने पिण्डज (शरीर में गर्भ से उत्पन्न होने वाले जीव) खानि रची। फिर विष्णु ने उष्मज (मैल, पसीना, कीचड़-पानी आदि से उत्पन्न होने वाले जीव) खानि की रचना की और रुद्र-महेश ने स्थावर (जड़ प्रकृति वृक्ष, फूल, घास एवं बेल आदि) खानि की रचना अपने पर ली, अर्थात रची। इस प्रकार चारों खानियों को उन चारों ने रच लिया और उनमें जीव बंधन में डाल दिया। फिर पृथ्वी पर खेती (किसानी) होने लगी तथा समयानुसार लोग कारण (जिस प्रयोजन से जो उत्पन्न हुआ), करण (जिस साधन उपाय से उत्पन्न हुआ) एवं कर्ता (जिसने उत्पन्न किया) को समझने लगे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा अष्टांगी के द्वारा सृष्टि रचना होने से सब उन्हीं को सब कुछ समझने लगे, सत्यपुरुष को नहीं समझे अथवा भूले रहे।

॥ सोरठा ॥

यहि विधि चारो खानि, चारहु रचि विस्तार किये।
धर्मदास चित जानि, वाणी चारि उचार को॥ 33॥

इस प्रकार चारों खानियों को ब्रह्मा, विष्णु, महेश एवं अष्टांगी चारों ने रचकर उनका सब ओर विस्तार किया। इन चारों खानियों को उच्चारने-बोलने के लिए चार प्रकार की वाणी दी। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! यह सब चित्त लगाकर भली प्रकार समझो।

विशेष—*सृष्टि रचना की चार खानि अण्डज, पिण्डज, उष्मज तथा स्थावर की भिन्न-भिन्न चार वाणियां क्रमशः किंगिनी, बिंगिनी, इंगिनी एवं रिंगिनी कही जाती हैं। मनुष्य में ज्ञान विचार का विशेष गुण है, वह सब जीवों में बुद्धिमान एवं श्रेष्ठ है। अतः मनुष्य-योनि को उक्त चार खानि से अलग माना गया है और उसकी वाणी को सिंगिनी कहा जाता है।*

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि कहें जोरि युग पानी। तुम सतगुरु यह कहो बखानी॥
चार खानि की उत्पत्ति भाऊ। भिन्न भिन्न मुंहि वरणि सुनाओ॥

धर्मदास जी दोनों हाथ जोड़कर कहते हैं कि हे सद्गुरु! आप यह वर्णन कर कहो। चार-खानि की उत्पत्ति हुई, उनका अलग-अलग वर्णन कर मुझे सुनाओ।

॥ चौपाई ॥

चौरासी लाख योनिन धारा। कौन योनि केतिक विस्तारा॥

चौरासी लाख योनियों की विकराल धाराएं हैं (जिनमें जीव बहे जाते हैं), उनमें किस योनि का कितना विस्तार हुआ, अर्थात वे कौन कितनी हैं?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

कहैं कबीर सुन धर्मनि बानी। योनि भाव तोहि कहौं बखानी॥
भिन्न भिन्न सब कहु समझाऊं। तुमसे अंत न कछू दुराऊं॥
तुम जनि शंका मानहु भाई। वचन हमार गहो चितलाई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! मेरी वाणी को सुन। मैं तुम्हें योनि-भाव वर्णन कर कहता हूं। सब अलग-अलग कहकर समझाता हूं और अंत तक मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाऊंगा। हे भाई! तुम अपने मन में शंका मत मानो तथा मेरे वचन को चित्त लगाकर ग्रहण करो।

चौरासी लाख योनियों की गिनती

॥ चौपाई ॥

नौ लख जल के जीव बखानी। चौदह लाख पक्षी परवानी॥
कृमी कीट सत्ताइस लाखा। तीस लाख अस्थावर भाखा॥
चतुर लक्ष मानुष परमाना। मानुष देह परम पद जाना॥

चौरासी लाख योनियों में नौ लाख जल के जीव कहे जाते हैं, और चौदह लाख पक्षियों का प्रमाण है। कृमि-कीट (उड़ने-रेंगने वाले कीड़े-मकोड़े जुगनु आदि) सत्ताइस लाख तथा तीस लाख स्थावर (बेल-वृक्ष आदि) बताए गए हैं। चार लाख मनुष्य योनि का प्रमाण है, सब योनियों में मनुष्य देह श्रेष्ठ है, क्योंकि इसी से परम पद, अर्थात मोक्ष-पद को जाना-समझा जा सकता है। यह मनुष्य योनि ज्ञान-विचार से युक्त एवं साधन संपन्न है।

॥ चौपाई ॥

और योनि परिचय नहिं पावे। कर्म बंध भव भटका खावे॥

मनुष्य योनि के अतिरिक्त और योनि में मोक्ष पद का, परमात्म ज्ञान का परिचय नहीं पाया जा सकता, क्योंकि और योनि के जीव कर्म-बंधन में बंधे हुए संसार में भटकते रहते हैं, अर्थात नाना प्रकार के भोग भोगते रहते हैं। मोक्ष पद जानने-पाने का उनके पास साधन नहीं है।

विशेष—*उपर्युक्त चौरासी लाख योनियों की गणना की चौपाइयों में पशु-योनि की चर्चा नहीं आई है, जिससे ऐसा लगता है कि कहीं कुछ छूट गया है, अथवा कहीं कुछ चूक-गड़बड़ अवश्य है। किसी संत-विद्वान ने तीस लाख स्थावर न मानकर बीस लाख स्थावर लिखा है और चौरासी लाख पूरा करने के लिए उसके आगे यह पंक्ति दी है—''पशु की योनि लाख दस जानो। धर्मदास निश्चय करि मानो॥'' कुछ विद्वानों ने चौरासी लाख योनियों की गणना नीचे दिए गए पद के अनुसार प्रामाणिक मानी है। यथा—*

नवलख जल को जन्तु हैं, दश लख पक्षी जान।
एकादश कीट-भृंग हैं, स्थावर बीस बखान॥ 1॥
तीस लाख पशु योनि हैं, चतुर्लक्ष नर होय।
सत्यासत्य विचार करै, सांचा नर है सोय॥ 2॥

विभिन्न मत होने पर भी मनुष्य योनि की गणना में प्रायः सब एकमत हैं कि मनुष्य योनि की संख्या चार लाख है और मनुष्य योनि सर्व-योनियों में श्रेष्ठ है। यह समझना चाहिए कि चौरासी लाख योनियों की यह गणना सृष्टि-रचना के समय के विधान की है। ज्यों ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों इसका विस्तार होता गया और यह विभिन्न भाव रूपों में परिवर्तित होती गई।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास नायो पद शीशा। यह समझाय कहो जगदीशा॥
सकल योनि जिव एक समाना। किमि कारण नहिं इक सम ज्ञाना॥
सो चरित्र मुंहि करौ बुझाई। जाते चित संशय मिटि जाई॥

धर्मदास ने सद्‌गुरु कबीर साहेब के चरणों में शीश नवाकर कहा कि हे जगत के स्वामी! मुझे यह समझाकर कहो कि सब योनियों के जीव एक समान हैं। फिर किस कारण सब जीवों को एक समान ज्ञान नहीं है? जीवों का यह चरित्र अथवा आश्चर्यजनक कारण मुझे आप भली-भांति समझाइए, जिससे मेरे चित्त का संशय मिट जाए।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनु धर्मनि निज अंश अभूषण। तोहि बुझाय कहौं यह दूषण॥

चार खानि जिव एकै आहीं। तत्व विशेष अहैं सुन ताहीं॥
सो अब तुमसों कहौं बखानी। स्थावर इक तत्व समानी॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुन, ज्ञान-आभूषण को धारण करने वाले तुम मेरे परम शिष्य हो। जीवों के चरित्र अर्थात स्वभाव की असमानता मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं। चार खानि के जीव एक समान हैं, परंतु सुनो! उनकी देह-रचना में तत्व विशेष का अंतर है। वह मैं तुम्हें स्पष्ट वर्णन कर कहता हूं, स्थावर खानि (पेड़-पौधे, बेल-फूल आदि) में एक तत्व समाया होता है (उसकी रचना एक तत्व से है)।

॥ चौपाई ॥

ऊष्मज दोय तत्व परमाना। अंडज तीन तत्व गुण जाना॥
पिण्डज चार तत्व गुण कहिये। पांच तत्व मानुष तन लहिये॥

उष्मज खानि में दो तत्वों का प्रमाण है तथा अण्डज खानि (अण्डे से उत्पन्न होने वाले जीवों) में तीन तत्वों के गुण समझिए। पिण्डज खानि (शरीर में गर्भ से उत्पन्न होने वाले जीवों) में चार तत्वों का गुण कहा है, परंतु उनमें मनुष्य के शरीर में पांच तत्व मानो। मनुष्य सब योनियों के जीवों से पृथक एवं श्रेष्ठ है। पांच-तत्वों के गुण मनुष्य देह में होने से मनुष्य ज्ञान का अधिकारी है और यह मनुष्य की देह भक्ति के योग्य है।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहिब मुहिं कहु समुझाई। कौन कौन तत्व इन सब पाई॥
अण्डज अरु पिण्डज के संगा। ऊष्मज और स्थावर अंगा॥
सो साहिब मोहि वरणि सुनाओ। करो दया जनि मोहि दुराओ॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे साहिब मुझे कहकर समझाओ कि कौन-कौन तत्व इन सब चार खानियों ने कितना-कितना पाया है? अण्डज, पिण्डज, उष्मज और स्थावर खानि की देहों में कितने-कितने तत्व हैं? हे साहेब! वह सब मुझे वर्णन कर सुनाओ, मुझ पर दया करो और मुझसे कुछ मत छिपाओ।

जिस-जिस खानि में जो-जो तत्व हैं
सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ छंद ॥

सतगुरु कहें सुन दास धर्मनि, तत्व खानि निबेरनो।
जाहि खानि जो तत्व दीन्हों, कहौं तुम सो टेरनो॥

खानि अण्डज तीन तत्व हैं, आप वायु अरु तेज हो।
अचल खानि एक तत्वहि, तत्व जल का थेग हो॥ 33॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! चार खानि के तत्वों का निर्णय सुन, जिस खानि में जो तत्व दिए गए हैं, वह तुम्हें मैं स्पष्ट रूप से कहता हूं। अण्डज खानि में जल, वायु और अग्नि तीन तत्व हैं। अचल खानि, अर्थात जो चल नहीं सकते स्थावर में केवल एक जल तत्व विशेष है।

॥ सोरठा ॥

ऊष्मज तत्व है दोय, वायु तेज सम जानिये।
पिंडज चारहिं सोय, पृथ्वी तेज अप वायु सम॥ 34॥

उष्मज खानि में वायु तथा अग्नि दो तत्व बराबर समझो। पिण्डज खानि में पृथ्वी, अग्नि,जल एवं वायु चार तत्व संयुक्त होते हैं।

॥ सोरठा ॥

पिण्डज नर परधान, पांच तत्व तेहि संग हैं।
कहैं कबीर परमान, धर्मदास लेहु परखि के॥ 35॥

पिण्डज खानि के प्राणियों में मनुष्य प्रधान है, उसके साथ पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश पांचों तत्व हैं। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! चार खानि में तत्वों के होने का यही प्रमाण है, इसे परख-समझकर ग्रहण करो।

॥ चौपाई ॥

पिण्डज नर की देह संवारा। तामें पांच तत्व विस्तारा॥
ताते ज्ञान होय अधिकाई। गहै नाम सतलोकहिं जाई॥

पिण्डज खानि में मनुष्य की देह को विशेष सजाया-संवारा गया है, उसमें पांचों तत्वों का फैलाव है। इसलिए मनुष्य में ज्ञान अधिक होता है और वह सत्यनाम-ज्ञान ग्रहण कर सत्यलोक जाता है।

सब मनुष्यों का ज्ञान एक समान क्यों नहीं?

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास कह सुनु बन्दीछोरा। इक संशय मेटो प्रभु मोरा॥
सब नर नारि तत्व सम आहीं। इक सम ज्ञान सबन को नाहीं॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि भव-बंधनों से छुड़ाने वाले हे बंदीछोड़ सद्गुरु! मेरी विनती सुनो, हे प्रभु! मेरा एक संशय मिटाइए कि मनुष्य-योनि में नर और नारी तत्वों में समान हैं, किंतु एक समान ज्ञान सबको नहीं है।

॥ चौपाई ॥

दया शील संतोष क्षमा गुण। कोइ शून्य कोई होय सम्पूरन॥
कोई मनुष्य होय अपराधी। कोइ शीतल कोइ कला उपाधी॥

दया, शील, संतोष और क्षमा आदि सद्‌गुणों से कोई मनुष्य तो शून्य (रहित) है तथा कोई संपूर्ण, अर्थात सद्‌गुण संपन्न होता है। कोई मनुष्य पाप-कर्म करने वाला अपराधी होता है, कोई शीतल विनम्र स्वभाव, तो कोई दूसरों को दुख देने वाला क्रोधी एवं काल-रूप होता है।

॥ चौपाई ॥

कोई मारि तनु करे अहारा। कोई जीव दया उर धारा॥
कोई ज्ञान सुनत सुख माने। कोई काल गुणवाद बखाने॥
नाना गुण किहि कारण होई। साहिब बरणि सुनावहु सोई॥

कोई मनुष्य किसी जीव को मारकर उसके शरीर-मांस का आहार करता है, कोई जीवों के प्रति अपने हृदय में दया धारण करता है। कोई मनुष्य अध्यात्म-ज्ञान कथा को सुनकर सुख मानता है। और कोई काल-निरंजन का गुणानुवाद (अज्ञान-जनित वाद-विवाद) का बखान करता है। मनुष्यों में ये नाना प्रकार के गुण किस कारण होते हैं, हे साहेब! वे सब मुझे वर्णन कर सुनाओ।

सद्‌गुण कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास परखहु चित लाई। नर नारी गुण कहूं बुझाई॥
जा तन नर ह्वै ज्ञानी अज्ञानी। सो सब तोहि कहौं सहिदानी॥

सद्‌गुर कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! चित्त लगाकर परखो-समझो, मैं तुम्हें मनुष्य-योनि के नर-नारी के गुण-अवगुण समझाकर कहता हूं, कारणवश जिस शरीर से मनुष्य ज्ञानी-अज्ञानी होता है, वह सब पहचान मैं तुम्हें कहता हूं।

॥ चौपाई ॥

नाहर सर्प औ स्वान सियारा। काग गिद्ध सूकर मञ्जारा॥
और अनेक जोइन अघखानी। खाहि अखज अधम गुण जानी॥
इन जोइन ते जो जिव आवा। नर की जोन जन्म जिन पावा॥
पीछे जोइन सुभाव न छूटे। कर्म प्रभाव महा पुनि छूटे॥
ताते सब चले काग के लेखे। नर की देह प्रगट तेहि देखे॥

सिंह, सांप, कुत्ता, गीदड़, कौवा, गिद्ध, सूअर और बिल्ली, इनके अतिरिक्त और अनेक जीव जो इनके समान हिंसक पाप-योनि, अभक्ष्य-मांसादि खाने वाले दुष्कर्मी नीच-गुणों वाले समझे जाते हैं, इन योनियों में से जो जीव आया और

जिसने मनुष्य योनि में जन्म पाया, तो भी उसके पीछे की अधम पशु योनि का स्वभाव नहीं छूटता, उसके पूर्व-कर्मों का प्रभाव उसके प्राप्त मनुष्य जन्म पर पड़ता है। अर्थात, जो जीव जिस योनि से मनुष्य योनि में आता है, उस योनि के स्वभाव एवं कर्मों का प्रभाव फिर छूटता है अथवा पूर्व की भांति बना रहता है, जिससे वह मनुष्य देह पाकर भी पूर्व (पशु-योनि) के कर्म में प्रवृत्त रहता है। उससे उक्त निम्न पशु-योनियों से मनुष्य योनि में परिवर्तित हुए, परंतु वैसे ही दुष्कर्मी एवं पाप-स्वभाव वाले वे सब जीव, उन्हीं नीच पशु योनियों के लेखे में आते हैं, जबकि वे मनुष्य की देह में प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं।

॥ चौपाई ॥

जिहि जोइन ते जो नर आऊ। ताको तैसो आहि सुभाऊ॥
अघकरमी घातक विष पूजा। जोइन प्रभाव होय नहिं दूजा॥

जिस योनि से जो मनुष्य आया है, उसका वैसा ही स्वभाव है। जो दूसरों पर घात करने वाले क्रूर-हिंसक पापकर्मी तथा क्रोधी-विषैले स्वभाव के जीव हैं, उनकी योनि का प्रभाव दूसरा नहीं होता, अर्थात वह वैसा ही रहता है (आसानी से बदल नहीं पाता)।

विशेष—*सर्व-योनियों में श्रेष्ठ मनुष्य-जन्म पाकर भी जो लोग सत्य, क्षमा, शील, दया, संतोष, विचार एवं विवेक आदि सद्गुण धारण नहीं करते तथा सेवा, सत्संग भक्ति एवं दान-उपकार आदि परमार्थ-कर्म नहीं करते, प्रत्युत मांस-मद्य खाते-पीते हैं, आचार-विचार-आहार-विहार से भ्रष्ट हैं, स्वार्थ, क्रोध एवं ईर्ष्यावश हिंसा करते हैं, दूसरों को गाली-गलौज-मारपीट करते हुए बहुत प्रकार से दुख देते हैं और छल-कपट, चोरी, व्यभिचार तथा झूठ आदि अनेकानेक पाप-कर्म करते रहते हैं, उन्हें मनुष्य की श्रेणी में कैसे रखा जा सकता है? निस्संदेह, उन पर अधम पशु योनि के स्वभाव की ही अमिट छाप है।*

योनि प्रभाव मेटने का उपाय

॥ चौपाई ॥

सतगुरु मिलै तो ज्ञान लखावै। काग दशा तब सब बिसरावै॥
मुरचा जोइन छूटै तब भाई। ज्ञान मसकला फिरै बनाई॥

मनुष्य-योनि में जन्म लेकर इससे पूर्व-योनि का प्रभाव मेटने का एकमात्र उपाय है कि किसी प्रकार सौभाग्य से सद्गुरु मिल जाए तो वे ज्ञान लखा-समझाकर अज्ञानता का नाश कर देते हैं और फिर काग-दशा, अर्थात कौवे के समान नीच-योनि के प्रभाव को भुला देते हैं, उसे पूर्णतः मिटा देते हैं। फिर तब हे भाई! पूर्व पशु-योनि तथा प्राप्त मनुष्य-योनि का द्वंद्व मोर्चा छूट जाता है। (पूर्व पशु-योनि का प्रभाव संबंध समाप्त हो जाता है)। सद्गुरु ज्ञान के सिकलीगर हैं, जो

अपने शरणागत शिष्य को ज्ञान की ज्वाला में तपाकर एवं युक्ति से घिस–पीटकर सत्यज्ञानोपदेशानुसार बना लेते हैं और निरंतर साधना-अभ्यास से उसके जन्म पर पड़े पूर्व-योनि के कुसंस्कारों को मिटा देते हैं।

॥ चौपाई ॥

जब धोबी वस्तर कहं धोवै। जस साबुन मिल उज्वल होवै॥
थोर मैल कर वस्तर भाई। थोड़े परिश्रम मैल नसाई॥
निपट मलिन जे वस्तर आही। ता कहं अधिक अधिक श्रम चाही॥

उदाहरण देते हुए सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जब धोबी वस्त्र को धोता है और जैसे साबुन के मिलने–मलने से वस्त्र उज्वल (साफ) हो जाता है। हे भाई! वस्त्र में थोड़ा मैल हो, तो थोड़े परिश्रम से उसका मैल नाश हो जाता है, अर्थात धुल कर साफ हो जाता है। परंतु जो वस्त्र पूरा मैल से भरा हो, तो उसे धोने में, साफ करने में अधिक से अधिक श्रम की आवश्यकता पड़ती है।

॥ चौपाई ॥

जैसे मैल वस्तर कर भाऊ। ऐसे जीवन केर सुभाऊ॥
कोइ कोइ जो अंकुर होई। स्वल्प ज्ञान सो गई बिलोई॥

जैसे मैले वस्त्र का हाल होता है, ऐसे ही जीवों का स्वभाव होता है। कोई–कोई जीव जो अंकुरी होता है, अर्थात जैसे अनुकूल वातावरण मिलने पर उत्तम बीज अंकुरित होकर बाहर आ जाता है, वैसे वह अंकुरी जीव सद्गुरु के थोड़े ज्ञान को ही निर्णय–विचार कर शीघ्र ग्रहण कर लेता है (उसे सद्गुरु–ज्ञान का संकेतमात्र पर्याप्त है, अधिक ज्ञान कथने या बघारने की उसके लिए आवश्यकता नहीं, वह सच्चा ज्ञान अधिकारी होता है)।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

यह तो स्वल्प जोनि कर लेखा। खानि भाव अब कहो विशेषा॥
चारि खानि को जिव है जोई। मनुष्य खान महं आवे सोई॥
ताकर लच्छन मोहि बताओ। विलग विलग कर मुहिं समझाओ॥
जेहि परखि समुझहिं महं चेतू। कर अब साहब यहि बड़ हेतू॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि यह तो थोड़ी–सी योनियों के बारे का लेखा-हिसाब है, अर्थात उनके भाव–स्वभाव का तथा मनुष्य योनि में आने पर भी उस पर उनके प्रभाव पड़ने का कथन है, अब आप चार खानि के जीवों का भाव विशेष रूप से कहो। जो चार खानि के जीव हैं, वे ही मनुष्य खानि में आते हैं। उनके लक्षण मुझे बताओ और उन्हें अलग–अलग कर समझाओ। जिन्हें देख-

समझकर मैं चेत जाऊं (सावधान हो जाऊं), अब हे साहेब! आप यही मेरा बड़ा हित करो।

चार खानि के लक्षणों की पारख
सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास परखहु चित लायी। चार खानि गुण कहुं समुझायी॥
चारों खानि जीव भरमाया। तब ले नर की देह धराया॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे धर्मदास! मैं चार खानि के गुण-लक्षण समझाकर कहता हूं, तुम चित्त लगाकर परखो-समझो। चार खानि में भरमाया हुआ, अर्थात चारों खानि के भोगों को भोगता हुआ जीव तब कहीं मनुष्य की देह धरकर आता है, अर्थात चारों खानि में भरमने-भटकने के बाद जीव को मनुष्य की देह मिलती है।

॥ चौपाई ॥

देह धरे छोड़े जस खाना। तैसे ता कहं ज्ञान बखाना॥
लच्छन औ अपलच्छन भेदा। सो सब तुम सौं कहौं निषेदा॥

जो जीव जिस खानि को छोड़कर मनुष्य देह धारण करता है, वैसे मैं उसका ज्ञान वर्णन करता हूं। उसके अच्छे और बुरे लक्षण का जो भेद है, वह सब तुमसे कहता हूं।

अण्डज खानि से मनुष्य देह में आए हुए जीव की पारख

॥ चौपाई ॥

प्रथम कहौं अण्डज की बानी। एकहिं एक कहौं बिलछानी॥
आलस निद्रा जा कहं होई। काम क्रोध दारिद्री सोई॥

पहले मैं अण्डज खानि की बात कहता हूं तथा फिर एक-एक खानि को निर्णय कर कहता हूं। जिसको बहुत आलस-निद्रा होती है तथा कामी, क्रोधी एवं दरिद्र होता है, वह अण्डज खानि से मनुष्य देह में आया है।

॥ चौपाई ॥

चोरी चंचल अधिक सुहाई। तृष्णा माया अधिक बढ़ाई॥
चुगली निन्दा बहुतै भावे। घर बन झाड़ी अगिन लगावै॥

वह बहुत चंचल होता है और उसे चोरी करना बहुत अच्छा लगता है। वह धन-माया की तृष्णा बहुत अधिक बढ़ाता है, अर्थात उसे कितना भी धन मिले, तृप्त नहीं होता। दूसरों की चुगली करना, निंदा करना उसे बहुत भाता है। इसी स्वभाव के कारण वह दूसरों के घर, वन तथा झाड़ी में आग लगाता है।

॥ चौपाई ॥

रोवे कूदे मंगल गावे। भूत प्रेत सेवा मन भावे॥
देखत देत और पुनिकाहू। मन महं झंखे बहु पछताहू॥

अण्डज खानि से मनुष्य देह में आया हुआ जीव चंचल होने से कभी बहुत रोता है, कभी कूदता-नाचता है, कभी मंगल गाता है, और भूत-प्रेत की सेवा-पूजा उसके मन भाती है। जब कोई और किसी को कुछ देता है तो उसे देखकर वह मन ही मन में बहुत झींकता एवं पछताता है।

॥ चौपाई ॥

वाद विवाद सब सों ठाने। ज्ञान ध्यान कछु मनहिं न आने॥
गुरु सतगुरु चीन्हें नहिं भाई। वेद शास्त्र सब देइ उठाई॥

वह किसी भी विषय पर सबसे वाद-विवाद (बहस-झगड़ा) ठान लेता है, कल्याणमय ज्ञान-ध्यान कुछ भी उसके मन में नहीं आते, अर्थात वह उन्हें नहीं मानता। हे भाई धर्मदास! वह गुरु-सद्गुरु नहीं पहचानता-मानता, अज्ञानवश वह वेद शास्त्र सबको उठाकर अलग रख देता है (त्याग देता है)।

॥ चौपाई ॥

आपन नीच ऊंच मन होई। हम समसरि दूसर नहि कोई॥
मैले वस्तर नहीं नहाई। आंख कीच मुख लार बहाई॥

वह अपने मन में ही नीच-ऊंच होता है, अर्थात अपने आप छोटा-बड़ा बनता रहता है और समझता है कि मेरे समान दूसरा कोई नहीं है। उसके वस्त्र प्रायः मैले होते हैं तथा वह नित्य नहीं नहाता, उसकी आंख में कीच भरा रहता है तथा मुंह से लार बहती है।

॥ चौपाई ॥

पांसा जुआ चित्त महं आने। गुरु चरण निशि दिन नहिं जाने॥
कुबरा मूड़ ताहि का होई। लंबा होय पांव पुनि सोई॥

पांसा (चौपड़) एवं जुए के खेल में वह अपना चित्त-मन लगाता है, परंतु गुरु के श्रीचरणों का ध्यान-स्मरण रात-दिन में कभी नहीं करता। वह प्रायः सिर एवं पीठ से कुबड़ा होता है और फिर उसका पांव लंबा होता है।

॥ छंद ॥

यहि भांति लक्षण मैं कहा, तुम सुनहु धर्मनि नागरू।
अण्डज खानि न गोय राखा, कह्यो भेद उजागरू॥
यह खानि वर्णन कहों तोसों, कछू नाहिं छिपायऊ।
सो समुझी वानी जीव थिरकै, धोख सकल मिटायऊ॥ 34॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे विनम्र धर्मदास! सुनो, इस प्रकार अण्डज खानि से मनुष्य-योनि में आए जीव का लक्षण मैंने कहा। अण्डज खानि का भेद मैंने तुमसे गुप्त नहीं रखा, उसका सब भेद स्पष्ट उजागर कर दिया है। इस खानि का वर्णन कर मैंने तुमसे कहा, कुछ नहीं छिपाया। वह समस्त भेद मेरी वाणी-उपदेश से समझकर अपने जीव (आप) को स्थिर करो और सब धोखा-अज्ञान को मिटा दो।

उष्मज खानि से मनुष्य देह में आए हुए जीव की पारख

॥ सोरठा ॥

दूजी खानि बताय, ताहि लक्ष तोसों कहौं।
उष्मज ते जिव आय, नर देही जिन पाइया॥ 36 ॥

अब मैं तुम्हें दूसरी खानि बताता हूं। उष्मज खानि से आकर जिस जीव ने मनुष्य देह पाई, उसका लक्षण तुमसे कहता हूं।

॥ चौपाई ॥

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। उष्मज भेद कहौं परकासा॥
जाइ शिकार जीव बहु मारे। बहुत आनन्द होय तिहि वारे॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, मैं तुम्हें उष्मज-योनि का भेद प्रकट कर कहता हूं। वह जंगल-वन में जाकर शिकार करते हुए बहुत जीवों को मारता है और उस समय बहुत आनंदमग्न होता है।

॥ चौपाई ॥

मारि जीव जब घर कहं आई। बहु विधि रांध ताहि कहं खाई॥
निन्दे नाम ज्ञान कह भाई। गुरु कहं मेटि करे अधिकाई॥

जीवों को मारकर जब वह घर आता है, तो बहुत प्रकार से उन जीवों के मांस को पकाकर खाता है। हे भाई धर्मदास! वह सद्गुरु के नाम-ज्ञान की निंदा करता है और अधिकतर गुरु की बुराई एवं निंदा कर गुरु-महत्व को मिटाने का प्रयास करता है, अर्थात वह गुरु-सद्गुरु एवं उनके ज्ञानोपदेश को नहीं मानता।

॥ चौपाई ॥

निन्दे शब्द और गुरु देवा। निन्दे चौका नरियर भेवा॥
बहुत बात बहुते नरिआयी। कथे ज्ञान बहुते समुझायी॥

वह सदा से चले आए शब्द-उपदेश एवं गुरुदेव की निंदा करता है। वह साक्षात संत-गुरु की विशेष पूजा स्वरूप सात्विक यज्ञ-आरती-चौके के विधान एवं उन्हें समर्पित होने के लिए नारियल भेंट की निंदा करता है। वह बहुत बात करता है तथा बहुत अकड़ता है और अभिमानवश बहुत ज्ञान कथकर समझाता है।

॥ चौपाई ॥

झूठे वचन सभा में कहई। टेढ़ी पाग छोर उर महई॥
दया धरम मनहीं नहिं आवे। करे पुन्य तिहि हांसी लावे॥

वह सभा में झूठे वचन कहता है और सिर पर टेढ़ी पगड़ी बांधता है, जिसका छोर (किनारा) उसकी छाती तक लटकाता है। दया-धर्म उसके मन में नहीं आता तथा जो कोई पुण्य-कर्म करता है वह उसकी हंसी करता है।

॥ चौपाई ॥

माल तिलक अरु चन्दन करई। हाट बजार चिकन पट फिरई॥
अंतर पापी ऊपर दाया। सो जिव यम के हाथ बिकाया॥
लंब दांत अरु वदन भयावन। पीरे नेत्र ऊंच अति पावन॥

माला पहनता है और चंदन का तिलक लगाता है तथा शुद्ध-श्वेत चिकन का वस्त्र पहनकर हाट-बाजार घूमता है। वह भीतर से पापी और ऊपर से दयावान दिखता है, ऐसा अधम जीव यम (काल) के हाथ बिक जाता है, अर्थात आवागमन के दुख-बंधन में पड़ जाता है। उसके दांत लंबे और बदन भयानक होता है, उसके पीले नेत्र, ऊंचे तथा बहुत शुद्ध दिखाई पड़ते हैं।

॥ छंद ॥

कहैं सतगुरु सुनहु धर्मनि, भेद भल तुम पाइया।
सतगुरु बिना नहिं भेद पावे, भली विधि तोहि दरसाइया॥
भेंटिया तुम मोहि को, कछु नाहिं तोहिं दुराइहौं।
जो बूझि हो तुम मोहि सो, सकल भेद बताइहौं॥ 35॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, तुमने सब ठीक भेद पाया है। सद्गुरु के बिना कोई भेद नहीं पाता, मैंने अच्छी प्रकार तुम्हें उष्मज खानि का भेद दर्शाया है। तुम परम जिज्ञासु मुझे मिल गए, मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाऊंगा। जो तुम मुझसे पूछोगे, सारा भेद बताऊंगा।

स्थावर खानि से मनुष्य देह में आए हुए जीव की पारख

॥ सोरठा ॥

तीजी खानि सुभाव, अचल खानि जेहि कहत।
नर देही तिन पाव, ताकर लक्षण अब बताइहौं॥ 37॥

तीसरी खानि के स्वभाव को सुनो। जिसे अचल (जो चल न सके) खानि भी कहा जाता है। उस (स्थावर) खानि से आए हुए ये जीव, जो मनुष्य देह पाते हैं, अब मैं उनका लक्षण बताता हूं।

॥ चौपाई ॥

अचल खानि को कहौं संदेसा। देह धरे जस होवे भेंसा॥
छनिक बुद्धि होवे जिव केरी। पलटत बुद्धि न लागे बेरी॥

अचल, अर्थात स्थावर खानि का समाचार कहता हूं, उससे आया जीव भैंसे जैसा शरीर धारण करता है। ऐसे जीवों की बुद्धि क्षणिक होती है, उनकी बुद्धि पलटने में देर नहीं लगती।

॥ चौपाई ॥

झंगा फेंटा सिर पर पागा। राज द्वार सेवा भल लागा॥
घोड़ा पर होवे असवारा। तीर खड़ग औ कमर कटारा॥

वह शरीर में लंबा अंगरखा-कुरता पहनता है, कमर में फेंटा बांधता है तथा सिर पर पगड़ी बांधता है, राजदरबार की अच्छी सेवा करता है। घोड़े पर सवार होता है और कमर में तीर, तलवार तथा कटार बांधता है।

॥ चौपाई ॥

इत उत चित सैन जो मारई। पर नारी करि सैन बुलवाई॥
रस सों बात कहें मुख जानी। काम बान लागे उर आनी॥

इधर-उधर चित्त से देखता हुआ जो सैन (आंख दबाकर संकेत) मारता है, परस्त्री को सैन से बुलाता है। वह मुंह से मीठी रसभरी बात कहता है, जिससे काम-विषय का बाण हृदय में आकर लगता है।

॥ चौपाई ॥

पर घर ताकइ चोरी आयी। पकर बांधि राजा पहं लायी॥
हांसी करे सकल पुनि जबहूं। लाज शरम उपजै नहिं तबहूं॥

वह कुदृष्टि से दूसरों के घर को ताकता है तथा जाकर चोरी करता है, पकड़े जाने पर राजा के पास लाया जाता है। फिर जब सारा जगत उसकी हंसी करता है, परंतु तब भी उसे लाज-शरम उत्पन्न नहीं होती।

॥ चौपाई ॥

छिन इक मन महं पूजा करई। छिन इक मन सेवा चित धरई॥
छिन इक मन महं बिसरे देवा। छिन इक मन महं कीजै सेवा॥

एक क्षण में उसके मन में किसी देवी-देवता एवं ईश्वर की पूजा करने की आती है और एक क्षण में उसका मन बदल जाता है। तथा उसका चित्त किसी की सेवा धारण कर लेता है, अर्थात सेवा में लग जाता है। इस प्रकार क्षण-भर में उसका मन देवी-देवों को भूल जाता है और एक क्षण में वही उसका मन किसी की सेवा करने लगता है।

॥ चौपाई ॥

छिन इक ज्ञानी पोथी बांचा। छिन इक माहिं सबन घर नाचा॥
छिन इक मन में सूर कहाई। छिन इक में कायर हो जाई॥

एक क्षण में वह पोथी-पुस्तक पढ़कर ज्ञानी बनता है, एक क्षण में सबके घर आना-जाना-घूमना करता है। एक क्षण वह अपने मन में शूरवीर कहाता है तो एक क्षण में वही कायर हो जाता है।

॥ चौपाई ॥

छिन इक मन में साहू कहाई। छिन इक मन में चोरि लगाई॥
छिन इक मन में करे जु धर्मा। छिन इक मन में करे अकर्मा॥

एक क्षण वह मन में साहू (धनी) कहाता है और एक क्षण मन में चोरी का भाव लाता है। एक क्षण मन में वह धर्म करने लगता है, तो एक क्षण में मन में न करने योग्य कर्म करने लगता है। इस प्रकार क्षण-क्षण में उसका मन बदलता रहता है और वह मन के साथ सुखी-दुखी होता रहता है।

॥ चौपाई ॥

भोजन करत माथ खजुआई। बांह जांघ पुनि मींजत भाई॥
भोजन करे सोय पुनि जाई। जो जगाय तिहि मारन धाई॥
आंखें लाल होहिं पुनि जाकी। कहं लग भेद कहौं मैं ताकी॥

वह भोजन करते हुए माथा खुजलाता है तथा फिर बांह-जांघ रगड़ता है। भोजन करता है फिर सो जाता है, जो जगाता है उसे मारने दौड़ता है। फिर जिसकी आंखें लाल हो जाती हैं, मैं उसका भेद कहां तक कहूं?

॥ छंद ॥

अचल खानी भेद-धर्मनि, छिनक बुद्धि सो होय हो।
छिन माहिं करके मेट डारे, कहां तुम सों सोय हो॥
मिले सतगुरु सत्य जा कहं, खानि बुद्धि सब मेटही।
गुरुचरण लीन अधीन होवै, लोक सो हंसा पैठही॥ 36॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! अचल खानि से आए जीव का यह भेद है कि वह क्षणिक बुद्धि होता है। वह अपने मन से क्षण-भर में कुछ करता है और फिर क्षण में उसे मिटा डालता है, वह सब तुमसे कहा है। स्थावर खानि से मनुष्य देह पाए उस जीव को सौभाग्य से जो सत्यानुभवी सद्‌गुरु मिल जाएं, तो वे उसकी स्थावर खानि की सारी बुद्धि मिटा दें। फिर वह मुमुक्षु जीव गुरु-चरणों के ध्यान में लीन उनके अधीन हो जाए और सद्‌गुरु के सत्यज्ञानोपदेश को ग्रहण कर हंस बने, तथा फिर विधिवत् भक्ति-साधना करता हुआ सत्यलोक को जाए।

पिण्डज खानि से मनुष्य शरीर में आए हुए जीव की पारख

॥ सोरठा ॥

सुनहु हो धर्मदास, पिण्डज लक्षण गुण कहौं।
कहौं तुम्हारे पास, चौथी खानि की युक्ति सो॥ 37॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, पिण्डज खानि से मनुष्य शरीर में आए हुए जीव के गुण-लक्षण कहता हूं। जो गुण-लक्षण मैं कहता हूं, वे सुने हुए तुम्हारे पास होंगे, वे चौथी (पिण्डज) खानि जानने की युक्ति है।

॥ चौपाई ॥

पिण्डज खानि के लच्छ सुनाऊं। गुण अवगुण का भेद बताऊं।
बैरागी उनमुनि मत धारी। करे धर्म पुनि वेद विचारी॥

पिण्डज खानि के लक्षण सुनाता हूं और उसके गुण-अवगुण का भेद बताता हूं। पिण्डज खानि से मनुष्य देह में आया जीव वैरागी होता है तथा योग-साधना की मुद्राओं में उन्मुनि-समाधि आदि का मत धारण करने वाला होता है और वह वेद-ज्ञान विचार कर धर्म-कर्म करता है।

॥ चौपाई ॥

तीरथ व्रत अरु योग समाधी। गुरु के चरण चित्त भल बांधी॥
वेद पुराण कथे बहु ज्ञाना। सभा बैठि बातें भल ठाना॥

वह तीर्थ जाता है, व्रत करता है एवं ध्यान-योग समाधि में लगन रखता है, उसका चित्त गुरु के चरणों में अच्छी प्रकार बंधा हुआ (लगा हुआ) होता है। वह वेद-पुराण का ज्ञानी होकर बहुत ज्ञान कहता है और सभा में बैठकर बहुत अच्छी बातें करता है।

॥ चौपाई ॥

राजयोग कामिनी सुख माने। मन शंका कबहूं नहिं आने॥
धन संपत्ति सुख बहुत सुहायी। सेज सुफेद पलंग बिछायी॥

राज्य मिलने का अथवा राज्य का कार्य करने का तथा स्त्री-संग का बहुत सुख मानता है, कभी भी अपने मन में शंका नहीं लाता। उसे धन-संपत्ति (स्त्री, पुत्र, परिवार, घर, जमीन, पशु एवं रुपया-पैसा आदि) का सुख बहुत सुहाता है और पलंग पर शुद्ध-श्वेत शय्या बिछाना पसंद करता है।

॥ चौपाई ॥

उत्तम भोजन बहुत सुहायी। लौंग सुपारी बीरा खायी॥
खरचे दाम पुन्य महं सोई। हिरदे सुधि ताकर पुनि होई॥

उसे उत्तम भोजन (शुद्ध-सात्विक, सुपाच्य एवं पौष्टिक) बहुत अच्छा लगता

है, वह लौंग-सुपारी एवं पान-बीड़ा खाता है। वह पुण्य-कर्म में धन खर्च करता है और फिर उसे हृदय में उसकी याद होती रहती है।

॥ चौपाई ॥

चच्छु तेज ताकर पुनि जानी। पराक्रम देही बल ठानी॥
देखो स्वर्ग सदा तेहि हाथा। देखे प्रतिमा नावे माथा॥

उसकी आंखों में बहुत तेज होता हैं और शरीर में पुरुषार्थ-बल होता है। देखो, स्वर्ग सदा उसके हाथों (वश) में है, अर्थात उसे स्वर्ग-सुख मानो प्राप्त होता है, यदि वह कहीं देवी-देवता या किसी संत-महापुरुष की प्रतिमा (मूर्ति) देखता है तो माथा झुकाता है।

॥ छंद ॥

बहुत लीन आधीन धर्मनि, ताहि जिव कहं जानि हो।
सतगुरु चरण निशि दिन गहे, सत शब्द निश्चय मानि हो॥
एक एक बिलोय धर्मनि, कह्यो सत मैं तोहि सों।
चार खानी लक्ष भाषेउं, सुनो आगे मोहि सों॥ 37॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! उस जीव को ध्यान-सुमिरन में बहुत लीन तथा गुरु के अधीन समझना। वह सद्‌गुरु के चरणों का रात-दिन ध्यान करता है और सद्‌गुरु के सत्य-शब्दोपदेश को निश्चयपूर्वक मानता है। हे धर्मदास! एक-एक खानि का निर्णय कर लक्षण सहित, मैंने तुमसे सत्य कहा है। चारों खानि के लक्षण वर्णन कर दिए, अब इसके आगे मुझसे सुनो।

मनुष्य शरीर से मनुष्य देह में आने वाले जीव की पारख

॥ सोरठा ॥

छूटे नर की देह, जन्म धरे फिर आयके।
ताका कहौं संदेश, धर्मदास सुनु कान दे॥ 38॥

मनुष्य-योनि की अवधि समाप्त होने से पूर्व कारणवश जिस मनुष्य की देह छूट (मर) जाती है, वह फिर इस संसार में आकर मनुष्य-जन्म धारण करता है। अब मैं उसका समाचार कहता हूं, हे धर्मदास। तुम कान लगाकर सुनो।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी इक संशय आयी। सो पुनि मोहि कहो समुझाई॥
चौरासी योनिन भरमावे। तब मानुष की देही पावे॥

धर्मदास सद्‌गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे स्वामी! मेरे मन में एक संशय आया है, कृपाकर मुझे वह समझाकर कहो कि चौरासी लाख योनियों में भरमने-भटकने के पश्चात तब जीव मनुष्य की देह पाता है।

॥ चौपाई ॥

यहि विधि मोसन कह्यो बुझायी। अब कैसे यह संधि लखायी॥
सो चरित्र गुरु मोहि लखाऊ। धर्मदास गहि टेके पाऊ॥
मानुष जन्म धरे पुनि आयी। लक्षण तासु कहो समझायी॥

मनुष्य की देह पाया हुआ जीव उसके छूटने पर फिर से मनुष्य की देह पाता है, 'मनुष्य की देह का छूटना और पुनः मनुष्य की देह का पाना', यह देह-संधि अब कैसे हुई ? अर्थात मनुष्य देह छूटने पर जीव फिर मनुष्य देह कैसे पाता है ? यह विधि मुझे समझाकर कहो। हे सद्गुरु आपके चरण पकड़कर धर्मदास माथा टेकता है, यह मनुष्य योनि का चरित्र मुझे दर्शाओ और जो जीव फिर से मनुष्य जन्म धारण कर आता है, उसके गुण-लक्षण समझाकर कहो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुम भलि विधि जानो। होय चरित सो भले बखानों॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम अच्छी प्रकार समझो, मनुष्य-देह से फिर मनुष्य देह को पाने का चरित्र मैं ठीक-ठीक वर्णन करता हूं।

॥ चौपाई ॥

आयु अछत जो नर मर जायी। जन्म धरे मानुष को आयी॥
जो पुनि मूरख ना पतियाई। दीपक बाती देख जराई॥

अल्पायु में अथवा आयु रहते जो मनुष्य मर जाता है, वह फिर शेष आयु को पूरा करने के लिए मनुष्य-जन्म धारण कर आता है। जो मूर्ख-अज्ञानी फिर भी इस पर विश्वास न करे, तो वह दीपक-बाती जलाकर देखे कि—

॥ चौपाई ॥

बहु विधि तेल भरे पुनि ताही। लागै वायु तबै बुझ जाही॥
अग्नि लायके ताहि लेसावे। यहि विधि जीवहि देह धरावे॥

बहुत प्रकार से फिर उस दीपक में तेल भरे, परंतु वायु लगते ही वह तभी बुझ जाता है। उस बुझे हुए दीपक को आग लाकर लेसावे (चसावे अर्थात जलावे) तो वह दीपक फिर जल जाता है, इसी प्रकार जीव मनुष्य देह-धारण करता है।

॥ चौपाई ॥

ताको लक्षण सुनहु सुजाना। तुम सों न गोय राखूं ज्ञाना॥
शूरा होवे नर के माहीं। भय डर ताके निकट न जाहीं॥

हे बुद्धिमान धर्मदास! उस मनुष्य के लक्षण सुनो। उसका ज्ञान तुमसे गुप्त नहीं रखूंगा। मनुष्य से मनुष्य का शरीर पाने पर वह मनुष्य (जीव) शूरवीर होता है, भय-डर उसके पास नहीं जाते।

॥ चौपाई ॥

माया मोह ममता नहिं व्यापे। दुश्मन ताहि देखि डर कांपे॥
सत्य शब्द प्रीति कर माने। निन्दा रूप न कबही जाने॥

माया, मोह एवं ममता उसे नहीं व्यापते, दुश्मन उसे देखकर डर से कांपता है। सद्‌गुरु के सत्य शब्द (वचनोपदेश) को वह विश्वासपूर्वक मानता है। निंदा के रूप को वह नहीं जानता, अर्थात कभी किसी प्रकार की निंदा नहीं करता।

॥ चौपाई ॥

सतगुरु चरण सदा चित राखे। प्रेम प्रीति सो दीनता भाखे॥
ज्ञान अज्ञान होई कहं बूझे। सत्यनाम परिचय नित सूझे॥
जो मानुष अस लक्षण होई। धर्मदास लखि राखो सोई॥

वह सदा सद्‌गुरु के चरणों में चित्त रखता है और प्रेम-प्रीति से दीनता (विनम्रता) की वाणी बोलता है। अज्ञानी होकर (स्वयं का ज्ञान छिपाकर) ज्ञान को पूछता-समझता है, उसे सत्यनाम ज्ञान का परिचय ही नित्य सूझता है, अर्थात सत्यनाम की साधना का विकास करता है। हे धर्मदास! जो मनुष्य ऐसे लक्षणों वाला हो, उसे देखकर मन में रखो (अवसर आने पर उससे ज्ञान चर्चा करो)।

॥ छंद ॥

जन्म जन्म को मैल छूटे, पुरुष शब्द जो पावई।
नाम भाव सुमिरण गहे, सो जीव लोक सिधावई॥
गुरु शब्द निश्चय दृढ़ गहे, सो जीव अमिय अमोल हो।
सत्यनाम बल निज घर चले, मिलि हंस करत किलोल हो॥ 38॥

जो जीव (मनुष्य) सत्यपुरुष के शब्द-सदुपदेश को पाता है, उसके जन्म-जन्म का पाप एवं अज्ञान रूपी मैल छूट जाता है। सत्यनाम का प्रेम-भाव से सुमिरन करने वाला सत्यलोक को जाता है। गुरु के सत्य शब्दोपदेश को निश्चय-पूर्वक जो दृढ़ता से ग्रहण करता है, वह जीव अमृतमय एवं अनमोल हो जाता है। वह सत्यनाम-साधना के बल से अपने घर—अमर लोक चलता है अर्थात जाता है, जहां सद्‌गुरु के हंस-जीव आनंद करते हैं।

॥ सोरठा ॥

सत्यनाम परताप, काल न रोके जीव कहं।
देखि वंश की छाप, काल रहै सिर नायके॥ 40॥

सत्यनाम के प्रताप से काल-निरंजन जीव को सत्यलोक जाने से नहीं रोकता,

उस जीव पर सद्‌गुरु के 'वंश-उपदेश की छाप'[1] देखकर, काल सिर झुकाकर रह जाता है।

विशेष—*सद्‌गुरु कबीर साहेब ने धर्मदास को उपर्युक्त चार खानि एवं उत्कृष्ट मनुष्य योनि के गुण-लक्षण अपने समयानुसार कहे हैं, जैसा कि उस समय प्रचलन था। यद्यपि उनकी कथित वाणी जीवों के जीवन में यथार्थ सिद्ध दृष्टिगोचर होती है, तथापि आज के परिवर्तित समय के परिप्रेक्ष्य में उसमें कहीं कुछ अंतर आ जाना स्वाभाविक है। इसका विशेष कारण है कि जहां समय परिवतर्नशील है, वहां समय के साथ जीवों के रहन-सहन, सभ्यता एवं संस्कृति में भी परिवर्तन आता है, जिससे पुराने समय के रीति-रिवाज नए समय में कुछ बदले हुए जान पड़ते हैं। परंतु उससे उनकी कथित वाणी के मूल भावार्थ में कोई अंतर नहीं पड़ता। वह अपने आप में सर्वथा सत्य एवं अकाट्य है। इसका स्पष्ट प्रमाण है कि यदि हम अपने मनुष्य-जीवन में ध्यान से झांककर देखें, तो निश्चित ही उनके कथनानुसार उक्त खानियों के गुण-लक्षण साफ दिखाई देंगे। यहां तक कि हमारे मनुष्य समाज में कुछ तो ऐसे हैं, जिनका जीवन पशुओं से भी निम्नतर है।*

अतएव, संत-भक्त एवं श्रद्धालु पाठक-वर्ग सद्‌गुरु कबीर साहेब की वचन-वाणी का विश्वासपूर्वक मनोयोग से स्वाध्याय करें और उक्त चार खानि से आकर मनुष्य योनि में उत्पन्न जीव के गुण-लक्षण को जानें। चार खानि के गुणों का अपने जीवन से त्याग करें। जैसा कि चार खानियों से भिन्न मनुष्य-जन्म को प्रधान एवं श्रेष्ठ समझाया गया है, उस अनुसार सद्‌गुरु की शरण में जाकर सत्यज्ञानोपदेश ग्रहण करें तथा उसके यथा-आचरण (भक्ति-साधना) से अपना जीवन सार्थक करें।

चौरासी धार क्यों बनीं?

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

चार खानि के बूझेउ भाऊ। अब बूझौं सो मोहि बताऊ॥
चौरासी योनिन की धारा। किहि कारण यहि कीन्ह पसारा॥

धर्मदास जी सद्‌गुरु कबीर से कहते हैं कि हे साहेब! आपने चार खानि के बहुत विचार कहे, जो मैंने समझे। अब जो मैं समझना चाहता हूं, वह मुझे बताओ। चौरासी लाख योनियों का यह धारा-प्रवाह, सविस्तार किसलिए बनाया है?

---

1. जीव-कल्याण के लिए सद्‌गुरु कबीर साहेब ने अपनी अमृत-वाणी में जिस अनमोल ज्ञान एवं विदेह सत्यनाम का सारोपदेश किया है, उसका प्रचार-प्रसार धर्मदास आदि उनके परम शिष्यों ने किया। उसके बाद उनके अधिकारी नाद एवं बिंद वंश के संत-महापुरुष विधिवत् रूप से उसका प्रचार-प्रसार करते आ रहे हैं। जो उन संत-गुरुजनों की शरणागत होता है, उसे वे उस सत्यनाम-ज्ञान का उपदेश करते हैं। सद्‌गुरु का वही सत्यज्ञानोपदेश 'वंश की छाप' कहलाता है।

॥ चौपाई ॥

नर कारण यह सृष्टि बनाई। कै कोइ और जीव भुगताई॥
हे साहिब जनि मोहि दुराओ। कीजे कृपा विलम्ब जनि लाओ॥

मनुष्य ही के कारण यह सृष्टि बनाई है, या कि कोई और जीव को भोग भुगताने के लिए बनाई है? हे साहेब! मुझसे कुछ मत छिपाओ, मुझ पर कृपा करो, देर मत लगाओ।

मनुष्य के लिए चौरासी बनी है
सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि नर देही सुखदायी। नर देही गुरु-ज्ञान समायी॥
सो तनु पाय आपु जहं जावे। सतगुरु भक्ति बिना दुख पावे॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सर्व-योनियों में श्रेष्ठ यह मनुष्य की देह सुख देने वाली है। इस मनुष्य की देह में ही गुरु-ज्ञान समाता है। (जिसका आचरण कर जीव कल्याण-मोक्ष को उपलब्ध होता है)। ऐसा मनुष्य शरीर पाकर जीव (मनुष्य) जहां कहीं भी जाता है, तो सद्गुरु की भक्ति के बिना दुख पाता है।

विशेष—*सर्व-योनियों की देहों में मनुष्य की देह एक सर्वोच्च शिखर है, जिस तक पहुंचने के लिए जीव को सर्व-योनियों की देहों में से होकर जाना पड़ता है। मनुष्य की देह पाकर भी यदि जीव गुरु-ज्ञान प्राप्त कर अपना कल्याण नहीं करता, प्रत्युत अज्ञान एवं पाप-कर्म में लिप्त रहता है, तो उसका पतन हो जाता है, अर्थात वह नीचे गिर जाता है और उसे पुनः क्रमशः चौरासी में भरमना-भटकना पड़ता है। इस प्रकार मनुष्य की देह अनमोल है, यह सद्गुरु-ज्ञान के योग्य एवं सर्व-सुख आनंद देने वाली है।*

उक्त कथनानुसार इस मनुष्य देह में जीव को सद्गुरु ही ज्ञान प्रदान करते हैं, जिससे उसे सत्यासत्य, सार-असार, जड़-चेतन एवं निज आत्मस्वरूप का बोध होता है। सद्गुरु के ज्ञान-बिना तो मनुष्य देह पाए जीव को भी अन्य योनियों के जीवों की भांति केवल तुच्छ विषय-भोगों को भोगते रहना है। गुरु-ज्ञान बिना वह दोष-पापों से मुक्त होकर कोई पारमार्थिक सत्कर्म नहीं कर सकता और इस प्रकार उसका सुधार अथवा कल्याण कैसे हो सकता है? ऐसी अज्ञान-दशा में इस दुखमय संसार में उसे चिंता, भय, शोक, संताप एवं विभिन्न भोग-रोगों के अतिरिक्त क्या मिलेगा? अतएव, परम सुख-शांति एवं मोक्ष के लिए सद्गुरु की सेवा-भक्ति परमावश्यक है।

॥ चौपाई ॥

नर तनु काज कीन्ह चौरासी। शब्द न गहे मूढ़ मति नासी॥
चौरासी की चाल न छाड़े। सत्यनाम सों नेह न माड़े॥

मनुष्य-शरीर के, अर्थात मनुष्य के भोग के उद्देश्य से चौरासी लाख योनियां रची हैं। सांसारिक माया एवं मनेंद्रियों के विषयों के मोह में पड़कर मनुष्य की बुद्धि का नाश हो जाता है और वह मूढ़-अज्ञानी बन जाता है, फिर वह सद्गुरु के शब्दोपदेश को ग्रहण नहीं करता। वह अज्ञानी मनुष्य चौरासी की चाल, अर्थात उसकी मायिक गतिविधियों को नहीं छोड़ता तथा सत्यनाम से प्रेम नहीं करता।

॥ चौपाई ॥

लै डारै चौरासी माहीं। परचै ज्ञान जहां कछु नाहीं॥
पुनि पुनि दौड़ि कालमुख जाहीं। ताहू ते जीव चेतत नाहीं॥

उस अज्ञानी जीव को काल-निरंजन चौरासी में ले डालता है, जहां आहार, निद्रा, भय एवं मैथुन के अतिरिक्त परिचय-ज्ञान, अर्थात अविनाशी आत्मस्वरूप एवं किसी पदार्थ का ज्ञान कुछ भी नहीं है। चौरासी लाख योनियों की विषय-वासना के संस्कार-अध्यास के वशीभूत अज्ञानी जीव फिर-फिर काल के मुख में जाता है (बार-बार जन्मता-मरता है), विभिन्न दुख भोगों को भोगने पर भी जीव चेतता नहीं, अर्थात सावधान होकर अपना कल्याण-साधन नहीं करता।

॥ चौपाई ॥

बहुत भांति ते कहि समुझावा। जीवत बिपति जान गुहरावा॥
नर तनु पाय गहे सतनामा। नाम प्रताप लहे निज धामा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जीवों की विपत्ति-संकट को जानकर उन्हें चेताने के लिए पुकारा और बहुत प्रकार से कहकर समझाया है कि वह मनुष्य का शरीर पाकर सत्यनाम ग्रहण करे, तो सत्यनाम के प्रताप से वह अपने धाम (अमर लोक) को प्राप्त हो।

॥ छंद ॥

आदिनाम विदेह अस्थिर, परखि जो जियरा गहे।
पाय बीरा सार सुमिरण, गुरु कृपा मारग लहे॥
तजि काग चाल मराल पथ गहि, नीर क्षीर निवारिके॥
ज्ञान दृष्टि सो अदृष्टि देखै, क्षर अक्षर सुविचारिके॥ 37॥

आदि पुरुष[1] के विदेह एवं स्थिर आदि नाम को परख-समझकर जो जीव

---

[1] जिससे षोडश-सुत, अष्टांगी एवं सर्व-जीवों का उद्भव हुआ, वह आदि पुरुष अथवा सत्यपुरुष सदा से है, अतएव आदि पुरुष का नाम ही आदि नाम है। वह सर्व-देहों से परे है, इसलिए विदेह कहा जाता है। उसका कहीं आना-जाना नहीं, वह अपने आप में स्थिर है, इसलिए उसे या उसके नाम को स्थिर कहा गया है।

ग्रहण करता है, उसका कल्याण होता है। विधिपूर्वक गुरु-पूजन कर, उनसे पान-बीड़ा[1] का प्रसाद एवं आदि पुरुष के सार-सुमिरन का ज्ञान पाए, तो उस ज्ञानाचरण में रहता हुआ गुरु-कृपा से वह अमर लोक का मार्ग पा लेता है। गुरु-ज्ञानाचरण में परिपक्व वह नीर-क्षीर का विवेकी बन जाता है, अर्थात वह दूध-रूपी सार-गुणों को ग्रहण कर नीर-रूपी असार-अवगुणों को छोड़ देता है, फिर वह कौवे की चाल छोड़कर हंस के पथ को ग्रहण करता है। इस प्रकार प्राप्त ज्ञान-दृष्टि से वह विनाशी तथा अविनाशी का विचार करके नाशवान जड़-देह के भीतर अगोचर एवं अविनाशी जीवात्मा को देखता है।

॥ सोरठा ॥

निहअक्षर है सार, अक्षर तै लखि पावई।
धर्मनि करो विचार, निहअक्षर निहतत्व है॥ 41॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! विचार करो और समझो कि जो अक्षर नहीं है (अक्षर एवं सबसे परे सर्वथा भिन्न है), वह सार है। उसे अक्षर (शब्द-वाणी) से परख-समझ कर पाया जाता है, अर्थात परम अनुभवी संत-गुरु के शब्दोपदेश से उसका उद्‌घाटन होने पर वह लखा जाता है। सब जड़-तत्वों से परे वह शाश्वत शुद्ध चैतन्य है।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास कहे शुभ दिन मोरा। हे प्रभु दरसन पायऊं तोरा॥
मुंहि किंकर पर दाया कीजै। दास जानि मुंहि यह वर दीजै॥

धर्मदास जी कहते हैं कि हे सद्‌गुरु स्वामी! मेरा शुभ दिन है कि मैंने आपका दर्शन पाया। मुझ तुच्छ-सेवक पर दया कीजिए और मुझे अपना दास जानकर यह वर दीजिए कि—

॥ चौपाई ॥

निशि दिन रहौं चरण लौलीना। पल इक चित्त न होवे भीना॥
तुव पद पंकज रुचिर सुहावन। पद पराग बहु पतितन पावन॥

मैं रात-दिन आपके चरणों में लवलीन रहूं, एक पल भी मेरा चित्त आपके चरणों से अलग न हो। आपके चरण-कमल बहुत सुंदर एवं सुहावने हैं और आपके इन चरणों की पावन धूलि से बहुत पतित (पापी) पवित्र हुए हैं।

॥ चौपाई ॥

कृपा सिंधु करुणामय स्वामी। दया कीन्ह प्रभु अंतर्यामी॥

---

1. दीक्षा लेने पर दीक्षित-भक्त को गुरु पान-बीड़ा का प्रसाद देते हैं, जो दीक्षित-भक्त के उस संकल्प का प्रतीक है कि वह सदा गुरु-दीक्षा का यथावत् आचरण करता रहेगा।

हे साहिब मैं तव बलिहारी। आगल कथा कहो निरवारी॥
चार खानि रचि पुनि कस कीन्हा। सो सब मोहि बताओ चीन्हा॥

हे स्वामी! आप कृपा के सागर करुणामय हो, हे अंतर्यामी प्रभु! आपने मुझ पर दया की है। हे साहेब! मैं आपका बलिहारी हूं। अब आगे की कथा निर्णय कर कहो। चार खानियों की रचना कर फिर क्या किया? वह सब मुझे साफ-साफ बताओ।

जीवों के लिए काल का फंदा रचना

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई॥

सुन धर्मनि यह है यम बाजी। जेहि नहिं चीन्हे पंडित काजी॥
जा यम ताहि गोसइयां भाखे। तजे सुधा नर विष कहं चाखे॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! यह यम, अर्थात काल-निरंजन की चालबाजी (दांव) है, जिसे पंडित-काजी नहीं समझते। इस काल-निरंजन को सब भ्रमवश स्वामी कहते हैं और सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान रूपी अमृत को छोड़कर मनुष्य काल-माया के नाम एवं विषय रूपी विष को चखते-खाते हैं।

॥ चौपाई॥

चारिहु मिलि यह रचना कीन्हा। कच्चा रंग सु जीवहि दीन्हा॥
पांच तत्व तीनों गुण जानो। चौदह यम ता संग पिछानो॥
यहि विधि कीन्हीं नर की काया। मारे खाय बहुरि उपजाया॥

अष्टांगी, ब्रह्मा, विष्णु और महेश चारों ने मिलकर यह सृष्टि-रचना की। उन्होंने जीव की देह को कच्चा रंग दिया, अर्थात वह स्थायी नहीं है, बचपन, किशोर, यौवन और बुढ़ापा की अवस्था आने से वह रंग-रूप में बदलती रहती है। पांच तत्व पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु तथा आकाश और तीन गुण—सत, रज एवं तम से देह की रचना समझो, उसके साथ चौदह यम (काल) पहचानो-समझो। इस प्रकार मनुष्य-देह की रचना कर काल ने उसे मारा-खाया तथा फिर उत्पन्न किया। इस प्रकार मनुष्य जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहता है।

***विशेष**—जीव-देहों को मारना, खाना तथा फिर उत्पन्न करना, यही काल का दांव अथवा फंदा है, जिससे बच पाना हर किसी के लिए सहज नहीं है।*

॥ चौपाई॥

ओंकार है वेद को मूला। ओंकार में सब जग भूला॥
है ओंकार निरंजन जानो। पुरुष नाम सो गुप्त अमानो॥

ॐकार वेद का मूल है और इस ॐकार में सब जग भूल गया है, अर्थात

संसार के लोगों ने इसी को अपना सब कुछ ईश्वर-परमात्मा मान लिया है, इसकी विविध प्रकार से व्याख्या करके उसी में खो गए हैं तथा अन्य सब ज्ञान भूल गए हैं। अनजान-दशा में ॐकार को निरंजन समझो, क्योंकि कुछ के अनुसार निरंजन का नाम ॐकार भी है, किंतु पुरुष का जो विदेह नाम है, उसे गुप्त समझो, वह काल-माया से परे आदिनाम गुप्त है।

विशेष—*ॐकार को ही सब कुछ मान लेना तथा उसका निश्चय करने वाले की ओर ध्यान न देना, सचमुच एक भारी भूल है। इस बारे में सद्‌गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि जिस ॐकार का निश्चय हुआ है, उसे कर्ता मत जानो। जो उसका निश्चय करने वाला है, उसे आंतरिक ज्ञान-दृष्टि से पहचानो, वही सत्य है। यथा—*

ॐकार निश्चय भया, सो कर्ता मति जान।
साचा शब्द कबीर का, परदे माहिं पिछान॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

इसका स्पष्टीकरण करते हुए आगे सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जो मानव ॐकार को आदि जानता है, वह उसे लिखकर मिटाता है अथवा उसे मिटाने में समर्थ है, वह उसी को मानता है, अर्थात वह स्वयं वेद के ॐकार शब्द का आदि मूल है। ॐकार तो बहुत लोग कहते-जपते हैं, परंतु जिसने उसके यथार्थ को समझा, वह विरला है। यथा—

ॐकार आदि जो जानै। लिख कै मेटै ताहि सो माने॥
ॐकार कहैं सब कोई। जिन्ह यह लखा सो बिरला होई॥

(स.क. बीजक)

जिसके जपने अथवा ध्यान-सुमिरन से जीवन-कल्याण होता है, वह नाम सामान्य किसी देह का नहीं हो सकता। वस्तुतः वह अद्वितीय विदेह नाम कोई और है, जो लिखने-बोलने में नहीं आता, गुप्त है। सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि संसार में करोड़ों नाम हैं, परंतु उनके जपने-कथने से मुक्ति नहीं होती। जपने के लिए जो आदिनाम गुप्त है, उसे कोई विरला जानता है। यथा—

कोटि नाम संसार में, ताते मुक्ति न होय।
आदि नाम जो गुप्त जप, बिरला जाने कोय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

उस आदिनाम को जानने का एकमात्र उपाय सद्‌गुरु की शरण है। अनन्य भाव-भक्ति से सद्‌गुरु से वह नाम-ज्ञान जानकर, उसका यथा आचरण करते हुए जीवन सार्थक करना चाहिए।

॥ चौपाई ॥

सहस अठासी ब्रह्मा जाया। भा विस्तार काल की छाया॥
ब्रह्मा ते जिव उपजे बारा। तिन पुनि कथे बहुत विस्तारा॥

ब्रह्मा ने अठासी हजार ऋषियों को उत्पन्न किया, जिससे काल-निरंजन की छाया, अर्थात प्रभाव का बहुत विस्तार हुआ। ब्रह्मा से जो जीव उत्पन्न हुए, वे उनकी संतति के रूप में ब्राह्मण हुए। फिर उन्होंने शिक्षा निमित्त बहुत ज्ञान शास्त्रों का कथन विस्तार किया।

॥ चौपाई ॥

स्मृति शास्त्र पुराण बखाना। तामें सकल जीव उरझाना॥
जीवन को ब्रह्मा भटकावा। अलख निरंजन ध्यान दृढ़ावा॥

ब्रह्मा ने स्मृति, शास्त्र एवं पुराणादि धार्मिक-ग्रंथों का वर्णन किया और उनमें सब जीवों को उलझा दिया। जीवों को ब्रह्मा ने भटका दिया (क्योंकि ब्रह्मा ने धर्म-ग्रंथों में कर्म, उपासना एवं ज्ञान की विधि एवं नियम समझाए, जिससे वे सब ओर प्रचारित हुए), उसने अलख-निरंजन का ध्यान बताकर सुदृढ़ किया, अर्थात उसी पर जोर दिया।

॥ चौपाई ॥

वेद मते सब जीव भरमाने। सत्यपुरुष को मर्म न जाने॥
निरंकार कस कीन्ह तमासा। सो चरित्र बूझो धर्मदासा॥

वेद-मत से सब भ्रमित हो गए, अर्थात भटक गए और सत्यपुरुष के रहस्य को न जान सके। सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! निरंकार-निरंजन ने कैसा तमाशा किया, उस चरित्र को समझो।

॥ छंद ॥

असुर ह्वै जीवन सतावे, देव ऋषि मुनि कारकं।
पुनि धरि औतार रक्षक, असुर करै संहारकं॥
जीव को दिखलाय लीला, अपनी महिमा घनी।
यहि जान जीवन बांधि आशा, यही है रक्षक धनी॥ 40॥

काल-निरंजन असुर होकर अथवा किसी रूप में आसुरी-भाव उत्पन्न कर जीवों को सताता है और देवता, ऋषि एवं मुनि-जनों को पीड़ित करता है। फिर अवतार धारण कर रक्षक बनता है तथा असुरों का संहार करता है। इस प्रकार वह जीवों को अपनी विचित्र लीला (खेल-विनोद) दिखलाकर, अपनी विशेष महिमा का गुणगान करता है, जिससे उसे ही शक्ति संपन्न एवं सब कुछ जानकर जीव आशा बांधते हैं कि यही हमारा महान रक्षक है (इसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं)।

॥ सोरठा ॥

रक्षक कला दिखाय, अंत काल भक्षण करै।
पीछे जिव पछताय, जबहि काल के मुख परै॥ 42॥

वह काल निरंजन अवतार-रूप में अपनी रक्षा की कला दिखाकर, फिर अंतकाल में सब जीवों का भक्षण करता है। जीवन भर उसके नाम-ज्ञान तथा जाप-पूजन आदि की मान्यता के चक्कर में पड़े रहकर फिर पीछे जीव पछताते हैं, जब वे काल के मुख में पड़ते हैं।

॥ चौपाई ॥

अड़सठ तीरथ ब्रह्मा थापा। अकरम करम पुण्य औ पापा॥
बारह राशि नखत सत्ताइस। सात वार पंद्रह तिथि लाइस॥

ब्रह्मा ने अड़सठ-तीर्थ स्थापित किए तथा कर्म-अकर्म और पुण्य-पाप का वर्णन किया। फिर ब्रह्मा ने बारह राशि, सत्ताईस नक्षत्र, सात वार तथा पंद्रह तिथि का विधान रचा (जिससे ज्योतिष-शास्त्र की रचना हुई)।

विशेष*—जिनसे पुण्य लाभ माना जाता है, अड़सठ तीर्थ इस प्रकार हैं—*

अड़सठ तीर्थ*— 1. काशी, 2. प्रयाग, 3. नैमिषारण्य, 4. गया, 5. कुरुक्षेत्र, 6. प्रभास, 7. पुष्कर, 8. विश्वेश्वर, 9. अट्टहास, 10. महेंद्र, 11. उज्जैन, 12. मरुकोट, 13. शंकुकर्ण, 14. गोकर्ण, 15. रुद्रकोटि, 16. स्थलेश्वर, 17. हर्षित, 18. वृषभध्वज, 19. केदार, 20. मध्यमेश्वर, 21. सुपर्ण, 22. कार्तिकेश्वर, 23. रामेश्वर, 24. कनखल, 25. भद्रकर्ण, 26. दंडक, 27. चिदण्डा, 28. कृमिजांगल, 29. एकाग्र, 30. छागलेय, 31. कालिंजर, 32. मंडकेश्वर, 33. मथुरा, 34. मरुकेश्वर, 35. हरिश्चंद्र, 36. सिद्धार्थ क्षेत्र, 37. वामेश्वर, 38. कुक्कुटेश्वर, 39. भस्मगात्र, 40. अमरकंटक, 41. त्रिसंध्या, 42. विरजा, 43. अर्केश्वर, 44. द्वारिका, 45. दुष्कर्ण, 46. करबीर, 47. जलेश्वर, 48. श्रीशैल, 49. अयोध्या, 50. जगन्नाथपुरी, 51. कारोहण, 52. देविका, 53. भैरव, 54. पूर्वसागर, 55. सप्तगोदावरी, 56. निर्मलेश्वर, 57. कर्णिकार, 58. कैलाश, 59. गंगाद्वार, 60. जललिंग, 61. बड़वागिन, 62. बद्रिकाश्रम, 63. श्रेष्ठ स्थान, 64. विंध्याचल, 65. हेमकूट, 66. गंधमादन, 67. लिंगेश्वर, 68. हरिद्वार।*

ज्योतिष शास्त्र में वर्णित बारह-राशि, सत्ताईस नक्षत्र, सात वार और पंद्रह-तिथि इस प्रकार हैं—

बारह राशियां*— 1. मेष, 2. वृक्ष, 3. मिथुन, 4. कर्क, 5. सिंह, 6. कन्या, 7. तुला, 8. वृश्चिक, 9. धनु, 10. मकर, 11. कुंभ, 12. मीन।*

सत्ताईस नक्षत्र*— 1. अश्विनी, 2. भरणी, 3. कृत्तिका, 4. रोहिणी, 5. मृगशिरा, 6. आर्द्रा, 7. पुनर्वसु, 8. पुष्य, 9. आश्लेषा, 10. मघा, 11. पूर्वाफाल्गुनी,*

12. उत्तराफाल्गुनी, 13. हस्त, 14. चित्रा, 15. स्वाति, 16. विशाखा, 17. अनुराधा, 18. ज्येष्ठा, 19. मूल, 20 पूर्वाषाढ़ा, 21. उत्तराषाढ़ा, 22. श्रवण, 23. धनिष्ठा, 24. शतभिषा, 25. पूर्वाभाद्रप्रद, 26. उत्तराभाद्रप्रद, 27. रेवती।

सात वार (दिन)*— 1. रविवार, 2. सोमवार, 3. मंगलवार, 4. बुधवार, 5. बृहस्पतिवार, 6. शुक्रवार 7. शनिवार।*

पंद्रह तिथियां*— 1. प्रथमा (पड़वा), 2. दूज, 3. तीज, 4. चौथ, 5. पंचमी, 6. षष्ठी, 7. सप्तमी, 8. अष्टमी, 9. नवमी, 10. दशमी, 11. एकादशी, 12. द्वादशी, 13. त्रयोदशी, 14. चौदस, 15. पूर्णिमा शुक्ल-पक्ष। इसी प्रकार कृष्ण-पक्ष की तिथियां हैं, केवल उसकी पंद्रहवीं तिथि को अमावस्या कहते हैं।*

॥ चौपाई ॥

चारों युग तब बांधे तानी। घड़ी दंड स्वासा अनुमानी॥
कार्तिक माघ पुन्य कहि दीन्हा। यम बाजी कोई बिरले चीन्हा॥

फिर ब्रह्मा ने चारों युग के समय को नियमबद्ध विस्तार से बांधा। जैसे—पलक बंद होने में जितना समय लगता है, उसे पल कहते हैं। साठ पल को एक घड़ी दंड कहते हैं और यह समय चौबीस मिनट का होता है। साढ़े सात घड़ी का एक पहर होता है। आठ पहर का एक दिन-रात होता है, इसमें चौबीस घंटे लगते हैं। सात-दिनों का एक सप्ताह और पंद्रह दिनों का एक पक्ष होता है। दो पक्ष का एक मास तथा बारह मास का एक वर्ष होता है। फिर सत्रह लाख अठाईस हजार का सतयुग, बारह लाख छियानवे हजार वर्ष का त्रेतायुग, आठ लाख चौसठ हजार का द्वापर युग और चार लाख बत्तीस हजार वर्ष का कलियुग होता है। चारों युगों को मिलाकर तैंतालिस लाख बीस हजार वर्ष का एक महायुग होता है।

बारह महीनों में कार्तिक एवं माघ इन दो महीनों को पुण्य वाले कह दिया कि जिससे जीव (मनुष्य) नाना धर्म-कर्म तथा तीर्थ स्नान करें। जीवों को इस प्रकार भ्रम-बंधन में बांधने वाले यम-निरंजन के दाव-पेंच को कोई विरला पहचानता-समझता है।

॥ चौपाई ॥

तीरथ धाम का बांधि महातम। तजे न भरम न चीन्हे आतम॥
पाप पुण्य महं सबै फंदावा। यहि विधि जीव सबै उरझावा॥

प्रत्येक तीर्थ-धाम का बहुत माहात्म्य बांधा, अर्थात बढ़ा-चढ़ा कर बखान किया, जिससे कि जीव मोहवश तीर्थों में भागने लगे, विभिन्न कामनाओं की पूर्ति एवं फलों की प्राप्ति के लिए लोग तीर्थों में नहाकर पानी पूजने लगे और पत्थर से बनी देवी-देवों की मूर्तियां पूजने लगे। स्वयं को भूलकर तीर्थ—पानी एवं जड़-मूर्ति के पूजने के भ्रम में पड़ गए। लोग भ्रम नहीं त्यागते तथा अपने भीतर के

अविनाशी चैतन्य को नहीं पहचानते, जो कि सब तीर्थों एवं जड़-मूर्तियों को सुंदर बनाने, मानने तथा पूजने वाला है।

तीर्थों में स्नान करने तथा जड़-मूर्तियों के पूजन से पाप क्षीण होकर पुण्य-लाभ होता है, ब्रह्मा ने ऐसा कहकर सबको दौड़ाया, भ्रम के फंदे में फंसाया, इस प्रकार सब जीवों को उलझा दिया।

विशेष—*भ्रम से मुक्त करने के लिए सद्गुरु कबीर साहेब ने सबको समझाते हुए कहा है कि पत्थर-पानी को पूज-पूजकर, संसार के लोग यूं ही मर मिटे। सद्गुरु के ज्ञान—बिना जानने योग्य (अविनाशी चैतन्य आत्मा का) रहस्य अलग-ही रह गया, जो रहस्य जान गए, वे भवसागर से पार हो गए। यथा—*

पाहन पानी पूजि के, पचि मूआ संसार।
भेद अलहदा रहि गयो, भेदवंत सो पार॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

सद्गुरु कबीर साहेब ने समस्त अंधविश्वासों एवं मिथ्या-मान्यताओं का खंडन किया है। वे जीवों को सचेत करते हुए कहते हैं कि संसार के लोग सुख-कल्याण के लिए भरम-भरम कर तीर्थों में दुखी हुए घूमते-फिरते हैं, परंतु तीर्थ बड़ा है या तीर्थों को प्रतिष्ठित कर उसका दास बना स्वयं मानव? यथा—

भ्रमि भ्रमि कबिरा फिरे उदास, तीर्थ बड़ा कि तीर्थ का दास।

परंतु भ्रमित हुए जीवों में इतनी समझ-शक्ति कहां कि चेत सकें। ब्रह्मा ने पाप-पुण्य के फंदे में उन्हें फांसा ही ऐसा है।

॥ चौपाई ॥

सत्य शब्द बिनु बांचे नाहीं। सार शब्द बिन यम मुख जाहीं॥
त्रास जानि जिव पुण्य कमावे। किंचित फल तेहि छुधा न जावे॥

(वेद, शास्त्र, पुराण एवं ज्योतिष तक, जितना उपदेश ब्रह्मा ने दिया, उससे जीव भव-बंधन से मुक्त नहीं होता) सद्गुरु के सत्य शब्दोपदेश के बिना जीव सांसारिक-क्लेश (शोक-चिंता भय-पीड़ा एवं काम-मोह, क्रोधादि) से बच नहीं पाता। सद्गुरु के सार-शब्द बिना वह यमकाल के मुख में जाएगा तथा नाना दुखों को भोगेगा। वस्तुत: काल निरंजन का भय जानकर ही जीव पुण्य कमाता है, अर्थात तीर्थ, व्रत एवं देवी-देव आदि की मूर्ति-पूजा का पुण्य कमाता है, थोड़े फल (धन-संपत्ति आदि सुख-भोग) से उसकी भूख (तृष्णा) नहीं जाती, अतएव अपनी तृष्णा पूर्ति के लिए वह विभिन्न प्रकार के धर्म-कर्म करता है।

॥ चौपाई ॥

जग लग पुरुष डोर नहीं गहई। तब लग योनिन फिर फिर लहई॥
अमित कला जम जीव लगावे। पुरुष भेद जीव नहिं पावे॥

जब तक जीव सत्यपुरुष की डोर ग्रहण नहीं करता, अर्थात सद्‌गुरु से उपदेशित होकर, जब तक जीव सत्यपुरुष की भक्ति-साधना नहीं करेगा, तब तक चौरासी लाख योनियों में फिर-फिर आता रहेगा। यम (काल-निरंजन) अपनी असीम- कला जीव पर लगाता है और उसे भरमाता है, जिससे भ्रमित जीव सत्यपुरुष का भेद जान नहीं पाता।

॥ चौपाई ॥

लाभ लोभ जिव लागे धायी। आशा बंध काल धर खायी॥
यम बाजी कोइ चीन्ह न पावे। आशा दे यम जीव नचावे॥

लाभ के लिए जीव लोभवश वेद-शास्त्र विहित कर्मों में लगा हुआ दौड़ता है और उससे फल पाने की आशा करता है, इस प्रकार जीव को आशा देकर काल-निरंजन उसे धरकर खा जाता है। काल-निरंजन की चालबाजी को कोई पहचान, अर्थात समझ नहीं पाता है। वह शास्त्र विहित पुण्य-पाप के कर्मों से स्वर्ग-नरक की प्राप्ति एवं अनेक विषय-भोगों की आशा देकर जीव को चौरासी लाख योनियों में नचाता है।

॥ चौपाई ॥

प्रथमैं सतयुग को व्यवहारा। जीवहि यम लै करै अहारा॥
लच्छ जीव यम नित प्रति खाई। महा अपरबल काल कसाई॥

पहले सतयुग में काल-निरंजन का यह व्यवहार था कि वह जीवों को लेकर आहार करता था। वह एक लाख जीव नित्य-प्रति खाता था। ऐसा महान अपार बलशाली काल-निरंजन कसाई है।

विशेष—*सद्‌गुरु कबीर साहेब अपने सत्योपदेश में जीवों को काल से सचेत करते हुए, काल के मुख से ही काल का परिचय कराते हैं, जिसमें काल कहता है कि मैं बनाता हूं, मैं ही मारता हूं, मैं पकाता हूं, मैं ही खाता हूं। जल-थल सर्वत्र मैं रम रहा हूं, मेरा नाम निरंजन है। यथा—*

मैं सिरजौं मैं मारौं, मैं जारौं मैं खांव॥
जल थल महिया रमि रहौं, मोर निरंजन नांव॥

(स.क. बीजक)

सबको बनाने-मारने एवं पकाने-खाने वाला काल-निरंजन है। उसके लोभ-प्रलोभन के दांव से सदा सतर्क रहें, सांसारिक माया-मोह से बचें। संसार के लोगों को उनके दुख का कारण बताते हुए तथा उससे उन्हें सावधान करते हुए सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि संसार के लोग अनेक आशाओं एवं मान्यताओं के भ्रम बंधनों में बंधे हैं और इस प्रकार आते-जाते, अर्थात जन्मते-मरते हैं। हे मनुष्य! तू सर्व-योनियों में सर्वोत्तम मनुष्य-जन्म पाकर, अपने आपको भ्रम में पड़कर क्यों खो रहा है? यथा—

भरम का बांधा ई जग, यहि विधि आवै जाय।
मानुष जनम पायके, नर काहे को जहंड़ाय॥

(स.क. बीजक)

काल निरंजन से बचने तथा सर्व-भ्रम से मुक्त होने का, मनुष्य जन्म एक अनमोल अवसर है, इसे व्यर्थ में न गंवाए।

॥ चौपाई ॥

तप्त शिला निशि दिन तहं जरई। तापर लै जीवन कहं धरई॥
जीवहि जारै कष्ट दिखावे। तब फिर लै चौरासी नावे॥

वहां (सतयुग में) रात-दिन तप्त-शिला जलती थी, उस पर काल-निरंजन जीवों को पकड़ कर धरता था। उस पर वह जीवों को जलाता और बहुत दुख दिखाता था, तब फिर उन्हें लेकर चौरासी लाख योनियों में डालता था।

***निर्देश**—संभवत: उपर्युक्त तप्त-शिला से अभिप्राय त्रय-ताप (दैहिक, दैविक एवं भौतिक) से हो, जिससे सभी कालों में समस्त जीव दुखित रहते हैं।*

चौपाई

ता पीछे योनिन भरमावे। यहि विधि नाना कष्ट दिखावे॥
बहु विधि जीवन कीन्ह पुकारा। काल देत है कष्ट अपारा॥

उसके पश्चात जीवों को योनियों में भरमाता एवं घुमाता था। इस प्रकार काल-निरंजन जीवों को बहुत प्रकार के कष्ट दिखाता था।

अनेकानेक कष्ट पाने पर जीवों ने बहुत प्रकार से दुखित स्वर से पुकार की कि—"हम जीवों को काल-निरंजन अपार कष्ट दे रहा है।"

सतयुग में तप्त शिला पर कष्ट पाकर जीवों का गुहार करना और कबीर साहेब का सत्यपुरुष की आज्ञा से जाकर उन्हें छुड़ाना

॥ चौपाई ॥

यमकर कष्ट सह्यो नहिं जाई। हे गुरु ज्ञानी होहु सहाई॥

यम (काल) का दिया हुआ कष्ट हमसे सहा नहीं जाता, हे सद्गुरु ज्ञानी! हमारे सहायक बनो, अर्थात आकर हमें दुख से छुड़ाओ।

॥ छंद ॥

जब देखि जीवन को विकल अति, दया पुरुष जनाइया।
दयानिधि सतपुरुष साहिब, तबै मोहि बुलाइया॥
कहे मुहिं समुझाय बहुत विधि, जीव जाय चितावहू।
तब दरश ते होइ जीव शीतल, जाय तपन बुझावहू॥ 41॥

जब सत्यपुरुष ने जीवों को अत्यंत व्याकुल (दुखी-पीड़ित) देखा, तब

जीवों पर उनकी दया हुई। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि दया के भंडार सत्यपुरुष स्वामी ने तब मुझे (ज्ञानी नाम से) बुलाया। उन्होंने मुझे बहुत प्रकार से समझाकर कहा कि तुम जाकर जीवों को चेताओ। तुम्हारे दर्शन से दग्ध (शोक संतप्त) जीव शीतल हो जाएंगे, जाकर उनकी तपन बुझाओ।

॥ सोरठा ॥

आज्ञा लीन्हो मान, पुरुष सिखापन शीश धरि।
ता क्षण कीन्ह पयान, शीश नाय सतपुरुष कहं॥ 43॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मैंने सत्यपुरुष की आज्ञा मान ली और उनकी शिक्षा-आदेश को सिर पर धरकर तथा उनको शीश झुकाकर उसी क्षण वहां से चल दिया।

विशेष—*सद्गुरु कबीर साहेब सत्यपुरुष के सोलह-सुतों में ज्ञान नाम के सुत हैं, जो सत्यपुरुष के तीसरे शब्दोच्चारण से (ब्रह्म-सृष्टि में) प्रकट हुए। उन्हें योगजीत एवं सुरति-योगसंतायन भी कहा जाता है। कबीर साहित्य एवं प्रसिद्ध संतों के मतानुसार जब चारों युगों में जीव-कल्याण के उपदेशार्थ वे संसार में आए, तब सतयुग में उनका नाम—सतसुकृत, त्रेता में मुनींद्र, द्वापर में करुणामय और कलियुग में कबीर हुआ।*

॥ चौपाई ॥

आये जहं यम जीव सतावे। काल निरंजन जीव नचावे॥
छटपट करे जीव तहं भाई। ठाढ़े भये तहां पुनि जाई॥

सत्यपुरुष की आज्ञा से, सद्गुरु कबीर साहेब वहां आए जहां काल-निरंजन जीवों को सता रहा था और दुखित जीव उसके संकेत पर नाच रहे थे। हे भाई धर्मदास! वहां जीव दुख से छटपटा रहे थे, मैं वहां जाकर खड़ा हुआ।

॥ चौपाई ॥

मोहि देखि जिव कीन्ह पुकारा। हे साहिब हमहिं लेहि उबारा॥
तब हम सत्य शब्द गुहरावा। पुरुष शब्द ते जीव जुड़ावा॥

जीव-समुदाय ने मुझे देखकर पुकार (विनती) की कि हे साहेब! इस दुख से हमें उबार लो, अर्थात हम सब जीवों का उद्धार करो। तब हमने सत्य-शब्द पुकारा, उन्हें सत्य-शब्दोपदेश सुनाया और सत्यपुरुष के सार-शब्द से जीवों को जोड़ा एवं दुखाग्नि में जलते हुओं को शीतल-शांत किया।

जीवों का स्तुति करना

॥ चौपाई ॥

सकल जीव तब अस्तुति लाये। धन्य पुरुष भल तपन बुझाये॥
यम ते छोरि लेहु तुम स्वामी। दया करो प्रभु अंतरयामी॥

तब सब जीवों ने स्तुति की और कहा कि हे पुरुष! आप धन्य हो, आपने हमारे दुख की अच्छी तपन बुझाई। हे स्वामी! आप हमें यम (काल-निरंजन) से छुड़ा लो, हे प्रभु! आप हृदय के भाव जानने वाले हो, हम पर दया करो।

कबीर साहेब (ज्ञानी) वचन जीवों के प्रति

॥ चौपाई ॥

तब मैं कहा जीव समुझाई। जोर करो तो वचन नसाई॥
जब तुम जाय धरौ नरदेहा। तब तुम करिहो शब्द सनेहा॥

तब मैंने जीवों को समझाते हुए कहा कि यदि मैं अपना जोर (शक्ति) करके तुम्हारा उद्धार करता हूं तो सत्यपुरुष का वचन भंग होता है, क्योंकि सत्यपुरुष के वचनानुसार सदुपदेश के द्वारा आत्मज्ञान देकर ही जीवों का उद्धार करना है। जब तुम यहां से जाकर संसार में मनुष्य का शरीर धारण करोगे, तब तुम मेरे सत्य शब्द-उपदेश से प्रेम करना, जिससे कि तुम्हारा उद्धार हो।

॥ चौपाई ॥

पुरुष नाम सुमिरन सहिदाना। बीरा सार कहौं परवाना॥
देह धरी सत शब्द समाई। तब हंसा सतलोकै जाई॥

उस समय मैं सत्यपुरुष के नाम-सुमिरन की सही पहचान विधि, सार-शब्द एवं पान-परवाना-प्रसाद का उपदेश कहूंगा। मनुष्य-देह धरने पर जब मेरा सत्यशब्दोपदेश, अर्थात सार-शब्द तुम्हारे हृदय में समा जाएगा, तुम तब विवेकी हंस-रूप होकर सत्यलोक जाओगे (और सदा के लिए काल-मुक्त हो जाओगे)।

विशेष—*सद्‌गुरु कबीर साहेब के मत-पंथ में 'सार शब्द का सदुपदेश एवं पान परवाना का प्रसाद' ज्ञान-दीक्षा की एक विधि प्रचलित है। काल-जाल एवं चौरासी से छुड़ाने हेतु जीव-कल्याण से संबद्ध चर्चा में सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि चौरासी के फंदे में बंधे हुए जीव को सद्‌गुरु मुक्त कराते हैं। सद्‌गुरु सार-शब्द के सदुपदेश के साथ मुक्ति के पान-परवाना का प्रसाद देकर दीक्षित शिष्य का यम (काल) से तिनका (संबंध) तोड़ देते हैं। यथा—*

गुरु मुक्तावै जीव को, चौरासी वद छोर।
मुक्त प्रवाना देहि गुरु, जम सों तिनुका तोर॥

(स.क.सा.ग्रंथ)

जहां आशा तहां वासा

॥ चौपाई ॥

जहं आशा तहं बासा होई। मन वच करम सुमिर जो कोई॥
देह धारि कीन्हे जिहि आसा। अंत आय लीन्हेउ तहं वासा॥
जब तुम देह धरो जग जाई। बिसर्‌यो पुरष काल धरि खाई॥

जो कोई मन वचन एवं कर्म से जिसको सुमिरन करता है और जहां अपनी आशा रखता है, वहां उसका वास होता है। देह धारकर जिसकी आशा करोगे, अंत में आकर वहां वास लोगे[1]। जब तुम संसार में जाकर देह धरोगे, उस समय यदि सत्यपुरुष को भूल गए तो काल तुमको धरकर खा जाएगा।

जीवों के वचन कबीर साहेब (ज्ञानी) के प्रति

॥ चौपाई ॥

कहें जीव सुनु पुरुष पुराना। देह धरी बिसर्‌यो यह ज्ञाना॥
पुरुष जान सुमिरेउ यमराई। वेद पुराण कहे समुझाई॥

जीव कहते हैं कि हे पुरातन महापुरुष! सुनो, देह धारण कर यह ज्ञान भूल जाता है (स्मरण नहीं रहता)। पहले हमने सत्यपुरुष जानकर काल-निरंजन को सुमिरन किया कि वही सब कुछ (सर्व-सर्वा) है, क्योंकि वेद पुराण यही समझाकर कहते हैं।

॥ चौपाई ॥

वेद पुराण कहें मति एहा। निराकार ते कीजे नेहा॥
सुर नर मुनि तेंतीस करोरी। बांधे सबै निरंजन डोरी॥
ताके मते कीन्ह हम आसा। अब मोहि चीन्ह परे यम फांसा॥

वेद-पुराण सब एक मति से यही कहते हैं कि निराकार-निरंजन से प्रेम करो। तेंतीस करोड़ देवता, मनुष्य तथा मुनि, इन सबको निरंजन ने अपने विभिन्न मतों की डोरी में बांध रखा है। उसी के मत से हमने मुक्त होने की अर्थात अपनी कल्याण-प्राप्ति की आशा की थी, परंतु वह हमारी भूल थी। अब हमें सही-रूप से दिखाई एवं समझ पड़ गया है कि वह सब दुखदायी यम की फांस है।

कबीर साहेब (ज्ञानी) वचन जीवों के प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनो जीव यह छल यम केरा। यह यम फन्दा कीन्ह घनेरा॥

जीवों की बात सुनकर ज्ञानी-स्वरूप में कबीर साहेब कहते हैं कि जीवों सुनो! यह सब यम का छल है, इस यम-निरंजन ने विभिन्न मत-मतांतरों का फंदा (जाल) बहुत अधिक फैलाया है।

॥ छंद ॥

काल कला अनेक कीन्हों, जीव कारण ठाट हो।
तीर्थ व्रत जग योग फन्दे, कोइ न पावत बाट हो॥

1. अर्थात, अंत- काल में जिसे जिसकी इच्छा एवं आसक्ति होती है, वह वहीं पर जाकर निवास करता है।

आप तन धरि प्रगट ह्वै के, सिफत आपन कीन्हेऊ।
नाना गुणन मन कर्म कीन्हे, जीव बंधन दीन्हेऊ॥ 42॥

काल निरंजन ने अनेक कला-मतों का प्रदर्शन किया और जीव को फंसाने के लिए बहुत ठाठ लगवाया, अर्थात ब्रह्मा आदि के द्वारा मोहक वाणी-जाल सजवाया। उससे सबको तीर्थ, व्रत, यज्ञ एवं योगादि कर्म-कांडों में फांसा, जिससे कोई भी मुक्ति-मार्ग को नहीं पाता। फिर आप शरीर धारण कर प्रकट होता है और अपनी विशेष महिमा करवाता है। नाना प्रकार के गुण, कर्म एवं मन करके, वह सब जीवों को बंधन देता है।

॥ छंद ॥

काल कन्या अनेक कीन्हे, जीव कारण जाल हो।
वेद शास्त्र पुरान स्मृति ते, रुधें काल कराल हो॥
देह धरि नर प्रगट हो फिरे, ताहि आशा कीन्हेऊ।
भ्रमत इत उत काल वसि, बहुपंथ में चित दीन्हेऊ॥ 42॥

काल-निरंजन और अष्टांगी ने जीव को फंसाने के लिए अनेकानेक मायाजाल रचे। वेद, शास्त्र, पुराण एवं स्मृति आदि के भ्रामक वाणी-जाल से, भयंकर काल ने मुक्ति-मार्ग को रोक दिया। जीव मनुष्य-देह धारण कर फिरते हैं और अपने उद्धार के लिए उसी के फैलाए मतों की आशा करते हैं। काल के वश होकर वे इधर-उधर भरमते हैं तथा उसके चलाए हुए मत-पंथों में चित्त लगाते हैं।

॥ सोरठा ॥

काल कराल प्रचण्ड, जीव परे वश ताहि के।
जनम जनम भै दण्ड, सत्यनाम चीन्हे बिना॥ 44॥

काल-निरंजन तथा उसके शास्त्र-पुराणादि की मत-मतांतर रूपी कलाएं, बहुत भयंकर हैं और जीव उसके वश में पड़े हैं। सत्यनाम-ज्ञान के जाने-पहचाने बिना जीव जन्म-जन्म में काल का दण्ड भोगते हैं।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

छन इक जीवन कहं सुख दयऊ। जीव प्रबोध पुरुष पहं गयऊ॥
छन इक जीवन कहं सुख दीन्हा। जीवन कह्यो ज्ञान को चीन्हा॥
जब तुम देह धरो जग जाई। तब हम शब्द कहब गोहराई॥
जौ गहि हो सतनाम की डोरी। तब आनब हम जम से छोरी॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि एक क्षण जीवों को ज्ञान का सुख-लाभ देकर, मैं सत्यपुरुष के पास जाऊं कि उससे पूर्व जीवों ने कहा, ''आपने हम जीवों को एक क्षण ज्ञान का सुख दिया और हमने ज्ञान को परखा-समझा।''

तब पुनः मैंने कहा कि जब तुम जाकर संसार में मनुष्य देह धारण करोगे, तब हम सार-शब्दोपदेश कहकर पुकारेंगे-समझाएंगे। उस समय जो सत्यनाम की डोरी को ग्रहण करेगा, तब हम आकर उसे काल से छुड़ाएंगे।

॥ चौपाई ॥

जीव परमोधि पुरुष पहं गयऊ। जीवन को दुख वरनि सुनयऊ॥
पुरुष दयाला दयानिधि स्वामी। जिवके मूल अमान अकामी॥
कह्यो मोहिं बहु विधि समुझाई। जीवन आनों शब्द चेताई॥

जीवों को समझाकर मैं सत्यपुरुष के पास गया और उनको काल द्वारा जीवों के दुख का वर्णन कर सुनाया। दयालु सत्यपुरुष तो दया के भंडार तथा सबके स्वामी हैं, वे जीव के मूल निराभिमानी एवं निष्कामी, अर्थात सहज-सरल हैं। तब सत्यपुरुष ने मुझे बहुत प्रकार से समझाकर कहा कि काल के भय से छुड़ाने के लिए दुखित जीवों को सार-शब्दोपदेश से चेताओ।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास अस विनती लायी। ज्ञानी मोहिं कहो समझायी॥
जो कछु पुरुष शब्द मुख भाखो। सो साहिब मुंहि गोय न राखो॥
कौन शब्द ते जीव उबारा। सो साहिब सब कहो विचारा॥

सद्गुरु कबीर साहब से धर्मदास ने फिर ऐसी विनती की हे सद्गुरु ज्ञानी! मुझे समझा कर कहो। आप सत्यपुरुष के पास गए तो जो कुछ सत्यपुरुष ने आपसे कहा हे साहिब! मुझसे छिपाकर न रखो। कौनसे शब्द से जीव का उद्धार होगा? वह सब विचार कर कहो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष मोहि जैसी फुरमायी। सो सब तुम सों संधि लखायी॥
कहेउ मोहि बहु विधि समुझाई। जीवहि आनो शब्द चिताई॥

सद्गुरु कबीर साहेब ने धर्मदास से कहा कि सत्यपुरुष ने जैसी बातें मुझे कहीं, उन सबका जोड़ (संपूर्ण जानकारी) तुम्हें लखाता, अर्थात समझाता हूं। सत्यपुरुष ने मुझे बहुत प्रकार से समझाया कि जीवों को शब्दोपदेश से चेताकर, अर्थात मोहासक्ति से उन्हें जगाकर ले आओ।

॥ चौपाई ॥

गुप्त वस्तु प्रभु मो कहं दीन्हां। नाम विदेह मुक्ति कर चीन्हा॥
दीन्ह पान परवाना हाथा। संधि छाप मुंहि सौंप्यो नाथा॥

सत्यपुरुष प्रभु ने मुझको 'विदेह नाम' गुप्त-वस्तु प्रदान की, जो मुक्ति का चिन्ह है। स्वामी ने मेरे हाथों में पान-परवाना[1] (गुप्त विदेह नामोपदेश, उसके आचरण का संकल्प प्रतीक एवं मुक्ति-प्रमाण पत्र) दिया और सारोपदेश का अधिकार चिह्न-छाप मुझे सौंप दिया।

॥ चौपाई ॥

बिनु रसना ते सो धुनि होई। गुरु गम ते लखि पावे कोई॥
पंच अमीय मुक्ति का मूला। जाते मिटे गर्भ अस्थूला॥

उपर्युक्त 'विदेह नाम' का गुप्त जप करना कोई परम संत-गुरु से ही समझ पाता है, क्योंकि बिना जिह्वा के हिलाए ही वह जप ध्वनि होती है (जिसे अजपा-जाप भी कहते हैं)।

सद्‌गुरु से विदेह नाम का सदुपदेश पाकर, उनकी पूजा का दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर के मिश्रण से बने पंचामृत और उनके उपदेशानुसार सेवा, सत्संग, स्वाध्याय, साधना तथा समाधि-साक्षात्कार का पंचामृत-सुख ग्रहण करना मुक्ति का मूल है, जिससे मां के स्थूल गर्भ में आना मिट जाता है।

॥ चौपाई ॥

यहि विधि नाम गहे जो हंसा। तारौं तासु इकोतर बंसा॥
नाम डोरि गहि लोकहि जायी। धर्मराय तिहि देखि डरायी॥

इस प्रकार जो कल्याणेच्छुक हंस-मनुष्य नाम-ज्ञान ग्रहण करे, तो मैं उसके एक सौ एक वंश को तार दूं। विदेह नाम की डोरी (मत) को पकड़कर जीव सत्यलोक को जाता है। गुरु के उस हंस को देखकर काल-निरंजन डर जाता है।

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी करो शिष्य जेहि जाई। तिनका तोरो जल अंचवाई॥
जिहि विधि दीन्ह तुमहि मैं पाना। तेहि विधि देहु शिष्य सहिदाना॥

सत्यपुरुष ने मुझे कहा कि हे ज्ञानी! तुम संसार में जाकर जिसे शिष्य करो, उसे जल-आचमन कराकर उसका यम से तिनका (संबंध) तोड़ो, अर्थात उसे काल मुक्त करो। जिस विधि से मैंने तुम्हें पान-परवाना दिया है, उसी विधि से तुम अपने शिष्यों को मुक्ति की सही पहचान पान-परवाना दो।

गुरु महिमा

॥ चौपाई ॥

गुरुमुख शब्द सदा उर राखे। निशि दिन नाम सुधारस चाखे॥
पिया नेह जिमि कामिनी लागे। तिमि गुरु रूप शिष्य अनुरागे॥

1. ज्ञान-दीक्षा विधि के समय गुरु दीक्षित-शिष्य को पान-परवाना देते हैं।

शिष्य को चाहिए कि गुरु के श्रीमुख से जो शब्द–उपदेश हो, उसे सदैव हृदय में रखे, भूल न जाए। रात–दिन गुरु–प्रदत्त नाम का अमृत–रस चखे, अर्थात ध्यान–सुमिरन करे। जिस प्रकार स्त्री अपने पति से प्रेम करती है, उसी से मन लगाती है, उसी प्रकार शिष्य का गुरु से प्रेम होना चाहिए और वैसे ही गुरु की सेवा करते हुए उनके स्वरूप का ध्यान करना चाहिए।

॥ चौपाई ॥

पल पल निरखे मुख कांती। शिष्य चकोर गुरु शशि स्वान्ती॥
पतिव्रता ज्यों पतिव्रत ठाने। द्वितीय पुरुष सपने नहिं जाने॥

शिष्य चकोर पक्षी के समान है तथा गुरु शीतल–शांत चंद्रमा के समान है, जैसे चकोर चंद्रमा को देखता रहता है, वैसे शिष्य को पल–पल गुरु के श्रीमुख की कांति (शोभा–चमक) को निहारते रहना चाहिए।

जैसे पतिव्रता–स्त्री पतिव्रत–धर्म का पालन करती है, अपने पति के अतिरिक्त दूसरे पुरुष को वह स्वप्न में भी नहीं जानती या देखती, अर्थात अन्य किसी को कदापि नहीं चाहती।

॥ चौपाई ॥

पतिव्रता दोउ कुलहि उजागर। यह गुण गहे संतमति आगर॥
ज्यों पतिव्रता पिया मन लावे। गुरु आज्ञा अस शिष्य जुगावे॥

पतिव्रता दोनों कुल (अपने पिता एवं ससुर के परिवार) को प्रकाशित करती है, अर्थात उनका मान बढ़ाती है और स्वयं यशस्विनी होकर सम्मान पाती है। पतिव्रता का यह महान गुण चतुर—बुद्धिमान संत ग्रहण करे। जैसे पतिव्रता स्त्री पति की आज्ञानुसार मन लगाती एवं सेवा करती है, ऐसे ही गुरु की आज्ञा का पालन शिष्य मन से करे, अर्थात गुरु की सेवा में शिष्य का मन पूर्ण समर्पित हो।

॥ चौपाई ॥

गुरु ते अधिक और कोइ नाहीं। धर्मदास परखहु हिय माहीं॥
गुरु ते अधिक कोइ नहिं दूजा। भर्म तजै करि सतगुरु पूजा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! विवेक से हृदय में परख कर देख लो, गुरु से अधिक और कोई नहीं है, अर्थात गुरु सर्वोपरि है। गुरु से श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है (गुरु की महिमा अनुपम है), इसलिए समस्त-भ्रम, अर्थात सब अंधविश्वास एवं मिथ्या-मान्यताओं का परित्याग कर शिष्य चैतन्य-मूर्ति ज्ञान-प्रदाता सद्गुरु की सेवा–पूजा करे।

विशेष—*ज्ञान अनमोल है। ज्ञान के समान अन्य कुछ नहीं। ज्ञान से ही कोई ऊंचा, महान अथवा श्रेष्ठ होता है और ज्ञान के अभाव में पतित। ज्ञान एक अनुपम शक्ति है। जिसके आगे समस्त शक्तियां क्षीण पड़ जाती हैं। ज्ञान से परम सुख-*

शांति एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। ज्ञान से ही गुरु की महत्ता है। गुरु ज्ञानस्वरूप एवं ज्ञान प्रदाता हैं। गुरु-ज्ञान से मनुष्य-जन्म सार्थक होता है, इसलिए गुरु को सर्वोपरि बताया गया है।

गुरु की अनुपम महिमा में सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि तीन लोक तथा नौ खंड में खोजकर देखो, गुरु से बड़ा कोई नहीं है। ज्ञानाभाव में कोई कुछ करे, परंतु किसी का किया कुछ नहीं होता। अज्ञान-अविद्या को दूर करने वाला गुरु के अतिरिक्त कोई नहीं, जो गुरु करे वही सत्य है। यथा—

तीन लोक नव खंड में, गुरु ते बड़ा न कोय।
करता करै न करि सकै, गुरु करै सो होय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

अतएव, सर्व भ्रम-मानंदी को छोड़कर गुरु-चरणों में पूर्णतः समर्पित होना चाहिए।

॥ चौपाई ॥

तीर्थ धाम देवल अरु देवा। शीश अर्पि जो लावैं सेवा॥
तो नहिं वचन कहें हितकारी। भूल भरमे यह संसारी॥
गुरु दयालु अस हैं सुखदाई। देहिं मुक्ति को पंथ बताई॥

अड़सठ तीर्थ, चार धाम, मंदिर और काठ-पत्थर के बने देवी-देवा, इन सबकी जो शीश अर्पण कर सेवा करें, तो भी ये हित करने वाले (कल्याणकारी) वचन नहीं कह सकते। संसार के लोग इन जड़-रूपों में यूं ही भूले एवं भरम रहे हैं।

परम हितैषी सद्गुरु दयालु तो ऐसा सुख देने वाले हैं कि जीव को जड़-चेतन एवं सार-असार का ज्ञान परखाकर, मुक्ति का मार्ग बता देते हैं।

॥ छंद ॥

गुरु भक्ति अटल अमान धर्मनि, यहि सरिस दूजा नहीं।
जप योग तप व्रत दान पूजा, तृण सदृश यह जग कही॥
सतगुरु दया जिहि संत पर, तिहि हृदय यहि विधि आवई।
मम गिरा परखे हरषि के हिय, तिमिर मोह नशावई॥ 43॥

हे धर्मदास! गुरु-भक्ति तो अटल एवं असीम है, इसके समान श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं। जप, योग, व्रत, तप, दान एवं पूजा आदि धार्मिक-अनुष्ठान गुरु-भक्ति की समानता नहीं कर सकते, जिसमें गुरु-भक्ति होती है, वह इस संसार को तृण (घास) के समान तुच्छ-असार कहता है। सद्गुरु की दया जिस संत पर होती है, उसके हृदय में इस प्रकार कल्याणमयी गुरु-भक्ति आती है। जो संत-भक्त प्रसन्नता सहित मेरी भक्तिमयी वाणी को हृदय में परखे, तो उसका मोहांधकार नष्ट हो जाए।

॥ सोरठा ॥

दीपक सतगुरु ज्ञान, निरखेहु संत अंजोर तिहि।
पावे मुक्ति अमान, सतगुरु जेहि दाया करे॥ 45 ॥

सद्गुरु का सत्यज्ञान दीपक के समान है। जैसे दीपक के प्रकाश में हर कोई देखता हुआ चलता है, वह किसी गड्ढे, नाली अथवा कीचड़ आदि में नहीं गिरता, वैसे ही गुरु के ज्ञान-दीपक के प्रकाश में संत-भक्त सांसारिक माया-मोह में नहीं पड़ते, वे उससे उचित-अनुचित एवं सार-असार को परखते हुए निर्भ्रांत एवं निर्भय रहते हैं। सत्यज्ञान-प्रदाता सद्गुरु जिस पर दया करते हैं, वह असीम-मुक्ति को पाता है, अर्थात उनके सत्यज्ञान से वह भव-बंधन से मुक्त हो जाता है।

शुकदेव जी की कथा

॥ चौपाई ॥

शुकदेव भये गरभ जोगेशर। उन समान नहिं थाप्यो दूसर॥
तप के तेज गये हरि धामा। गुरु बिन नहीं लहे विश्रामा॥

शुकदेव[1] जी माता के गर्भ से ही श्रेष्ठ योगी हुए। उनके समान श्रेष्ठ एवं वैराग्यवान योगी दूसरे को नहीं कहा गया। वे अपने तप के तेज से हरि (विष्णु) के बैकुंठ गए, परंतु गुरु बिना वहां विश्राम नहीं लिया, अर्थात रह नहीं पाए।

॥ चौपाई ॥

विष्णु कहे ऋषि कहंवा आये। गुरु विहीन तप तेज भुलाये॥
गुरु विहीन नर मोहि न भावे। फिर फिर जोइन संकट आवे॥

विष्णु ने कहा कि ऋषि जी! आप यहां कहां आए हो ? गुरु-विहीन, अर्थात बिना गुरु होने से आपने अपना तप-तेज भुला दिया (खो दिया),और यहां बिना गुरु का कोई रह नहीं पाता। गुरुहीन व्यक्ति मुझे अच्छा नहीं लगता, वह बार-बार चौरासी लाख योनियों के भोग-संकट में आता है।

॥ चौपाई ॥

जाहु पलटि गुरु करहु सयाना। तब पैहौ इहवां अस्थाना॥
सुनि मुनि शुकदेव वेगि सिधाये। गुरु विहीन तहं रहन न पाये॥

जाओ, आप वापिस लौट जाओ और जाकर कोई समर्थ ज्ञानवान एवं सत्यानुभवी गुरु करो, तब इस स्थान (बैकुंठ) को पाना। विष्णु की बात सुनकर शुकदेव मुनि शीघ्र संसार में लौट आए, गुरु-विहीन होने से वे वहां रह नहीं पाए।

॥ चौपाई ॥

जनक विदेह कीन्ह गुरु जानी। हरषि मिले तब सारंगपानी॥
नारद ब्रह्मा सुत बड़ ज्ञानी। यह सब कथा जगत में जानी॥

---

1. व्यास जी के पुत्र तथा घृताची नाम की अप्सरा से उत्पन्न शुकदेव जी, जो जन्म होने के पश्चात वन में तप करने चले गए।

फिर शुकदेव मुनि ने सोच-समझकर विवेक-वैराग्य में स्थित विदेह जनक जी को गुरु किया और तब बैकुंठ जाने पर विष्णु हंस कर, अर्थात प्रसन्नता के साथ उनको मिले।

ब्रह्मा के पुत्र नारद बहुत बड़े ज्ञानी थे, परंतु गुरु-विहीन होने से उनको भी विष्णु ने गुरु महिमा बताकर गुरु करने को कहा था और तब नारद ने गुरु किया तथा विष्णु-लोक में स्थान पाया, यह सब कथा जगत में प्राय: सब जानते हैं।

॥ चौपाई ॥

और देव ऋषि मुनिवर जेते। जिन गुरु कीन्ह उतर भव तेते॥
जो गुरु मिले तो पंथ बतावे। सार-असार परख दिखलावे॥

और देवता, ऋषि एवं मुनिवर जितने भी हैं, जिन्होंने गुरु किया वे सब भव-सागर से पार हो गए। जो गुरु मिल जाएं तो वे अधर्म से हटाकर धर्म का सन्मार्ग बताते हैं और सार-असार को परखा कर दिखलाते हैं।

॥ चौपाई ॥

गुरु सोइ जो सत्य बतावे। और गुरु कोइ काम न आवे॥
सत्यपुरुष के कहे संदेशा। जन्म मरण का मिटे अंदेशा॥

गुरु वही है जो सत्य को बताता एवं लखाता है, और कोई गुरु काम नहीं आता। गुरु सत्यपुरुष का संदेश, अर्थात सत्योपदेश करता है, जिससे जन्म-मरण का भय, चिंता एवं संदेह मिट जाता है (क्योंकि गुरु की वाणी निर्मल, निर्भ्रांत एवं निर्भय होती है)।

॥ चौपाई ॥

पाप पुण्य की आशा नाहीं। बैठे अक्षय वृक्ष की छांहीं॥
भृंगी मत होवे जिहि पासा। सोइ गुरु सत्य सुनो धर्मदासा॥

गुरु से सार सत्योपदेश ग्रहण कर पाप-पुण्य की आशा-कामना में नहीं पड़ना चाहिए, अपितु पूर्णत: निष्काम होकर अविनाशी-शाश्वत चैतन्य पुरुष-वृक्ष की शीतल सुखदायी छाया में बैठे।

जिसके पास भृंगी-मत होता है, अर्थात जैसे भृंगी कीट को अपने गुण-कौशल से अपने समान भृंग ही बना लेता है, वैसे जो अपने सत्यानुभव-ज्ञान से शिष्य को अपने समान बना ले, हे धर्मदास! सुनो, वही गुरु सत्य होता है।

॥ छंद ॥

जो रहित घर बतलावई, सो गुरु सांचा मानिये।
तीन तजि मिलि जाय चौथे, तासु वचन परमानिये॥
पांच तीन अधीन काया, न्यार शब्द विदेह हौं।
देह मांहिं विदेह दरशै, गुरुमत निज ए कहौं॥ 44॥

जो संसार में आने-जाने (जन्म-मरण) से अलग घर बताए, उसी गुरु को सच्चा मानो। जो तीन लोक को छोड़कर चौथे अमरलोक मिल जाने का उपदेश करता हो, उसी के वचन प्रमाणित मानो। पांच तत्व एवं तीन गुण के अधीन यह शरीर है, इनसे न्यारा शब्द विदेह है। गुरु शिष्य को वह ज्ञानोपदेश करे कि देह में अविनाशी विदेह दिखाई दे, अर्थात उसका साक्षात्कार हो, यही अपना सच्चा गुरुमत कहा है।

॥ सोरठा ॥

ध्यान विदेह समाय, देह धरे का फल यहै।
नहिं आवै नहिं जाय, मिलइ देह विदेह होइ॥ 46 ॥

गुरु के सत्योपदेश से साधक शिष्य का ध्यान देह के भीतर विदेह में समा जाए, मनुष्य की देह धारण करने का यही फल है। फिर वह न आता है न जाता है, अर्थात आवागमन से मुक्त हो जाता है और मिली हुई यह देह मिट जाती है, वह विदेह हो जाता है (देहासक्ति समाप्त हो जाती है)।

॥ सोरठा ॥

अस गुरु करे बनाय, बहुरि न जग देही धरे।
नहिं आवै नहिं जाय, जिहि सतगुरु दाया करे॥ 47 ॥

गुरु कुछ ऐसी ज्ञान-युक्ति करे-बनाए कि फिर शिष्य संसार में देह न धरे। जिसके ऊपर सद्गुरु दया करते हैं, वह संसार में न आता है न जाता है अर्थात सदा के लिए मुक्त हो जाता है।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु मोहि कृतारथ कीन्हा। पूरण भाग्य दरश मुहिं दीन्हा॥
तव गुण मोसे वरणि न जाई। मो अचेत कहं लीन्ह जगाई॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे प्रभु! आपने ज्ञानोपदेश से मुझे संतुष्ट किया है। मेरा पूर्ण परम सौभाग्य है कि आपने मुझे दर्शन दिया। आपके अनंत-गुणों का मुझसे वर्णन नहीं किया जाता, आपने कृपा कर मुझ अचेत-अज्ञानी को ज्ञान से जगा लिया।

॥ चौपाई ॥

सुधा वचन तव मुहिं प्रिय लागे। सुनतहि वचन मोह मद भागे॥
अब वह कथा कहौ समुझाई। जिहि विधि जग में प्रथमैं आई॥

आपके अमृत-वचन मुझे बहुत प्रिय लगे। आपके वचन सुनते ही मेरे मोह-मद आदि विषय-दोष भाग गए हैं। अब मुझे वह कथा समझाकर कहो कि जिस प्रकार आप संसार में पहली बार आए।

सतयुग में कबीर साहेब का सत्यपुरुष की आज्ञा पाकर जीवों को चेताने के लिए चलना, काल निरंजन से भेंट होना और उससे बातचीत करके आगे बढ़ना

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास जो पूछ्यो मोही। युग युग कथा कहौं मैं तोही॥
जबही पुरुष आज्ञा कीन्हा। जीवन काज पृथ्वी पग दीन्हा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! जो तुमने मुझसे पूछा है, वह युग-युग की कथा है मैं तुम्हें कहता हूं। जब सत्यपुरुष ने मुझे आज्ञा की, तब मैंने जीवों के काजहित के लिए पृथ्वी पर जाने के लिए पांव दिया।

॥ चौपाई ॥

करि प्रणाम तबहीं पगु धारा। पहुंचे आय धर्म दरबारा॥
प्रथम चलेउ जीव के काजा। पुरुष प्रताप शीश पर छाजा॥
तेहि युग नाम अचिन्त कहाये। आज्ञा पुरुष जीव पहं आये॥

सत्यपुरुष को प्रणाम कर तब मैंने आगे पांव बढ़ाया और विकराल-काल निरंजन के दरबार (क्षेत्र) में आ पहुंचा। प्रथम में जीव के उद्धार निमित्त चला तो मेरे शीश (मस्तक) पर सत्यपुरुष का प्रताप (ओज) शोभित हुआ। सत्यपुरुष की आज्ञा से मैं जीवों के पास आया और उस युग में अचिंत[1] कहाया।

॥ चौपाई ॥

आवत मिल्यो धर्म अन्याई। तिन पुनि हमसों रार बढ़ाई॥
मोह कहं देखि धर्म ढिग आवा। महा क्रोध बोले अतुरावा॥
योगजीत इहवां कस आवो। सो तुम हमसो वचन सुनावो॥
कै तुम हमको मारन आयो। पुरुष वचन सो मोहि सुनायो॥

आते हुए मुझे अन्यायी काल-निरंजन मिला, फिर उसने मुझसे राड़ बढ़ाई। मुझको देखकर निरंजन मेरे पास आया और महाक्रोध में आतुर होकर बोला कि हे योगजीत! आप यहां कैसे आए हो, वह बात आप मुझे बताओ? या आप मुझे मारने आए हो? हे पुरुष! अपने आने की बात मुझे सही-सही सुनाओ।

योगजीत (कबीर साहेब) वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

तासो कह्यो सुनो धर्मराई। जीव काज संसार सिधाई॥
बहुरि कह्यो सुन सो अन्याई। तुम बहु कीन्ह कपट चतुराई॥

---

1. आपको ही सतसुकृत, योगजीत तथा ज्ञानी आदि नामों से पुकारा जाता है।

जीवन कहं तुम बहुत भुलावा। बार बार जीवन संतावा॥
पुरुष भेद तुम गोपित राखा। आपन महिमा परगट भाखा॥

मैंने उससे कहा कि हे निरंजन! सुनो! जीवोद्धार के लिए मैं संसार में भेजा गया हूं। फिर उसे कहा कि अन्यायी! सुन, तुमने बहुत कपट-चतुराई की है। जीवों को तुमने बहुत भुलावे में डाला है, अर्थात भ्रमित किया है और बेचारे उन जीवों को बारंबार बहुत सताया है। सत्यपुरुष के भेद को तुमने गुप्त रखा तथा अपनी महिमा को प्रकट कर बहुत बखाना है।

॥ चौपाई ॥

तप्त शिला पर जीव जरावहु। जारि बारि निज स्वाद करावहु॥
तुम अस कष्ट जीव कह दीन्हा। तबहि पुरुष मोहि आज्ञा कीन्हा॥
जीव चिताय लोक लै जाऊं। काल कष्ट से जीव बचाऊं॥
ताते हम संसारहि जायब। दे परवाना लोक पठायब॥

तुम तप्त-शिला पर जीव को जलाते हो और उसे जला-पकाकर अपना स्वाद करते हो, अर्थात खाते हो। तुमने ऐसा कष्ट जीव को दिया, तभी सत्यपुरुष ने मुझे आज्ञा दी कि भ्रमित जीव को चेताकर सत्यलोक ले जाऊं और काल-निरंजन के कष्ट से जीव को बचाऊं। इसीलिए मैं संसार जा रहा हूं कि जिससे सत्यज्ञान-परवाना (प्रमाण) देकर जीव को सत्यलोक भेजूं।

निरंजन वचन योगजीत प्रति

॥ चौपाई ॥

यह सुनि काल भयंकर भयऊ। हम कहं त्रास दिखावन लयऊ॥
सत्तर युग हम सेवा कीन्ही। राज बड़ाइ पुरुष मुहिं दीन्ही॥
फिर चौंसठ युग सेवा ठयऊ। अष्ट अंगी पुरुष मुंहि दयऊ॥

मेरी यह बात सुनकर काल-निरंजन भयंकर-रूप हो गया और मुझे भय दिखाने लगा। वह क्रोध में बोला कि मैंने सत्तर-युग सत्यपुरुष की सेवा तपस्या की, तब सत्यपुरुष ने मुझे तीन लोक का राज्य एवं उसकी मान-बड़ाई दी। फिर मैंने चौंसठ-युग तक सेवा-तप किया, तब सत्यपुरुष ने मुझे सृष्टि-रचने को अष्टांगी (आद्या) दी।

॥ चौपाई ॥

तब तुम मारि निकारे मोही। योगजीत नहीं छांड़ों तोही॥
अब हम जान भली विधि पावा। मारों तोहि लेउ अब दावा॥

तब तुमने मुझे मारकर (मानसरोवर-द्वीप से) निकाल दिया था। हे योगजीत? अब मैं तुम्हें नहीं छोडूंगा। अब मैं तुम्हें अच्छी प्रकार समझकर पा गया हूं, तुम्हें मारकर अब मैं अपना बदला लेता हूं।

योगजीत वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

तब हम कहा सुनो धर्मराया। हम तुम्हरे डर नाहिं डराया॥
हम कहं तेज पुरुष बल आही। अरे काल तुम डर मुहिं नाहीं॥

तब मैंने कहा कि हे धर्मराय (निरंजन) सुनो। मैं तुम्हारे डर से नहीं डरता। मुझको तो सत्यपुरुष का तेज एवं बल प्राप्त है। अरे काल! तेरा डर मुझे कदापि नहीं है (क्योंकि तुम मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते)।

॥ चौपाई ॥

पुरुष प्रताप सुमिरि तिहि बारा। शब्द अंग ते कालहि मारा॥
तत क्षण दृष्टि ताहि पर हेरा। श्याम ललाट भयो तिहि बेरा॥

तब मैंने उसी समय सत्यपुरुष के प्रताप का सुमिरन कर दिव्य शब्द-अंग से काल-निरंजन को मारा। उसी क्षण मैंने उस पर दृष्टि डालकर देखा तो उस समय उसका माथा काला हो गया।

॥ चौपाई ॥

पंख घात जस होय पंखेरू। ऐसे काल मोहिं पहं हेरू॥
करे क्रोध कछु नाहिं बसाई। तब पुनि परेउ चरण परआई॥

जैसे किसी पक्षी के पंख पर आघात (चोट) होने पर वह पृथ्वी पर गिरा हुआ विवश देखता रहता है, उड़ नहीं पाता, ऐसे ही काल निरंजन पृथ्वी पर पड़ा हुआ देखता था। वह क्रोध तो करता था, परंतु उसकी कुछ पार नहीं बसाती थी, अर्थात उसका कुछ वश नहीं चलता था, तब फिर आकर वह मेरे चरणों पर गिर पड़ा।

धर्मराय (निरंजन) वचन योगजीत प्रति

॥ छंद ॥

कह निरंजन सुनो ज्ञानी, करौं विनती तोहि सों।
जान बंधु विरोध कीन्हों, घाटि भयी अब मोहि सों॥
पुरुष सम अब तोहि जानौं, नाहिं दूजी भावना।
तुम बड़े सर्वज्ञ साहिब, क्षमा छत्र तनावना॥ 45॥

निरंजन ने कहा कि हे ज्ञानी जी! सुनो, मैं आपसे विनती करता हूं कि मैंने आपको भाई समझकर विरोध (झगड़ा) किया, अब मुझसे यह भारी गलती हो गई। अब मैं आपको सत्यपुरुष के समान समझता हूं, मुझमें कोई दूसरी भावना नहीं है। हे साहेब! आप बड़े हो और सब कुछ जानने वाले शक्ति-संपन्न हो, आप तो गलती करने वाले अपराधी पर भी क्षमा का छत्र तान देते हो (इस प्रकार आप महान हो मुझे क्षमा करो)।

॥ सोरठा ॥

तुमहूं करो बख्शीश, पुरुष दीन्ह जस राज मुहिं।
षोडश महं तुम ईश, ज्ञानी पुरुष एक सम॥ 48॥

जैसे सत्यपुरुष ने मुझे तीन लोक का राज्य दिया है, वैसे आप भी मुझे कुछ इनाम-पुरस्कार प्रदान करो। सोलह-सुतों में आप ईश्वर हो, हे ज्ञानी जी! आप और सत्यपुरुष दोनों एक समान हो।

ज्ञानी (योगजीत) वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

कह ज्ञानी सुनु राय निरंजन। तुम तो भये वंश में अंजन॥
जीवन कहं मैं आन बचाई। सत्य शब्द सतनाम दृढ़ाई॥
पुरुष आज्ञा ते हम चलि आऊ। भौ सागर ते जीव मुक्ताऊ॥
पुरुष अवाज टारु यहि बारा। छन महं तोकहं देउं निकारा॥

ज्ञानी जी ने कहा कि हे निरंजन राय! सुन, तुम तो सत्यपुरुष के वंश में, अर्थात उनके सोलह-सुतों में अंजन (कालिख) रूप कलंकित हुए हो। मैं जीवों को सत्य शब्दोपदेश कर सत्यनाम दृढ़ाकर बचाने आया हूं। भवसागर में जीवों को मुक्त करने के लिए मैं सत्यपुरुष की आज्ञा से आया हूं। सत्यपुरुष ने मुझे जैसी आज्ञा दी है, यदि तुम उसे टाल देते हो, अर्थात उसमें विघ्न डालते हो, तो इसी क्षण मैं तुम्हें यहां से निकाल दूं।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मराय अस विनती ठानी। मै सेवक दुतिया नहिं जानी॥
ज्ञानी विनती एक हमारी। सो न करहु जिहि मोर बिगारी॥

धर्मराय-निरंजन ने फिर ऐसी विनती की कि मैं आपका एवं सत्यपुरुष दोनों का एक-समान शिष्य हूं, इसके अतिरिक्त मैं दूसरी बात नहीं जानता। हे ज्ञानी जी! मेरी आपसे एक विनती है कि ऐसा मत करो, जिससे मेरा कुछ बिगाड़ हो, अर्थात मेरी बनी बात बिगड़ न जाए।

॥ चौपाई ॥

पुरुष दीन्ह जस मोकहं राजू। तुमहूं देहु तो होवे काजू॥
तब हम वचन तुम्हारो मानी। लीजो हंसा हम सो ज्ञानी॥

जैसे सत्यपुरुष ने मुझे राज्य दिया है, वैसे आप भी दो तो मेरा काम हो। तब मैं आपके वचन मानूंगा, हे ज्ञानी जी! फिर मुक्ति के लिए हंस-जीव आप मुझसे लीजिए।

॥ चौपाई ॥

विनती एक करौं तुहि ताता। दृढ़ कर मानो हमरी बाता॥
कहा तुम्हारो जीव नहिं मानहिं। हमरी दिशि ह्वै वाद बखानहिं॥

हे तात! मैं आपसे एक विनती करता हूं, आप मेरी बात को दृढ़तापूर्वक मानो। आपका कहना (कथन) जीव नहीं मानेंगे, वे मेरी दिशा (पक्ष) में होकर आपसे वाद-विवाद करेंगे।

॥ चौपाई ॥

दृढ़ फन्दा मैं रचा बनायी। जामे जीव रहे उरझायी॥
वेद शास्त्र सुमिरिति गुण नाना। पुत्र तीन देवन परधाना॥

मैंने मोह रूपी फंदा इतना मजबूत बनाया है कि जिसमें जीव उलझ रहे हैं। वेद, शास्त्र और पुराण-स्मृति में नाना प्रकार के गुण-धर्म का वर्णन है और उनमें तीन पुत्र ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश देवताओं में प्रधान माने हैं।

॥ चौपाई ॥

तिनहू बहु बाजी रचिराखा। हमरी डोरि ज्ञान मुखि भाखा॥
देवल देव पखान पुजाई। तीरथ व्रत जप तप मन लाई॥

उनमें भी बहुत चालबाजी रच रखी है कि मेरे मत-पंथ का ज्ञान-प्रमुख वर्णन किया गया, जिससे सब मेरी बात मानते हैं। मैं जीवों (मनुष्यों) से मंदिर, देव और पत्थर पुजवाता हूं। मेरे मतानुसार तीर्थ, व्रत, जप एवं तप सब मन लगाकर करते हैं।

॥ चौपाई ॥

पूजा विश्व बलि देव अराधी। यहि मति जीवन राख्यो बांधी॥
जग होम अरु नेम अचारा। और अनेक फन्द मैं डारा॥
जो ज्ञानी जैहो संसारा। जीव न माने कहा तुम्हारा॥

विश्व में लोग देवी, देवा एवं भूत-भैरव आदि की पूजा-आराधना करेंगे और जीवों को मार-काट कर बलि देंगे, ऐसे इन अनेक मत-सिद्धांतों से मैंने सब जीवों को बांध रखा है। धर्म के नाम पर यज्ञ, होम, नेम एवं इनके अतिरिक्त और अनेक जाल मैंने डाल रखे हैं। हे ज्ञानी जी! यदि आप संसार में जाएंगे, तो जीव आपका कहा नहीं मानेंगे, वे मेरे मत-फंदे में फंसे रहेंगे।

ज्ञानी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी कहे सुनो अन्यायी। काटौं फन्द जीव लै जाई॥
जेतिक फन्द तुम रचे विचारी। सत्य शब्द ते सबै बिडारी॥

ज्ञानी जी ने कहा कि अन्याय करने वाले हे निरंजन! सुनो, मैं तुम्हारे जाल को काटकर जीव को सत्यलोक ले जाऊंगा। जितने भी माया-जाल तुमने सोच-विचार कर जीव को फांसने के लिए रचे हैं, सत्य-शब्द से सबको नष्ट कर दूंगा।

॥ चौपाई ॥

जौन जीव हम शब्द दृढ़ावे। फंद तुम्हार सकल मुक्तावे॥
जब जीव चिन्हिहै शब्द हमारा। तजहि भरम सब तोर पसारा॥
सत्यनाम जीवन समझायब। हंस उबार लोक ले जायब॥

जो जीव मेरा सार-शब्द दृढ़ता से ग्रहण करेगा, तुम्हारे सब जालों से मुक्त हो जाएगा। जब जीव मेरे शब्दोपदेश को समझेगा, तेरे फैलाए हुए सब भ्रम-अज्ञान को त्याग देगा। मैं जीवों को सत्यनाम समझाऊंगा, अर्थात सत्यनाम की साधना कराऊंगा और उन हंस-जीवों को उबार (उद्धार) कर सत्यलोक ले जाऊंगा।

॥ छंद ॥

देहुं सत्य शब्द दृढ़ाय हंसहि, दया शील क्षमा घनी।
सहज सील संतोष सारा, आत्मपूजा गुन धनी॥
पुरुष सुमिरन सार बीरा, नाम अविचल गाइहौं।
शीस तुम्हरे पांव देके, हंसहि लोक पठाइहौं॥ 46 ॥

सत्य-शब्द दृढ़ता से देकर मैं उन हंस-जीवों को दया, शील, घनी क्षमा, काम-मोहादि विषयों से रहित सहजता, संपूर्ण संतोष और आत्मपूजा अनेक सद्‌गुणों का धनी (संपन्न) बना दूंगा। सत्यपुरुष के सुमिरन का जो सार-उपाय है, उससे सत्यपुरुष का अविचल नाम हंस-जीव गाएंगे। तब तुम्हारे शीश पर पांव रखकर, मैं उन हंसों को सत्यलोक भेज दूंगा।

॥ सोरठा ॥

अमीनाम विस्तार, हंसहि देइ चिताइहौं।
मरदहिं मान तुम्हार, धर्मराय सुनु चित्त दे॥ 47 ॥

अविनाशी अमीनाम का प्रचार-प्रसार करके, हंसों को चेता दूंगा, अर्थात उन्हें भ्रम-मुक्त कर दूंगा। हे धर्मराय निरंजन! मेरी बात चित्त लगाकर सुन कि इस प्रकार मैं तुम्हारा मान-मर्दन करूंगा।

॥ चौपाई ॥

चौका करि परवाना पाई। पुरुष नाम तिहि देउं चिन्हाई॥
ताके निकट काल नहिं आवे। संधि देखि ताकहं सिर नावे॥

जो सौभाग्यशाली मनुष्य विधिपूर्वक चौका करके गुरु से दीक्षित होकर पान-परवाना पाएगा, मैं सत्यपुरुष का नाम उसे भली प्रकार लखा-समझा दूंगा। उसके पास काल नहीं आता, सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान से उस हंस-जीव की संधि (मेल-जोड़) देखकर काल-निरंजन उसको शीश झुकाता है।

__विशेष__— कबीर पंथ में विशेषत: धर्मदास प्रणाली के अंतर्गत सात्विक-यज्ञ चौका-आरती का एक महत्वपूर्ण विधान है। यह चैतन्य-मूर्ति ज्ञान-प्रदाता सद्गुरु की पूजा का महान आध्यात्मिक उत्सव है। वस्तुत: यह सात्विक ज्ञान-यज्ञ का स्पष्ट रूप है, जिसे सुनियोजित विधि से संत-गुरु अपने सेवक-शिष्यों के साथ करते हैं। इस चौका-आरती में जो प्रतीक दर्शाए जाते हैं, उनका गहन-गूढ़ भावार्थ है। इसमें गुरु को प्रसन्न करने के लिए गुरु-स्तुति, रमैनी, साखी तथा भजन गाए जाते हैं और गुरु की आरती-पूजा की जाती है। इस अवसर पर जिज्ञासु जन गुरु से ज्ञान दीक्षा लेते हैं। दीक्षा में गुरु शिष्य को सत्योपदेश के साथ सुमिरन के लिए सार-शब्द अथवा सार-नाम प्रदान करते हैं। फिर गुरु उस दीक्षित शिष्य के गले में कंठी माला पहनाकर यम से उसका तिनका तुड़वा देते हैं। अर्थात उसे काल-जाल से मुक्त कर देते हैं और उसके पश्चात गुरु पान-परवाना का प्रसाद देते हैं, जो कि शिष्य के कल्याण का सही प्रमाण माना गया है।

गुरु के उपदेशित ज्ञान का विधिवत् आचरण करते हुए शिष्य को भक्ति-साधना में अपने घट का चौका करना होता है, जिससे जीवन्मुक्ति मिलती है। उसके विधि-विधान में—अहंकार एवं अभिमान को भगा दो और अपने घट (हृदय) के चौके में ज्ञान की आरती जलाकर प्रकाश कर दो। यथा—

अहंकार अभिमान बिडारा, घट का चौका कर उजियारा।

(क.संध्या पाठ)

(अहंकार—मन का गर्व, मिथ्या अपनेपन का बोध। अभिमान-प्रतिष्ठा में अपने को बड़ा और दूसरे को छोटा समझना)। सही विस्तृत जानकारी के लिए कृपया संध्या पाठ पढ़ें।

इस प्रकार गुरु की आज्ञा एवं उपदेशानुसार चलने से साधक शिष्य आवागमन से मुक्त हो जाता है।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

इतना सुनत काल सकाना। हाथ जोरि के विनती ठाना॥
दयावन्त तुम साहिब दाता। एतिक कृपा करो हो ताता॥

ज्ञानी जी की इतनी बात सुनते ही काल-निरंजन सकपका गया, अर्थात भयभीत हो गया। उसने हाथ जोड़कर विनती की हे तात! आप दया करने वाले साहिब एवं दाता हो, मुझ पर इतनी कृपा करो—

॥ चौपाई ॥

पुरुष शाप मोकहं अस दीन्हा। लच्छ जीव नित ग्रासन कीन्हा॥
जो जिव सकल लोक तुव आवे। कैसे क्षुधा सो मोरि मिटावे॥

सत्यपुरुष ने मुझे ऐसा शाप दिया है कि मैं नित्य प्रति लाखों जीव खाऊं। यदि संसार के सब जीव आपके सत्यलोक आए, तो मेरी भूख कैसे मिटेगी ?

॥ चौपाई ॥

पुनि पुरुष मो पर दाया कीन्हा। भौसागर कहं राज मुहिं दीन्हा॥
तुमहूं कृपा मोपर करहूं। मागौं सो वर मुहि उच्चरहू॥

फिर सत्यपुरुष ने मुझ पर दया की और भवसागर का राज मुझे दिया। आप भी मुझ पर कृपा करो और जो आपसे कहकर मैं मांगता हूं, वह वर मुझे दीजिए।

॥ चौपाई ॥

सतयुग त्रेता द्वापर माहीं। तीनहु युग जिव थोरे जाहीं॥
चौथा युग जब कलियुग आवे। तब तुव शरण जीव बहु जावे॥
ऐसा वचन हार मुहिं दीजे। तब संसार गवन तुम कीजे॥

सतयुग, त्रेतायुग और द्वापर युग इन तीनों युग में, सत्यलोक में जीव थोड़े जाएं और चौथा युग जब कलियुग आए, तब आपकी शरण में बहुत जीव जाएं। ऐसा पक्का वचन मुझे दीजिए और तब आप संसार में जाइए।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

अरे काल परपंच पसारा। तीनों युग जीवन दुख डारा॥
विनती तोर लीन्ह मैं जानी। मोकहं ठगा काल अभिमानी॥

ज्ञानी जी ने कहा कि अरे काल-निरंजन। तुमने प्रपंच (छल-मिथ्या प्रदर्शन) फैलाया है और तीनों युग में जीवों को दुख में डाल दिया है। मैंने तुम्हारी विनती जान ली, अरे अभिमानी काल! तुम मुझे ठगते हो।

॥ चौपाई ॥

जस विनती तू मोसन कीन्ही। सो अब बकसि तोहि कहं दीन्ही॥
चौथा युग जब कलियुग आये। तब हम आपन अंश पठाये॥

जैसी विनती तुमने मुझसे की, वह मैंने तुम्हें बख्श दी, अर्थात तुम्हारी मांग मान ली, चौथा युग जब कलियुग आएगा, तब मैं जीवोद्धार के लिए अपने अंश (अपने समरूप मतानुयायी परम संत) को भेजूंगा।

॥ छंद ॥

सुरति आठों अंश सुकृत, प्रगटि हैं जग जायके।
ता पीछे पुनि सुरति नौतम, जाय गृह धर्मदास के॥
अंश ब्यालिस पुरुष के वे, जीव कारण आवईं।
कलि पंथ प्रगट पसारि के, वे जीव लोक पठावईं॥ 49॥

परम पुण्यवान आठ अंश सुरति संसार में जाकर प्रकट होंगे। उसके पीछे फिर नए एवं उत्तम स्वरूप सुरति नौतम धर्मदास के घर जाकर प्रकट होंगे। सत्यपुरुष के बयालीस अंश, वे जीव-उद्धार के कारण संसार में आएंगे। वे कलियुग में व्यापक-रूप से पंथ प्रकट कर चलाएंगे और जीव को ज्ञान प्रदान कर सत्यलोक भेजेंगे।

॥ सोरठा ॥

सत्य शब्द दे साथ, जिहि परवाना देइहैं।
सदा ताहि हम साथ, सो जिव यम नहिं पाइहैं॥ 50॥

जिस जीव को वे प्रकट हुए अंश सत्य-शब्द के साथ परवाना देंगे, मैं सदा उसके साथ हूंगा और वह जीव यम नहीं पाएगा, अर्थात वह काल-जाल से सदा मुक्त रहेगा।

धर्मराय (निरंजन) वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहिब तुम पंथ चलाऊ। जीव उबार लोक लै जाऊ॥
वंश छाप देखौं जेहि हाथा। ताहि हंस हम नाउब माथा॥
पुरुष आवाज लीन्ह मैं मानी। विनती एक करौं तुहिं ज्ञानी॥

हे साहेब! आप पंथ चलाओ और भवसागर से जीव का उद्धार कर सत्यलोक ले जाओ। मैं जिस जीव के हाथ में अंश-वंश की छाप (परवाना) देखूंगा, उस हंस-जीव को मैं माथा झुकाऊंगा अर्थात प्रणाम करूंगा। सत्यपुरुष की आवाज (बात) को मैंने मान लिया, परंतु हे ज्ञानी जी! मेरी तुमसे एक विनती है।

काल का अपने बारह पंथ चलाने की बात ज्ञानी जी से कहना

॥ चौपाई ॥

पंथ एक तुम आप चलाऊ। जीवन लै सतलोक पठाऊ॥
द्वादश पंथ करौं मैं साजा। नाम तुम्हार ले करौं अवाजा॥

आप एक पंथ चलाओगे और जीवों को लेकर सत्यलोक भिजवाओगे। मैं बारह पंथ को सुसज्जित एवं व्यवस्थित करूंगा, जो आपका नाम लेकर ही आवाज करेंगे, अर्थात वे सब बारह पंथ भी अपने-आपको 'कबीरपंथी' कहेंगे।

॥ चौपाई ॥

द्वादश यम संसार पठैहों। नाम तुम्हारे पंथ चलैहों॥
मृतु अन्धा इक दूत हमारा। सुकृत गृह लैहैं अवतारा॥

मैं बारह यम संसार में भेजूंगा और आपके नाम पंथ चलाऊंगा, अर्थात 'कबीर' नाम लेकर पंथ चलाऊंगा। 'मृतु अंधा' नाम का मेरा एक दूत, सुकृत (धर्मदास) के घर में जन्म लेगा।

॥ चौपाई ॥

प्रथम दूत मम प्रगटै जायी। पीछे अंश तुम्हारा आयी॥
यहि विधि जीवन को भरमाऊं। पुरुष नाम जीवन समझाऊं॥

पहले मेरा दूत धर्मदास के घर में जाकर जन्म लेगा, इसके बाद आपका वंश वहां आएगा। इस प्रकार मेरा वह दूत धर्मदास के घर जन्म लेकर जीवों (मनुष्यों) को भरमाएगा और जीवों को सत्यपुरुष का नाम-उपदेश समझाएगा।

॥ चौपाई ॥

द्वादश पंथ जीव जो ऐहैं। सो हमरे मुख आन समैहैं॥
एतिक विनती करो बनाई। कीजे कृपा देउ बकसाई॥

उन बारह पंथ के अंतर्गत जो जीव आएंगे, वे मेरे मुख में आकर समाएंगे, अर्थात वे मेरा ग्रास होंगे। बस मेरी इतनी-सी विनती मानकर मेरी बात बनाओ और मेरे ऊपर कृपा करो कि मुझे क्षमा कर दो (मेरी मांग पूरी कर दो)।

काल-निरंजन का ज्ञानी जी से जगन्नाथ मंदिर-स्थापना का वरदान मांगना

॥ चौपाई ॥

कलियुग प्रथम चरण जब आयब। तब हम बौद्ध शरीर बनायब॥
राजा इन्द्रमन पहं जायब। जगन्नाथ हम नाम धरायब॥

द्वापर युग का अंतिम और कलियुग का प्रथम चरण जब आएगा, तब मैं बौद्ध-शरीर का शरीर धारण करूंगा। इसके पश्चात मैं उड़ीसा के राजा इंद्रमन के पास जाऊंगा और मैं अपना नाम जगन्नाथ धराऊंगा।

॥ चौपाई ॥

राजा मंडप मोर बनैहे। सागर नीर खसावत जैहै॥
पुत्र हमार विष्णु तहं आही। सागर ओइल सेतु तेहि पाही॥
ताते मण्डप बचन न पाई। उमंगे सागर लेई डुबाई॥

राजा इंद्रमन जब मेरा अर्थात जगन्नाथ मंदिर समुद्र के किनारे बनवाएगा, तब ही उसे समुद्र का पानी गिरा देगा, उससे टकराकर बहा देगा। उसका एक विशेष कारण होगा कि त्रेतायुग में मेरे पुत्र विष्णु का अवतार राम वहां आएगा और वह समुद्र पर पुल बांधेगा। उस शत्रुता से वह मंदिर बच नहीं पाएगा, क्योंकि समुद्र उमड़कर उसे डुबो देगा।

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी एक मता निर्माऊ। प्रथमै सागर तीर सिधाऊ॥
तुम कहं सागर लांघि न जाई। देखत उदधि रहे ठहराई॥
यहि विधि मोकहं थापिहु जायी। पीछे आपन अंश पठायी॥

हे ज्ञानी जी! आप अपना एक मत-विचार बनाओ कि पहले वहां समुद्र के किनारे पहुंच जाओ। आपको देखकर समुद्र रुक जाएगा, आपको लांघकर समुद्र आगे नहीं जाएगा, इस प्रकार वहां मुझको, अर्थात जगन्नाथ मंदिर को स्थापित करो, उसके पीछे अपना अंश भेजना।

॥ चौपाई ॥

भवसागर तुम पंथ चलाओ। पुरुष नाम ते जीव बचाओ॥
सन्धि छाप मुहि देहु बतायी। पुरुष नाम मुहिं देहु सुझायी॥
बिना संधि जो उतरै घाटा। सो हंसा नहिं पावे बाटा॥

आप भवसागर में अपना पंथ चलाओ और सत्यपुरुष के सत्यनाम से जीव बचाओ, अर्थात जीवोद्धार करो। मुझे अपने मत-पंथ का चिह्न-छाप बता दो और सत्यपुरुष का नाम सुझा-समझा दो। जो जीव बिना छाप के भवसागर के घाट से उतरना चाहेगा, वह हंस के 'मुक्ति-घाट' का मार्ग नहीं पाएगा।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ छंद ॥

धर्म जस तुम मांगहू, सो चरित हम भल चीन्हिया।
पंथ द्वादश तुम कहेउ सो, अमी घोर विष दीन्हिया॥
जो मोहि डारौं तोहि को, अब पलटि कला दिखावऊं।
लै जीव बंद छुडाय यम सों, अमरलोक सिधावऊं॥ 48॥

हे निरंजन! जैसा तुम मुझसे मांगते या चाहते हो, वह तुम्हारा चरित्र मैंने अच्छी प्रकार समझ लिया है। जो तुमने बारह पंथ चलाने की बात कही है, वह तुमने अमृत में विष डाल दिया है। तुम्हारे चरित्र को देखकर यदि तुम्हें मिटा डालूं और अब पलटकर अपनी कला दिखाऊं तथा यम से जीव का बंधन छुड़ाकर अमरलोक ले जाऊं तो—

॥ सोरठा ॥

पुरुष वचन अस नाहिं यहै सोच चित कीन्हेऊ।
लै पहुंचावहुं ताहि, सत्य शब्द जो दृढ़ गहे॥ 51॥

सत्यपुरुष का वचन (आदेश) ऐसा नहीं है। यह सोचकर मैंने चित्त में निश्चय किया कि अमर लोक उसी जीव को ले जाकर पहुंचाऊं, जो मेरे सत्य शब्द को दृढ़तापूर्वक ग्रहण करेगा।

॥ चौपाई ॥

द्वादश पंथ कहेउ अन्यायी। सो हम तोहि दीन्ह बकसाई॥
पहिले प्रगटे दूत तुम्हारा। पीछे लेहि अंश औतारा॥

हे अन्यायी निरंजन! तुमने जो बारह पंथ चलाने की मांग कही है, वह मैंने तुमको दी, अर्थात तुम्हारी बात मान ली। पहले तुम्हारा दूत धर्मदास के घर प्रकट होगा और उसके पीछे अंश-अवतार होगा।

॥ चौपाई ॥

उदधि तीर कहं मैं चलि जायब। जगन्नाथ को माड मडायब॥
ता पाछे हम पंथ चलायब। जीवन कहं सतलोक पठायब॥

समुद्र के किनारे (तट) पर मैं चला जाऊंगा और जगन्नाथ मंदिर को बनवाऊंगा। उसके पीछे मैं अपना सत्य-पंथ चलाऊंगा और जीवों को सत्यलोक भेजूंगा।

धर्मराय (निरंजन) का ज्ञानी जी को धोखा देकर उनके गुप्त भेद पूछना

धर्मराय (निरंजन) वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

सन्धि छाप मुहिं दीजे ज्ञानी। जस दैहौं हंसहि सहिदानी॥
जो जिव मोकहं सन्धि बतावे। ताके निकट काल नहिं आवे॥
नाम निसानी मोकहं दीजै। हे साहिब यह दाया कीजे॥

निरंजन ने कहा कि हे ज्ञानी जी! आप मुझे सत्यपुरुष से मेल का अपना छाप-निशाना दीजिए, जैसी पहचान आप अपने हंस-जीवों को दोगे। जो जीव मुझको निशान-पहचान उसी प्रकार बताएगा, उसके पास काल नहीं आएगा। हे साहिब! मुझ पर दया कीजिए और सत्यपुरुष की नाम-निशानी मुझे दीजिए।

ज्ञानी जी वचन धर्मराय प्रति

॥ चौपाई ॥

जो तुहिं देहूं संधि लखाई। जीवन काज होइहो दुखदाई॥
तुम परपंच जान हम पावा। काल चलै नहिं तुम्हरो दावा॥

ज्ञानी जी ने कहा कि हे धर्मराय-निरंजन! जो मैं तुम्हें सत्यपुरुष के मेल की निशानी बतला या समझा दूं, तो तुम जीवों के उद्धार कार्य में दुख अथवा विघ्न उत्पन्न करोगे। तुम्हारे धोखे को मैंने समझ लिया है, हे काल! मुझ पर तुम्हारा दांव नहीं चलेगा।

॥ चौपाई ॥

धर्मराय तुहिं परगट भाखा। गुप्त अंक बीरा हम राखा॥
जो कोइ लेइ नाम हमारा। ताहि छोड़ि तुम होहु नियारा॥
जो तुम हंसहि रोको जायी। तो तुम काल रहन नहि पायी॥

हे धर्मराय! मैंने तुम्हें स्पष्ट-साफ शब्दों में कह दिया है कि अपना अक्षर-नाम एवं पान-बीड़ा मैंने गुप्त रखा है। जो कोई जीव हमारा नाम लेगा, तुम उसे छोड़कर अलग हो जाना। जो तुम हंस-जीवों को जाकर रोकोगे, तो हे काल! तुम रहने नहीं पाओगे।

धर्मराय वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे धर्म जाओ संसारा। आनहु जीव नाम आधारा॥
जो हंसा तुम्हरो गुण गाये। ताहि निकट तो हम नहिं जाये॥
जो कोइ जइहैं शरण तुम्हारा। हम सिर पग दै होवे पारा॥

धर्मराय ज्ञानी जी से कहते हैं कि आप संसार में जाइए और सत्यपुरुष के नाम के आधार पर जीव को मुक्त करके ले जाइए। जो हंस-जीव आपके गुण गाएगा, उसके पास विरोध-भाव से मैं कभी नहीं जाऊंगा। जो कोई जीव आपकी शरण में जाएगा, वह मेरे सिर पर पांव रखकर भवसागर पार होगा, अर्थात मैं सदा उसके आगे नत-मस्तक होऊंगा।

॥ चौपाई ॥

हम तो तुम सन कीन्ह ढिठाई। पिता जान कीन्हीं लरिकाई॥
कोटिन औगुण बालक करई। पिता एक हृदय नहिं धरई॥
जो पितु बालक देइ निकारी। तब को रक्षा करे हमारी॥
धर्मराय उठ सीस नवायो। तब ज्ञानी संसार सिधायो॥

मैंने तो आपके सामने बहुत ढिठाई (मूर्खता) की है तथा आपको पिता के समान समझकर लड़कपन किया है। करोड़ों अवगुण (गलतियां) बालक करता है, परंतु पिता अपने हृदय में एक भी नहीं रखता। अवगुणों के कारण यदि पिता अपने बालक को घर से निकाल दे, तब उसकी रक्षा कौन करेगा? इसी प्रकार जैसे मैंने ढिठाई की है, यदि आप मुझे निकाल देंगे या क्षमा नहीं करेंगे तो मेरी रक्षा कौन करेगा?

(निरंजन के झांझरी द्वीप में ज्ञानी जी से उपर्युक्त वार्ता हो जाने पर) निरंजन ने उठकर शीश नवाया, तब ज्ञानी जी ने संसार की ओर प्रस्थान किया।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

जब हम देखा धर्म सकाना। तब तहंवा ते कीन्ह पयाना॥
कह कबीर सुनु धर्मनि नागर। तब मैं चलि आयऊं भवसागर॥

सद्‌गुरु कबीर धर्मदास से कहते हैं कि जब मैंने निरंजन को अधीर देखा, तो मैंने वहां से प्रस्थान किया और भवसागर की ओर चला आया।

ज्ञानी जी (कबीर साहेब) की ब्रह्मा से भेंट

॥ चौपाई ॥

आया चतुरानन के पासा। तासों कीन्ह शब्द परकासा॥
ब्रह्मा चित्त दै सुनवे लीन्हा। पूछ्यो बहुत पुरुष को चीन्हा॥

भवसागर की ओर जाते हुए पहले मैं, अर्थात ज्ञानी जी ब्रह्मा के पास आया और ब्रह्मा को आदि पुरुष का शब्दोपदेश किया। ब्रह्मा ने चित्त लगाकर सुना और आदि पुरुष का चिह्न लक्षण बहुत पूछा।

॥ चौपाई ॥

तबहिं निरंजन कीन्ह उपाई। ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा मम जाई॥
निरंजन मन घटहि विराजै। ब्रह्मा बुद्धि फेरि उपराजै॥

उस समय निरंजन को यह संदेह हुआ कि ब्रह्मा मेरा ज्येष्ठ पुत्र है और वह कहीं ज्ञानी जी की बातों में आकर उनके पक्ष में न चला जाए, तब निरंजन ने ब्रह्मा की बुद्धि फेरने का उपाय किया। अभिमानी निरंजन मन-स्वरूप सबके घट में विद्यमान है, वह ब्रह्मा के घट में भी विराजमान था, उसने ब्रह्मा की बुद्धि को अपनी ओर फेर दिया।

विशेष—*सबके भीतर मन-स्वरूप निरंजन का वास है, जो सबकी बुद्धि को अपने अनुसार इधर-उधर घुमाता रहता है। सद्‌गुरु कबीर साहेब के बीजक में इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है—*

पैठा है घट भीतरे, बैठा है साचेत।
जब जैसी गति चाहै, तब तैसी मति देत॥

(बीजक साखी 329)

अर्थात मन सबके हृदय के भीतर घुसा हुआ है और विषय भोगों में रमण करने के लिए तैयार एवं सतर्क होकर बैठा है। यह जब जैसा क्रिया-भोग चाहता है, जीव को वैसा ही प्रेरित करता है।

ब्रह्मा वचन

॥ चौपाई ॥

निराकार निर्गुण अविनासी। ज्योति स्वरूप शून्य के वासी॥
ताहि पुरुष कहं वेद बखाने। आज्ञा वेद ताहि हम माने॥

ब्रह्मा ने ज्ञानी जी से कहा कि वह ईश्वर निराकार, निर्गुण, अविनाशी, ज्योति-स्वरूप एवं शून्य का वासी है। उसी पुरुष (ईश्वर) को वेद बखानता है, अर्थात वेद उसका भली-भांति वर्णन करते हैं। वेद आज्ञानुसार ही मैं उस पुरुष को मानता एवं समझता हूं।

ज्ञानी जी का विष्णु के पास पहुंचना

॥ चौपाई ॥

जब देखा तिहि काल दृढ़ायो। तहं ते उठे विष्णु पहं आयो॥
विष्णुहि कह्यो पुरुष उपदेशा। काल वशी नहिं गहे संदेशा॥

ज्ञानी जी ने देखा कि काल- निरंजन ने ब्रह्मा की बुद्धि को फेरकर अपने पक्ष में मजबूत कर दिया है, तो वे वहां से उठकर विष्णु के पास आए। ज्ञानी जी ने विष्णु को आदि पुरुष का ज्ञानोपदेश कहा, परंतु काल के वश होने से उसने उसे ग्रहण नहीं किया।

विष्णु वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे विष्णु मो सम को आही। चार पदारथ हमरे पाही॥
काम मोक्ष धर्मारथ माही। चाहे जौन देउं मैं ताही॥

विष्णु ने ज्ञानी जी से कहा कि मेरे समान अन्य कौन है ? मेरे पास चार महान पदार्थ (फल) हैं। काम, मोक्ष, धर्म और अर्थ मेरे अधिकार में हैं, उनमें से चाहे जो मैं किसी जीव को दूं।

ज्ञानी जी वचन विष्णु प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनहु सो विष्णु मोक्ष कस तोही। मोक्ष अक्षर परलै तर होही॥
तुम नहिं थिर थिर कस करहू। मिथ्या साखि कवन गुण भरहू॥

ज्ञानी जी ने कहा कि हे विष्णु सुनो! तुम्हारे पास कैसा मोक्ष है ? मोक्ष अमरपद तो मृत्यु के पार होने से अर्थात आवागमन से छूटने पर प्राप्त होता है। तुम स्वयं स्थिर-शांत नहीं हो तो दूसरों को कैसे स्थिर-शांत करोगे (तुम्हें शांति नहीं है तो दूसरों को शांति कैसे दोगे) ? मिथ्या साक्षी (गवाही) से किसका क्या भला करोगे और इस अवगुन को कौन भरेगा ?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

रहे सकुच सुनि निर्भय बानी। निज हिय विष्णु आप डर मानी॥
तब पुनि नागलोक चलि गयऊ। तासे कुछ कुछ कहिबे लयऊ॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि मेरी, अर्थात ज्ञानी जी की निर्भीक सत्यवाणी को सुनकर विष्णु सकुचाकर रह गए और अपने हृदय में उसका डर माना।

तब फिर मैं (ज्ञानी) नागलोक चला गया, वहां शेषनाग से अपनी कुछ-कुछ बातें कहने लगा।

ज्ञानी जी वचन शेषनाग प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष भेद कोउ जानत नाहीं। लागे सभे काल की छाहीं॥
राखनहार कहं चीन्हों भाई। यह सों को तुहि लेइ छुड़ाई॥

आदिपुरुष का भेद कोई जानता नहीं है और सभी काल की छाया में लगे हुए हैं अर्थात अज्ञानवश काल के मुख में जा रहे हैं। हे भाई! अपनी रक्षा करने वाले को पहचानो, यहां काल से तुम्हें कौन छुड़ा लेगा?

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा विष्णु रुद्र जिहिं ध्यावै। वेद जासु गुण निशि दिन गावैं॥
सोइ पुरुष तुहिं राखनिहारा। सोई तुमहिं लै करिहैं पारा॥

ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र जिसे ध्याते हैं और वेद जिसके गुण रात-दिन गाते हैं[1], वही आदि पुरुष तुम्हें सुरक्षित रखने वाले हैं और वही तुम्हें भवसागर से पार करेंगे।

॥ चौपाई ॥

राखनिहार और कोउ नाहीं। करु विश्वास मिलाऊं ताही॥
शेष खानि विष तेज सुभाऊ। वचन प्रतीत हृदय नहीं आऊ॥

रक्षा करने वाला और कोई नहीं है, विश्वास करो मैं तुम्हें उससे मिलाता, अर्थात उसका साक्षात्कार कराता हूं। विष-खानि से उत्पन्न शेषनाग का बहुत तेज स्वभाव था, अतएव उसके हृदय में मेरे वचनों पर विश्वास नहीं आया।

निर्देश—*ब्रह्मा, विष्णु तथा शेषनाग ने ज्ञानी जी का 'सत्यपुरुष-संदेश' मानने से जब मना कर दिया, तब कहा जाता है कि ज्ञानी जी उसके लिए महेश के पास गए। परंतु महेश के मन को भी ज्ञानी जी का उक्त ज्ञान-संदेश अच्छा नहीं लगा। महादेव ने कहा कि मैं तो निरंजन को मानता हूं, और बात हृदय में नहीं लाता। फिर वहां से चलकर ज्ञानीजी भवसागर की ओर आए, उससे संबद्ध निम्नांकित चौपाई देखिए—*

तत क्षण तहं ते कीन्ह पयाना। पहुंचेऊं जाय शम्भु के थाना॥

---

1. ज्ञानी जी का शेषनाग को यह कथन कि 'ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र जिसका ध्यान और वेद जिसका गुणगान करते हैं,' इसलिए है, क्योंकि वे सब उसे ही आदि पुरुष समझते हैं। उक्त कथन से ज्ञानी जी उनका समर्थन नहीं करते, अपितु इस प्रकार कहकर उनके समझाने का अभिप्राय उनको उस यथार्थ आदि पुरुष का ज्ञान-उपदेश देने का प्रयास है, जो सबका स्वामी एवं रक्षक है तथा जिसे वे भूलवश आदि पुरुष समझते हैं, उस काल निरंजन से उन्हें छुड़ाना है।

आदिपुरुष उपदेश सुनावा। सुनि महेश के मन नहीं भावा॥
कहा महेश निरंजन मानौं। और बात हृदय नहीं आनौं॥

ज्ञानी जी (कबीर साहेब) का संसार में आगमन
सद्‌गुरु वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनहु सुलक्षण धर्मनि नागर। तब मैं आयउ या भवसागर।
आये जब मृत्युमण्डल माहीं। पुरुष जीव कोउ देख्यो नाहीं॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे शुभ-लक्षणों वाले बुद्धिमान धर्मदास! सुनो, तब मैं इस भवसागर में आया। जब मैं भव-रूपी मृत्युमण्डल में आया, मैंने सत्यपुरुष का कोई जीव-भक्त नहीं देखा, अर्थात सब अनजान थे।

॥ चौपाई ॥

काकहं कहिय पुरुष उपदेशा। सो तो अधिकै यम को भेषा॥
जो घातक ताके विश्वासा। जो रक्षक तिहि बोल उदासा॥

(ऐसी स्थिति में) मैं सत्यपुरुष का ज्ञान उपदेश किसको कहूं, जिससे कहूं वह तो अधिक यम के वेष में दिखाई पड़े। विचित्र बात यह है कि जो घातक, अर्थात विनाश करने वाला निरंजन है, लोगों को उसका तो विश्वास है और जो रक्षा करने वाला सत्यपुरुष है, उसकी ओर से वे उदास बोलते हैं, अर्थात उसके पक्ष में खुलकर स्पष्ट नहीं बोलते।

॥ चौपाई ॥

जाहि जपै सोई धरि खाई। तब मम शब्द चेत चित आई॥
जीव मोहवश चीन्हे नाहीं। तब अस भाव उपज हिय माहीं॥

जीव जिसे जपता है वही उसे धरकर खाता है, तब मेरे शब्द-उपदेश से चेतना उसके चित्त में आती है, अर्थात जब दुखी हो-होकर मरता है, तब उसकी समझ में ज्ञान पाने की बात आती है। जीव मोहवश देखता-समझता नहीं, तब ऐसा भाव मेरे हृदय में उपजा कि—

॥ छंद ॥

मेटि डारौं काल शाखा, प्रगट कला दिखावऊं।
लेऊं जीवन छोराय यम सों, अमरलोक पठावऊं॥
जाहि कारण रटत डोलों, सो न मोकहं चीन्हई।
काल के वश परे जीव सब, तजि सुधा विष लीन्हई॥ 49॥

काल-निरंजन की शाखा (वंश-संतति) को मिटा डालूं और काल-निरंजन को प्रत्यक्ष अपना प्रभाव दिखाऊं। यम-निरंजन से जीवों को छुड़ा लूं तथा उन्हें अमरलोक भेज दूं। जिनके कारण मैं शब्द-उपदेश रटते हुए डोलता-फिरता हूं, वे

जीव मुझे पहचानते तक नहीं। सब जीव काल के वश पड़े हैं और सत्यपुरुष के नाम-उपदेश रूपी अमृत को छोड़कर काल-माया के नाम एवं विषय रूपी विष को ले रहे हैं।

॥ सोरठा ॥

पुरुष वचन अस नाहिं, यही सोच चित कीन्हेऊ।
ले पहुंचायो ताहि, शब्द परख दृढ़ जो गहे॥ 52॥

परंतु, सत्यपुरुष का वचन (आदेश) ऐसा नहीं है, यही सोचकर मैंने चित्त में निश्चय किया कि अमरलोक उसी जीव को लेकर पहुंचाऊं, जो मेरे सार-शब्द को दृढ़ता से ग्रहण करे।

राम नाम उत्पत्ति

॥ चौपाई ॥

पुनि जस चरित भयो धर्मदासा। सो सब बरनि कहौं तव पासा॥
ब्रह्मा विष्णु शंभु सनकादी। सब मिलि कीन्हीं शून्य समाधी॥
कवन नाम सुमिरों करतारा। कवनहिं नाम ध्यान अनुसारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! फिर जैसा चरित्र हुआ, वह सब मैं तुम्हें वर्णन कर कहता हूं।

ब्रह्मा, विष्णु, शंकर और सनकादिक (ब्रह्मा-पुत्र) सबने मिलकर शून्य में ध्यान समाधि लगाई। समाधि में उन्होंने प्रार्थना की कि हे ईश्वर! हम किस नाम का सुमिरन करें और तुम्हारा कौन नाम ध्यान के योग्य है, अर्थात ध्यानाधार नाम कौन-सा है?

॥ चौपाई ॥

सबहिं शून्य महं ध्यान लगाये। स्वाति स्नेह सीप ज्यों लाये॥
तबहिं निरंजन जतन विचारा। शून्य गुफा ते शब्द उचारा॥

जैसे—सीप तीव्र उत्कंठा से स्वाति-नक्षत्र की बूंद का स्नेह अपने भीतर लाती है, उसी प्रकार ईश्वर के प्रति प्रेम-भाव से सबने शून्य में ध्यान लगाया। उसी समय निरंजन ने उनको उत्तर देने का यत्न विचारा और शून्य-गुफा से अपना शब्द-उच्चारण किया।

॥ चौपाई ॥

ररां सुशब्द उठा बहुत बारा। मा अक्षर माया संचारा॥
दोउ अक्षर कहं समकै राखा। राम नाम सबहिन अभिलाखा॥

उनकी ध्यान-समाधि में ररां, अर्थात 'रा' अच्छा शब्द बहुत बार उच्चारित हुआ, उसके आगे मा से अभिप्राय (म) अक्षर, माया—अष्टांगी ने संचारा (जुड़वाया)।

'रा' और 'म' दोनों अक्षरों को बराबर करके रखा तो (रा+म) 'राम' शब्द बना। (राम नाम सबको अच्छा लगा तो सबने राम नाम सुमिरन की इच्छा की।)

॥ चौपाई ॥

राम नाम लै जगहि दृढ़ायो। काल फन्द कोइ चीन्ह न पायो॥
यहि विधि राम नाम उतपानी। धर्मनि परख लेहु यह बानी॥

उस राम नाम को लेकर संसार के जीवों को उपदेश किया, अर्थात राम नाम का सुमिरन जप सुदृढ़ कराया। काल-निरंजन तथा माया के जाल को कोई पहचान-समझ नहीं पाया। इस प्रकार राम नाम की उत्पत्ति हुई, हे धर्मदास! इस वाणी को तुम परख लो।

विशेष—*बीजक के ज्ञान-चौंतीसा प्रकरण में 'र' के माध्यम से सद्गुरु कबीर साहेब सद्उपदेश करते हुए कहते हैं—*

ररा रारि रहा अरुझाई। राम के कहै दुख दारिद्र जाई॥
ररा कहै सुनहु रे भाई। सतगुरु पूंछि के सेवहु आई॥

अर्थात, जगत में यह विवाद उलझा हुआ है कि 'राम' के कहने से सब दुख-दारिद्र्य मिट जाता है, परंतु 'र' अक्षर कहता है कि रे भाई! सुनो, सद्गुरु से पूछकर, अर्थात यथार्थ भाव जानकर राम नाम का सेवन करो, तब कल्याण होगा।

बिना जाने-पहचाने अपनी मन-मति अथवा देखा-दाखी से राम-राम कहना-जपना कैसे सार्थक होगा? सद्गुरु से राम नाम एवं उसके महत्व को भली-भांति जान-समझकर, फिर उसकी विधिवत् सतत साधना करने से जीवन कृतार्थ होगा।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास कहे सतगुरु पूरा। छूटेउ तिमिर ज्ञान तुव सूरा॥
माया मोह घोर अंधियारा। तामहं जीव परे विकारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब से धर्मदास कहते हैं कि आप पूरे सद्गुरु हैं। आपका ज्ञान सूर्य के समान है, जिससे मेरा अज्ञान-तिमिर छूट (मिट) गया है। संसार में माया-मोह का घोर अंधेरा है, जिसमें विषय-विकारी जीव पड़े हैं।

॥ चौपाई ॥

जब तुव ज्ञान प्रगट ह्वै भाना। छूटे मोह शब्द परवाना॥
धन्य भाग हम तुम कहं पायी। मोहि अधम कहं लीन्ह जगायी॥
अब वह कथा कहौ समुझायी। सतयुग कौन जीव मुकतायी॥

जब आपका ज्ञान-सूर्य प्रकट हो और उससे जीव का मोह अंधकार नष्ट हो जाए, यही आपके शब्द-उपदेश का सही प्रमाण है। मेरे धन्य भाग्य हैं कि मैंने

आपको पाया तथा आपने मुझ निकृष्ट को जगा लिया, अर्थात मोहाज्ञान से सचेत कर दिया।

हे सद्गुरु साहेब! अब आप मुझे वह कथा समझाकर कहो कि आपने सतयुग में कौन-कौन जीवों को इस भवसागर से मुक्त किया?

प्राकट्यम् युगे-युगे

सतयुग में सतसुकृत (कबीर साहेब) के पृथ्वी पर आने की कथा

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास सुनु सतयुग भाऊ। जिन जीवन को नाम सुनाऊ॥
सतयुग सतसुकृत मम नाऊं। आज्ञा पुरुष जीव चेताऊं॥

सद्गुरु कबीर साहेब ने कहा कि हे धर्मदास! सुन, सतयुग में जिन जीवों को मैंने सत्यपुरुष का नाम-ज्ञान सुनाकर चेताया। सतयुग में मेरा नाम सतसुकृत हुआ और सत्यपुरुष की आज्ञा से मैंने जीवों को चेताया।

धोंधल राजा का वृतांत

॥ चौपाई ॥

नृप धोंधल पहं मैं चलि जाई। सत्य शब्द सो ताहि सुनाई॥
सत्य शब्द तिन हमरो माना। तिन कहं दीन्ह पान परवाना॥

मैं (सतसुकृत) राजा धोंधल के पास गया और उसे सत्य-शब्द (सार-शब्द का उपदेश) सुनाया। उसने मेरा सत्य शब्द माना, अर्थात स्वीकार किया, तो मैंने उसको पान-परवाना दिया।

॥ छंद ॥

राय धोंधल संत सज्जन, शब्द मम दृढ़ के गह्यो।
सार सीत प्रसाद लीन्हौ, चरण परसत जल लह्यो॥
प्रेम से गदगद भयो सब, तजेउ भर्म विभाव हो।
सार शब्दहि चीन्ह लीन्हो, चरण ध्यान लगाव हो॥ 50॥

राजा धोंधल सज्जन संत थे, उन्होंने मेरे शब्द को दृढ़तापूर्वक ग्रहण किया। राजा ने सार-विधि से गुरु-पूजन कर पान-प्रसाद लिया तथा चरण स्पर्श कर चरणामृत लिया। वे प्रेम से पूर्णतः गद्गद हो गए, अर्थात प्रसन्नचित्त हो गए और उन्होंने अज्ञानजनित सब भ्रम-भाव को त्याग दिया। उन्होंने सार शब्द को चीन्ह (परख) लिया तथा गुरु-चरणों में ध्यान लगाया।

खेमसरी का वृत्तांत

॥ सोरठा ॥

धोंधल शब्द चिताय, तब आयउ मथुरा नगर।
खेमसरि आयो धाय, नारि वृद्ध अरु बाल सों॥ 53॥

सतसुकृत जी ने राजा धोंधल को सार-शब्द उपदेश से चेताया और तब वे मथुरा नगर में आए। वहां उनके पास खेमसरी नाम की स्त्री आई तथा उसके साथ और स्त्री, वृद्ध एवं बच्चे भी आए।

॥ चौपाई ॥

कहे खेमसरि पुरुष पुराना। कहवां ते तुम कीन्ह पयाना॥
तासों कहेउ शब्द उपदेशा। पुरुष भाव अरु यम को भेषा॥
सुना खेमसरि उपजा भाऊ। जब चीन्हा सब यम का दाऊ॥

सतसुकृत जी से खेमसरी कहती है कि हे पुरुष पुरातन! आपने कहां से आगमन किया है ? फिर इसके पश्चात सतसुकृत जी ने उसे शब्द-उपदेश किया। शब्दोपदेश में उन्होंने सत्यपुरुष, सत्यलोक तथा निरंजन के रूप-वेश का वर्णन किया। खेमसरी ने उनका सदुपदेश सुना तो उसको सत्यपुरुष, सत्यलोक के प्रति भाव-प्रेम उत्पन्न हुआ तथा एक ज्ञान-भाव आया, जब उसने निरंजन के सब दांव-चाल को समझा।

खेमसरी को लोक का दर्शन कराना

॥ चौपाई ॥

पै धोखा इक ताहि रहाई। देखुं लोक तब मन पतियाई॥
राखेउ देह हंस लै धावा। पल इक माहिं लोक पहुंचावा॥
लोक दिखाय हंस लै आयो। देह पाय खेमसरि पछतायो॥

पर खेमसरी के मन में एक धोखा (संदेह) था कि अपनी आंखों से सत्यलोक को देखूं तब मेरे मन में विश्वास हो। तब सतसुकृत जी ने खेमसरी की देह को वहीं रखकर उसकी आत्मा को ले जाकर, एक पल में सत्यलोक पहुंचा दिया। उसकी आत्मा को सत्यलोक, अर्थात अमर लोक दिखाकर ले आए, फिर अपनी देह में प्रवेश कर खेमसरी सत्यलोक को याद करके पछताने लगी।

॥ चौपाई ॥

हे साहिब लै चलु वहि देशा। यहां बहुत है काल कलेशा॥
तासो कहेउ सुनो यह बानी। जो मैं कहूं लेहु सो मानी॥

खेमसरी ने सतसुकृत जी से कहा कि हे साहेब! जो देश दिखाया है मुझे उसी देश, अर्थात अमरलोक ले चलो, यहां तो बहुत काल-क्लेश (दुख-पीड़ा-वेदना) है एवं मिथ्या माया-मोह का प्रसार है।

तब सतसुकृत जी ने खेमसरी से कहा कि मेरी यह बात सुनो और जो मैं कहता हूं उसे मान लो।

टीका पूरने पर ही लोक की प्राप्ति होती है

॥ चौपाई ॥

जब लों टीका पूर न भाई। तब लग रहो नाम लौ लाई॥
तुम तो देखा लोक हमारा। जीवन को उपदेशहु सारा॥

जब तक आयु पूरी नहीं हो जाती, तब तक मैं सत्यलोक नहीं ले जा सकता। इसलिए जब तक आयु पूरी हो तब तक मेरे दिए हुए सत्यनाम-ज्ञान से लगन लगाए रहो। तुमने तो हमारा सत्यलोक देखा है(उसके लिए अभी चिंतित न हो), जब तक तुम्हारी आयु पूरी हो, तब तक हमारे सार-शब्दोपदेश से दूसरे जीवों को उपदेश करते रहो।

जीवों को उपदेश करने का फल

॥ चौपाई ॥

एकहु जीव शरणागत आवे। सो जीव सत्यपुरुष को भावे॥
जैसे गऊ बाघ मुख जायी। सो कपिलहि कोइ आय छुड़ायी॥
ता नर को सब सुयश बखाने। गऊ छुड़ाय बाघ ते आने॥

जो ज्ञानवान मनुष्य एक भी जीव को शब्द-उपदेश दिखलाकर सत्यपुरुष की शरण में ले आए अथवा जब किसी ज्ञानवान मनुष्य के द्वारा एक भी जीव सत्यपुरुष की शरण में आता है, तो वह ज्ञानवान मनुष्य सत्यपुरुष को बहुत प्रिय होता है।

जैसे—कोई गाय यदि बाघ के मुख में जाती हो, अर्थात बाघ (सिंह) उसे मारकर खाता हो, उस गाय को कोई बलवान मनुष्य आकर छुड़ा ले, तो उस मनुष्य का सुयश सब वर्णन करते हैं कि उसने आकर बाघ से गाय को छुड़ा लिया।

॥ चौपाई ॥

जस कपिला कहं केहरि त्रासा। ऐसे काल जीव कहं ग्रासा॥
एक जीव जो भक्ति दृढ़ावे। कोटिक गऊ पुण्य सो पावे॥

जैसे गाय को बाघ डराता, सताता एवं मारता है, ऐसे ही काल जीव को दुख देता एवं ग्रसता है। जो ज्ञानवान मनुष्य एक जीव को सत्यपुरुष परमात्मा की भक्ति में दृढ़तापूर्वक लगा देता है, तो वह ज्ञानवान मनुष्य करोड़ गाय को बचाने के समान पुण्य पाता है।

खेमसरी वचन सतसुकृत प्रति

॥ चौपाई ॥

खेमसरि परी चरण परआयी। हे साहिब मुहिं लेहु बचायी॥
मो पर दाया करहु प्रकासा। अब नहिं परौं काल के फांसा॥

खेमसरी आकर स्वामी सतसुकृत जी के चरणों पर गिर पड़ी और विनीत भाव से कहने लगी कि हे साहिब! मुझे बचा लो। मुझ पर आप दया का प्रकाश कीजिए, जिससे कि मैं अब काल के जाल में न पड़ूं।

सतसुकृत वचन खेमसरी प्रति

॥ चौपाई ॥

सुन खेमसरि यह यम को देशा। बिना नाम नहिं मिटे अंदेशा॥
पान परवाना पुरुष की डोरी। लेहि जीव यम तिनका तोरी॥
पुरुष नाम बीरा जो पावे। फिरकै भवसागर नहिं आवे॥

सतसुकृत जी ने कहा कि हे खेमसरी सुन! यह यम-निरंजन का देश है, इसमें काल-निरंजन के जाल में फंसने का जो भय एवं संदेह है, वह सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान के बिना नहीं मिटता।

मेरा, अर्थात सद्गुरु का सार-शब्दोपदेश ग्रहण करने का जो पान-परवाना होता है, वह सत्यपुरुष तक पहुंचने की डोरी (मार्ग-उपाय) है, मुमुक्षु-जीव उस पान-प्रसाद को ले तथा फिर गुरु-आज्ञावत् यम से तिनका तोड़ ले, अर्थात यम से अपना संबंध विच्छेद कर ले। सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान का पान-बीड़ा जो जीव पाता है, फिर वह वापिस भवसागर में नहीं आता।

खेमसरी वचन सतसुकृत प्रति

॥ चौपाई ॥

कह खेमसरि परवाना दीजै। यह सों छोरि अपन करि लीजै॥
और जीव हमरे गृह आही। नाम पान प्रभु दीजै ताही॥
मोरे गृह अब धरिय पांऊ। मुक्ति संदेश जीवन समझांऊ॥

खेमसरी ने सतसुकृत से कहा कि हे प्रभु! आप मुझे परवाना दीजिए और काल-निरंजन से छुड़ाकर अपना कर लीजिए। हे साहिब! हमारे घर और जीव हैं, आप उन्हें भी नाम-ज्ञान एवं पान दीजिए।

मेरे घर अपने चरण-कमल धरिए और भवसागर से मुक्ति का संदेश जीवों को समझाइए।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

गयेऊ तासु ग्रह भाव समागम। परेउ चरण नर नारि सुधा सम॥
खेमसरी सब कहि समझाई। जन्म सुफल करु रे सब भाई॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि खेमसरी के घर जाकर सतसुकृत

का सबसे भाव-सहित भेंट-मिलन हुआ। सब नर-नारी उनके चरणों में पड़ गए और अमृत समान उनके श्री चरणों को मानकर स्पर्श किया।

खेमसरी ने वहां सब लोगों को कहकर समझाया कि हे भाई! आज सद्गुरु के दर्शन एवं ज्ञान से अपना-अपना मनुष्य-जन्म सुफल कर लो।

खेमसरी वचन परिवार प्रति

॥ चौपाई ॥

जीवन मुक्ति चाहु जो भाई। सतगुरु शब्द गहो सो आई॥
यम सों येहि छुड़ावन हारा। निश्चय मानो कहा हमारा॥

खेमसरी ने अपने परिवार के सब जनों से कहा कि हे भाई! यदि अपने जीवन की मुक्ति चाहते हो, तो आकर सद्गुरु के शब्द-उपदेश को ग्रहण करो। यम-काल से ये ही छुड़ाने वाले हैं, निश्चय के साथ मेरा कहना मानो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सब जीवन परतीत दृढ़ावा। खेमसरि संग सब जिव आवा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि वहां सब जीवों (मनुष्यों) को पक्का विश्वास हो गया और खेमसरी के साथ सब जीव मेरे पास आए।

सब मिलकर विनय करते हैं

॥ चौपाई ॥

आय गहे सब चरण हमारा। साहिब मोर करो निस्तारा॥
जाते यम नहिं मोहि सताये। जन्म जन्म दुख दुसह नसाये॥

सब मेरे, अर्थात सतसुकृत जी के चरणों में आ गए और खेमसरी का हर परिवारजन अपनी-अपनी ओर से विनती करने लगा कि हे साहिब! मेरा उद्धार करो। जिससे मुझे यम न सताए और जन्म-जन्म का असहनीय-कठिन दुख नष्ट हो जाए, अर्थात आवागमन से मुक्ति मिले।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

अति अधीन देखउ नर नारी। तासों हम अस वचन उचारी॥
जो कोई मनिहै शब्द हमारा। ता कहं कोइ न रोकन हारा॥
जो जिव माने मम उपदेशा। मेटौं ताकर काल कलेशा॥
पुरुष नाम परवाना पावे। यमराजा तिहि निकट न आवे॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि सब नर-नारियों को बहुत अधीन देखा तो

मैंने अर्थात सतसुकृत जी ने उनसे ऐसे वचन कहे कि जो हमारे शब्द-उपदेश को मानेगा, उसको सत्यलोक जाने से कोई रोकने वाला नहीं है।

जो जीव मेरे उपदेश को मानेगा, मैं उसके काल से होने वाले दुखों को मिटा दूंगा। जो सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान का परवाना पाएगा, यमराज उसके पास नहीं आएगा।

सतसुकृत जी वचन खेमसरी प्रति

॥ चौपाई ॥

आनहु साज आरती केरा। काल कष्ट मैटौं जिव केरा॥

सतसुकृत जी ने कहा कि चौका-आरती का सब साज-सामान लाओ, जिससे कि इन सब लोगों के निमित्त सत्यपुरुष की पूजा-आरती करके, इनका काल-कष्ट एवं योनियों में पड़ने का चक्र मिटाऊं।

खेमसरी वचन सतसुकृत जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कह खेमसरि प्रभु कहो बिलोई। कवन वस्तु ले आरति होई॥

भक्तिमति खेमसरी कहती है कि हे प्रभु! निर्णय कर कहो कि कौन-कौन वस्तुएं लेकर पूजा-आरती होगी?

॥ छंद ॥

भाव आरती खेमसरी सुनु, तोहि कहुं समुझाय के।
मिष्ठान पान कर्पूर केरा, अष्ट मेवा लायके॥
पांच बसन श्वेत वस्तर, कदलि पत्र अछेदना।
नारियल अरु पुहुप श्वेतहि, श्वेत चौका चन्दना॥ 51॥

सतसुकृत जी ने कहा हे खेमसरी सुन! आरती-भाव की साज-सामग्री मैं तुमको समझाकर कहता हूं—मिठाई, पान (जो बिना गला कटा-फटा हो), कपूर, केला-फल, आठ मेवा (काजू, अखरोट, पिस्ता, मुनक्का, चिरौंजी, किशमिश, अंजीर और बादाम या छुहारा), पांच बरतन (एक लोटा, एक गिलास, एक कटोरा तथा दो थाली), श्वेत वस्त्र, केले का पत्ता (जो कटा-फटा न हो), नारियल, सफेद फूल और श्वेत चंदन।

॥ सोरठा ॥

यह आरति अनुमानि, आनु खेमसरि साज सब।
पुंगी फल परमान, शब्द अंग चौका करुं॥ 54॥

हे खेमसरी! यह आरती के अनुसार सब साज-सामान ले आओ। पूजा में सुपारी-फल भी आवश्यक एवं प्रामाणिक है, उसे लाओ, तब मैं शब्द-सुरति से चौका करूं।

॥ चौपाई ॥

और वस्तु आनहु शुचि पावन। गो घृत उत्तम रुचिर सुहावन॥

और वस्तु गाय का घी लाओ, जो विमल, पवित्र, उत्तम, रुचिपूर्ण तथा सुहाना लगता हो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

खेमसरि सुनि सिखापन माना। तत क्षण सब विस्तार सो आना॥
श्वेत चंदोवा दीन्हों तानी। आरति करन युक्ति विधि ठानी॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास को कहते हैं कि मेरी, अर्थात सतसुकृत जी की शिक्षा को खेमसरी ने माना और उसी क्षण वह सब सामान लाकर रख दिया। सतसुकृत जी ने श्वेत-चंदोवा तान दिया तथा युक्ति-युक्त विधि से चौका-आरती करने का उपाय किया।

॥ चौपाई ॥

पंच साधु इच्छा उपराजा। भक्ति भजन गुरु ज्ञान विराजा॥
हम चौका पर बैठक लयऊ। भजन अखंड शब्द धुन भयऊ॥
भजन अखंड शब्द ध्वनि होई। दुनिया चांप सकें नहिं कोई॥

इच्छानुसार वहां मंगलाचार निमित्त पांच संतों को बैठाया गया, भक्ति, भजन तथा गुरु ज्ञान प्रकाशित हुए। (हम) सतसुकृत जी चौके पर बैठ गए, भजन-गायन की अखंड शब्द ध्वनि आरंभ हुई। भजन-गायन की ऐसी अखंड शब्द-ध्वनि हुई कि दुनिया में उसे कोई चांप (मोड़ या रोक) नहीं सकता।

॥ चौपाई ॥

सत्य शब्द लै चौका साजा। ज्योति प्रकाश अखंड विराजा॥
शब्द अंग चौका अनुमाना। मोरत नरियल काल पराना॥

सत्य शब्द को लेकर चौका सजाया गया और आरती की ज्योति जलाई तो उस ज्योति का प्रकाश अखंड देदीप्यमान हुआ। सतसुकृत साहिब ने शब्द-अर्थ के अनुसार चौका किया। जब चौका-विधान में नारियल मोरा तो मोरते ही वहां से काल-निरंजन चले गए।

॥ चौपाई ॥

जब भयो नरियर शिला संयोगा। काल शीश पुनि कम्पै रोगा॥
नरियल मोरत बास उड़ायी। सत्यपुरुष कहं जानि जनायी॥

जब सद्गुरु के द्वारा मोरने के लिए नारियल का शिला (पत्थर) से संयोग हुआ, तो फिर काल का सिर ऐसे ही कांपने लगा जैसे भयंकर रोग से रोगी का

कापंने लगता है। नारियल मोरते ही उसकी जो सुगंध उड़ी उसने सत्यपुरुष को जना दिया कि नारियल भेंट करने वाला जीव आपका हो गया, अत: काल उससे डरकर चला गया।

॥ चौपाई ॥

पांच शब्द कहि तब दल फेरा। पुरुष नाम लीन्हों तिहि बेरा॥
छन एक बैठे पुरुष तहं भाई। सकल सभा उठि आरती लाई॥

सतसुकृत साहेब ने पांच शब्द का मंत्र बोलकर नारियल पर अमीदल फिराया और उस समय सत्यपुरुष का नाम लिया। हे भाई! वहां एक क्षण, अर्थात थोड़े समय के लिए सत्यपुरुष बैठते हैं, सारी सभा उठकर उनकी आरती करती है।

॥ चौपाई ॥

तब पुनि आरती दीन्ह मंडाई। तिनका तोरे जल अंचवाई॥
प्रथम खेमसरि लीन्हों पाना। पाछे और जीव सन्माना॥

तिनका तुड़वाकर जल से कुल्ला करवाया और हाथ धुलवाया, तब फिर सबने आरती की। सबसे पहले खेमसरी ने पान-प्रसाद लिया और उसके पीछे सब लोगों ने समान रूप से पान-प्रसाद लिया।

॥ चौपाई ॥

दीन्हेउ ध्यान अंग समुझाई। ध्यान नाम ते हंस बचाई॥
रहनि गहनि सब दीन्ह दृढ़ाई। सुमिरत नाम हंस घर जाई॥

सतसुकृत साहेब ने ध्यान-साधना का प्रकरण भली-भांति समझाया और ध्यान एवं सार-नाम से हंस-जीव को बचाया। उन्होंने आचरण के लिए सब रहनी-गहनी दृढ़तापूर्वक बताई और सुमिरन के लिए सार-नाम बताया, जिससे जीव अपने घर सत्यलोक जाता है।

विशेष—*कबीरपंथ में आरती चौका सर्वोपरि धार्मिक-क्रिया मानी जाती है, ऐसा हम पहले भी कह चुके हैं, इसके अंतर्गत सत्यपुरुष एवं सद्गुरु की आरती-पूजा के साथ, नारियल मोरना, तिनका तोड़ना, पान-परवाना देना तथा ध्यान सुमिरन का सार-शब्दोपदेश का विधि-विधान संपन्न किया जाता है। इसकी विस्तृत जानकारी के लिए कबीर धर्म स्थान, खरसिया तथा कबीर बाग, लहरतारा, वाराणसी से प्रकाशित चौका-चंद्रिका नाम की पुस्तक पढ़ें। यह पुस्तक परम वंदनीय पं. श्री हजूर प्रकाशमणिनाम साहेब की प्रेरणा से रची गई और इसके रचयिता परम पूज्य म. श्री सुकृतदास बरारी (बेंगलोर, कर्नाटक) थे। समय की मांग के अनुसार इसे परम पूज्य पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब ने प्रकाशित कराया।*

॥ छंद ॥

हंस द्वादश बोधि सतयुग, गयउ सुख सागर करी।
सतपुरुष चरण सरोज परसेउ, विहंसि के अंकम भरी॥
बूझि कुशल प्रसन्न बहु विधि, मूल जीवन के धनी।
बंधु हर्षित सकल शोभा, मिली अति सुंदर बनी॥ 52॥

सतसुकृत जी, अर्थात कबीर साहेब कहते हैं कि सतयुग में बारह-हंस-जीवों को बोध प्रदान कर, अर्थात ज्ञान-दीक्षा देकर मैं सतलोक चला गया। वहां जाकर मैंने सतपुरुष के चरण-कमल स्पर्श किए और उन्होंने मुझे छाती से लगाया।

सब जीवों की मुक्ति के मूल-धनी सत्यपुरुष ने बहुत प्रकार से मेरी कुशलता पूछी तथा प्रसन्न हुए। वहां मेरे सब बंधु मुझे देखकर हर्षित हुए, कुल मिलाकर मुझे वहां की संपूर्ण शोभा अत्यंत सुंदर जान पड़ी।

॥ सोरठा ॥

शोभा वरणि न जाय, धर्मनि हंसन कान्ति कर।
रवि षोड़स शशि काय, एक हंस उजियार जो॥ 55॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सत्यलोक में रहने वाले हंसों की कांति (सौंदर्य-छटा) की शोभा मुंह से कही नहीं जाती। वहां एक हंस का दिव्य प्रकाश सोलह सूर्य-चंद्रमा के समान होता है।

॥ चौपाई ॥

कुछ दिन कीन्हों लोक निवासा। देखेउ आय बहुरि निज दासा॥
निशि दिन रहौं गुप्त जग माहीं। मो कहं कोइ जीव चीन्हत नाहीं॥

सतसुकृत साहेब कहते हैं कि मैंने कुछ दिन सत्यलोक में निवास किया। फिर कुछ समय पश्चात भवसागर में आकर अपने दीक्षित धोंधल, खेमसरी आदि सेवक-भक्तों को देखा। मैं रात-दिन जगत में गुप्त-रूप से रहता हूं, परंतु मुझको कोई जीव पहचानता नहीं।

॥ चौपाई ॥

जो जीवन परबोध्यो जायी। तिन कहं दीन्हों लोक पठायी॥
सत्यलोक हंसन सुखबासा। सदा बसंत पुरुष के पासा॥
सो देखे जो पहुंचे जाई। जिन यहि रचा सो कहा चिताई॥

फिर जिन जीवों को पहले जाकर ज्ञान दिया था, उनको सत्यलोक भिजवा दिया। सत्यलोक में हंस-जीव सुख-आनंद में बास करते हैं, वहां सत्यपुरुष के पास सदा परम सुख-शांति का वसंत खिला रहता है। उसे वही देखता अथवा अनुभव करता है जो वहां पहुंच जाता है, जिसने यह रचा है, वह सब चेताकर, अर्थात समझाकर कहा है।

त्रेतायुग में मुनींद्र (ज्ञानी जी कबीर साहेब) के पृथ्वी पर आने की कथा

॥ चौपाई ॥

सतयुग गयो त्रेतायुग आवा। नाम मुनींद्र जीव समुझावा॥
जब आयेउ जीवन उपदेशा। धर्मराय चित भये अंदेशा॥

सतयुग बीत गया और त्रेतायुग आया। तब त्रेतायुग में ज्ञानी जी ने मुनींद्र नाम से जीवों को समझाया। मुनींद्र नाम से जब वे जीवों को उपदेश देने आए, तो धर्मराय अर्थात निरंजन के चित्त में चिंता एवं भय उत्पन्न हुआ।

॥ चौपाई ॥

इन भवसागर मोर उजारा। जिव लै जाहिं पुरुष दरबारा॥
कैतौ छल बल करौं उपाई। ज्ञानी डर मुहि नाहिं डराई॥

चिंतित निरंजन सोचता है कि इन्होंने मेरा भवसागर उजाड़ दिया है, ये सत्योपदेश कर जीवों को सत्यपुरुष के दरबार, अर्थात सत्यलोक ले जाते हैं। मैंने कितने छल-बल के उपाय किए, परंतु उनसे ज्ञानी जी (मुनींद्र) को डर नहीं हुआ। वे मुझसे नहीं डरते हैं।

॥ चौपाई ॥

पुरुष प्रताप ज्ञानी के पासा। ताते मोर न लागे फांसा॥
इनते हम कछु पावै नाहीं। नाम प्रताप हंसघर जाहीं॥

ज्ञानी जी के पास सत्यपुरुष का प्रताप (ओज-बल) है, उससे मेरा जाल इन पर नहीं लगता, अर्थात ये मेरे जाल में नहीं फंसते। अतः मैं काल इनसे कुछ पा नहीं सकता (इन पर मेरा वश नहीं चलता), इनके सदुपदेश द्वारा सत्यपुरुष नाम प्रताप से जीव अपने घर-सत्यलोक जाते हैं।

॥ छंद ॥

सत्यनाम प्रताप धर्मनि, हंसा घर निज कै चलै।
जिमि देखि केहरि त्रास गज, हिय कंप कर धरनी रलै॥
पुरुष नाम प्रताप केहरि, काल गज सम जानिये।
नाम गहि सतलोक पहुंचे, गिरा मम फुर मानिये॥ 53॥

सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे धर्मदास! सत्यनाम के प्रताप से हंस-जीव अपने घर-सत्यलोक को जाते हैं। जैसे—सिंह को देखकर भय से हाथी का हृदय कांपने लगता है और वह पृथ्वी पर गिर पड़ता है। वैसे ही सत्यपुरुष का नाम—प्रताप सिंह के समान है और काल-निरंजन उसके सामने भयभीत हाथी के समान समझो। सद्गुरु से सत्यनाम ग्रहण कर जो साधक उसकी

विधिवत् साधना (ध्यान-सुमिरन) करता है, वह सत्यलोक पहुंचता है, यह मेरी वाणी सत्य मानो।

॥ सोरठा ॥

सतगुरु शब्द समाय, गुरु आज्ञा निरखत रहे।
रहै नाम लौ लाय, कर्म भर्म मन मति तजै ॥ 56 ॥

सद्गुरु ने जो सार-शब्द प्रदान किया है, अथवा जो सत्योपदेश किया है, उसमें पूर्णत: समा जाए और गुरु की आज्ञा को देखते हुए, अर्थात उसका यथावत् अक्षरश: पालन करते हुए साधना-पथ पर चले। गुरु प्रदत्त सत्यपुरुष के नाम में सतत लगन लगाकर रहे और मन एवं बुद्धि से निषिद्ध कर्म तथा सर्व अज्ञान-आसक्ति का त्याग करे, सद्गुरु के दीक्षित शिष्य का यही परम कर्तव्य है।

॥ चौपाई ॥

त्रेतायुग जबही पगु धारा। मृत्युलोक कीन्हों पैसारा॥
जीव अनेकन पूछा जाई। यम से को तुहिं लेहिं छुड़ाई॥

त्रेतायुग में जब मुनींद्र जी ने पांव रखा तो उन्होंने मृत्युलोक का भ्रमण (घूमना-फिरना) किया। उन्होंने जाकर अनेक जीवों (मनुष्यों) से पूछा कि यम-काल से तुम्हें कौन छुड़ा लेगा?

॥ चौपाई ॥

कहें भरम वश जीव अयाना। हमरा करता पुरुष पुराना॥
विष्णु सदा हमरे रखवारा। यम ते हमहिं छुड़ावन हारा॥

मुनींद्र जी को अज्ञानी जीव भ्रम-वश कहते हैं कि हमारा कर्ता-धर्ता (स्वामी) पुराण-पुरुष है। वह पुराण-पुरुष विष्णु सदा हमारी रक्षा करने वाला और हमें यम से छुड़ाने वाला है।

॥ चौपाई ॥

कोइ महेश की आश लगावे। कोई चण्डी देवी गावै॥
कहा कहौं जिव भयो बिगाना। तजेउ खसम कहं जार बिकाना॥

मुनींद्र साहेब जी कहते हैं कि जीवों में कोई तो अपनी रक्षा की महेश से आस लगाए हुए हैं और कोई अपनी रक्षा के लिए चण्डी देवी को गाते-ध्याते हैं। क्या कहूं कि यह जीव पराया हो गया, अर्थात अपने सतपुरुष को भूल गया। अपने सच्चे स्वामी सत्यपुरुष को त्यागकर अन्य देवी-देवों आदि के हाथ बिक गया।

॥ चौपाई ॥

कर्म कोठरी सब दिन डारा। फंदा दे सब जीवन मारा॥
सत्य पुरुष की आयसु पाऊं। कालहि मेटि छोर जिव लाऊं॥

काल-निरंजन ने सब जीवों को सब दिन (रोज-रोज) पाप-कर्म की कोठरी

में डाला हुआ है और सबको अपने माया-जाल में फंसा कर मार रहा है। यदि मैं सत्यपुरुष की आज्ञा पा जाऊं, तो इस काल-निरंजन को मिटाकर जीवों को भवसागर के तट पर लाऊं, अर्थात पार लगाऊं।

॥ चौपाई ॥

जोर करौं तो वचन नसाई। सहजहि जीवन लेउं चिताई॥
जो ग्रासे जिव सेवै ताहीं। अनचीन्हे यम के मुख जाहीं॥

फिर विचार करता हूं कि यदि अपने बल से ऐसा करूं तो सत्यपुरुष का वचन नष्ट होता है, इसलिए सहज ही जीवों को चेताऊं, अर्थात उनके भ्रम-अज्ञान को दूर करूं। विचित्र विडंबना है कि जो इस जीव को दुख देता एवं खाता है, यह उसे सेवता-पूजता है। इस प्रकार बिना पहचाने यह यम के मुख में जाता है।

विचित्र भाट की कथा लंका में

॥ चौपाई ॥

चहुं दिशि फिरि अयेउ गढ़ लंका।भाट विचित्र मिल्यो निःशंका॥
तिनि पुनि पूछेउ मुक्ति संदेशा। तासों कह्यो ज्ञान उपदेशा॥
सुनि विचित्र तबहि भ्रम भागा। अति अधीन ह्वै चरणन लागा॥

मुनींद्र स्वामी जी कहते हैं कि मैं चारों दिशाओं में घूमता-फिरता हुआ लंका देश में आया, वहां मुझे एक श्रद्धालु विचित्र नाम का भाट मिला। फिर उसने मुझे भवसागर से मुक्ति पाने के संदेश के बारे में पूछा, तब मैंने उसे ज्ञान-उपदेश कहा। मेरा ज्ञानोपदेश सुनते ही विचित्र भाट का भ्रम तभी दूर हो गया, वह अत्यंत अधीन होकर मेरे चरणों से लग गया।

॥ चौपाई ॥

कहे शरण मुहि दीजै स्वामी। तुम सत पुरुष सदा सुख धामी॥
कीजे मोहि कृतारथ आजू। मोरे जिव कर कीजै काजू॥

उसने मुझे कहा कि हे स्वामी! आप मुझे अपनी शरण दीजिए। आप सदा सुख-आनंद के धाम में रहने वाले सत्यपुरुष हो। आज आप मुझे संतुष्ट कीजिए अथवा मेरा जीवन सफल कीजिए और ज्ञान-दीक्षा से मेरे जीव का अर्थात मेरा उद्धार कीजिए।

॥ चौपाई ॥

कह्यो ताहि आरति को लेखा। खेमसरि जस भाषेउ रेखा॥
आनेहु भाव सहित सब साजा। आरति कीन्ह शब्द धुनि गाजा॥

मैंने उस विचित्र भाट को आरती का सामान बताया, जैसे खेमसरी को सामग्री की रूपरेखा कही थी। वह प्रेमपूर्वक सब साज-सामान ले आया और मैंने

शब्द-भजन की ध्वनि मंगल के बाजे-गाजे के साथ चौका आरती किया (विधि-विधान से उसको गुरु दीक्षा दी)।

॥ चौपाई ॥

तृण तोरा बीरा तिहि दीन्हा। ताके गृह में काहु न चीन्हा॥
सुमिरण ध्यान ताहि सो भाखा। पूरण डोरि गोय नहिं राखा॥

फिर तिनका तोड़ने का संस्कार कर मैंने उसे पान-बीड़ा दिया, उसके घर में गुरु दीक्षा लेने वाला और कोई नहीं देखा। सत्यपुरुष का सुमिरन-ध्यान उसे बताया, सुमिरन-ध्यान एवं ज्ञान-आचरण से सत्यलोक पहुंचने की पूर्ण विधि बताई, गुप्त कुछ नहीं रखा, अर्थात सब कुछ स्पष्ट बताया।

॥ छंद ॥

विचित्र वनिता गयी नृप गृह, जाय रानी सो कही।
इक योगी सुंदर महा मुनि, तासु महिमा का कही॥
स्वेत कला अपार उत्तम, और नहिं अस देखेऊं।
पति हमारे शरण गहि तिहि, जन्म शुभ करि लेखेऊं॥ 54॥

विचित्र भाट की स्त्री राजा के घर, अर्थात राजा रावण के महल गई और जाकर रानी से सब कहा कि एक महामुनि सुंदर-श्रेष्ठ योगी हमारे घर आए हैं, उनकी महिमा मैं क्या कहूं? उनकी श्वेत-उज्ज्वल कला असीम एवं अत्युत्तम है, मैंने ऐसा संत-योगी और कहीं नहीं देखा है। मेरे पति ने उनकी शरण ग्रहण की है, अर्थात उनसे ज्ञान-दीक्षा ली है और इसी से अपने जन्म को शुभ (सार्थक) होना समझा है।

॥ सोरठा ॥

सुनत मंदोदरि चाव, दरश लेन अकुलानेऊ।
वृषली संग ले आव, कनक रतन ले पगु धर्‌यो॥ 57॥

मुनींद्र साहेब की महिमा सुनते ही मंदोदरी रानी का भाव जाग उठा और वह उनके दर्शन करने के लिए व्याकुल हो गई। वह दासी को साथ लेकर आई तथा स्वर्ण, हीरा, रत्न आदि उनके चरणों में रखकर, चरण स्पर्श किए।

॥ चौपाई ॥

चरण टेकिके नायो शीशा। तब मुनींद्र पुनि दीन्ह अशीशा॥

रानी मंदोदरी ने शीश झुकाकर उनके चरणों में रख दिया, तब फिर मुनींद्र स्वामी ने उनको आशीर्वाद दिया।

मंदोदरी वचन मुनींद्र साहिब प्रति

चौपाई

कहे मन्दोदरि शुभ दिन मोरी। विनती करौं दोउ कर जोरी॥
ऐसा तपसी कबहुं न देखा। श्वेत अंग सब श्वेतहि भेखा॥

रानी मंदोदरी मुनींद्र साहेब से कहती है कि आपके अनुपम दर्शन से आज मेरा बहुत शुभ दिन है। मैंने ऐसा तपस्वी कभी नहीं देखा कि जिसके सब श्वेत अंग और श्वेत ही वेष हो। मैं आपसे दोनों हाथ जोड़कर विनती करती हूं।

॥ चौपाई ॥

जिव कारज मम हो जिहि भांती। सो मुहिं कहौं तजौ कुल जाती॥
हे समरथ मोहि करहु सनाथा। भव बूड़त गहि राखौ हाथा॥
अब अति प्रिय मोहि तुम लागे। हो दयाल सकल भ्रम भागे॥

मेरे जीव का कल्याण-कार्य जिस भांति भी हो, वह मुझे कहो, मैं अपने जीवन-कल्याणार्थ कुल-जाति का त्याग कर सकती हूं। हे समर्थ स्वामी! अपनी शरण लेकर मुझ अनाथ को सनाथ करो, भवसागर में डूबती हुई मुझको पकड़कर हाथों में रखो। अब आप मुझे बहुत प्रिय भले लगते हो, आप दयालु हो आपके दर्शन से सब भ्रम-संदेह भाग जाते हैं।

मुनींद्र साहिब वचन मंदोदरी प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनहु वधू प्रिय रावण केरी। नाम प्रताप कटे यम बेरी॥
ज्ञान दृष्टि सों परखहु भाई। खरा खोट तुहि देऊं चिन्हाई॥

मुनींद्र साहिब ने मंदोदरी से कहा कि रावण की प्रिय पत्नी सुनो! सत्यपुरुष नाम-प्रताप से यम की बेड़ी कट जाती है। तुम ज्ञान-दृष्टि से परखो-समझो। मैं खरा (ज्ञान) और खोट (अज्ञान) की पहचान समझा देता हूं, अर्थात सत्यपुरुष और कालमाया का अंतर बताता हूं।

॥ चौपाई ॥

पुरुष अमान अजर मनि सारा। सो तो तीन लोक ते न्यारा॥
तिहि साहिब कहं सुमिरे कोई। आवागमन रहित सो होई॥

सत्यपुरुष असीम, अजर, अमर है तथा सब मूल्यवान मणि-रत्नों से भिन्न अनमोल मणि की भांति है अर्थात काल-माया, सब देवी-देवों से परे, वह तो तीन लोक से न्यारा है तथा वही ग्रहण करने योग्य सार है। उस सत्यपुरुष स्वामी का कोई ध्यान-सुमिरन करे तो वह आवागमन (जन्म-मरण) से मुक्त हो जाता है।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनतहि शब्द तासु भ्रम भागा। गह्यो शब्द शुचि मन अनुरागा॥
हे साहिब मोहि लीजै शरणा। मेटहु मोर जन्म अरु मरणा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि मुनींद्र साहिब जी के मधुर

शब्द सुनते ही मंदोदरी का सब भ्रम-अज्ञान भाग गया और अपने पवित्र मन से प्रेमपूर्वक उनका शब्दोपदेश ग्रहण किया। उसने कहा कि हे साहिब! मुझे अपनी शरण में लीजिए और मेरे जन्म और मरण (आवागमन) को मेटो।

॥ चौपाई ॥

दीन्हों ताहि पान परवाना। पुरुष डोर सौंप्यो सहिदाना॥
गदगद भई पाय घर डोरी। मिलि रंकहि जिमि द्रव्य करोरी॥
रानी टेकेउ चरण हमारा। ता पाछे महलन पगु धारा॥

मुनींद्र साहिब ने मंदोदरी को पान एवं सार-शब्दोपदेश स्वरूप परवाना दिया। सत्यपुरुष तक पहुंचने की डोर नाम सुमिरन एवं ध्यान विधि की पहचान दी। अपने असली घर सत्यलोक पाने की डोरी (ज्ञान-युक्ति) पाकर मंदोदरी प्रसन्नता से गद्‌गद हो गई, जैसे किसी कंगाल को करोड़ों का धन मिल गया हो, फिर रानी ने हमारे अर्थात मुनींद्र साहेब के चरणों पर माथा टेक कर प्रणाम किया, इसके पश्चात वह अपने महल में चली गई।

विचित्र भाट की वधू का वृत्तांत

॥ चौपाई ॥

विचित्र वधू रानी समुझावा। गहौ शरण जीव मुकतावा॥
विचित्र नारि गहि रानी सिखापन। लीन्हेसि पान तजा भ्रम आपन॥

फिर रानी मंदोदरी ने विचित्र भाट की पत्नी को समझाया कि तुम भी इन साहिब सद्‌गुरु की शरण में अपने जीव को भवसागर से मुक्त कराओ। विचित्र की पत्नी ने रानी की शिक्षा को माना और उसने भी मुनींद्र साहिब से पान-परवाना लेकर अपना सब भ्रम-अज्ञान त्याग दिया।

मुनींद्र साहेब का रावण के पास जाना

॥ चौपाई ॥

तब मैं रावण पहं चलि आयो। द्वारपाल सों वचन सुनायो॥

मुनींद्र साहिब कहते हैं कि वहां से तब मैं रावण के पास चला आया और उसके द्वारपाल से मैंने कहा कि—

मुनींद्र साहिब वचन द्वारपाल प्रति

॥ चौपाई ॥

तासों एक बात समुझाई। राजा कहं तुम आव लिवाई॥

मैं तुम्हें एक बात समझाता हूं कि तुम राजा को यहां लिवा (बुला) लाओ।

द्वारपाल वचन मुनींद्र साहिब प्रति

॥ चौपाई ॥

तब पौरिया विनय यह लाई। महा प्रचंड है रावण राई॥
शिव बल हृदय शंक नहिं आने। काहू केर वचन नहिं माने॥
महागर्व अरु क्रोध अपारा। कहौं जाय मुहिं पल में मारा॥

तब द्वारपाल ने मुनींद्र स्वामी से विनती की कि राजा रावण बहुत भयंकर है। उसमें शिव का बल है, अतः वह किसी की भय-चिंता नहीं करता और किसी का कहना अथवा आदेश नहीं मानता। वह बड़ा अहंकारी और बहुत क्रोधी है। यदि मैं जाकर उससे आपकी बात कहूं, तो वह पल में मुझे मार डालेगा।

मुनींद्र साहिब वचन द्वारपाल प्रति

चौपाई

मानहु वचन जाव यहि बारा। रोम बंक नहिं होय तुम्हारा॥
सत्य वचन तुम हमरो मानो। रावण जाय तुरत तुम आनो॥

मुनींद्र साहिब ने द्वारपाल से कहा कि तुम मेरा वचन मानो और इस बार जाओ, तुम्हारा बाल बांका नहीं होगा। तुम मेरे सत्य वचन को मानो तथा तुम जाकर शीघ्र रावण को बुला लाओ।

द्वारपाल (प्रतिहार) वचन रावण प्रति

॥ चौपाई ॥

ततक्षण गा प्रतिहार जनायी। द्वै कर जोरे ठाढ़ रहाई॥
सिद्ध एक तो हम पहं आयी। ते कह राजहि लाव बुलाई॥

उसी क्षण द्वारपाल गया और उसने रावण को जताया। वह दोनों हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। तब उसने कहा कि हे राजन! हमारे पास एक सिद्ध (संत) आया है, उसने मुझसे कहा है कि राजा को बुला लाओ।

रावण वचन द्वारपाल प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनु नृप क्रोध कीन्ह तिहि बारा। तैं मतिहीन आहि प्रतिहारा॥
यह मति ज्ञान हरो किन तोरा। जो तैं मोहि बुलावन दौरा॥

द्वारपाल की बात सुनकर उस समय राजा रावण ने बहुत क्रोध किया और बोला कि अरे द्वारपाल! तू बुद्धिहीन है। यह तेरा बुद्धि-ज्ञान किसने हर लिया, जो तू मुझे बुलाने के लिए दौड़ा आया?

॥ चौपाई ॥

दर्श मोर शिव सुत नहिं पावत। मोकहं भिक्षुक कहा बुलावत॥
हे प्रतिहार सुनहु मम बानी। सिद्ध रूप कहु मोहि बखानी॥
वर्णहु कौन कौन तिहि भेखा। मोसन कहो दृष्टि जस देखा॥

मेरा दर्शन शिव के सुत-गणादि नहीं पाते और मुझको एक भिक्षुक ने बुलाने के लिए कहा ? हे द्वारपाल! मेरी बात सुन, उस सिद्ध का रूप वर्णन कर तू मुझसे कह। उसका वर्णन करो कि वह कौन है, उसका क्या वेष है ? मेरे सामने सब कहो जैसा तुमने उसे देखा है।

द्वारपाल वचन रावण प्रति

॥ चौपाई ॥

अहो रावण तिहि स्वेत स्वरूपा। स्वेतहि माला तिलक अनूपा॥
शशि समान है रूप विराजा। स्वेत वसन सब स्वेतहि साजा॥

द्वारपाल ने विनीत भाव से कहा कि हे राजा रावण! उसका श्वेत-उज्ज्वल स्वरूप है। उसकी श्वेत ही माला तथा श्वेत ही सुंदर तिलक है और श्वेत ही उसके वस्त्र तथा श्वेत ही सब साज-सामान हैं। चन्द्रमा के समान उसका परम स्वरूप प्रकाशमान है।

रानी मंदोदरी वचन रावण प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे मंदोदरी रावण राजा। ऐसो रूप पुरुष को छाजा॥
वेगे जाय गहो तुम पाई। तो तुव राज अटल होय जाई॥
छोड़हु राजा मान बड़ाई। चरण टेकि जो शीश नवाई॥

रानी मंदोदरी कहती है कि हे राजा रावण! जैसा द्वारपाल ने बताया है कि उस सिद्ध-संत का रूप सत्पुरुष परमात्मा के समान सुशोभित है। आप शीघ्र जाओ और उनके चरण पकड़ो (स्पर्श करो), तो आपका राज्य अटल हो जाएगा। हे राजन! आप अपनी मिथ्या मान-बड़ाई छोड़ो और जाकर उनके चरणों में शीश नवाकर रखो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

रावण सुनत क्रोध अति कीन्हा। जरत हुतासन मनु घृत दीन्हा॥
रावण चला शस्त्र लै हाथा। तुरत जाय तिहि काटौं माथा॥
मारौं ताहि सीस खसि परई। देखौं भिक्षुक मोर का करई॥

मंदोदरी की बात सुनकर रावण ने अत्यंत क्रोध किया, मानो जलती हुई अग्नि में घी डाल दिया। रावण शस्त्र हाथ में लेकर चला कि तुरंत जाकर उसका माथा काटूंगा। चलते-चलते रावण सोचता है कि उसे मारूं और उसका शीश कट कर गिर पड़े, तब देखूं कि वह भिक्षुक मेरा क्या कर लेगा?

॥ चौपाई ॥

जहं मुनींद्र तहं रावण आया। सत्तर वार अस्त्र कर लाया॥
लीन्ह मुनींद्र तृण कर ओटा। अति बल रावण मारै चोटा॥

जहां मुनींद्र स्वामी थे, वहां राजा रावण पहुंच गया और उसने सत्तर बार मुनींद्र स्वामी पर शस्त्र (तलवार आदि) चलाया। मुनींद्र स्वामी ने उसके शस्त्र के वार को एक तिनके पर ओट लिया। उनको मारने के लिए अत्यंत बलपूर्वक रावण ने शस्त्र से चोट मारी।

॥ छंद ॥

तृण ओट यहि कारणे, गर्व धरी राय हो।
तेहि कारण यह युक्ति कीन्हीं, लाज रावण आय हो॥

मंदोदरी वचन

कहे मन्दोदरि सुनहु राजा, गर्व छोड़ो लाज हो।
पांव टेकहु पुरुष के गहि, अटल होवे राज हो॥ 55॥

मुनींद्र साहिब ने तृण (तिनका) की ओट इस कारण ली कि राजा रावण बहुत ही अहंकारी है। उसी कारण यह युक्ति की कि तिनका तक न कटने पर रावण को लज्जा आएगी तथा उसका सारा अहंकार भी नष्ट होगा। मंदोदरी रानी कहती है कि हे राजा रावण! आप अहंकार एवं लाज को छोड़ दो और घुटने टेककर इन मुनींद्र स्वामी के चरण पकड़ लो, जिससे आपका राज्य अटल हो जाएगा।

रावण वचन मंदोदरी प्रति

॥ सोरठा ॥

सेवा करौं शिव जाय, जिन मोहि राज अटल दियो।
ताकर टेकौं पांय, पल दंडवत क्षणि ताहि को॥ 58॥

रावण मंदोदरी से कहता है कि मैं जाकर शिव की सेवा-पूजा करूंगा, जिन्होंने मुझे अटल राज दिया। मैं उनके ही आगे घुटने टेकूंगा और पल-क्षण उन्हीं को दण्डवत करूंगा (अन्य को नहीं)।

मुनींद्र साहिब वचन रावण प्रति

॥ चौपाई ॥

सुन अस वचन मुनींद्र पुकारी। तुम हो रावण गर्व अहारी॥

भेद हमारा तुम नहिं जानी। वचन एक तोहि कहौं निशानी॥
रामचन्द्र मारैं तुहि आयी। मांस तुम्हार श्वान नहिं खायी॥

रावण के ऐसे वचन सुनकर मुनींद्र स्वामी ने उसे पुकार कर कहा कि हे रावण! तुम बहुत अहंकार करने वाले हो। तुमने हमारा भेद नहीं समझा, इसलिए पहचान के रूप में मैं तुम्हें एक वचन (भविष्य-वाणी) कहता हूं कि तुमको रामचंद्र आकर मारेंगे और तुम्हारा मांस कुत्ता भी नहीं खाएगा, अर्थात तुम बहुत निकृष्ट हो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

रावण का कीन्हों अपमाना। अवध नगर पुनि कीन्ह पयाना॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि मुनींद्र साहेब ने अहंकारी रावण को अपमानित किया और फिर अयोध्या नगर की ओर प्रस्थान किया।

विप्र मधुकर की कथा

॥ छंद ॥

रावण को अपमान करी[1], तब अवध नगरहि आयऊ।
विप्र मधुकर मिलेउ मारग, दरश तिन मम पायऊ॥
मिलेउ मोकहं चरण गहि, तब सीस नाय अधीनता।
करि विनय बहु ले गयो मंदिर, कीन्ह बहु विधि दीनता॥ 56॥

मुनींद्र साहिब कहते हैं कि लंका में रावण का मान-मर्दन कर (तथा तीन जीव विचित्र भाट, रानी मंदोदरी और विचित्र भाट की पत्नी को ज्ञान-दीक्षा देकर) तब मैं अयोध्या नगर आया। विप्र मधुकर मुझे मार्ग में मिल गया और उसने मेरा दर्शन पाया। बहुत विनती करके वह अपने घर ले गया, वहां उसने बहुत प्रकार से विनम्रतापूर्वक मेरी सेवा की।

॥ सोरठा ॥

रंक विप्र थिर ज्ञान, बहुत प्रेम मोसों किया।
शब्द ज्ञान सहिदान, सुधा सरित विहंसत वदन॥ 59॥

दीन-विप्र-मधुकर ज्ञानभाव में स्थिर था, उसने मुझको बहुत प्रेम किया। उसका लोक-वेद का शब्द-ज्ञान बहुत अच्छा था, उसका मुख अर्थात स्वरूप अमृत की सरिता के समान मुस्कराता था।

---

1. कहीं किसी अन्य अनुराग सागर एवं पुराने ग्रंथों में यह न होकर 'तीन जीव परमोधि लंका' लिखा है, जिसका अर्थ है कि लंका में तीन जीव विचित्र भाट, रानी मंदोदरी तथा विचित्र भाट की पत्नी को ज्ञान दीक्षा देकर, तब वे अवध आए।

॥ चौपाई ॥

देख्यो ताहि बहुत लवलीन्हा। तासों कह्यो ज्ञान को चीन्हा॥
पुरुष संदेश कहेउ तिहि पासा। सुनत वचन जिय भयउ हुलासा॥

मुनींद्र प्रभु कहते हैं कि मैंने विप्र मधुकर को सेवा-प्रेम में बहुत लवलीन देखा, मैंने उसे ज्ञान समझने को कहा। मैंने उसके सामने सत्यपुरुष का संदेश कहा, मेरे वचनों को सुनकर उसका हृदय प्रसन्न हो गया।

॥ चौपाई ॥

जिमि अंकुर तपै बिन वारी। पूर्ण उदक जो मिले खरारी॥
अम्बु मिलत अंकुर सुख माना। तैसेहि मधुकर शब्दहि जाना॥

जैसे बिना पानी अंकुर तपता, अर्थात सूखता है और जो उसके सूखेपन को पूर्ण जल मिल जाए, तो जल मिलते ही वह अंकुर सुख मानकर हराभरा हो जाता है। वैसे ही मधुकर शब्द उपदेश को जानकर सुखी हुआ।

मधुकर वचन मुनींद्र साहिब प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष भाव सुनतहि हरषंता। मोकहं लोक दिखावहु संता॥

सत्यलोक में सत्यपुरुष का अनूठा प्रभाव सुनकर मधुकर अत्यंत हर्षित हुआ और बोला कि हे परम संत-स्वरूप स्वामी! मुझे सत्यलोक दिखाओ।

मुनींद्र साहिब वचन मधुकर प्रति

॥ चौपाई ॥

चलहु तोहि लै लोक दिखावों। लोक दिखाय बहुरि लै आवों॥

मुनींद्र स्वामी ने कहा कि चल मैं तुम्हें लेकर सत्यलोक दिखाता हूं और सत्यलोक दिखाकर फिर तुम्हें वापिस ले आता हूं।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

राख्यो देह हंस लै धाये। अमर लोक लै तिहि पहुंचाये॥
शोभा लोक देख हरषाना। तब मधुकर को मन पतियाना॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि मुनींद्र साहिब मधुकर की देह को वहीं रखकर उसकी जीवात्मा को लेकर गए और उसे अमर लोक, अर्थात सत्यलोक पहुंचाया। अमर लोक की अनुपम शोभा देखकर मधुकर बहुत हर्षित हुआ, तब उसके मन में विश्वास हुआ।

मधुकर वचन मुनींद्र साहिब प्रति

॥ चौपाई ॥

परयो चरण मधुकर अकुलाई। हे साहिब अब तृषा बुझाई॥
अब मुहिं लेइ चलो जग माहीं। और जीव उपदेशों तांही॥
और जीव गृह माहिं जो आई। तिन कहं हम उपदेशव जाई॥

हर्ष में विभोर हुआ मधुकर मुनींद्र स्वामी के चरणों में पड़ गया और बोला कि हे स्वामी! आपने मेरी सत्यलोक देखने की प्यास अब बुझा दी। अब आप मुझे संसार में ले चलो, जिससे मैं वहां और जीवों को उपदेश करूं। और जीव जो घर-गृहस्थ के अंतर्गत आते हैं, जाकर मैं उनको आपका सत्योपदेश करूं।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

हंसहि लै आये संसारा। पैठि देहि जाग्यो द्विज वारा॥
मधुकर घर षोडस जिव रहई। पुरुष संदेश सबन सों कहई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि मुनींद्र साहिब मधुकर की जीवात्मा को लेकर संसार में आए। उसकी जीवात्मा ने देह में प्रवेश किया तो वह द्विज मधुकर जाग उठा। मधुकर के घर-परिवार में सोलह जीव रहते थे, मधुकर ने उन सबसे सत्यपुरुष का ज्ञान-संदेश भली-भांति कहा।

॥ चौपाई ॥

गहहु चरण समरथ के जाई। यही लेहिं जम सों मुक्ताई॥
मधुकर वचन सबन मिलि माना। मुक्ति जान लीन्हों परवाना॥

मधुकर ने कहा कि सब जाकर इन समर्थ स्वामी के चरण पकड़ो, ये ही तुम सबको यमकाल से छुड़ा लेंगे। वहां सबने मिलकर मधुकर के कहे वचनों को माना और अपनी मुक्ति के लिए मुनींद्र से पान-परवाना लिया।

मधुकर वचन मुनींद्र साहिब प्रति

॥ चौपाई ॥

कह मधुकर विनती सुन लीजै। लोक निवास सबन कहं दीजै॥
यहि यम देश बहुत दुख होई। जीव अन्ध बूझै नहिं कोई॥
मुहि सब जीवन लै चलु स्वामी। कृपा करहु प्रभु अंतर्यामी॥

मधुकर मुनींद्र स्वामी से कहता है कि आप मेरी प्रार्थना सुन लो, सत्यलोक में सबको निवास दीजिए। यह यम का देश है, इसमें बहुत दुख होता है और जीव अंधा, अर्थात अनजान-अज्ञानी है, सामान्यत: ज्ञान की कोई बात पूछता-समझता नहीं है। हे मेरे पूर्ण समर्थ स्वामी! मुझे तथा मेरे परिवार के सब जीवों को सत्यलोक

ले चलिए, अर्थात हमें इस दुखदायी काल के देश से छुड़ाइए। हे अंतर्यामी प्रभु! हम सब पर आप कृपा करो।

॥ छंद ॥

यहि देश है यम महा परबल, जीव सकल सतावई।
कष्ट नाना भांति व्यापे, मरण जीवन लावई॥
काम क्रोध कठोर तृष्णा, लोभ माया अति बली।
देव मुनि गण सबहिं व्यापे, कोट जीवन दलमली॥ 57॥

इस देश, अर्थात भवसागर में काल-निरंजन महाप्रबल है, जो सब जीवों को सताता है। वह जीवों में अनेक प्रकार के कष्ट फैलता है और उनको जन्म मरण जैसा दारुण दुख लाता है। काल की भांति काम, क्रोध, कठिन तृष्णा, लोभ एवं माया से सब बहुत बलवान हैं, जो उसी की रचना हैं। ये महा शत्रु देवता तथा मुनिगण आदि सबको व्यापे हैं और करोड़ों जीवों को कुचल-मसल देते हैं।

॥ सोरठा ॥

तिहुं पुर यम को देश, जीवन कहं सुख छन नहिं।
मेटहु काल क्लेश, लेइ चलहु निज देश कहं॥ 60॥

तीनों लोक यम-निरंजन का देश हैं, अर्थात इनमें उसका वास है, इनमें जीवों को क्षण-भर भी सुख नहीं है। आप हमारे काल-क्लेश को मिटाइए और काल से छुड़ाकर हम सबको अपने अमरलोक ले चलो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

बहुत अधीन ताहि हम जाना। कर चौका तब दीन्ह परवाना॥
षोडस जिव परवाना पाये। तिन कहं लै सतलोक पठाये॥

सदगुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि जब मैंने अर्थात मुनींद्र साहिब ने मधुकर को बहुत दीन-अधीन समझा, तब चौका-आरती कर उन्हें परवाना दिया। उसके परिवार के सोलह जीवों ने ज्ञान-दीक्षा स्वरूप परवाना पाया, उनकी आयु पूरी होने पर, उनको लेकर सत्यलोक भेज दिया।

॥ चौपाई ॥

यम के दूत देख सब ठाड़े। चितवहिं ते जन ऊर्द्ध अखाड़े॥
पहुंच जाय पुरुष दरबारा। अंशन हंसन हर्ष अपारा॥

उन सोलह जीवों को सत्यलोक जाते हुए, यम के दूत सब खड़े देखते रहे। उन्हें ऊपर जाते देखकर वे सब विवश उदास हो गए। वे सब सोलह जीव सत्पुरुष के दरबार सत्यलोक पहुंच गए, जिन्हें देखकर सत्यपुरुष के अंश एवं मुक्त हंस-जीव बहुत प्रसन्न हुए।

॥ चौपाई ॥

परसे चरण पुरुष के हंसा। जन्म मरण को मेटउ संसा॥
सकल हंस पूछी कुशलाई। कहु द्विज कुशल भये अब आई॥

उन सबने सत्यपुरुष के चरण स्पर्श किए और उन्होंने कहा कि मुनींद्र साहिब ने हमारे जन्म-मरण का भय-संशय मिटा दिया। सत्यपुरुष ने उन सब हंस-जीवों की कुशलता पूछी, द्विज मधुकर ने कहा कि यहां आकर अब सब भले कुशल हो गए।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास यह अचरज बानी। गुप्त प्रगट चीन्हे सोई ज्ञानी॥
हंसन अमर चीर पहिराये। देह हिरम्मर लखि सुख पाये॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! यह महान आश्चर्य की वाणी है कि जीव का देह छोड़कर सत्यलोक जाना, सत्यपुरुष के चरणस्पर्श करना तथा सत्यलोक के हंस-जीवों एवं सत्यपुरुष द्वारा कुशलता पूछा जाना—उत्तर मिलना आदि, अर्थात जैसे देहधारी जीव पारस्परिक व्यवहार संसार में करते हैं, वैसे देह त्यागकर गए हंसजीव सत्यलोक में करते हैं। यब सब क्यों, कैसे तथा किसलिए संभव है ? इन सब गुप्त एवं प्रकट बातों को जो पहचाने-समझे, वही ज्ञानी है।

सत्यपुरुष ने उन सोलह हंस-जीवों को वहां अमर वस्त्र पहनाया। स्वर्ण के समान प्रकाशमान अपनी अमर देह, अर्थात स्वरूप को देखकर वे हंस-जीव बहुत सुख पाए।

॥ चौपाई ॥

षोडस भानु हंस उजियारा। अमृत भोजन करे अहारा॥
अगर वासना तृप्त शरीरा। पुरुष दरश गदगद मति धीरा॥
यहि विधि त्रेतायुग को भावा। हंस मुक्त भये नाम प्रभावा॥

सत्यलोक में उन हंस-जीवों में से एक-एक का दिव्य-प्रकाश सोलह सूर्य के समान है। वहां उन्होंने अमृत का भोजन किया। अगर की सुगंध से उनका हंस-शरीर तृप्त हुआ और सत्यपुरुष के दर्शन से वे बुद्धिमान एवं धैर्यवान हंस-जीव गद्गद (प्रसन्न) हो गए।

इसी प्रकार त्रेतायुग में मुनींद्र साहिब द्वारा चारों ओर ज्ञान-उपदेश का प्रचार-प्रसार हुआ और सत्यपुरुष के नाम के प्रभाव से हंस-जीव मुक्त हुए।

द्वापर युग में करुणामय (ज्ञानी जी-कबीर साहेब) के पृथ्वी पर आने की कथा

॥ चौपाई ॥

त्रेता गत द्वापर युग आवा। तब पुनि भयो काल परभावा॥
द्वापर युग प्रवेश भा जबही। पुरुष अवाज कीन्ह पुनि तबही॥

त्रेतायुग गया और द्वापर युग आया। तब फिर सब ओर काल-निरंजन का प्रभाव हुआ। जैसे ही द्वापर युग का प्रवेश हुआ, तब ही फिर सत्यपुरुष ने ज्ञानी जी को आवाज दी, अर्थात बुलाया।

सत्यपुरुष वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी वेगि जाहु संसारा। यम सों जीवन करहु उबारा॥
काल देत जीवन कहं त्रासा। काटो जाय तिनहि को फांसा॥

सत्यपुरुष कहते हैं कि हे ज्ञानी! शीघ्र संसार में जाओ और काल-निरंजन के बंधनों से जीवों का उद्धार करो। काल जीवों को बहुत सता रहा है, जाकर उसकी फांस को काटो।

ज्ञानी जी वचन सत्यपुरुष प्रति

॥ चौपाई ॥

तब हम कहा पुरुष सों बानी। आज्ञा करहु शब्द परवानी॥
कालहि मेटि जीव लै आवौं। बार बार का जगहि सिधावौं॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि तब मुझ-स्वरूप ज्ञानी ने सत्यपुरुष की बात सुनकर कहा कि ठोस प्रमाणित शब्दों में आज्ञा करो। मैं काल-निरंजन को मार कर जीवों को सत्यलोक ले आता हूं, बार-बार संसार में क्या जाऊंगा?

सत्यपुरुष वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहा पुरुष सुनु योग संतायन। शब्द चिताय जीव मुक्तायन॥
जो अब कालहिं मेटो जाई। हो सुत तुम मम वचन नसाई॥

सत्यपुरुष ने कहा कि हे योग संतायन (ज्ञानी) सुनो। सार-शब्द के उपदेश से चेताकर जीवों को मुक्त कराओ। जो अब जाकर काल को मारोगे, तो हे सुत! तुम मेरा वचन भंग करोगे।

॥ चौपाई ॥

अब तो परे जीव यह फन्दा। जगतहिं आनहु परम अनंदा॥
काल चरित परगट ह्वै जाई। तब सब जीव चरण गहें आई॥

अब तो अज्ञानी-जीव काल के इस कपट-जाल में फंसे पड़े हैं और उसमें ही मोहवश उन्हें सुख भास रहा है, जगत में से आकर उन्हें परम आनंद मिलेगा। जब काल-निरंजन का चरित्र प्रकट होकर सामने आएगा, तब सब जीव आकर चरण पकड़ेंगे।

॥ चौपाई ॥

ज्ञान अज्ञान चीन्ह नहिं जाई। देखहु भाव जिवन को भाई॥
सहज भाव जग प्रगटहु जाई। जाय प्रगट ह्वै जिवन चिताई॥

हे भाई! जीवों का भाव-स्वभाव तो देखो कि ये ज्ञान-अज्ञान को पहचानते तथा समझते नहीं हैं। तुम जाकर संसार में सहज-भाव से प्रकट होओ और प्रकट होकर सदुपदेश से जीवों को चेताओ।

॥ चौपाई ॥

तोहि गहे सो जिव मुहिं पैहैं। बिनु प्रतीत और ले यम खैहैं॥
जाई करहु जीव कड़िहारी। तो पर है परताप हमारी॥

जो तुमको मानेगा, वह जीव मुझको पाएगा। तुम पर विरले संत-भक्त ही विश्वास करेंगे, इसके अतिरिक्त बिना प्रतीत औरों को काल खाएगा। तुम जाकर जीवों को मुक्त करने वाले बनो, तुम पर हमारा प्रताप-बल है, अर्थात तुम्हारे अंदर हमारा विशेष तेज-बल है।

॥ चौपाई ॥

हमसों तुमसों अंतर नाहीं। जिमि तरंग जल माहिं समाहीं॥
हमहिं तुमहिं जो दुइ कर जाना। ता घट यम सब करि हैं थाना॥
जाहु बेगि तुम वा संसारा। जीवन खेइ उतारहु पारा॥

हम में और तुम में अंतर नहीं है, दोनों एक हैं। जैसे जल एवं तरंग दो नहीं होते, जल से उमड़ी हुई तरंग जल में ही समा जाती है। वैसे-ही तुम मेरे प्रकट स्वरूप हो, हम-तुम दोनों एक ही हैं। जो हमें और तुम्हें दो अलग-अलग कर जानेगा, उसके संपूर्ण हृदय में यम-काल स्थान बना लेगा, अर्थात वह सदा अशांत हृदय रहेगा।

अब तुम शीघ्र उस संसार में जाओ और ज्ञान द्वारा जीवों को खेकर भवसागर से पार उतारो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चले ज्ञानी तब माथ नवायी। पुरुष आज्ञा जग माहिं सिधायी॥
पुरुष अवाज चल्यो संसारा। चरण टेकु मम धर्म लबारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि तब ज्ञानी जी सत्यपुरुष को माथा झुकाकर चले, सत्यपुरुष की आज्ञा से उन्होंने संसार में आगमन किया। सत्यपुरुष की आज्ञा से संसार की ओर चले और मेरा, अर्थात ज्ञानी जी का संसार में चरण टेकते ही चालाक एवं प्रपंची काल-निरंजन ने आकर चरणों में सिर टेक दिया।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ छंद ॥

तबहिं धर्मराय अधीन ह्वै, बहु भांति विनती कीन्हेऊ।
किहि कारणे अब जग सिधारेहु, मोहि सो मति दीन्हेऊ॥
अस करहु जनि सब जग चितावहु, इहै विनती मैं करौं।
तुम बंधु जेठे छोट मैं, कर जोरि तुम पायन परौं॥ 58॥

तब धर्मराय-निरंजन ने ज्ञानी जी के अधीन होकर बहुत प्रकार से विनती की। उसने विनीत-भाव से पूछा कि अब किस कारण संसार में आए हो, मुझे वह समझा दो, अर्थात बताओ ? मैं आपसे यह विनती करता हूं कि सारे संसार के जीवों को चेताओ, ऐसा मत करना। आप मेरे बड़े भाई हो और मैं आपका छोटा, मैं हाथ जोड़कर आपके पांव पड़ता हूं, सब जीवों को मत चेताओ।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ सोरठा ॥

कह्यो धरम सुन बात, बिरल जीव मोहि चीन्हिहैं॥
शब्दन को पतियात, तुम अस कै जीवन ठगे॥ 61॥

ज्ञानी जी कहते हैं कि हे निरंजन! मेरी बात सुन, कोई विरला भक्त-जीव ही मुझे पहचानता है (सब मेरे शब्द-उपदेश पर विश्वास नहीं करते तथा न यथार्थ समझते)। शब्दों का विश्वास दिलाकर अर्थात शब्द-जाल से तुमने ऐसे कितने जीवों को ठगा है ?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

अस कह मृत्युलोक पगु धारा। पुनि परमारथ शब्द पुकारा॥
छोड़यो लोक लोक की काया। नर की देह धारि तब आया॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि ज्ञानी जी ने निरंजन को ऐसा कहकर मृत्युलोक में पांव धरा और फिर जीवों के हित-परमार्थ के लिए सत्य-शब्द को पुकारा, अर्थात उद्घोषित किया। ज्ञानी जी ने सत्यलोक और सत्यलोक का शरीर छोड़ा, मनुष्य का शरीर धारण कर तब मृत्युलोक में आए।

॥ चौपाई ॥

मृत्युलोक में हम पगु धारा। जीवन सो सत शब्द पुकारा॥
करुणामय तब नाम धराया। द्वापर युग जब महि में आया॥
कोइ न बूझे हैला मेरी। बांधे काल विषम भ्रम बेरी॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मृत्युलोक में हमने अर्थात मुझ-स्वरूप ज्ञानी जी ने पांव रखा और जीवों में सत्य-शब्द को पुकारा। द्वापर युग में जब मैं पृथ्वी (संसार) में आया, तो तब अपना करुणामय नाम रखवाया। उस समय कोई मेरी दशा को नहीं पूछता-समझता था, काल-निरंजन सब जीवों को भ्रम-अज्ञान की विषम बेड़ी में बांधता था।

रानी इंद्रमती की कथा

॥ चौपाई ॥

गढ़ गिरिनार तबहि चलि आये। चन्द्रविजय नृप तहां रहाये॥
तेहि नृप गृह रह नारि सयानी। पूजै साधु महातम ज्ञानी॥

उस समय करुणामय स्वामी गिरनार गढ़ चलकर आए। वहां चंद्रविजय राजा रहते थे। उस राजा के घर में इंद्रमती नाम की चतुर (बुद्धिमान) स्त्री रहती थी। वह संत-महात्मा एवं ज्ञानी-सज्जनों को पूजती थी।

॥ चौपाई ॥

चढ़ी अटारी बाट निहारे। संत दरश कहं काया गारे॥
रानी प्रीति बहुत हम जाना। तिहि मारग कहं कीन्ह पयाना॥
मोहि पहं दृष्टि परी जबरानी। वृषली रसना कह यह बानी॥

रानी इंद्रमती ऊंची अटारी पर चढ़कर मार्ग देखा करती थी कि कोई संत आता दिखाई पड़े, इस प्रकार संत-दर्शन के लिए वह अपने शरीर को गलाती थी, अर्थात नाना कष्ट सहती थी। हमने अर्थात करुणामय स्वामी ने संतों के प्रति रानी का बहुत प्रेम समझकर, उसी मार्ग को चले, जिस ओर महल अटारी पर चढ़कर रानी निहारा करती थी। स्वामी करुणामय जी कहते हैं कि जब रानी की दृष्टि मुझ पर पड़ी, तब उसने अपनी दासी से यह बात कही कि—

इंद्रमती वचन दासी प्रति

॥ चौपाई ॥

मारग बेगि जाहु तुम धाई। देखहु साधु आनु गहि पाई॥

तुम शीघ्र मार्ग में दौड़कर जाओ, देखो कोई साधु आ रहा है, उनके चरण पकड़ लो, विनम्रतापूर्वक प्रणाम कर उन्हें यहां ले आओ।

दासी वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

वृषली आय चरण लपटानी। नृप वनिता मुख भास सयानी॥
कही वृषली रानी अस भाषा। तुम दर्शन कहं अभिलाषा॥
देहु दरश मोहिं दीनदयाला। तुम्हरे दरश मिटे सब साला॥

राजा की चतुर स्त्री ने जैसा मुंह से कहा था, दासी आकर करुणामय स्वामी के चरणों में आकर लिपट गई। दासी ने विनम्रतापूर्वक कहा कि मुझे रानी ने ऐसा कहकर भेजा है, कि मुझे आपके दर्शन की बहुत इच्छा है। हे दीनों पर दया करने वाले दयालु स्वामी! मुझे आप दर्शन दीजिए, आपके दर्शन से मेरे सब संकट मिट जाएंगे।

करुणामय स्वामी वचन दासी प्रति

॥ चौपाई ॥

तब ज्ञानी कहि वचन सुनावें। राज राव घर हम नहिं जावें॥
राज काज है मान बड़ाई। हम साधू नृप गृह नहिं जाई॥

तब ज्ञानी जी स्वरूप करुणामय स्वामी ने दासी को यह वचन कह सुनाया कि राज्य के राजा के घर हम नहीं जाएंगे। क्योंकि राज्य के कार्य में तथा कर्ताओं में मिथ्या मान-बड़ाई होती है। हम साधु हैं, हमारा मान-बड़ाई से कोई संबंध नहीं, अतः मैं राजा के घर नहीं जाऊंगा।

दासी वचन रानी इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

चली वृषली रानी पहं आयी। द्वै कर जोरे विनय सुनायी॥
साधु न आवे मोर बुलाई। राज राव घर हम नहिं जाई॥
यह सुन इंद्रमती उठि धाई। कीन्ह दंडवत टेके पाई॥

दासी चलकर रानी के पास आई और दोनों हाथ जोड़कर रानी से विनती करते हुए बोली कि वह साधु मेरे बुलाने से नहीं आता, वह कहता है कि मैं किसी राज्य तथा राजा के घर नहीं जाऊंगा।

दासी की यह बात सुनकर रानी इंद्रमती स्वयं उठकर दौड़ी आई और दंडवत कर उनके चरणों में मस्तक रख दिया।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहिब मोपर करु दाया। मोरे गृह अब धरिये पाया॥
कह रानी चलु मंदिर मोरे। भयो सुखी दर्शन लिये तोरे॥

रानी इंद्रमती करुणामय स्वामी से विनम्रतापूर्वक कहती है कि हे साहिब! आप मुझ पर दया करो और अब चलकर मेरे घर अपने पवित्र चरण रखिए। आपके दर्शन पाकर मैं सुखी हो गई हूं, मेरे घर चलिए।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

प्रीति देख हम भवन सिधारे। राजा घर तबहीं पग धारे॥
प्रीति देख तेहि भवन सिधारे। दीन्ह सिंहासन चरण पखारे॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि हम, अर्थात करुणामय स्वामी प्रेम देखकर उसके महल चल दिए। प्रेम था तब ही राजा के घर चरण रखे। मान-बड़ाई न देखकर अपितु प्रेम देखकर उसके महल में आए, उसने बैठने के लिए सिंहासन दिया और चरण धोए।

॥ चौपाई ॥

दीन्ह सिंहासन चरण पखारी। चरण परछालन अंगोछा धारी॥
चरण धोय पुनि चाखेसि रानी। पट पद पोंछ जन्म शुभ जानी॥

सिंहासन देकर चरण धोए और चरण धोकर पोंछने के लिए अंगोछा लिया। फिर से चरण धोकर रानी ने चरणामृत लिया। वस्त्र से करुणामय स्वामी के चरण पोंछकर उसने अपना जन्म शुभ-सार्थक समझा।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

पुनि प्रसाद को आज्ञा मांगी। हे प्रभु मोकहं करहु सुभागी॥
जूठन परै मोरे गृह माहीं। सीत प्रसाद लै हमहूं खाहीं॥

फिर इंद्रमती ने करुणामय स्वामी से भोजन की आज्ञा मांगी। उसने विनय-भाव से कहा कि हे प्रभु! भोजन तैयार करने की आज्ञा देकर मुझे सौभाग्यशाली करो। आपके भोजन करने पर आपकी जूठन मेरे घर में पड़े और आपका शेष बचा प्रसाद लेकर मैं भी खाऊं (जिससे कि मुझे परम सुख शांति मिले)।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनु रानी मोहि क्षुधा न होई। पंच तत्व पावें जिहि सोई॥
अमृत नाम अहार है मोरा। सुनु रानी यह भाष्यो थोरा॥

करुणामय स्वामी ने कहा कि हे रानी! सुन, पांच तत्व जिस भोजन को पाते हैं उसकी मुझे भूख नहीं होती। मेरा अमृत नाम का भोजन है, हे रानी सुन! मैं तुम्हें यह थोड़ा बताता हूं, अर्थात इस बारे में संक्षिप्त-रूप में बताता हूं।

॥ चौपाई ॥

देह हमारि तत्व गुण न्यारी। तत्व प्रकृतिहि काल रचि वारी॥
असी पंच किहु काल समीरा। पंच तत्व की देह खमीरा॥

मेरी देह प्रकृति के पांच तत्व (पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु एवं आकाश) तथा प्रकृति के तीन गुण (सत, रज और तम) इन सबसे न्यारी है। पांच तत्व, तीन गुण और पच्चीस प्रकृति से काल-निरंजन ने इस फुलवारी-रूपी देह की रचना की है। स्थान एवं क्रिया के भेद से काल-निरंजन ने समीर (वायु) के पिचासी भाग किए, इसलिए पिचासी पवन कहा जाता है। पवन तथा अन्य चार तत्व कुल पांच तत्वों के मिश्रण से देह बनी है, जो अन्न-आहार से पुष्ट होती है, किंतु मैं उससे सर्वथा भिन्न हूं।

***विशेष**—उपर्युक्त बताई गई पच्चीस प्रकृति इस प्रकार हैं—*

1. पृथ्वी तत्व की पांच प्रकृति—हाड़, मांस, त्वचा, नाड़ी और रोम।

2. जल तत्व की पांच प्रकृति—लार, रक्त, पसीना, मूत्र और वीर्य।

3. तेज तत्व की पांच प्रकृति—क्षुधा, तृषा, आलस्य, निद्रा और मैथुन।

4. वायु तत्वरूप चंचल वायु की पांच प्रकृति—चलन, बोलन, धावन, प्रसारण और संकोचन।

5. आकाश तत्वरूप समान वायु की पांच प्रकृति—काम, क्रोध, लोभ, मोह और भय।

॥ चौपाई ॥

तामहं आदि पवन इक आही। जीव सोहंग बोलियो ताही॥
यह जिव अहै पुरुष को अंसा। रोकसि काल ताहि दे संसा॥

उस पांच-तत्व की स्थूल देह में एक आदि पवन है। आदि होने से अभिप्राय वह जन्म-मरण से रहित, नित्य, अविनाशी एवं शाश्वत है। वह चैतन्य जीव है, उसे सोहंग बोला जाता है। जीव सत्यपुरुष का अंश (पुत्र) है। काल-निरंजन ने जीव को संशय देकर सत्यलोक जाने से रोक रखा है, अर्थात नाना प्रकार के मत-मतांतरों में उलझाकर जीव को भ्रमित कर रखा है, भय एवं मोह वश जीव निरंजन के मत को ही मानता है, किंतु यदि उसे सत्यपुरुष का सदुपदेश दिया जाए तो उसे सहज स्वीकार नहीं करता।

॥ चौपाई ॥

नाना फन्द रचि जीव गरासै। देइ लोभ तब जीवहि फांसै॥
जिव तारन हम यहि जग आये। जो जिव चीन्ह ताहि मुक्ताये॥

काल-निरंजन नाना-प्रकार के माया-जाल रचता है और सांसारिक विषयों के लोभ-प्रलोभन देकर तब जीव को फांसता है, फिर उसे खा जाता है। जीवों के उद्धार निमित्त मैं इस संसार में आया हूं, जिस जीव ने मुझको पहचाना तथा मेरे सत्योपदेश को ग्रहण किया, उसको मैंने भवसागर से मुक्त किया।

॥ चौपाई ॥

धर्मराय अस बाजी कीन्हा। धोख अनेक जीव कहं दीन्हा॥
नीर पवन कृत्रिम किय काला। विनशि जाय बहुत करै बिहाला॥

निरंजन ने माया-जाल रचकर ऐसी चालबाजी की है कि जिससे जीव का बचना बहुत कठिन है, इस प्रकार उसने अनेकानेक जीवों को धोखा दिया है। उस काल ने पानी, पवन एवं पृथ्वी आदि तत्वों से बनावटी देह की रचना की है, जो समयानुसार नष्ट हो जाती है और इस देह में निरंजन बहुत दुख देता है।

॥ चौपाई ॥

तन हमार यहि साज ते न्यारा। मम तन नहिं सिरज्यो करतारा॥
शब्द अमान देह है मोरा। परखि गहहु भाष्यो कछु थोरा॥

मेरा शरीर निरंजन के बनाए साज-सामान से न्यारा है तथा मेरा शरीर काल-निरंजन ने नहीं रचा है। मेरा शरीर शब्द-स्वरूप (ब्रह्म रूप) है, जो मेरी इच्छा से बना है। मैंने कुछ थोड़ा-ही कहा है, मेरे उपदेश को परख कर ग्रहण करो।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनी वचन अचरज भौ भारी। तब रानी अस वचन उचारी॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि करुणामय स्वामी के वचन सुनकर रानी इंद्रमती को भारी आश्चर्य हुआ, तब रानी ने ऐसे वचन बोले—

रानी इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु अचरज यह होई। अस सुभाव दूजा नहिं कोई॥

हे प्रभु! मुझे यह आश्चर्य हुआ है कि जैसा आपने कहा है, ऐसा स्वभाव वाला दूसरा कोई नहीं है कि उसे भूख न लगे।

॥ छंद ॥

इंद्रमती आधीन ह्वै कहै, कृपा करहु दयानिधी।
एक एक विलोय वरणहु, मोहि ते सकलहु विधी॥
विष्णु सम दूजा नहिं कोई, रुद्र चतुरानन मुनी।
पंचतत्व खमीर तन तिहि, तत्व के वश गुण गुणी॥ 59॥

रानी इंद्रमती आश्रित होकर विनय-भाव से कहती है कि हे दया के सागर! मुझ पर कृपा करो। मुझसे समस्त ज्ञान-विधियों का एक-एक कर वर्णन करो। मैंने सुना है कि विष्णु के समान दूसरा ब्रह्मा-शिव एवं मुनी कोई नहीं है। पांच तत्वों के मिश्रण से शरीर बना है, और उन तत्वों के गुण भूख, प्यास तथा निद्रा के वश में सभी जीव हैं (मुझे आश्चर्य है कि उन तत्वों के गुणानुसार आप भूख-प्यास आदि के वश नहीं हो)।

॥ सोरठा ॥

तुम प्रभु अगम अपार, वरणों मोते कित भये।
मेटहु तृषा हमार, अपनो परिचय मोहि कह ॥ 62 ॥

हे प्रभु! आप अगम-अपार हो, अर्थात मन-बुद्धि की पहुंच से परे असीम हो, आप मुझसे वर्णन करो कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से भी भिन्न आप कहां से उत्पन्न हुए हो? अपना परिचय (नाम-स्थान आदि) मुझे कहो और मेरी प्यास (जिज्ञासा) मेटो।

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु अस अचरज मुहिं होई। अस सुभाव दूजा नहिं कोई ॥
कौन आहु कहवां ते आये। तन अचिंत प्रभु कहवां पाये ॥

हे प्रभु! मुझे आश्चर्य हो रहा है ऐसा स्वभाव दूसरे किसी का नहीं है। आप कौन हो, कहां से आए हो? यह अचिंत (दुख-चिंता से रहित) अद्‌भुत शरीर कहां से पाए हो?

॥ चौपाई ॥

कौन नाम तुम्हरो गुरुदेवा। यह सब वरणि कहो मोहि भेवा ॥
हम का जानहि भेद तुम्हारा। ताते पूछों यह व्यवहारा ॥

हे गुरुदेव! आपका क्या नाम है? यह सब भेद वर्णन कर मुझे बताओ। मैं आपका भेद क्या जानूं? इससे यह व्यावहारिक बात पूछ रही हूं।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती सुन कथा सुहावन। तुहिं समुझाय गुण पावन ॥
देश हमार न्यार तिहुं पुर ते। अहिपुर नरपुर अरु सुरपुर ते ॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे इंद्रमती सुन ! मैं तुम्हें पवित्र गुण वाली सुंदर कथा समझाकर कहता हूं। मेरा देश नागलोग (पाताल), मनुष्य लोक (मृत्युलोक) और देवलोक (स्वर्गलोक) से न्यारा है।

॥ चौपाई ॥

तहां नहीं यम केर प्रवेशा। आदि पुरुष को जहवां देशा ॥
सत्यलोक वहि देश सुहेला। सत्यनाम गहि कीजे मेला ॥

वहां निरंजन का प्रवेश अथवा अधिकार नहीं है, जहां वह आदिपुरुष का देश है। वह सुंदर एवं सुखदायी देश सत्यलोक है, आदिपुरुष के सत्यनाम को ग्रहण कर वहां प्रवेश कर दर्शन-मिलन कीजिए।

॥ चौपाई ॥

अद्‌भुत ज्योति पुरुष की काया। हंसन शोभा अधिक सुहाया॥
आदिपुरुष सोभा अधिकारा। पटतर देहु काहि संसारा॥

आदिपुरुष की सत्यस्वरूपी देह अद्‌भुत प्रकाशमय है, वहां अंशों-हंसों की शोभा बहुत सुहानी लगती है। आदिपुरुष की शोभा इतनी अधिक है कि उसकी उपमा संसार में किससे दूं?

॥ चौपाई ॥

द्वीप करी शोभा उजियारी। पटतर देहुं काहि संसारी॥
यहि तीनों पुर अस नहिं कोई। जाके पटतर दीजै सोई॥

सत्यलोक से संबद्ध द्वीप एवं करी की सुंदरता के उजाले (प्रकाश) की उपमा संसार की किस वस्तु से दूं? इन तीनों लोकों में ऐसा कोई कुछ नहीं है, जिससे उसकी उपमा (समरूपता) दी जा सके।

॥ चौपाई ॥

चन्द्र सूर यहि देश मंझारा। इन सम और नहीं उजियारा॥
सत्यलोक की ऐसी बाता। कोटिक शशि इक रोम लजाता॥

इस देश में चंद्रमा एवं सूर्य हैं और इनके समान और प्रकाश नहीं है। सत्य-पुरुष के सत्यलोक की ऐसी अनूठी बात है कि वहां करोड़ चंद्रमा सत्यपुरुष के एक रोम (बाल) के प्रकाश के सामने लजाते हैं।

॥ चौपाई ॥

एक रोम की शोभा ऐसी। और बदन की वरणौं कैसी॥
ऐसा पुरुष कान्ति उजियारा। हंसन शोभा कहौं बिचारा॥

जब सत्यपुरुष के एक रोम की शोभा ऐसी है तो और शरीर की शोभा कैसी किस प्रकार वर्णन करूं? सत्यपुरुष की छवि का ऐसा अद्वितीय (अनुपम) प्रकाश है। अब हंसों की शोभा का वर्णन विचार कर कहता हूं।

॥ चौपाई ॥

एक हंस जस षोडस भाना। अग्र वासना हंस अघाना॥
तहं कबहूं यामिनि नहिं होई। सदा अंजोर पुरुष तन सोई॥

सत्यलोक के एक हंस का प्रकाश, जैसा सोलह सूर्य का प्रकाश होता है, अर्थात सोलह सूर्य के प्रकाश के बराबर एक हंस का प्रकाश है और सत्यलोक के हंस अगर की विशेष सुगंध से तृप्त रहते हैं। वहां कभी भी रात नहीं होती, सत्यपुरुष के दिव्य शरीर का अनुपम प्रकाश सदैव हुआ करता है।

॥ चौपाई ॥

कहा कहौं कछु कहत न आवै। धन्य भाग जे हंस सिधावै॥
ताहि देश ते हम चालि आये। करुणामय निज नाम धराये॥

मैं क्या कहूं, कैसे कहूं? सत्यलोक की बात कुछ कहने में नहीं आती, अर्थात शब्दों में उसका कह पाना कठिन है। उस हंस जीव के धन्य भाग्य हैं, जो सत्यलोक जाता है। उसी देश, अर्थात सत्यलोक से मैं चलकर आया हूं और मैंने अपना नाम करुणामय रखा है।

॥ चौपाई ॥

सतयुग त्रेता द्वापर नामा। तोसन वचन कहौं सुख धामा॥
युगन युगन में मैं चलि आवौं। जो चेते तेहि लोक पठावौं॥

सतयुग, त्रेतायुग और द्वापर युग में मेरे नाम हैं, मैं तुमसे सुखदायक वचन कहता हूं। युग-युग में मैं चलकर आता हूं और मेरे सत्योपदेश से जो जीव चेत जाता है, अर्थात सर्व-विषय वासना एवं भ्रम पाप से रहित हो जाता है, उसे मैं सत्यलोक भेज देता हूं।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु औरों युग तुम आये। कौन नाम उन युगन धराये॥

रानी इंद्रमती ने सविनय कहा कि हे प्रभु! आप और युगों में भी आए, कृपाकर मुझे बताओ कि उन युगों में आपने कौन-कौन नाम धरवाए?

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

सतयुग में सतसुकृत कहाये। त्रेता नाम मुनींद्र* धराये॥
अब करुनामय नाम धरावा। जो चीन्हा तिहि लोक पठावा॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि जब मैं सतयुग में आया तो सतसुकृत कहलाया और जब त्रेतायुग में आया तो मुनींद्र नाम रखवाया। अब इस युग में मैंने अपना नाम करुणामय रखवाया, जिस जीव ने मुझे पहचाना तथा मेरे सदुपदेश को भली-भांति ग्रहण किया, उसको सत्यलोक भेजा।

विशेष—*सद्गुरु कबीर साहेब भिन्न-भिन्न नाम-रूप से चारों युगों में*

---

* सद्गुरु कबीर साहिब के चारों युग में होने के नाम इस प्रकार दर्शाए गए हैं—

सतयुग सत्सुकृत सतनामा। त्रेता मुनीन्द्र कर धामा॥
द्वापर करुणामय सुखदायी। कलियुग नाम कबीर धरायी॥

(कबीरपंथी शब्दावली)

प्रकट हुए हैं और उन्होंने जीव-उद्धारार्थ सत्योपदेश किया है। सद्ग्रंथ बीजक में इसके सांकेतिक प्रमाण मिलते हैं, जिनमें स्वयं सद्‌गुरु कबीर अपने अस्तित्व अथवा प्राकट्य को चारों युग में होना सिद्ध करते हैं। वे स्वयं कहते हैं कि—

सांचा शब्द कबीर का, हृदया देखु विचार।
चित्त दे समुझे नहीं, मोहि कहत भयल जुग चार॥

(बीजक साखी 74)

अर्थात, कबीर का शब्द (वचन) सच्चा है, वह सत्य को लखाने वाला है। हे मानव! तुम उसको हृदय में विचार कर देख लो। मेरे सत्योपदेश को अज्ञानी मनुष्य चित्त देकर समझते ही नहीं, मुझे तो किसी प्रकार उपदेश देते हुए चार युग बीत गए। एक और रमैनी में वे सबको चेताते हुए कहते हैं कि—

कहइत मोहि भयल जुग चारी। समुझत नाहि मोह सुत नारी॥

(बी.र.50)

अर्थात, मुझे समझाते हुए चार युग बीत गए, परंतु पुत्र एवं स्त्री के मोह में पड़े हुए अज्ञानी लोग समझते नहीं हैं।

भ्रम एवं भेद-भाव फैलाने वाले तथाकथित धार्मिक लोगों की वे खुली आलोचना करते हैं और विभिन्न मत-मतांतरों में भटकते हुए जीव (मनुष्य) को सीधा सत्य-पथ दर्शाते हैं। एक रमैनी के माध्यम से वे स्वयं एवं स्वयं के वक्तव्य को सत्य बताते हुए अत्यंत मार्मिक सारोपदेश करते हैं और चारों युग में स्वयं के होने का संकेत करते हैं, यथा—

तन मन भजि रहु मोरे भक्ता। सत्य कबीर सत्य है वक्ता॥
आपुहि देवा आपु है पाती। आपुहि कुल आपुहि है जाती॥
सर्व भूत संसार निवासी। आपुहि खसम आपु सुखवासी॥
कहइत मोहि भयल युगचारी। काके आगे कहौं पुकारी॥

(बी.र. 14)

अर्थात, हे मेरे भक्तो! तुम तन एवं मन से सच्चे स्वामी को भजो। सत्य कबीर सत्य कहने वाला है। वह सच्चा स्वामी स्वयं देवता और स्वयं पत्र (पत्ते) है तथा स्वयं कुल-जाति है। उसका संसार तथा संसार के सब प्राणियों में निवास है। वह स्वयं ही स्वामी तथा स्वयं ही सबमें सुख से बसता है। इस बात को समझाते हुए मुझे चार युग बीत गए। किसके आगे पुकार कर कहूं? अर्थात, कोई सुनता-समझता नहीं है।

इस प्रकार निस्संदेह चारों युग में जीव-कल्याण के लिए सद्‌गुरु कबीर साहेब का पावन प्राकट्य हुआ।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तिहि कह्यो बुझाई। सतयुग त्रेता कथा सुनाई॥
सो सुनि अधिक चाह तिन कीन्हा। और बात सो पूछन लीन्हा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! करुणामय स्वामी ने इंद्रमती को सब कहकर समझाया, सतयुग एवं त्रेतायुग की अपनी कथा सुनाई। वह सुनकर उसने जानने की अधिक इच्छा की, इसलिए और बात जो थीं, वे सब उसने विस्तार-पूर्वक पूछ लीं।

॥ चौपाई ॥

उत्पति प्रलय और बहु भाऊ। यम चरित्र सब बरनि सुनाऊ॥
जेहि विधि षोडस सुत प्रगटाना। सो सब भाष सुनायो ज्ञाना॥

उत्पत्ति-प्रलय और जो बहुत कुछ हुआ तथा यम-निरंजन का सब चरित्र वर्णन कर उसे सुनाया। जिस प्रकार सत्यपुरुष ने शब्द से सोलह-सुत प्रकट किए, वह सब ज्ञान कह कर उसे सुनाया।

॥ चौपाई ॥

कूर्म विदार देवी उत्पानी। सो सब ताहि कहा सहिदानी॥
ग्रास अष्टंगी और निकासा। जेहि विधि भये मही अकासा॥

निरंजन द्वारा कूर्म का उदर फाड़ना तथा आद्या-अष्टांगी देवी का उत्पन्न करना, वह सब उसे सही-सही समझाकर कहा। निरंजन का अष्टांगी-कन्या को ग्रासना और उसे बाहर निकालना और जिस प्रकार से पृथ्वी-आकाश आदि पांच तत्व हुए, सब बताया।

॥ चौपाई ॥

सिंधु मथन त्रय सुत उत्पानी। सबहि कहेउ पाछिल सहिदानी॥
जेहि विधि जीवन जम ठगिराखा। सो सब ताहि सुनायउ भाखा॥

तीन सुत ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश का उत्पन्न करना और सागर-मंथन आदि सब पीछे की कथाएं सही-रूप से कहीं। जिस प्रकार काल-निरंजन ने माया-मोह से जीवों को ठग रखा है, वह सब उसे वर्णन कर सुनाया।

॥ चौपाई ॥

सुनत ज्ञान पाछिल भ्रम भागा। हरषि सो चरण गहे अनुरागा॥

करुणामय स्वामी से उपर्युक्त सब पिछला ज्ञान सुनते ही इंद्रमती का भ्रम भाग गया और उसने हर्षित होकर अनन्य प्रेम से उनके चरण स्पर्श किए।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

जोरि पानी बोली बिलखायी। हे प्रभु यम ते लेहु छुड़ाई॥
राज पाट सब तुम पर वारौं। धन संपत्ति यह सब तजि डारौं॥
देहु शरण मुहिं दीन दयाला। बंदिछोर मुंहि करहु निहाला॥

रानी इंद्रमती हाथ जोड़कर सहमी हुई सी विनीत भाव से बोली कि हे प्रभु! आप मुझे यम से छुड़ा लो। समस्त राज-पाट आप पर निछावर करती हूं और यह सब धन-संपत्ति त्याग डालती हूं। हे दीन दयाल, सब बंधनों से छुड़ाने वाले बंदीछोड़। मुझे अपनी शरण दे दो और मुझे कृतार्थ करो।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती सुन वचन हमारा। छोरौं निश्चय बंदि तुम्हारा॥
चीन्हेउ मोहि परतीत दृढाना। अब देहुं तोहि नाम परवाना॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे इंद्रमती ! मेरा वचन सुन, मैं निश्चय तुम्हारी बंदि (बंधन) छुड़ाऊंगा। तुम मुझे पहचानो-समझो तथा मेरे प्रति विश्वास दृढ़ (मजबूत) करो। अब मैं तुम्हें सार-नाम परवाना दूंगा।

॥ चौपाई ॥

करहु आरती लेहु परवाना। भागे यम तब दूर पयाना॥
चीन्हों मोहिं करो परतीती। लेहु पान चलु भौ जल जीती॥

ज्ञान-दीक्षा के पंच संस्कार निमित्त चौका-आरती कर पान-परवाना लो, तब तुमसे यम दूर भाग जाएगा। मुझको पहचानो तथा मुझ पर विश्वास करो, पहले पान-परवाना लो, जिससे भवसागर जीतकर फिर सत्यलोक चलो।

विशेष—*कबीरपंथ में गुरु से ज्ञान-दीक्षा लेते समय शिष्य के पंचसंस्कार किए जाते हैं, जो इस प्रकार है—1.तिनका तुड़वाना, यह काल-जाल से संबंध विच्छेद का प्रतीक माना जाता है, 2. तिलक करना, 3. गले में कंठी बांधना, 4. गुरु-मंत्र अर्थात ध्यान-सुमिरन के लिए सार-शब्दोपदेश देना, 5. मतानुसार रहनी-गहनी का उपदेश करना।*

॥ चौपाई ॥

आनहु जो कछु आरती साजा। राजपाट कर मोहि न काजा॥
धन सम्पति कछु मोहि न भावा। जीव चितावन यहि जग आवा॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि आरती का जो कुछ साज-सामान होता है, उसे ले आओ। तुम्हारे राजपाट से मुझे कोई काम नहीं। धन-संपत्ति मझे कुछ भी नहीं भाते, जीव चेताने के लिए मैं इस संसार में आया हूं।

॥ चौपाई ॥

धन संपत्ति तुम यहवां पायी। करहु संत सम्मान बनायी॥
सकल जीव हैं साहिब केरा। मोहवश जीव परे अंधेरा॥
सब घट पुरुष अंश कियो बासा। कहीं प्रगट कहिं गुप्त निवासा॥

जो धन-संपत्ति तुमने यहां पाई है, उससे संतों का आदर-सत्कार करो, अर्थात उन्हें भोजन, वस्त्र एवं आवश्यक सामान दो। सत्यपुरुष स्वामी के सभी जीव हैं, परंतु सब जीव मोहवश अज्ञानांधकार में पड़े हैं। सब घट, अर्थात समस्त शरीरों में सत्यपुरुष के अंश जीवात्मा वास करती है, वह कहीं प्रकट और कहीं गुप्त है (यह ज्ञान समझना चाहिए)।

॥ छंद ॥

सब जीव हैं सतपुरुष के, वश मोह भ्रम बिगान हो।
यमराज को यह चरित सब, भ्रम जाल जग परधान हो॥
जिव कालवश लरत मोसे, भ्रमवश मोहि न चीन्हही।
तजि सुधा कीन्हों नेह विष से, छोड़ि घृत अंचवे मही॥ 60॥

सत्यपुरुष के समस्त जीव हैं, परंतु मोह एवं भ्रम (अज्ञान) के वश होकर पराए हो रहे हैं, अर्थात निरंजन के पक्ष में हो रहे हैं। यह सब निरंजन का चरित्र है कि जीव सत्यपुरुष को भुलाकर, मोहवश उसके फैलाए खानी-वाणी के भ्रम-जाल में फंस रहे हैं और जगत में उसका रचा भ्रम-जाल ही प्रमुख हुआ है, अर्थात उसके भ्रम-जाल में फंसा जीव सत्य-असत्य को समझ नहीं पाता। मेरे उपदेश को न समझकर जीव कालवश होकर मुझसे लड़ते हैं और भ्रमवश मुझे नहीं पहचानते। इस प्रकार जीव ने सत्यपुरुष रूपी अमृत को छोड़कर निरंजन रूपी विष से प्यार किया है, जैसे कोई घी को छोड़कर मट्ठा ग्रहण करता है।

॥ सोरठा ॥

कोइ इक विरला जीव, परखि शब्द मोहि चीन्हई॥
धाय मिले निज पीव, तजे जार को आसरो॥ 63॥

संसार के असंख्य जीवों में कोई एक विरला जीव मेरे शब्द-उपदेश को परखकर मुझे पहचानेगा और कपटी निरंजन-जार (यार-दोस्त) का भरोसा छोड़कर, अपने सच्चे स्वामी सत्यपुरुष से दौड़कर मिलेगा।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती सुन वचन अघानी। बोली मधुर ज्ञान गुण बानी॥
मोहि अधम को तुम सुख दीन्हा। तुम प्रसाद आगम गम चीन्हा॥

करुणामय स्वामी के सारगर्भित वचन सुनकर, संतुष्ट इंद्रमती ज्ञान-गुण संपन्न मधुर वाणी बोली कि हे प्रभु! आपने सत्यपुरुष का सत्योपदेश सुनाकर मुझ पापिन को बहुत सुख प्रदान किया। आपकी कृपा से मैंने मन-बुद्धि की पहुंच से परे सत्यपुरुष को पहचाना, अर्थात समझा है।

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु चीन्ह तोहि अब पाहू। निश्चय सत्यपुरुष तुम आहू॥
सत्यपुरुष जिन लोक संवारा। करेहु कृपा सो मोहि उदारा॥

हे प्रभु! अब मैंने आपको पहचानकर पाया है, आप निश्चय ही सत्यपुरुष हो और जीवों के उद्धार निमित्त आए हो। जिस सत्यपुरुष ने लोक-द्वीपों की रचना कर उन्हें समुन्नत कर सजाया-संवारा है, आप वही हो। हे उदार प्रभु! आप मुझ पर ऐसी कृपा करो, जिससे मेरा उद्धार हो।

॥ चौपाई ॥

आपन हृदय सत्य हम जाना। तुम ते अधिक और नहिं आना॥
अब भाषहु प्रभु आरती भाऊ। जो चाहिये सो मोहि बताऊ॥

मैंने अपने हृदय में यह सत्य जान लिया है कि आपसे अधिक श्रेष्ठ एवं ज्ञान-गुण संपन्न कोई दूसरा नहीं है। हे प्रभु! अब चौका-आरती के बारे में कहो और जो सामान चाहिए मुझे बताओ।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

हे धर्मनि सो ताहि सुनावा। जस खेमसरि सो भाषेउ भावा॥
चौका कर लेवहु परवाना। पीछे कहौं अपन सहिदाना॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! करुणामय स्वामी ने उसे वही कह सुनाया, जैसा खेमसरी से चौका-आरती का सामान वर्णन किया था। उन्होंने कहा कि पहले चौका-आरती कर परवाना लो, फिर पीछे मैं सत्यपुरुष की पहचान एवं उन तक पहुंचने की ज्ञान-युक्ति कहूंगा।

॥ चौपाई ॥

आनेउ सकल साज तबरानी। चौका बैठि शब्द ध्वनि ठानी॥
आरति कर दीन्हा परवाना। पुरुष ध्यान सुमिरन सहिदाना॥

तब रानी इंद्रमती चौका-आरती का सब सामान ले आई। फिर चौका में बैठकर करुणामय स्वामी ने गाने-बजाने के विधि-विधान के साथ चौका किया। चौका की संपन्न विधि में आरती कर रानी इंद्रमती को परवाना दिया और सत्यलोक पहुंचने का चिह्न-स्वरूप सत्यपुरुष का ध्यान एवं नाम-सुमिरन सब यथा रूप से बताया।

॥ चौपाई ॥

उठि रानी तब माथ नवायी। ले आज्ञा परवाना पायी॥

फिर रानी इंद्रमती ने उठकर करुणामय स्वामी को मस्तक नवाया और उनकी आज्ञा लेकर पान-परवाना पाया, अर्थात ग्रहण किया।

इंद्रमती वचन राजा चंद्रविजय प्रति

॥ चौपाई ॥

पुनि रानी राजहि समुझावा। हे प्रभु बहुरि न ऐसो दांवा॥
गहो शरण जो कारज चाहो। इतना वचन मोर निरबाहो॥

फिर रानी इंद्रमती ने राजा चंद्रविजय को समझाया कि हे स्वामी! फिर ऐसा दांव न लगेगा। यदि आप अपना कल्याण (मोक्ष) चाहते हो तो इन करुणामय स्वामी की शरण ग्रहण करो, अर्थात गुरु दीक्षा लो, मेरी इतनी सी बात निभाओ।

राजा चंद्रविजय वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

तुम रानी अरधंगी सोई। हम तुम भक्त होय नहिं दोई॥
तोरि भक्ति का देखौं भाऊ। किहि विधि लेहु मुक्ताऊ॥
देखौं तोरि भक्ति परतापा। पहुंचै लोक मिटै संतापा॥

राजा चंद्रविजय ने कहा कि हे रानी! तुम मेरी अर्धांगी (आधा अंग) हो, मैं तुम्हारी भक्ति में आधा भागीदार हूं, इसलिए मैं और तुम दोनों भक्त नहीं होंगे। मैं तुम्हारी भक्ति का प्रभाव देखूंगा कि आधा भागीदार होने के नाते तुम किस प्रकार मुझे मुक्त कराओगी? मैं तुम्हारी भक्ति का प्रताप (तेज-बल) देखूंगा कि जिससे सब दुख मिट जाएंगे और हम सत्यलोक पहुंचेंगे।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

रानी बहुरि मोहि पहं आयी। हम तिहि काल चरित्र लखायी॥
रानी आई हमरें पासा। तासों कियो वचन परकासा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि रानी इंद्रमती फिर मेरे अर्थात करुणामय स्वामी के पास आई, उन्होंने उसे विघ्न डालने वाले काल-निरंजन का चरित्र लखाया। रानी अपने पास आई, इसलिए उससे काल के बारे में भविष्य में होने वाले मैंने वचन कहे।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनु रानी एक वचन हमारा। कालहु कला करे छल धारा॥
काल व्याल ह्वै तो पहं आयी। डसे तोहि सो देउं बतायी॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे रानी! मेरी यह एक बात सुन, काल-निरंजन अपनी कला से छल का रूप धारण करेगा। काल-दूत सांप बनकर तुम्हारे पास आएगा और तुम्हें डसेगा, वह तुम्हें बताए देता हूं।

॥ चौपाई ॥

तोकहं शिष्य कीन्ह मैं जानी। डसे काल तक्षक ह्वै आनी॥
अब हम तोकहं मन्त्र लखायी। काल गरल सब दूर भगायी॥

तुमको मैंने शिष्य किया है और मैं जान गया हूं कि काल आकर सांप बनकर तुम्हें डसेगा। इसलिए अब मैं तुमको मंत्र बताता हूं, जिससे तब काल रूपी सर्प का जहर दूर भाग जाएगा।

॥ चौपाई ॥

दीन्हों शब्द बिरहुली ताही। काल गरल जेहि व्यापे नाही॥
पुनि यम दूसर छल तोहि ठानी। सो चरित्र मैं कहौं बखानी॥

मैंने तुम्हें बिरहुली-मंत्र दिया, जिससे सर्प का विष तुम्हें नहीं व्यापेगा। फिर यम तुमसे दूसरा छल करने की ठानेगा, वह चरित्र मैं वर्णन करता हूं।

॥ चौपाई ॥

छलकर यम आये तुमपासा। सो तुहि भेद कहौं परकासा॥
हंसवर्ण वह रूप बनायी। हम सम ज्ञान तोहि समुझायी॥

छल करके यमदूत तुम्हारे पास आएगा, उसका भेद तुम्हें प्रकट कर कहता हूं। हंस-वर्ण अर्थात श्वेत-रंग का रूप बनाकर वह आएगा और मेरे समान ज्ञान तुम्हें समझाएगा।

॥ चौपाई ॥

तुम सन कहे चीन्ह मोहि रानी। मरदन काल नाम मम ज्ञानी॥
यहि विधि काल ठगे तोहि आयी। काल रेख सब देउ बतायी॥

वह तुम्हारे सामने कहेगा कि हे रानी! मुझे पहचान, मैं काल का मर्दन करने वाला हूं और मेरा नाम ज्ञानी अर्थात करुणामय है। इस प्रकार काल आकर तुम्हें ठगेगा, काल की रूप-रेखा सब मैं तुम्हें बताए देता हूं।

॥ चौपाई ॥

मस्तक छोट काल कर जानू। चक्षु कुरंग को रंग बखानू॥
काल लक्ष मैं तोहि बतायी। और अग सब सेत रहायी॥

काल का मस्तक मेरे समान नहीं है, काल का मस्तक छोटा होगा और उसकी आंखों का रंग कुरंग (बदरंग) होगा, अर्थात उसकी आंखें मेरे जैसी नहीं होंगी। और उसके दूसरे सब अंग श्वेत-रंग के रहेंगे। मैंने ये काल के सब लक्षण तुम्हें बता दिए।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

रानी चरण गहे तब धायी। हे प्रभु मोहि लोक लै जायी॥
यह तो देश आहि यम केरा। लै चलु लोक मिटै झकझोरा॥
यह तो देश काल कर थानी। हे प्रभु लै चलु देश अमानी॥

करुणामय स्वामी के मार्मिक वचन सुनकर तब रानी इंद्रमती ने दौड़कर उनके चरण पकड़ लिए और विनय-भाव से बोली कि हे प्रभु! मुझे सत्यलोक ले जाओ। यह तो यम का देश है, सत्यलोक ले चलो, जिससे मेरा सब संताप मिट जाए। यह देश तो काल-निरंजन का स्थान (राज्य) है, हे प्रभु! मुझे अपने अमर देश सत्यलोक ले चलो।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

तब रानी सों कहेउ बुझाई। वचन हमार सुनो चितलाई॥
अब तोर तिनका यम सों टूटा। परिचय भयो सकल भ्रम छूटा॥
निशि दिन सुमरो नाम हमारा। कहा करे यहि धर्म लबारा॥
जब लगि ठेका पूरे आई। तब लगि रहो नाम लौ लाई॥

तब करुणामय स्वामी ने रानी को समझाते हुए कहा कि मेरी बात चित्त लगाकर सुनो। चौका-आरती में अब तुम्हारा यम से तिनका टूट चुका है और गुरु ज्ञान दीक्षा से तुम्हें सत्यपुरुष का परिचय हो गया, जिससे अब तुम्हारा सारा भ्रम छूट गया (अतएव निश्चिंत रहो)।

अब तुम रात-दिन मेरा दिया हुआ सार-नाम सुमिरन करो, यह प्रपंची निरंजन क्या करेगा? जब तक तुम्हारी आयु का ठेका पूरा हो, अर्थात तुम्हारा आयु का अधिकार पूरा होने तक, तब तक सत्य-नाम से लगन लगाए रहो।

॥ छंद ॥

सुमरु नाम हमार निशि दिन, काल तो कहं जब छले।
जौं लौं ठीका पुरे नाहिं, तौं लौं जीव नाहीं चले॥
काल कला प्रचंड देखो, गज रूप धर जग आवई।
देखि केहरि गज त्रास माने, धीर बहुरि न लावई॥ 61॥

रात-दिन हमारा नाम सुमिरो और काल जब तुमको छले, तब मेरा बताया हुआ बिरहुली-मंत्र जाप करना। इस बात को भली प्रकार समझ लो कि जब तक आयु का ठेका पूरा नहीं होगा, तब तक जीव सत्यलोक नहीं जा सकता। देखो काल निरंजन की कला बहुत भयंकर है, वह संसार में जीवों के पास हाथी का रूप धारण

कर आता है। परंतु सिंह-रूपी सत्यपुरुष का सत्यनाम सुमिरने वाले के सामने हाथी-रूप काल भय मानता है (भाग खड़ा होता है) और फिर उसका सामना करने का साहस नहीं लाता।

॥ सोरठा ॥

गज रूपी है काल, केहरि पुरुष प्रताप है।
रोपि रहो तुम ढाल, काल खंग व्यापे नहीं॥ 64॥

हाथी-रूपी काल एवं उसकी कला है और सिंह-रूपी सत्यपुरुष का प्रताप है। सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान एवं ध्यान-सुमिरन की ढाल तुम संभालकर रखना, जिससे काल-निरंजन की तलवार तुम पर प्रभाव न डाल सके।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहिब मैं तुम कहं जानी। वचन तुम्हार लीन्ही सिर मानी॥
विनती एक करौं तुहि स्वामी। तम तो साहिब अंतरयामी॥

इंद्रमती कहती है कि हे साहिब! मैं तो आपको जानती हूं और आपका वचन-उपदेश सिर झुकाकर मान लिया है। हे साहेब! आप तो अंतर्यामी हो, अर्थात आप मेरे भीतर की बात जानते हैं। हे स्वामी! मैं आपसे एक विनती करती हूं कि—

॥ चौपाई ॥

काल व्याल हुए मोहिं सतायी। अरु पुनि हंस रूप भरमायी॥
तब पुनि साहिब मोपहं आऊ। हंस हमार लोक लै जाऊ॥

काल-निरंजन सर्प बनकर मुझे सताएगा और फिर हंस-रूप धारण कर मुझे भरमाएगा। हे साहिब! तब फिर आप मेरे पास आना और मेरे हंस-जीवात्मा को सत्यलोक ले जाना, बस यही मेरी विनती है।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

कह ज्ञानी सुन रानी बाता। तुम सों एक कहौं विख्याता॥
काल कला धरि तोपहं आयी। नाना रंग चरित्र बनायी॥

ज्ञानी-स्वरूप करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे रानी! बात सुन, मैं तुमसे एक विशेष बात कहता हूं कि काल सर्प एवं मानव रूप की कला धारकर तुम्हारे पास आएगा और नाना रंग-रूप के चरित्र बनाकर प्रदर्शित करेगा।

॥ चौपाई ॥

तोरौं ताहि कर मान गुमाना। मोहि देख तब काल पराना॥
तेंहि पीछे हम तुम लग आवैं। हंस तुम्हारे लोक पहुंचावैं॥
शब्द तोहि हम दीन्ह लखाई। निशि दिन सुमिरो चित्त लगाई॥

तब मैं उसका अभिमान-गर्व तोड़ूंगा, मुझे देखते ही काल भाग जाएगा। उसके पीछे मैं तुम्हारे निकट आऊंगा और तुम्हारे हंस-जीव को सत्यलोक पहुंचाऊंगा। मैंने तुम्हें सार-शब्द लखा दिया है, रात-दिन चित्त लगाकर उसका सुमिरन करो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

इतना कहि हम गुप्त छिपाया। तक्षक रूप काल हो आया॥
चित्रसार पर तक्षक आया। रानी केर तहं पलंग रहाया॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि इतना कहकर मैं अर्थात करुणामय स्वामी ने स्वयं को गुप्त छिपा लिया और काल-दूत तक्षक-सर्प बनकर आया। रंगमहल (शयन-कक्ष) में तक्षक सर्प आया, वहां रानी का पलंग था।

चौपाई

जबही रात बीत गई आधी। रानी उठि चलि सेवा साधी॥
रानी सब कहं सीस नवायी। चली तबै महलन कहं आयी॥
सेज आय रानी पौढ़ायी। डसेउ व्याल मस्तक महं जायी॥

जब आधी रात बीत गई, तब रानी परिवार की सेवा संपन्न कर उठकर चल दी। रानी ने सब सम्मानित जनों को शीश नवाया और तब अपने महल में आई। शय्या पर आकर रानी लेटकर सो गई, तब तक्षक सर्प ने जाकर रानी के मस्तक में डस लिया।

इंद्रमती वचन राजा चंद्रविजय प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती अस वचन सुनायी। तक्षक डसेउ मोहि कहं आयी॥
सुन राजा व्याकुल ह्वै धावा। गुणी गारुड़ी वेगि बुलावा॥

तब रानी इंद्रमती ने राजा को ऐसा वचन कहा कि सर्प ने आकर मुझे डस लिया है। इतना सुनते ही राजा व्याकुल होकर दौड़ा और सर्प का विष झारने-उतारने वाले गारुड़ी को शीघ्र बुलाया।

॥ चौपाई ॥

राय कहे मम प्राण पियारी। लेहु चिताय जो अबकी बारी॥
तक्षक गरल दूर हो आयी। देहुं परगना तोहि दिवायी॥

व्याकुल राजा गारुड़ी से कहता है कि रानी मेरी प्राण-प्यारी है, जो इस बार इसे तुम होश में ले आओ तथा सर्प का विष दूर हो जाए, अर्थात यह सर्वथा स्वस्थ हो जाए, तो मैं तुम्हें परगना (बहुत गांवों का क्षेत्र) दिलवा दूंगा।

इंद्रमती वचन गारुड़ी प्रति

॥ छंद ॥

शब्द बिरहुली जपेउ रानी, सुरति साहिब राखि हो।
बैद गारुड़ि दूर भागो, दूर नरपति नाहि हो॥
मन्त्र मोहि लखाय सतगुरु, गरल मोहि न लागई॥
हो सूर्य प्रकास जेहि क्षण, अन्ध घोर नसावई॥ 62॥

रानी इंद्रमती ने सद्‌गुरु करुणामय स्वामी में सुरति (चित्त-ध्यान) रख कर उनका दिया बिरहुली-शब्द (मंत्र) जपा। उसने वैद्य गारुड़ी से कहा कि तुम दूर भागो, तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं है। परंतु राजा दूर नहीं हुआ, तब रानी ने राजा से कहा कि सद्‌गुरु ने मुझे बिरहुली मंत्र लखाया है, जिसके जपने से मुझे विष नहीं लगेगा। जिस क्षण सूर्य का प्रकाश होता है, तो घोर अंधकार नष्ट हो जाता है ऐसे ही मंत्र जाप के प्रभाव से विष दूर हो गया।

॥ सोरठा ॥

ऐसे गुरु हमार, बार बार विनती करौं।
ठाढ़ भयी उठि नार, राजा लखि हरषित भयो॥ 65॥

ऐसे महान प्रतापी मेरे गुरु स्वामी हैं, मैं बार-बार उनसे विनती करती हूं, इस प्रकार कहती हुई रानी इंद्रमती खड़ी हो गई। राजा चंद्रविजय अपनी रानी को स्वस्थ देखकर प्रसन्न हो गया।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चल्यो दूत तब तहवां जायी। जहं ब्रह्मा विष्णु महेश रहायी॥

(सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास को समझाते हैं कि जिसने सर्प बनकर रानी को डसा, वस्तुतः वह काल का भेजा हुआ काल-रूप उसका दूत था) रानी से विष दूर हो जाने पर कालदूत वहां गया, जहां ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश रहते थे।

यमदूत वचन त्रिदेवों प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे दूत विष तेज न लागा। नाम प्रताप गरल सो भागा॥

काल-दूत कहता है कि मेरे विष का तेज इंद्रमती रानी को नहीं लगा। सत्य-पुरुष के नाम-प्रताप से मेरा सारा तीक्ष्ण विष दूर भाग गया, अर्थात प्रभावहीन हो गया।

विष्णु वचन यमदूत प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे विष्णु सुन हो यमदूता। सेतहि अंग करो तुम पूता॥
छल करि जाइ लिवाइय रानी। वचन हमार लेहु तुम मानी॥
कीन्हों दूत सेत सब अंगा। चलेउ नारि पहं बहुत उमंगा॥

विष्णु ने कहा कि हे कालदूत सुन! तुम अपने सब श्वेत अंग करो, अर्थात वेष (पहनावा) तथा श्वेत शरीरांग बनाओ। तुम मेरी बात मान लो, जाकर छल करके रानी को ले आओ।

तब काल-दूत ने सब अंग श्वेत किया अथवा अपना सारा रूप श्वेत किया और बहुत उमंग में भरकर रानी इंद्रमती के पास चला।

यमदूत वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

रानी सों अस वचन प्रकाशा। तुम कस रानी भई उदासा॥
जानि बूझि कस भई अचीन्हा। दीक्षा मंत्र तोहि हम दीन्हा॥

रानी के पास जाकर यमदूत ऐसे बोला कि हे रानी! तुम कैसे उदास हो? तुम जान-बूझकर कैसे अनजान हो गई? मैंने तुम्हें दीक्षा मंत्र दिया है।

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी नाम हमारो रानी। मरदौं काल करौं पिसमानी॥
तक्षक काल होय तोहि खायी। तब हम राख लीन्ह तोहि आयी॥

हे रानी! मेरा नाम ज्ञानी, अर्थात करुणामय है, मैं काल को मारकर, उसकी पिसाई कर दूंगा। जब काल ने सर्प बनकर तुम्हें डसा, तब मैंने आकर तुम्हें बचाया।

॥ चौपाई ॥

छोड़हु पलंग गहो तुम पांई। तजहु अपनी मान बड़ाई॥
अब हम लेन तोहि कहं आवा। प्रभु के दर्शन तोहि करावा॥

तुम पलंग छोड़कर मेरे चरण स्पर्श करो (क्योंकि मैं तुम्हारा गुरु हूं), अपनी मान-बड़ाई छोड़ दो। अब मैं तुम्हें लेने आया हूं, तुम्हें प्रभु के दर्शन कराऊंगा।

इंद्रमती वचन यमदूत प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती तब चीन्हेउ रेखा। जस कछु साहिब कहेउ विशेखा॥
तीनों रेख देख चक्षु माहीं। जर्द सेत अरु राता आहीं॥

तब इंद्रमती ने उसकी रूप-रेखा को पहचाना, जैसा कुछ करुणामय स्वामी

ने विशेष रूप से कहा था। उसने उसकी आंख में तीन रेखाएं देखीं—पीली, श्वेत और लाल।

॥ चौपाई ॥

मस्तक ओछ देख पुनि ताको। भयो प्रतीत वचन को साको॥
जाहु दूत तुम अपने देशा। अब हम चीन्हेउ तुम्हरो भेसा॥

फिर उसका छोटा मस्तक देखा, तब रानी इंद्रमती को करुणामय स्वामी के कहे पर सत्य विश्वास हो गया। रानी ने कहा कि हे यमदूत! तुम अपने देश जाओ, अब मैंने तुम्हारे वेष को पहचान लिया।

॥ चौपाई ॥

काग रूप जो बहुत बनाई। हंस रूप शोभा किमि पाई॥
तस हम तोरा रूप निहारा। है समर्थ बड़ गुरु हमारा॥

कौवा जो बहुत सुंदर रूप बनाए, परंतु वह हंस के रूप की सुंदरता कैसे पा सकता है ? वैसा ही अर्थात कपटी कौए जैसा मैंने तुम्हारा रूप देखा, मेरे गुरु बड़े समर्थ हैं, जिन्होंने यह सब मुझे पहले ही बता दिया था।

यमदूत वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

यह सुन दूत रोष बड़ कीन्हा। इंद्रमती सों बोले लीन्हा॥
बार बार तो कहं समुझावा। नाहिंन समुझत मती हिरावा॥

यह बात सुनकर यमदूत ने बड़ा क्रोध किया। वह इंद्रमती से बोलने लग गया कि बार-बार तुमको समझाया, परंतु नहीं समझीं, तुम्हारी बुद्धि खो गई।

॥ चौपाई ॥

बोलत वचन निकट चलि आवा। इंद्रमती पर थाप चलाया॥
थाप चलाय सुमुख पर मारा। रानी खसि परि भूमि मंझारा॥

ऐसा वचन बोलकर वह यमदूत रानी के पास चला आया और उसने इंद्रमती पर थप्पड़ चलाया। उसने रानी के सुंदर मुख पर थप्पड़ मारा, जिससे रानी धरती पर गिर पड़ी।

इंद्रमती वचन साहिब करुणामय प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती तब सुमिरन लाई। हे गुरु ज्ञानी होहु सहाई॥
हम कहं काल बहुत विधि ग्रासा। तुम साहिब काटो यम फांसा॥

तब इंद्रमती ने ज्ञानी-स्वरूप करुणामय का ध्यान-सुमिरन किया और विनती की कि हे सद्गुरु! मेरे सहायक बनो। मुझको काल बहुत प्रकार से दुख दे रहा है, हे साहिब! आप यम की फांस काट दो, अर्थात उससे मुझे बचा लो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनत पुकार मुहिं रहो न जायी। सुनहु धर्मनि यह मोर सुभायी॥
रानी जबही कीन्ह पुकारा। तत छिन मैं तहांहि पगु धारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास सुन! यह मेरा स्वभाव है कि पुकार सुनते-सुनते ही मुझसे रहा नहीं जाता। इसलिए रानी ने जब मेरी पुकार की, तो उसी क्षण मैं वहां आ गया।

॥ चौपाई ॥

देखत रानी भयी हुलासा। मन ते भग्यो काल को त्रासा॥
आवत हमरे काल पराया। भयी शुद्ध रानी की काया॥

मुझे देखते ही रानी प्रसन्न हो गई और उसके मन से काल का भय भाग गया। मेरे आते ही काल प्रस्थान कर गया और उसके थप्पड़ मारने एवं व्यर्थ कपटबाजी से जो रानी की देह मैली जैसी हो गई थी, वह शुद्ध हो गई।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

पुनि कह इंद्रमती कर जोरी। हे प्रभु सुनु विनती एक मोरी॥
चीन्ह परी मोहिं यम की छाहीं। अब यहि देश रहब हम नाहीं॥

करुणामय स्वामी से फिर इंद्रमती हाथ जोड़कर कहती है कि हे प्रभु! मेरी एक विनती सुनिए। मुझे यम की छाया की पहचान पड़ चुकी है, अब मैं इस देश, अर्थात मृत्युलोक में नहीं रहूंगी।

॥ चौपाई ॥

हे साहिब लै चलु निज देशा। इहवां है बहु काल कलेशा॥
इहि विधि कही भयी उदासा। अबहीं लै चलु पुरुष के पासा॥

हे साहिब! मुझे अपने देश (सत्यलोक) ले चलो, यहां तो बहुत काल-क्लेश है। अब ही सत्यपुरुष के पास ले चलो, इस प्रकार कहकर वह उदास हो गई।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

प्रथमहिं रानी कीन्हों संगा। मेट्यो काल कठिन परसंगा॥
तबही ठीका पूर भराया। ले रानी सतलोक सिधाया॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि प्रथम रानी ने सद्गुरु करुणामय स्वामी का सत्संग किया। परिणामस्वरूप करुणामय ने उस पर जो काल का कठिन प्रसंग था, मिटा दिया। फिर उसकी आयु का ठीका (शेष आयु का अधिकार) पूरा भरा दिया और रानी के हंस-जीव को लेकर सत्यलोक की ओर सिधाए (चले)।

॥ चौपाई ॥

ले पहुंचायो मान सरोवर। जहंवा कामिनी करहिं कलोहर॥
अमी सरोवर अमी चखायो। सागर कबीर पांव परायो॥

सत्यलोक की ओर चलते हुए उन्होंने उसे लेकर मान-सरोवर द्वीप पहुंचाया, जहां पर माया-कामिनी किलोल-क्रीड़ा कर रही थी। अमृत-सरोवर में उसे अमृत चखाया तथा कबीर सागर पर उसका पांव रखवाया या स्पर्श कराया।

॥ चौपाई ॥

तेहि आगे सुरति को सागर। पहुंची रानी भई उजागर॥
लोक द्वार ठाढ़े तब कीनी। देखत रानी अति सुख भीनी॥

उसके आगे सुरति का सागर था, वहां पहुंचने पर रानी की जीवात्मा प्रकाशित हो गई। तब उसे सत्यलोक के द्वार पर खड़ी किया, जिसे देखकर उसने अत्यंत सुख अनुभव किया।

॥ चौपाई ॥

हंस धाय अंक में लीन्हा। गावहिं मंगल आरति कीन्हा॥
सकल हंस कीन्हे सनमाना। धन्य हंस सतगुरु पहिचाना॥

सत्यलोक के द्वार पर रानी की हंस-आत्मा देखकर वहां के हंसों ने उसे दौड़कर प्रेमवत् संपर्क में लिया। सबने मंगलगान कर आरती की। समस्त हंसों ने उसका आदर-सम्मान किया और कहा कि तुम धन्य हंस हो, तुमने सद्गुरु करुणामय स्वामी को पहचाना।

॥ चौपाई ॥

भल तुम छोड़ेउ काल का फंदा। तुम्हरो कष्ट मिट्यो दुख द्वंदा॥
चलो हंस तुम हमरे साथा। पुरुष दरश करि नावहु माथा॥

बहुत अच्छा हुआ कि तुमने काल-निरंजन का फंदा छोड़ दिया, तुम्हारे कष्ट एवं सब दुख-द्वंद्व मिट गए। करुणामय स्वामी ने कहा कि हे हंस! तुम हमारे साथ चलो। सत्यपुरुष के दर्शन कर मस्तक नवाओ, प्रणाम करो।

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती आवहु संग मोरे। पुरुष दरश होंवे अब तोरे॥
इंद्रमती अरु हंस मिलाहीं। करहिं कुतूहल मंगल गाहीं॥

हे इंद्रमती! मेरे साथ आओ, अब तुम्हें सत्यपुरुष के दर्शन होंगे। इंद्रमती को हंस-जीव और वहां के दूसरे हंस मिले, वे कुतूहल करते एवं मंगल गाते थे।

॥ चौपाई ॥

चलत हंस सब अस्तुति लावें। अब तो दरस पुरुष को पावें॥
तब हम पुरुषहिं विनती लावा। देहु दरस अब हंस ढिग आवा॥

अब तो सत्यपुरुष का दर्शन पाएं, सब हंस चलकर सत्यपुरुष की स्तुति करें। तब हम (करुणामय स्वामी) ने सत्यपुरुष को विनती की कि अब हंसों के पास आओ और एक नए हंस के साथ उन्हें दर्शन दो।

॥ चौपाई ॥

देहु दरस तिहिं दीनदयाला। बंदीछोर सु होहु कृपाला॥
विकस्यो पुहुप उठी असबानी। सुनहु योग संतायन ज्ञानी॥
हंसन कहं अब आव लिवाई। दरस कराइ लेउ तुम आई॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे बंदीछोड़। आप महान कृपालु हो, हे दीन दयालु हंसों को दर्शन दो। पुष्प द्वीप का पुष्प खिला और ऐसी वाणी हुई कि हे योग-संतायन ज्ञानी सुनो। अब हंसों को ले आओ तथा तुम आकर दर्शन करा लो।

॥ छंद ॥

ज्ञानी आयेउ हंस लग, हंस सकलो ले गये।
पुरुष दर्शन पाय हंसा, रूप शोभा तब भये॥
करहिं दंडवत हंस सबहीं, पुरुष पहं चित लाइया।
अमी फल तब चार दीन्हों, हंस सब मिल पाइया॥ 63॥

तब ज्ञानी-स्वरूप करुणामय स्वामी हंसों के पास आए और सब हंसों को ले गए। सत्यपुरुष के दर्शन पाकर हंसों के रूप की शोभा और बढ़ गई। सब हंसों ने सत्यपुरुष में चित्त लगाकर दण्डवत किया। तब सत्यपुरुष ने चार अमृत फल दिए, सब हंसों ने मिलकर खाए।

॥ सोरठा ॥

जस रवि के परकास, दरस पाय पंकज खिले।
तैसे हंस विलास, जन्म जन्म दुख मिटि गयो॥ 66॥

जैसे सूर्य के प्रकाश को देखकर कमल खिल उठते हैं, वैसे ही सत्यपुरुष के दर्शन पाकर सब हंस आनंदित हो गए, उनके जन्म-जन्म के दुख मिट गए।

इंद्रमती के हंस (जीवात्मा) का सत्यलोक में पहुंचना और सत्यपुरुष एवं करुणामय स्वामी को एक समान रूप में देखकर चकित होना

॥ चौपाई ॥

पुरुष कान्ति जब देखेउ रानी। अद्भुत अमी सुधा की खानी॥
गदगद होय चरण लपटानी। हंस सुबुद्धि सुजन गुण ज्ञानी॥
दीन्हों शीश हाथ जिव मूला। रवि प्रकाश जिमि पंकज फूला॥

जब रानी इंद्रमती के हंस (जीवात्मा) ने सत्यपुरुष की छवि (सुंदरता) को

देखा, तो वह अद्‌भुत अमृत की खान दिखाई पड़ी। वह प्रेम एवं प्रसन्नता में गद्‌गद होकर सत्यपुरुष के चरणों में लिपट गई, वस्तुत: वह सज्जन, सद्‌बुद्धि से युक्त तथा ज्ञान-गुण से संपन्न हंस-आत्मा थी। जीव के मूल (आदि) सत्यपुरुष-परमात्मा ने दोनों हाथ उसके शीश पर रखे, तो वह आनंदमय होकर ऐसे ही खिल उठी, जैसे सूर्य के प्रकाश में कमल खिल उठते हैं।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

कह रानी तुम धनि करुणामय। जिव भ्रम मेटि आनि यहि ठामय॥

इंद्रमती कहती है कि हे करुणामय स्वामी! आप धन्य है, जो मेरे जीव का भ्रम मिटाकर इस स्थान पर ले आए।

सत्यपुरुष वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

कहा पुरुष रानी समझायी। करुणामय कहं आनु बुलायी॥

सत्यपुरुष ने रानी को समझाकर कहा कि करुणामय स्वामी को बुला लाओ।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

नारि धाय आई मो पासा। महिमा देखि चकित भये दासा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि इंद्रमती दौड़कर मेरे अर्थात मुझ स्वरूप करुणामय स्वामी के पास आई और मेरी महिमा देखकर आश्चर्य में पड़ गई।

इंद्रमती वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

कह रानी यह अचरज आही। भिन्न भाव कछु देखौ नाहीं॥
जो कुछ कला पुरुष कहं देखा। करुणामय तन एक विशेखा॥

रानी कहती है कि मुझे यह आश्चर्य है कि सत्यपुरुष और आप में मैंने कुछ भिन्न भाव नहीं देखा। मैंने जो कुछ कला सत्यपुरुष में देखी, उसमें और आप करुणामय स्वामी के तन में एक समानता एवं विशेषता है, अर्थात दोनों समरूप हैं।

॥ चौपाई ॥

धाय चरण गह हंस सुजाना। हे प्रभु तव चरित्र सब जाना॥
तुम सतपुरुष दास कहलाये। यह सोभा कस उहां छिपाये॥

इंद्रमती के बुद्धिमान विनम्र हंस ने दौड़कर करुणामय स्वामी के चरण पकड़ लिए और कहा कि हे प्रभु! मैंने आपका सब चरित्र जान लिया। आप सत्यपुरुष हो,

परंतु आप संसार में दास कहाए, अपनी यह अद्भुत शोभा वहां संसार में कैसे छिपाए रहे ?

॥ चौपाई ॥

मोरे चित यह निश्चय आई। तुमहि पुरुष दूजा नहिं भाई॥
सो मैं आय देख यहिं ठाई। धनि समरथ मुहिं लिया जगाई॥

मेरे चित्त में अब यह पक्का निश्चय आ गया कि आप ही सत्यपुरुष हो, दूसरा कोई नहीं। जैसा मैंने वहां सत्यपुरुष को देखा, वैसा मैंने यहां आकर आपको देखा। हे समर्थ स्वामी! आप धन्य हो, आपने मुझे अज्ञान-निद्रा से जगा लिया।

॥ छंद ॥

तुम धन्य हो दयानिधान, सुजन नाम अचिंतयं।
अकथ अविचल अमर अस्थिर अनघ अज सु अनादियं॥
असंशय निःकाम धाम, अनाम अटल अखंडितं।
आदि सबके तुमहि प्रभु हो, सर्व भूत समीपतं॥ 64॥

हे दया के सागर! आप धन्य हैं। आप सर्व गुण-संपन्न एवं उपकारी सुजन तथा सर्व-चिंताओं से रहित अचिंत हो। आप कथन में न आने से अकथनीय, निश्चल-स्थिर तथा अविनाशी हो और अपने परमात्मा पद पर स्थित हो। आप निष्पाप, जन्म-रहित एवं आदि-अंत से परे अनादि हो। आप संशय-रहित तथा निष्कामता के धाम हो। आप नाम से परे अनाम, न डिगने वाले, और न टूटने वाले, बाधा-रहित सर्व शक्तिमान हो। हे प्रभु! आप सबके आदि हो तथा सर्वभूत-प्राणियों के समीप हो।

॥ सोरठा ॥

मो पर भये दयाल, लियहु जगाई जानि निज।
काटेहु यम को जाल, दीन्हों सुख सागर करी॥ 67॥

आप मुझ पर दयालु हुए और मुझे अपना जानकर अज्ञान-निद्रा से जगा लिया। आपने मेरा सब यम का जाल काटकर (समस्त भव-बंधनों से छुड़ाकर), सुखसागर, अर्थात सत्यलोक का स्थान दिया है।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

संपुट कमल लगौ तिहि बारा। चले हंस निज दीप मंझारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि पुष्प द्वीप का कमल उसी समय बंद हो गया और सब हंस अपने-अपने द्वीप को चले।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती-हंस प्रति

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी बूझें रानी बाता। कहो हंस तुम्हरो विख्याता॥
अब दुख द्वन्द्व तोर मिटि गयऊ। षोडस भानु रूप पुनि भयऊ॥
ऐसे पुरुष दया तुहि कीन्हा। संशय सोग मेटि तुव दीन्हा॥

ज्ञानी-स्वरूप करुणामय स्वामी रानी इंद्रमती के हंस से पूछते हैं कि हे हंस! अपनी बात बताओ, तुम्हारी दशा जैसी है कहो। अब तुम्हारा जन्म-मरण रूपी दुख-द्वंद्व मिट गया और फिर तुम्हारा रूप सोलह सूर्य के सदृश हुआ। सत्यपुरुष ने तुम पर ऐसी दया की कि तुम्हारा संशय-शोक (भ्रम-चिंता-दुख) सब मिट गया, अर्थात सत्यपुरुष ने ही मुझे संसार में भेजा, जिससे तुम्हारा उद्धार हुआ।

इंद्रमती-हंस का अपने पति राजा चंद्रविजय को सत्यलोक में लाने के लिए विनती करना

इंद्रमती-हंस वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती कह दोउ कर जोरी। हे साहिब इक विनती मोरी॥
तुम्हरे चरण भाग ते पायी। पुरुष दर्श कीन्हा हम आयी॥

करुणामय स्वामी से इंद्रमती दोनों हाथ जोड़कर कहती है कि हे साहिब! मेरी एक विनती है। बड़े भाग्य से मैंने आपके चरण पाए, जिससे मैंने यहां आकर सत्यपुरुष का दर्शन किया।

॥ चौपाई ॥

अंग हमार रूप अति सोही। इक संशय व्यापे चित मोही॥
मो कहं भयो मोह अधिकारा। राजा तो पति आहि हमारा॥
आनहु ताहि हंसपति जाई। राजा मोर काल मुख जाई॥

मेरे हंस-शरीर का रूप बहुत सुंदर लगता है, किन्तु मेरे चित्त में एक संशय व्याप्त है। जिससे मुझको राजा के प्रति मोह हुआ है, क्योंकि वह राजा तो मेरा पति रहा है। हे हंसपति करुणामय स्वामी! आप जाकर उसे सत्यलोक ले आओ, नहीं तो मेरा राजा काल के मुख में जाएगा।

करुणामय स्वामी वचन इंद्रमती-हंस प्रति

॥ चौपाई ॥

कहें ज्ञानी सुन हंस सुजाना। राजा नहिं पाये परवाना॥
तुम तो हंस रूप अब पाया। कौन काज कहं राव बुलाया॥
राजा भाव भक्ति नहिं पाया। सत्वहीन भव भटका खाया॥

ज्ञानी-स्वरूप करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे गुणवान हंस सुन! राजा ने मुक्त होने का परवाना नहीं पाया है। तुमने तो अब हंस-रूप (मुक्तात्मा) पाया है, किस उद्देश्य के लिए राजा को बुलाती है? राजा ने सत्यपुरुष का भक्ति-भाव नहीं पाया और भक्ति-हीन एवं तत्व-ज्ञान (आत्मज्ञान) के बिना वह असार संसार में भटकेगा।

इंद्रमती-हंस वचन करुणामय स्वामी प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु हम जग मांह रहेऊ। भक्ति तुम्हारि बहुत विधि करेऊ॥
राजा भक्ति हमारी जाना। हम कहं बरजेउ नहीं सुजाना॥

इंद्रमती कहती है कि हे प्रभु! मैं संसार में रहती थी, बहुत प्रकार से आपकी भक्ति करती थी। तब सज्जन राजा ने भी मेरी भक्ति को समझा और मुझे भक्ति करने से कभी नहीं रोका।

॥ चौपाई ॥

कठिन भाव संसार सुभाऊ। पुरुष छोड़ कहुं नारि रहाऊ॥
सब संसार देहि तिहि गारी। सुनतहि पुरुष डार तिहि मारी॥

संसार का स्वभाव एवं विचार बहुत कठोर है कि पुरुष (पति) छोड़कर यदि उसकी स्त्री कहीं अलग रहे तो सारा संसार उसे गाली देता है और पुरुष सुनते ही उसे मार डालता है।

॥ चौपाई ॥

राज काज अति मान बड़ाई। पाखण्ड क्रोध और चतुराई॥
साधु संत की सेवा करऊं। राजा केर त्रास ना डरऊं॥

राज-काज में तो अत्यंत मान-बड़ाई, नास्तिकता, क्रोध और चतुराई (चालाकी) की भरमार होती है। परंतु मैं साधु-संत की सेवा करती थी तथा अपने पति राजा के भय से नहीं डरती थी।

॥ चौपाई ॥

सेवा करौं संत की जबहीं। राजा सुनि हरषित हो तबहीं॥
जो मोहि ताड़न देता राजा। तो प्रभु मोर होत किमि काजा॥

मैं जब संत की सेवा करती थी, तब यह सुनकर राजा प्रसन्न होते थे। जो मुझे राजा ताड़ना देता, अर्थात इस प्रकार सेवा-भक्ति करने के लिए मुझ पर रोक लगाता, तो हे प्रभु! मेरा मुक्ति का उद्देश्य कैसे पूर्ण होता?

॥ छंद ॥

राय की हम हती प्यारी, मोहि कबहुं न बरजेऊ।
साधु सेवा कीन्ह नित हम, शब्द मारग चीन्हेऊ॥

चरण मो कहं मिलत कैसे, मोहि बरजत राय जो।
नाम पान न मिलत मोकहं, कैसे सुधरत काज जो॥ 65॥

मैं राजा की बहुत प्यारी थी, मुझे सेवा-भक्ति करने से राजा ने कभी नहीं रोका। मैं नित्य साधु-सेवा करती थी, जिसके फलस्वरूप मैंने सद्गुरु द्वारा सार-शब्द के मार्ग को पहचाना, अर्थात मैं प्रबुद्ध (ज्ञान-संपन्न) हुई। साधु-सेवा से मुझे यदि राजा रोकता तो मुझको आपके श्रीचरण कैसे मिलते? तब मुझको आपसे सार-नाम एवं पान-प्रसाद न मिलता और मेरे मोक्ष का महान उद्देश्य कैसे सुधरता (पूर्ण होता)।

॥ सोरठा ॥

धन्य राय सुजान, आनहु ताहि हंसपति।
तुम गुरु दयानिधान, भूपति बंदि छुड़ाइए॥ 68॥

सेवा-भक्ति को समझने वाले वे सज्जन राजा धन्य हैं, उनके हंस (जीवात्मा) को ले आओ। हे हंसपति सद्गुरु! आप दया के सागर हैं, राजा को सांसारिक-बंधनों से छुड़ाइए।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुन ज्ञानी बहुतै विहंसाये। चले तुरंत बार निहिं लाये।
गढ़ गिरनार बेगि चलि आया। नृपति केरि अवधी नियराया॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि ज्ञानी, अर्थात करुणामय स्वामी इंद्रमती-हंस की बात सुनकर बहुत हंसे और वहां से शीघ्र चले, देर नहीं लगाई। शीघ्र चलकर वे गिरनार गढ़ आ गए। उस समय राजा चंद्रविजय की आयु की अवधि समीप आ चुकी थी।

॥ चौपाई ॥

घेर्‌यो ताहि लेन यमराई। राजहि देत कष्ट बहुताई॥
राजा परे गाढ़ महं आया। सतगुरु कहे तहां गुहराया॥

राजा चंद्रविजय को लेने के लिए, अर्थात शरीर से उनके प्राण निकालने के लिए यमराज उन्हें घेरकर बहुत कष्ट दे रहा था। राजा भारी संकट में पड़े थे, तब सद्गुरु करुणामय स्वामी ने उन्हें छोड़ देने के लिए यमराज को पुकारकर कहा।

॥ चौपाई ॥

छोड़ै नृप नाहिं यमराई। ऐसे भक्ति चूक है भाई॥
भक्ति चूक कर ऐसे ख्याला। अवधि पूर यम करे विहाला॥

यमराज राजा को छोड़ता नहीं था, हे भाई! भक्ति न करने की चूक ऐसी ही

होती है। भक्ति को चूककर जो संसार के ऐसे-वैसे विचारों में पड़ते हैं, तो उनकी आयु पूरी हो जाने पर यमराज उन्हें बहुत दुखी करता है।

॥ चौपाई ॥

चंद्रविजय का कर गहि लीन्हा। तत्क्षण लोक पयाना कीन्हा॥
रानी देखि नृपति ढिग आई। राजा केर गह्यो तब पाई॥

करुणामय स्वामी ने राजा चंद्रविजय का हाथ पकड़ लिया और उसी क्षण सत्यलोक को प्रस्थान किया। रानी इंद्रमती-हंस राजा चंद्रविजय को देखकर पास आई तथा फिर राजा के चरण स्पर्श किए।

इंद्रमती-हंस वचन राजा चंद्रविजय प्रति

॥ चौपाई ॥

इंद्रमती कह सुनहु भुवारा। मोहि चीन्हों मैं नारि तुम्हारा॥

इंद्रमती-हंस राजा चंद्रविजय-हंस से कहती है कि हे राजा सुनो! मुझे पहचानो, मैं आपकी पत्नी हूं।

राजा चंद्रविजय वचन इंद्रमती प्रति

॥ चौपाई ॥

राय कहें सुनु हंस सुजाना। वरण तोर षोडस जस भाना॥
अंग अंग तोरे चमकारी। कैसे कहौं तोहि मैं नारी॥

राजा चंद्रविजय कहते हैं कि हे ज्ञानवान हंस (इंद्रमती)! सुन, तुम्हारा रूप-रंग तो सोलह सूर्य जैसा प्रकाशित है। तुम्हारे अंग-अंग में विशेष चमक है, अब मैं तुमको कैसे अपनी पत्नी कहूं?

॥ चौपाई ॥

तुम तो भक्ति कीन्ह भल नारी। हमहूं कहं तुम लीन्ह उबारी॥
धन्य गुरु अस भक्ति दृढ़ाई। तोरि भक्ति हम निज घर पाई॥

हे नारी! तुमने तो बहुत अच्छी भक्ति की, (अपना उद्धार कर) जिससे तुमने मुझको भी उबार लिया, अर्थात संसार-सागर से मेरा उद्धार कर लिया। वंदनीय सद्गुरु जी धन्य हैं, जिन्होंने तुमको ऐसी पक्की भक्ति बताई कि तुम्हारी भक्ति से मैंने भी अपना घर, अर्थात अमरलोक पाया।

॥ चौपाई ॥

कोटिन जन्म कीन्ह हम धर्मा। तब पायी अस नारि सुकर्मा॥
हम तो राज काज मन लाया। सतगुरु भक्ति चीन्ह नहिं पाया॥

मैंने करोड़ों जन्मों तक धर्म-पुण्य किया, तब ऐसी सत्कर्म करने वाली भक्तिमति स्त्री पाई। मैंने तो सदा अपने राज-काज में मन लगाया, किंतु सद्गुरु की भक्ति पहचान नहीं पाया।

॥ चौपाई ॥

जो तुम मोरि होत ना रानी। तो हम जात नरक की खानी॥
तुव गुण मोहि वरणि न जाई। धन गुरु धन्य नारि हम पाई॥
जस हम तो कहं पायउ नारी। तैसे मिले सकल संसारी॥

राजा कहते हैं कि जो तुम मेरी रानी न होती, तो मैं नरक की खानि (पाप-भोग का स्थान) में जाता। तुम्हारे गुणों का मुझसे वर्णन नहीं किया जाता, धन्य सद्‌गुरु और धन्य स्त्री है, जो मैं पाया, जिनसे मेरा कल्याण हुआ। जैसी स्त्री मैंने तुमको पाया, वैसी स्त्री सब संसारी लोगों को मिले।

विशेष—*उपर्युक्त कथनानुसार सद्‌गुरु की भक्ति से रानी इंद्रमती ने न केवल अपना, अपने पति राजा चंद्रविजय का भी कल्याण कराया, अन्यथा वह नरक-योनि भुगतता। राजा राज-काज में व्यस्त था, परंतु राजा सज्जन था। वह ज्ञानवान एवं उपकारी था। वह सेवा-भक्ति के कार्य करने से रानी को रोकता नहीं था, अपितु उसकी ओर से सेवा-भक्ति करने के लिए रानी को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी और इतनी बात ही नहीं, वह रानी की सेवा-भक्ति को देखकर बहुत प्रसन्न होता था, जिसके परिणामस्वरूप उसे अमरलोक की प्राप्ति हुई।*

वस्तुत: भक्ति की महिमा अनंत है। सद्‌गुरु कबीर साहेब ने जीव-कल्याण के लिए भक्ति को सर्वोपरि बताया है। वे कहते हैं—

अर्ब खर्ब ले दर्ब है, उदय अस्त लों राज।
भक्ति महातम ना तुले, ई सब कौन काज॥

(बीजक सा. 228)

अर्थात, चाहे अरब-खरब तक धन हो और सूर्य के उदय से अस्त तक, अर्थात सारे भूमण्डल पर राज्य हो, परंतु इनसे भक्ति के माहात्म्य की तुलना नहीं की जा सकती, क्योंकि इनसे जीव-कल्याण नहीं हो सकता।

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि यदि जीव को सांसारिक दुख-बंधनों से छूटकर मोक्ष-स्थिति को पाना है, तो निश्चित-ही भक्ति उसका एकमात्र आधार है। वे जीवों को सचेत करते हुए कहते हैं—

भक्ति निसैनी मुक्ति की, संत चढ़े सब धाय।
जिन जिन मन आलस किया, जनम जनम पछिताय॥
भक्ति बिना नहिं निसतरै, लाख करै जो कोय।
शब्द सनेही ह्वै रहै, घर को पहुंचै सोय॥

अर्थात, भक्ति तो मुक्ति की सीढ़ी (सोपान) है, उस पर संत निर्भय दौड़कर चढ़ते हैं और जिन्होंने भक्ति करने में आलस किया, वे जन्म-जन्म में पछताते हैं। चाहे कोई लाख उपाय करे, परंतु भक्ति बिना मुक्ति नहीं हो सकती। जो सद्‌गुरु के

सार-शब्द का सच्चा अनुरागी-भक्त होकर रहे, वही अपने घर अमरलोक (मुक्ति धाम) को जाता है।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनत वचन ज्ञानी विहंसायी। चंद्रविजय कहं वचन सुनाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास को कहते हैं कि राजा के विनम्र वचन सुनते ही ज्ञानी जी (करुणामय स्वामी) मुस्कराए और राजा चंद्रविजय को वचन सुनाया।

करुणामय स्वामी वचन राजा चंद्रविजय प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनो राय तुम नृपति सुजाना। जो जिव शब्द हमारा माना॥
ते पुनि आय पुरुष दरबारा। बहुरि न देखे वह संसार॥

करुणामय स्वामी कहते हैं कि हे सज्जन राजा सुनो! जो जीव मेरा शब्द-उपदेश मानता है, वह फिर सत्यपुरुष के दरबार, अर्थात सत्यलोक में आता है। फिर वह संसार नहीं देखता, अर्थात फिर वह संसार में नहीं जाता।

॥ चौपाई ॥

हंस रूप होवे नर नारी। जो निज माने बात हमारी॥
पुरुष दर्श नरपति चितलायी। हंस रूप शोभा अति पायी॥
षोडस भानु रूप नृप पावा। जानु मयंकम ढार बनावा॥

जो हमारे आत्मज्ञान के सारोपदेश को मानता है, देह से वह स्त्री-पुरुष कोई भी हो, हंस रूप (मुक्तात्मा) हो जाता है।

राजा ने सत्यपुरुष के दर्शन में चित्त लगाया, तो उसने हंस-स्वरूप की अत्यंत सुंदरता पाई। उस राजा ने सोलह सूर्य के समान रूप पाया उसने भक्ति प्रेम में भरकर मंगल गाया।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ छंद ॥

धर्मदास विनती करे, युग लेख जीव सुनायऊ।
धन्य नाम तुम्हार साहिब, राय लोक समायऊ॥
तत्त्वभाव न गहेउ राजा, भक्ति तुव नहिं ठानिया।
नारि भक्ति प्रताप ते, यमराज से नृप आनिया॥ 66॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब से धर्मदास जी विनती करते हैं कि आपने प्रत्येक युगानुसार अपना सत्योपदेश प्रदान कर जिन जीवों का उद्धार किया, मुझे सुनाया।

हे साहिब! आपका सत्यनाम धन्य है, जिसके प्रताप से राजा चंद्रविजय सत्यलोक में आए। यद्यपि राजा ने आत्म-ज्ञान ग्रहण नहीं किया और न आपकी भक्ति की, तथापि उसकी स्त्री की भक्ति के प्रताप से, आप राजा को यमराज से छुड़ाकर, सत्यलोक ले गए।

॥ सोरठा ॥

धन्य नारि को ज्ञान, लीन्ह बुलाय स्व नृपति कहं।
आवागमन नशान, जग में बहुरि न आइया॥ 69॥

इंद्रमती नारी धन्य है, जिसने ऐसा ज्ञान पाया कि उसने अपने पति राजा को भी साहिब द्वारा बुला लिया। राजा चंद्रविजय का आवागमन (जन्म-मरण) नाश हो गया, वह फिर संसार में नहीं आएगा।

॥ चौपाई ॥

ता पीछे पुनि का प्रभु कीना। सोई कथा कहो परवीना॥
कैसे पुनि आये भव सागर। सो कहिए हंसन पति नागर॥

हे प्रभु! उसके पीछे क्या किया? हे प्रबुद्ध! वही कथा कहो। फिर कैसे आप किस रूप में संसार-सागर में आए? हे हंसपति ज्ञानस्वरूप! वह सब कहिए।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि पुनि आये जग माहीं। रानी पति लै गये तहांहीं॥
राख्यो ताहि लोक मंझारा। ततछन पुनि आयउ संसारा॥
काशी नगर तहां चलि आए। नाम सुदरशन सुपच जगाए॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! मैं फिर संसार में आया। इसके पूर्व करुणामय स्वामी के रूप में मैं रानी इंद्रमति के पति राजा चंद्रविजय को भी वहीं ले गया। उसे भी मैंने सत्यलोक में रखा। उसी क्षण मैं फिर संसार में आ गया। मैं काशी नगर में वहां चलकर आया, जहां भक्त सुदर्शन नाम का श्वपच रहता था, मैंने उसको सत्य-नाम से जगाया।

श्वपच सुदर्शन की कथा

॥ चौपाई ॥

नाम सुदर्शन सुपच रहाई। ता कहे हम सत शब्द दृढ़ाई॥
शब्द विवेकी संत सुहेला। चीन्हा मोहि शब्द के मेला॥

काशी नगर में एक सुदर्शन नाम का श्वपच रहता था, उसको मैंने सत्य-शब्द से संपन्न किया। वह शब्द का विवेकी उत्तम संत था, मेरे सार-शब्द के मेल से उसने मुझे पहचान लिया।

॥ चौपाई ॥

निश्चय वचन मान तिन्ह मोरा। लख परतीति बन्दि तिहिं छोरा॥
नाम पान दियो मुक्ति संदेशा। मेट्यो सकल काल कलेशा॥

उसने निश्चयपूर्वक मेरे वचन-उपदेश को माना। उसका परम विश्वास देखकर मैंने उसको सब बंधनों से छुड़ा दिया। मैंने उसको सत्यपुरुष का नाम, पान-प्रसाद एवं मुक्ति का संदेश स्वरूप सत्यज्ञानोपदेश दिया, जिससे उसका समस्त काल-क्लेश मिट गया।

॥ चौपाई ॥

शब्द ध्यान तिहि दीन्ह दृढ़ाई। हरषित नाम सुमिरे चितलाई॥
सतगुरु भक्ति करे चितलाई। छोड़ी सकल कपट चतुराई॥

मैंने उसे शब्दरूपी[1] सद्गुरु के ध्यान में सुदृढ़ कर दिया। वह प्रसन्नता के साथ चित्त लगाकर ध्यान एवं नाम का सुमिरन करने लगा। उसने सब कपट-चालाकी छोड़ दी और वह सद्गुरु एवं सत्यपुरुष की भक्ति चित्त लगाकर करने लगा।

॥ चौपाई ॥

तात मातु तिहि हर्ष अपारा। महा प्रेम अति हित चित धारा॥
धर्मनि यह संसार अंधेरा। बिनु परिचय जिव यम को चेरा॥

यह देखकर उसके माता-पिता को असीम हर्ष हुआ और उनके चित्त में सुदर्शन के प्रति महान प्रेम एवं अत्यंत हित उमड़ पड़ा। हे धर्मदास! यह संसार अज्ञानांधकार से पूर्ण है और सत्यपुरुष के परिचय (ज्ञान-ध्यान) बिना जीव यम का दास हो रहा है।

॥ चौपाई ॥

भक्ति देखि हर्षित हो जाई। नाम पान हमरो नहिं पाई॥
प्रगट देखि चीन्हे नहिं मूढ़ा। परे काल के फंद अगूढ़ा॥

मेरे सार नाम एवं पान पाए बिना ही अज्ञानी जीव भक्ति देखकर खुश हो जाता है। प्रत्यक्ष सत्यपुरुष की भक्ति-महिमा देखते हुए भी मूर्ख नहीं समझते और स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि ऐसे लोग काल-निरंजन के फंदे में पड़े हुए हैं।

॥ चौपाई ॥

जैसे स्वान अपावन राचेउ। तिमि जग अमी छोड़ि विष चाखेउ॥

जैसे कुत्ता अपवित्र वस्तु को खाता है, वैसे ही संसार के अज्ञानी लोग अमृत छोड़कर विष खाते हैं, अर्थात सत्यपुरुष रूपी अमृत को छोड़कर, विषरूपी निरंजन की भक्ति करते हैं।

---

1. गुरु दयासागर ज्ञान आगर, 'शब्दरूपी' सद्गुरुम् (क. संध्यापाठ, दयासागर)

पाण्डव-यज्ञ में भक्त सुदर्शन श्वपच की महिमा

॥ चौपाई ॥

नृपति युधिष्ठिर द्वापर राजा। तिन पुनि कीन्ह यज्ञ को साजा॥
बंधु मार अपकीरति कीन्हा। ताते यज्ञ रचन चित्त दीन्हा॥

द्वापर युग के अंत समय में युधिष्ठिर राजा हुए। राजा होने पर फिर उन्होंने यज्ञ-निमित्त साज-सामान का प्रबंध किया। महाभारत युद्ध में बंधु-बांधवों को मारकर उन्होंने अपकीर्ति (पाप-बुराई) की थी, इसी से उन्होंने एक यज्ञ करने में अपना चित्त दिया।

विशेष—*यह कथा द्वापर युग के अंतिम चरण की है। उस समय भारतवर्ष में कुरु राजवंश बहुत प्रसिद्ध था। हस्तिनापुर में राजा कुरु के वंश में दो भाई धृतराष्ट्र और पाण्डु हुए। कालानुसार महाराज पाण्डु के पांच पुत्र पाण्डव तथा धृतराष्ट्र के सौ पुत्र कौरव कहलाए। पाण्डवों में सबसे बड़े युधिष्ठिर थे, जो स्वभाव से बड़े विनम्र थे और कौरवों में सबसे बड़े दुर्योधन थे, परंतु वे स्वभाव से बहुत कठोर थे। विभिन्न परिस्थितियों में उत्पन्न अनेक कारणों से पाण्डवों एवं कौरवों के बीच द्वेष-भाव पनपता गया, जिसने एक दिन वैमनस्य का बड़ा रूप धारण कर लिया। दुर्योधन की क्रूरता एवं अनीति के दमन-चक्र से पाण्डवों को अनेकानेक असह्य कष्ट उठाने पड़े। अंततः राज्य के अधिकार तथा बंटवारे को लेकर कौरव-पाण्डव दोनों पक्षों में महायुद्ध ठन गया, जिसे महाभारत युद्ध के नाम से जाना जाता है।*

पाण्डव-पक्ष के विशेष सहायक एवं सर्वोपरि सलाहकार महापुरुष श्रीकृष्ण थे। यद्यपि श्रीकृष्ण ने युद्ध टालने के शांति-प्रयास किए, परंतु वे सफल न हो सके और कुरुक्षेत्र के मैदान में महाभारत युद्ध छिड़ गया। इस युद्ध में कौरव-पाण्डव के समस्त बंधु-बांधवों के साथ उनकी वीर सेनाओं तथा पृथ्वी के असंख्य शूरवीर एवं महारथियों ने भाग लिया। युद्ध-भूमि में जब दोनों ओर की सेनाएं आमने-सामने युद्ध के लिए तैयार खड़ी थीं, उस समय महारक्तपात की आशंका तथा अपने बंधु-बांधवों के मारे जाने की परिकल्पना को लेकर, जब अर्जुन ने युद्ध करने से मना कर दिया, तब उसको समझाने हेतु श्रीकृष्ण के मुख से श्रीमद्‌भगवद् गीता की उत्पत्ति हुई। इसके बाद दोनों पक्षों का भीषण युद्ध हुआ। इस युद्ध में समस्त सौ भाई कौरव मारे गए और उनके साथ सभी बंधु-बांधव (नाते-रिश्तेदार) एवं दोनों पक्षों के सब शूरवीर मारे गए। केवल पांच विजयी पाण्डवों के साथ कुछ ही जन शेष बचे।

महाभारत युद्ध के भयंकर परिणाम स्वरूप सब ओर हाहाकार, करुण-क्रंदन का हृदय-विदारक स्वर सुनाई पड़ता था। घोर अशांति का वातावरण था। हर

हर कोई शोकपूर्ण दिखाई पड़ता था। अतः विजयी होकर भी महाराज युधिष्ठिर क्षुब्ध थे। प्रजा की दुर्दशा देखकर उनका हृदय संतप्त था। शांति पाने के लिए श्रीकृष्ण ने उनको यज्ञ कराने की सम्मति दी।

॥ चौपाई ॥

कृष्ण केर जब आज्ञा पाई। तब पाण्डव सब साज मंगाई॥
यज्ञ की सामग्री गहि सारी। जहं तहं ते सब साधु हंकारी॥

जब कृष्ण की आज्ञा हुई, तब पाण्डवों ने यज्ञ करने की सब सामान-सामग्री मंगवाई। यज्ञ की सारी सामग्री जुटाकर, जहां-तहां से सब साधुओं को आदर सहित बुलाया।

॥ चौपाई ॥

पाण्डव प्रति बोले यदुपाला। पूरन यज्ञ जान तिहि काला॥
घण्ट अकाश बजत सुनि आवे। यज्ञ को फल तब पूरन पावे॥

पाण्डवों से यदुनाथ श्रीकृष्ण जी बोले कि अपना यज्ञ पूर्ण हुआ उस समय समझना, जब स्वतः आकाश में घण्टा बजता हुआ सुनने में आए। तब यज्ञ का पूर्ण फल तुम पाओगे।

॥ चौपाई ॥

संन्यासी वैराग झारी। आये ब्राह्मण और ब्रह्मचारी॥
भोजन विविध प्रकार बनाई। परम प्रीति से सबहिं जेवांई॥

उस यज्ञ में संन्यासी, योगी, वैरागी, ब्राह्मण और ब्रह्मचारी सब आए थे। पाण्डवों ने अनेक प्रकार का भोजन बनवाया और बड़े प्रेम से सबको भोजन जिमाया।

॥ चौपाई ॥

इच्छा भोजन सब मिलि पावा। घण्ट न बाजा राय लजावा॥
जबहि घण्ट न बजा अकाशा। चकित भयो राय बुद्धि नाशा॥
भोजन कीन सकल ऋषिराया। बजा न घण्ट भूप भ्रम आया॥
पाण्डव तबहिं कृष्ण पहं गयउ। मन संशय करि पूछत भयऊ॥

सबने मिलकर इच्छानुसार भोजन पाया, परंतु घण्टा नहीं बजा और राजा युधिष्ठिर लज्जित हुए। जब आकाश में स्वतः घण्टा नहीं बजा, तब राजा को आश्चर्य हुआ कि हमारा किया यज्ञ पूर्ण नहीं हुआ और यह सोचकर उनकी बुद्धि का नाश हो गया, अर्थात मानो बुद्धि मिट गई। सब ऋषि-मुनियों ने भोजन किया, परंतु घण्टा न बजने से राजा युधिष्ठिर को भ्रम हो गया कि अवश्य कहीं कुछ विशेष बात है। तब सब पाण्डव श्रीकृष्ण जी के पास गए और अपने मन में घण्टा न बजने का संशय करके इसका वास्तविक कारण पूछते हैं।

युधिष्ठिर वचन श्रीकृष्ण प्रति

॥ चौपाई ॥

करिके कृपा कहो यदुराजा। कारण कौन घण्ट नहीं बाजा॥

हे यादवों के राजा श्रीकृष्ण! कृपा करके सत्य कहो कि कौन कारण से घण्टा नहीं बजा?

श्रीकृष्ण वचन युधिष्ठिर प्रति

॥ चौपाई ॥

कृष्ण अस कारण तासु बताया। साधू कोइ न भोजन पाया॥

श्रीकृष्ण ने घण्टा न बजने का कारण बताया कि कोई संत भोजन नहीं पाया, अर्थात वहां जितने जनों ने भोजन किया, उनमें कोई भी सच्चा संत नहीं था। वे ऊपर के वेष से साधु, संन्यासी, योगी, वैरागी, ब्राह्मण तथा ब्रह्मचारी भले रहे हों परंतु यथार्थ में भीतर के मन से ऐसे नहीं थे। मन से तो वे अपने वर्ण, संप्रदाय, ज्ञान एवं बल आदि के अभिमानी थे, वस्तुतः वे मानस -मन से संत नहीं थे।

युधिष्ठिर वचन श्रीकृष्ण प्रति

॥ चौपाई ॥

चकित भै तब पाण्डव कहेऊ। कोटिन साधु भोजन लेहेऊ॥
अब कहं साधु पाइये नाथा। तिन ते तब बोले यदुनाथा॥

तब आश्चर्य से भरकर पाण्डु-नंदन युधिष्ठिर ने कहा कि यहां करोड़ों-साधुओं ने भोजन किया है। हे नाथ! अब कहां से वह साधु (संत) पाएं, जिनके भोजन करने से घण्टा बजे और यज्ञ पूर्ण हो। तब यदुनाथ श्रीकृष्ण जी बोले—

श्रीकृष्ण वचन युधिष्ठिर प्रति

॥ चौपाई ॥

सुपच सुदर्शन को ले आवो। आदर मान समेत जिमावो॥
सोई साधु और नहिं कोई। पूरन यज्ञ जाहिते होई॥

श्वपच सुदर्शन को काशी से लेकर आओ और आदर-मान के साथ उन्हें भोजन कराओ। वे ही सर्वोत्तम साधु हैं, उन-सा यहां और कोई नहीं है, जिनसे यज्ञ पूर्ण सफल होगा।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

कृष्ण आज्ञा जब अस पयऊ। पाण्डव तब ताके ढिग गयऊ॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि जब श्रीकृष्ण ने श्वपच सुदर्शन को ले आने की ऐसी आज्ञा दी, तब पाण्डव उनके पास गए।

विशेष— *जब श्रीकृष्ण ने श्वपच सुदर्शन जी की विशेषता बताकर, उनको ले आने को कहा तो राजा युधिष्ठिर ने उनको लाने के लिए भीमसेन को भेजा। काशी में श्वपच सुदर्शन जी को खोजते हुए भीमसेन किसी प्रकार उनके घर पहुंच गए और उन्हें सब बातें बताकर अपने साथ चलने के लिए कहा। परंतु भीमसेन के गर्व को देखकर सुदर्शन जी ने चलने से मना कर दिया। इस पर भीमसेन को बहुत क्रोध आया। जब वे चलने को हुए तो उनके बलाभिमान को जांचने के लिए सुदर्शन जी ने कहा कि तुम मेरी सुमिरनी उठाकर चलो, मैं तुम्हारे पीछे आता हूं। परंतु भीमसेन अपनी पूरी शक्ति लगाने पर भी उनकी सुमिरनी नहीं उठा सके। अंतत: वे खिन्न मन से खाली हाथ वापिस लौट आए। तब स्वयं युधिष्ठिर उनके पास गए और विनम्रतापूर्वक उनको लेकर आए। सबने श्वपच सुदर्शनजी का विधिपूर्वक स्वागत किया।*

तब द्रोपदी ने प्रसन्न-भाव से श्वपच सुदर्शन जी के चरण धोकर, आसन पर बैठाया और भोजन में विविध प्रकार के व्यंजन मिष्ठान-पकवान आदि उनके सामने रखे। सुदर्शन जी वैराग्य-स्थिति में सुदृढ़ थे, स्वादासक्ति से उनका कुछ भी संबंध नहीं था। उन्होंने उन सब मिष्ठान-पकवान आदि व्यंजनों को एक पात्र में डालकर मिला लिया और खाने लगे। वे तीन ही ग्रास ले पाए थे, तब तीन बार घण्टा बजा। परंतु तभी द्रोपदी के मन में उनके प्रति हीन भावना आ गई कि यह कैसा साधु है, जो ठीक से भोजन करना भी नहीं जानता तथा इसे स्वाद-रस का कुछ भी ज्ञान नहीं है। द्रोपदी के अंतर्मन की बात सुदर्शन जी समझ गए तथा उठ खड़े हुए। राजा युधिष्ठिर समझ गए कि घण्टा सात बार नहीं बजा है और ये अप्रसन्न मन से जा रहे हैं। अत: युधिष्ठिर ने उनके चरण पकड़ लिए और कहा, ''हे महाराज! हमें क्षमा करें, हम सब अज्ञानी हैं, आपकी महिमा को हम न समझ सके। द्रोपदी से जो भूल हुई, उस पर ध्यान न दें, आप बैठिए और इच्छानुसार भोजन कर हम पर कृपा करें।'' फिर द्रोपदी ने दूसरी बार भोजन बनाया और उनसे प्रार्थना कर सम्मान सहित भोजन कराया।

॥ चौपाई ॥

सुपच सुदर्शन को ले आये। विनय प्रीति से ताहि जेवांये॥
भूप भवन भोजन कर जबहीं। बजा आकाश में घंटा तबहीं॥

पाण्डव श्वपच सुदर्शन जी को अपने यज्ञ में ले आए और सविनय प्रेम से उन्हें भोजन जिमाया। राजा युधिष्ठिर के भवन में जब सुदर्शन जी ने भोजन किया तब आकाश में घंटा बजा।

॥ चौपाई ॥

सुपच भक्त जब ग्रास उठावा। बाजो घण्ट नाम परभावा॥
तबहु न चीन्हें सतगुरु बानी। बुद्धि नाश यम हाट बिकानी॥

भक्त श्वपच सुदर्शन जी ने जब भोजन के लिए ग्रास उठाया, तब सत्यपुरुष के नाम के प्रभाव से घण्टा क्रमशः सात बार बजा तथा उनका यज्ञ संपन्न हुआ। तब भी अज्ञानी-जन सद्गुरु की अमृत-वाणी को नहीं पहचानते, जिसमें उनका कल्याण है। ऐसे लोगों की बुद्धि नष्ट हो गई है तथा वह यम के बाजार में बिक चुकी है।

॥ चौपाई ॥

भक्त जीव कहं काल सताये। भक्त अभक्त सबन कहं खाये॥
कृष्ण बुद्धि पाण्डव कहं दीन्हा। बंधु घात पाण्डव तब कीन्हा॥

भक्त जीव को काल सताता है। काल के लिए कोई क्या, वह भक्त-अभक्त सबको खाता है। काल के प्रभाव से श्रीकृष्ण ने पाण्डवों को बुद्धि दी, तब पाण्डवों ने बंधु-बांधवों को मारा।

॥ चौपाई ॥

पुनि पाण्डव कहं दोष लगावा। दोष लगा तेहिं यज्ञ करावा॥
ताहू पर पुनि अधिक दुखावा। भेज हिमालय तिन्हैं गलावा॥

फिर श्रीकृष्ण ने पाण्डवों को दोष लगाया कि तुमने बंधु-बांधवों को मारा और दोष-पाप लगाकर उसके निवारण के लिए यज्ञ कराया। फिर उस पर भी पाण्डवों को अधिक दुख दिया कि अंतिम-काल में उन्हें हिमालय की यात्रा में भेजकर बर्फ में गलवा दिया।

॥ चौपाई ॥

चार बंधु सह द्रोपदि गहेऊ। उबरे सत्य युधिष्ठिर रहेऊ॥
अर्जुन सम प्रिय और न आना। ताकर अस कीन्हा अपमाना॥

द्रोपदी के साथ चार भाई (भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव) वहां (हिमालय की बर्फ) में गल गए। सत्य को धारण करने वाले एक युधिष्ठिर बचे। उनमें श्रीकृष्ण को अर्जुन के समान प्रिय दूसरा न था, परंतु फिर भी हिमालय में गलाकर उसका ऐसा अपमान किया।

॥ चौपाई ॥

बलि हरिचंद्र करण बड़ दानी। काल कीन्ह पुनि तिन्ह कर हानी॥
जिव अचेत आशा तेहि लावे। खसम बिसार जार को धावे॥

राजा बलि, हरिश्चंद्र तथा कर्ण बहुत बड़े दानी थे, फिर भी काल ने उनकी हानि की, अर्थात बहुत प्रकार से दुख दिया एवं अपमानित किया। जीव अज्ञानवश अचेत है, जिससे उसे सत्यासत्य तथा उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं है, इसीलिए वह सच्चे सत्यपुरुष स्वामी को भुलाता है और यार समझकर कपटी काल-निरंजन की आशा करता है, मोहवश उसी की ओर दौड़ता है।

॥ चौपाई ॥

कला अनेक दिखावे काला। पीछे जीवन करे बिहाला॥
मुक्ति जान जिव आशा लावै। आशा बांधि कालमुख जावै॥

काल-निरंजन अनेक अद्‌भुत कला दिखाता है, फिर पीछे जीवों को दुखी करता है। मुक्ति-सुख जानकर जीव आस लगाता है और उसी आस की फांस में बंधकर फिर काल के मुख में जाता है।

॥ चौपाई ॥

सब कहं काल नचावै नाचा। भक्त अभक्त कोइ नहिं बाचा॥
जो रक्षक तेहि खोजे नाहीं। अनचीन्हे यम के मुख जाहीं॥

काल-निरंजन सबको नाच नचाता है, उससे भक्त-अभक्त कोई नहीं बचा। अज्ञानी जीव उस सत्यपुरुष को नहीं खोजते, जो अपना रक्षक है और बिना पहचाने ही जान-बूझकर यम के मुख में जाते हैं।

॥ चौपाई ॥

बार-बार जीवन समुझावा। परमारथ कहं जीव चितावा॥
अस यम बुद्धि हरी सब केरी। फंद लगाय जीव सब घेरी॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मैंने बार-बार जीवों को समझाया और पारमार्थिक (कल्याणमय) उपदेश कहकर जीवों को चेताया। परंतु यम ने जीवों की ऐसी बुद्धि हरी है कि मोह का फंदा लगाकर सबको घेर लिया है।

॥ चौपाई ॥

सत्य शब्द कोई परखे नाहीं। यम दिशि होय लरैं हम पाहीं॥
जब लगि पुरुष नाम नहि भेंटे। तब लगि जन्म मरण नहि मेटे॥

मेरे सत्य-शब्द को कोई परखता एवं समझता नहीं है और यम की दिशा होकर, अर्थात यम का पक्ष लेकर मुझसे लड़ते हैं। जब तक जीव सत्यपुरुष का नाम लेकर ध्यान-सुमिरन नहीं करेगा, तब तक उसका जन्म-मरण नहीं मिटेगा।

॥ चौपाई ॥

पुरुष प्रभाव पुरुष पहं जाई। कृत्रिम नाम ते यम धरि खाई॥
पुरुष नाम परवाना पावे। कालहि जीत अमर घर जावे॥

सत्यपुरुष के नाम-प्रभाव से जीव सत्यपुरुष के पास जाता है। परंतु काल-माया ने सत्यपुरुष के समान ही जो कृत्रिम (बनावटी) नाम रख लिए हैं, उनसे उन्हें काल-निरंजन धर कर खाता है। जो सत्यपुरुष के सार-नाम का परवाना पाएगा, वह काल को जीतकर अमर लोक जाएगा।

॥ छंद ॥

सत्य नाम प्रताप धर्मनि, हंस लोक सिधावई।
जन्म मरण को कष्ट मेटै, बहुरि न भव जलआवई॥

पुरुष की छबि हंस निरखहिं, लहे अति आनंद घना।
अंश हंस मिलि करै कुतूहल, चंद्र कुमुदिनि संग बना॥ 67॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सत्यपुरुष के सत्यनाम के प्रताप से हंस-जीव सत्यलोक पहुंचते हैं। उनका जन्म-मरण का कष्ट मिट जाता है और फिर संसार में नहीं आते। सत्यपुरुष की अनुपम छवि को हंस निरखकर, अत्यंत आनंद-सुख प्राप्त करते हैं। सत्यपुरुष के अंश और मुक्त हुए जीव-हंस मिलकर क्रीड़ा-मनोरंजन करते हैं, वे ऐसे ही प्रफुल्लित होते हैं, जैसे चंद्रमा को देखकर श्वेत-कुमुदिनी खिल जाती है।

॥ सोरठा ॥

जैसे कुमुदिनि भाव, चंद्र देख निशि हर्षई।
तैसेइ हंस सुख पाव, पुरुष दर्श के पावते॥ 70॥

जैसे श्वेत कुमुदिनी रात में चंद्रमा को देखकर प्रफुल्लित होती है, वैसे ही सत्यपुरुष का दर्शन पाकर हंस-जीव सुख पाते हैं।

॥ सोरठा ॥

नहिं मलीन मुख भाव, एक प्रभाव सदा उदित।
हंस सदा सुख पाव, शोक मोह दुख क्षणिक नहिं॥ 71॥

सत्यपुरुष के दर्शन से प्राप्त हंसों के मुख का भाव कभी कम अथवा मलिन नहीं होता। वह वासना-रहित आनंदपूर्ण भाव उनमें सदा एक जैसा प्रकट रहता है। अतएव हंस सदा सुख को उपलब्ध रहते हैं, उन्हें शोक, मोह एवं दुख क्षण-भर भी नहीं होता।

॥ चौपाई ॥

जबै सुदर्शन ठेका पूरा। ले सतलोक पठायो सूरा॥
मिले रूप शोभा अधिकारा। हंसन संग कुतूहल सारा॥
षोडस भानु रूप तब पावा। पुरुष दर्श सो हंस जुड़ावा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि जब भक्त सुदर्शन की आयु पूरी हो गई, तब करुणामय स्वामी के रूप में मैंने उस महान भक्त को सत्यलोक पहुंचाया। वहां उसे हंसरूप की सुंदरता का समान अधिकार मिला और अन्य हंसों के साथ सारा क्रीड़ा-आनंद मिला। उसने सोलह सूर्य के समान तेजवान रूप पाया तथा सत्यपुरुष के दर्शन से वह सुदर्शन का जीवन-हंस परम शांति को प्राप्त हुआ।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहिब इक विनती मोरा। खसम कबीर कहुं बंदीछोरा॥

भक्त सुदरशन लोक पठायी। पीछे साहिब कहां सिधायी॥
सो सतगुरु कहो मुहिसंदेशा। सुधा वचन सुनि मिटे अंदेशा॥

धर्मदास विनीत-भाव से कहते हैं कि सर्व-बंधनों से छुड़ाने वाले हे बंदीछोड़ स्वामी सत्कबीर! मेरी आपसे एक विनती है कि आपने भक्त सुदर्शन को सत्यलोक भेज दिया, हे साहेब! फिर उसके पीछे आप कहां पहुंचे? हे सद्गुरु! मुझे वह सब संदेश (समाचार) कहो, आपके अमृत-वचन सुनकर मेरा संदेह मिट जाएगा।

कलियुग में कबीर साहिब के पृथ्वी पर आने की कथा

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

अब सुनु धर्मनि परम पियारा। तुम सों कहौं अलग व्यवहारा॥
द्वापर गत कलियुग परवेशा। पुनि हम चल जीवन उपदेशा॥
धर्मराय कहं देख्यो आई। मोहि देखि यम गयो मुर्झाई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे परमप्रिय धर्मदास! सुन, अपने करुणामय स्वामी के स्वरूप से बदलकर, मैंने जो अलग कार्य किया, अब मैं तुमसे कहता हूं।

द्वापर युग बीत गया और कलियुग का प्रवेश हुआ। तब मैं फिर सत्यपुरुष की आज्ञानुसार संसार के जीवों को उपदेश देने के लिए चला। पूर्व की भांति मैंने काल-निरंजन को अपनी ओर आते देखा, मुझे देखकर वह भय से सकुचा गया।

धर्मराय (निरंजन) वचन ज्ञानी जी (कबीर साहेब) प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे धर्म कस मोहिं दुखावहु। भच्छ हमार लोक पहुंचावहु॥
तीनों युग गवने संसारा। भवसागर तुम मोर उजारा॥

काल-निरंजन मुझ (ज्ञानी जी) को कहता है कि किसलिए मुझे दुखी करते हो? मेरे भक्ष्य-भोजन जीवों को सत्यलोक पहुंचाते हो। सतयुग, त्रेतायुग और द्वापर युग तीनों युग में आप संसार में गए हो और आपने जीवों का उद्धार कर मेरा संसार उजाड़ा।

॥ चौपाई ॥

हारि वचन पुरुष मोहि दीन्हा। तुम कस जीव छुड़ावन लीन्हा॥
और बंधु जो आवत कोई। छिन महं ताकहं खांव बिलोई॥

अंतत: सत्यपुरुष ने जीवों पर शासन करने का मुझे वचन दिया हुआ है। मेरे अधिकार-क्षेत्र से आप जीव क्यों छुड़ा लेते हो? आपके अतिरिक्त यदि कोई दूसरा भाई इस प्रकार आता, तो क्षण-भर में मैं उसको मारकर खा जाता।

॥ चौपाई ॥

ट्पते कछू न मोर बसाई। तुम्हरे बल हंसा घर जाई॥
अब तुम फेर जाहु जग माहीं। शब्द तुम्हार सुनै कोउ नाहीं॥

परंतु आपसे मेरी कुछ भी पार नहीं बसाती। आपके नाम-बल से हंस जीव अपने घर, अर्थात अमरलोक जाते हैं। अब आप फिर संसार में जा रहे हो, परंतु आपके शब्द-उपदेश को संसार में कोई नहीं सुनेगा।

॥ चौपाई ॥

करम भरम मम अस कै ठाटा। ताते कोइ न पावै बाटा॥
घर घर भरम भूत उपजावा। धोखा दै दै जीव नचावा॥

शुभाशुभ-कर्मों के भ्रम-जाल में मैंने ऐसा ठाट (मोह-सुख) रच दिया है, जिससे उसमें फंसा जीव आपके बताए सत्यलोक के सन्मार्ग को नहीं पाएगा। धर्म के नाम पर मैंने घर-घर में भ्रम-भूत उत्पन्न कर दिया, अर्थात सबको ऐसा बहका दिया कि सब नाना कल्पित देवी देवा, भूत-भैरव एवं प्रेत-पिशाच आदि की सेवा-पूजा में उलझे रहेंगे। इस प्रकार धोखा दे-देकर मैंने सब जीवों को अपने संकेत पर नचाया है।

॥ चौपाई ॥

भरम भूत ह्वै सब कहं लागे। तोहि चीन्है ताकहं भ्रम भागे॥
मद्य मांस खावैं नर लोई। सर्व मांस प्रिय नर को होई॥

संसार में सब जीवों को भ्रम (अज्ञान) का भूत लगेगा, परंतु जो आपको तथा आपके सदुपदेश को पहचानेगा-समझेगा, तो उसका भ्रम-भूत भाग जाएगा। भ्रम-भूत से ग्रसित अधिकांश मनुष्य मद्य-मांस पिएंगे-खाएंगे, मनुष्य को सर्वाधिक प्रिय मांस होगा।

॥ चौपाई ॥

आपन पंथ मैं कीन परकासा। मांस मद्य सब मानुष ग्रासा॥
चण्डी जोगिन भूत पुजाऔं। यही भ्रम महं जग जहै डाओ॥

मैं अपना मत-पंथ प्रकट करूंगा, अर्थात प्रचलित करूंगा, जिसमें सब मनुष्य मांस-मद्य का सेवन करेंगे। मैं चण्डी, योगिन एवं भूत आदि को पुजवाऊंगा और इसी भ्रम से सारे संसार के जीवों को भटकाऊंगा।

॥ चौपाई ॥

बांधि बहु फंदहिं फंद फंदाऔं। अंतकाल कर सुधि बिसराओ॥
तुम्हरी भक्ति कठिन है भाई। कोइ न मनिहैं कहौं बुझाई॥

जीवों को अनेक मोह-बंधनों में बांधकर और आगे तक इस प्रकार फंदों में फंसा दूंगा कि वे अपने अंत-समय मृत्यु को भूले रहेंगे और इस प्रकार मोह-बंधनों में बंधे

हुए वे जन्म-पुनर्जन्म चौरासी में भटकते रहेंगे, अर्थात उनका उद्धार नहीं होगा।

हे भाई ज्ञानी जी ! आपकी उपदेशित सत्यपुरुष की भक्ति तो अत्यंत कठिन है, आप समझाकर कहोगे, परंतु कोई नहीं मानेगा।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मराय ते बड़ छल कीन्हा। छल तुम्हार सकलो हम चीन्हा॥
पुरुष वचन दूसर नहिं होई। ताते तुम जीवन कहं खोई॥

ज्ञानी जी कहते हैं कि हे निरंजन ! तुमने बड़ा छल किया और तुम्हारे सारे छल को मैंने पहचान लिया। सत्यपुरुष ने जो वचन कहा है, वह दूसरा नहीं हो सकता, उससे तुम जीवों को सताते एवं मारते हो।

॥ चौपाई ॥

पुरुष मोहि जो आज्ञा देही। तो सब होय नाम सनेही॥
ताते सहजहिं जीव चेताऊं। अंकुरी जीव सकल भुक्ताऊं॥

सत्यपुरुष ने मुझे जो आज्ञा दी है, उस अनुसार सब श्रद्धालु जीव सत्यनाम के प्रेमी होंगे। इसलिए मैं सहज-भाव से जीवों को चेताऊंगा और सत्यज्ञान से शीघ्र चेतने वाले अंकुरी-जीवों को भवसागर से छुड़ाऊंगा।

॥ चौपाई ॥

कोटि फंद जो तुम रचि राखा। वेद शास्त्र निज महिमा भाखा॥
प्रगट कला जो धरी जग जाऊं। तो सब जीवन कहं मुक्ताऊं॥

तुमने मोह-माया के जो करोड़ों-जाल रच रखे हैं और वेद शास्त्र एवं पुराण में अपनी महिमा वर्णित की हुई है। यदि मैं प्रत्यक्ष अपनी कला धारण कर संसार में जाऊं, तो तेरे जाल एवं महिमा को समाप्त कर, जीवों को संसार से मुक्त करा दूं।

॥ चौपाई ॥

जो अस करौं वचन तब डोलै। वचन अखंड अडोल अमोलै॥
जो जिव अंकूरी शुभ होई। शब्द हमार मानि है सोई॥

परंतु जो मैं ऐसा करता हूं तो सत्यपुरुष का वचन भंग होगा, उनका वचन तो सदा न टूटने वाला, न डोलने वाला और बिना मोल का अनमोल है, अत: मैं उसका पालन अवश्य करूंगा। शब्दोपदेश से शीघ्र चेतने वाले जो श्रेष्ठ जीव होंगे, वे मेरे सार-शब्द को मानेंगे।

॥ चौपाई ॥

अंकुरी जीव सकल मुक्ताओं। फंदा काटि लोक लै जाऔं॥
काटि भरम जो दैहों ताही। भरम तुम्हार मानि हैं नाहीं॥

शीघ्र चेतने वाले अंकुरी जीवों को मैं भवसागर से मुक्ताऊंगा और तुम्हारे सारे जाल को काटकर उन्हें सत्यलोक ले जाऊंगा। जो तुमने उनको करोड़ों भ्रम दिए हैं, वे तुम्हारे फैलाए हुए भ्रम को नहीं मानेंगे।

॥ छंद ॥

सत्य शब्द दिढाय सबहीं, भ्रम तोरि सब डारिहौं।
छल तोर सब चिन्हाइ तबहीं, नाम बल जिव तारिहौं॥
मन वचन कर्म जो मोहि चीन्ही, एक तत्त्व लौ लाइहैं।
तब सीस तुम्हारे पांव देही, अमरलोक जीव आइहैं॥ 68 ॥

सब जीवों को सत्य-शब्द दृढ़ाकर, अर्थात सत्य-शब्द से परिपक्व कर, तुम्हारे सारे भ्रम से छुड़ा दूंगा। फिर तुम्हारे सब छल-प्रपंच को दिखाकर, सार-नाम के बल से जीव को भवसागर से तारूंगा। मन-वचन-कर्म से जो मुझे पहचानेगा और मेरे उपदेशानुसार एक परम-तत्व से लगन लगाएगा, तब तुम्हारे शीश पर पांव रखकर, वह जीव अमरलोक को आएगा।

॥ सोरठा ॥

मर्दहि तोरा मान, सूरा हंस सुजान कोई।
सत्य शब्द सहिदान, चीन्हहिं हंस हरष अती॥ 72 ॥

मेरा सत्योपदेश ग्रहण कर कोई शूरवीर ज्ञानसंपन्न हंस, तुम्हारे अभिमान को नष्ट कर देगा। सत्य-शब्द यथार्थ पहचान है, जिसे देख एवं समझकर हंस-जीव अत्यंत प्रसन्न हो जाते हैं।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै धर्म जीवन सुखदाई। बात एक मुहिं कहो बुझाई॥
जो जिव रहे तुम्हैं लौ लाई। ताके निकट काल नहिं जाई॥

निरंजन विनम्र-भाव से कहता है कि हे जीवों को सुख देने वाले! मुझे एक बात समझाकर कहो कि जो जीव तुमसे लगन लगाकर रहेगा, उसके पास मैं काल नहीं जाऊंगा।

॥ चौपाई ॥

दूत हमार ताहि नहिं पावै। मूर्छित दूत मोहि पहं आवै॥
यह नहिं बूझ परी मुहिं भाई। तौन भेद मोहिं कहो बुझाई॥

मेरा दूत (कालदूत) आपके हंस को नहीं पाएगा और यदि वह उसके पास जाएगा तो वह मेरा कालदूत मूर्छित हो जाएगा तथा मेरे पास खाली हाथ लौट आएगा। हे भाई ज्ञानी जी! यह बात मेरी समझ नहीं पड़ी, इसका भेद मुझे समझाकर कहो।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनहु धर्म जो पूछेहु मोहीं। सो सब हाल कहौं मैं तोही॥
सुन धर्म तुम सत सहिदानी। सो सत्य शब्द आहि निर्वानी॥

ज्ञानी जी कहते हैं कि हे निरंजन! सुन, जो तुम मुझसे पूछते हो, वह सब हाल मैं तुम्हें कहता हूं। हे निरंजन! ध्यान से सुन कि सत्य सार पहचान है और वह सत्य-शब्द मोक्षदायी है।

॥ चौपाई ॥

पुरुष नाम है गुप्त परवाना। प्रगट नाम सत हंस बखाना॥
नाम हमार हंस जो गहई। भवसागर सो सो निरबहई॥
दूत तुम्हार होय बल थोरा। जब मम हंस नाम ले मोरा॥

मोक्षदायी सत्यपुरुष का नाम गुप्त प्रमाण है। हंस जीवों ने सत्यपुरुष के सत्यनाम की महिमा का प्रत्यक्ष वर्णन किया है। जो जीव मेरे सत्यनाम को ग्रहण करेगा, वह भवसागर से मुक्त हो जाएगा। मुझसे दीक्षित जब हंस-जीव मेरा नाम लेगा, तो तुम्हारे दूत का बल उसके सामने कम हो जाएगा। अर्थात मेरे नाम के प्रभाव से हंस-जीव कालदूत के वश में नहीं होगा, उल्टे उसके पास जाने पर मूर्छित हो जाएगा।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै धर्म सुनु अंतरयामी। कृपा करो अब मोपर स्वामी॥
यहि युग कौन नाम तुव होई। सो जनि मोपर राखहु गोई॥
बीरा अंक गुप्त मन भाऊ। ध्यान अंग सब मोहि बताऊ॥

ज्ञानी जी से काल-निरंजन विनीत- भाव से कहता है कि हे अंतर्यामी स्वामी! सुनो, अब आप मुझ पर कृपा करो। कृपया बताओ कि इस युग में आपका क्या नाम होगा, वह मुझसे गुप्त न रखो। अपने पान-बीड़ा एवं गुप्त-शब्द (नाम) का ज्ञान मुझे समझाओ और ध्यान-सुमिरन के अध्याय का सब साधन (उपाय) मुझे बताओ।

॥ चौपाई ॥

जेहि कारन तुम जाहु संसारा। सो कहु मोहि भेद गुण न्यारा॥
हमहूं जीवन शब्द चेतायब। पुरुष लोक कहं जीव पठायब॥
मोहि दास आपन कर लीजै। शब्द सार प्रभु मोकहं दीजै॥

जिस कारण आप संसार में जा रहे हो, उसका न्यारा भेद-गुण मुझे कहो। मैं भी जीवों को शब्द (नाम) से चेताऊंगा और उन जीवों को सत्यपुरुष के सत्यलोक को भेजूंगा। हे प्रभु! मुझे आप अपना दास कर लीजिए तथा सार-शब्द का ज्ञान मुझे समझा दीजिए।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनहु धर्म तुम कस छल करहू। प्रगट सुदास गुप्त छल धरहू॥
गुप्त भेद नहिं देहौं तोहीं। पुरुष अवाज कही नहिं मोहीं॥
नाम कबीर मोर कलि माहीं। कबीर कहत यम निकट न जाहीं॥

ज्ञानी जी कहते हैं कि हे निरंजन! सुन, तुम कैसा छल करते हो? मैं जानता हूं कि प्रकट में तो मेरे दास रहोगे और गुप्त-रूप से कपट धारण करोगे। मैं तुम्हें गुप्त सार-शब्द-ज्ञान का भेद नहीं दूंगा, सत्यपुरुष ने मुझे ऐसा आदेश नहीं दिया है। इस कलियुग में मेरा नाम 'कबीर' होगा और वह इतना प्रभावशाली होगा कि 'कबीर' कहने से यम अथवा यम का दूत श्रद्धालु हंस-जीव के पास नहीं जाएगा।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै धर्म तुम मोहिं दुरै हो। खेल एक पुनि हमहु खेलै हो॥
ऐसी छल बुधि करब बनाई। हंस अनेक लेव संग लाई॥
तुम्हार नाम ले पंथ चलायब। यहि विधि जीवन धोख दिखायब॥

निरंजन ज्ञानी जी से कहता है कि आप मुझसे दुराव, अर्थात द्वेष रखते हो, एक खेल फिर मैं खेलूंगा। मैं ऐसी छलपूर्ण बुद्धि बनाऊंगा कि जिससे अनेक नकली हंस-जीवों को अपने साथ रखूंगा और आप-समान अथवा गुरु-रूप धारूंगा। आपका नाम लेकर अपना मत-पंथ चलाऊंगा, इस प्रकार जीवों को धोखे में डाल दूंगा, जिससे वे सत्यासत्य को नहीं जान पाएंगे।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

अरे काल तू पुरुष द्रोही। छल मति कहा सुनावसि मोही॥
जो जिव होई है शब्द सनेही। छल तुम्हार नहिं लागै तेही॥

ज्ञानी जी कहते हैं कि अरे काल-निरंजन! तू सत्यपुरुष का विरोधी है, उनके विरुद्ध षड्यंत्र रचने वाला है, अपनी छलपूर्ण बुद्धि कहकर मुझे सुनाता है। परंतु जो जीव सार-शब्द का प्रेमी होगा, उसको तुम्हारा छल नहीं लगेगा।

॥ चौपाई ॥

जौहरी हंस लेहिं पहिचानी। परखिहैं ज्ञान ग्रंथ मम बानी॥
जेहि जीव मैं थापब जाई। छल तुम्हार तेहि देव चिन्हाई॥

जो सच्चा जौहरी-हंस होगा वह तुम्हें तथा तुम्हारे छल को पहचान लेगा और ज्ञान-ग्रंथों में वह मेरी सत्य-वाणी को परखेगा। ज्ञान-दीक्षा से जिस हंस-जीव को मैं भली-भांति परिपक्व कर दूंगा, उसे तुम्हारे छल की भी पहचान करा दूंगा, जिससे वह कभी भी तुम्हारे छल-प्रपंच में नहीं आएगा।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

यहि सुनत धर्मराय गहु मौना। ह्वै अंतर्धान गयो निज भौना॥
धर्मनि कठिन काल गति गन्दा। छल बुधि कै जीवन कहं फंदा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि यह बात सुनकर काल-निरंजन ने मौन धारण कर लिया और अंतर्धान होकर अपने भवन (निवास) को चला गया। हे धर्मदास! काल की गति बहुत निकृष्ट एवं कठिन है, वह छल से जीवों के मन एवं बुद्धि में समाकर उन्हें अपने फंदे में फांस लेता है।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

कह धर्मनि प्रभु मोहि सुनाओ। आगल चरित्र कहि समझाओ।

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहेब से कहते हैं कि हे प्रभु! फिर क्या हुआ? वह अगला (आगे का) अपना चरित्र मुझे कहकर समझाओ।

जगन्नाथ मन्दिर की स्थापना का वृत्तांत

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

राजा इंद्रदमन तिहि काला। देश उड़ीसा को महिपाला॥
राजा इंद्रदमन तहं रहई। सुराज काज युगति सो करई॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि उस समय राजा इंद्रदमन उड़ीसा देश (प्रांत) का राजा था। वह वहां रहते हुए अपने राज्य का सब कार्य न्याय-युक्ति से करता था।

॥ चौपाई ॥

कृष्ण देह छाड़ी पुनि जबहीं। इंद्रदमन सपना भा तबहीं॥

सपने में हरि ताहि बताई। मेरो मन्दिर देहु उठाई॥
मोकहं स्थापन कर राजा। तो पहं मैं आयउं यहि काजा॥

द्वापर युगांत में जब श्रीकृष्ण ने प्रभात- क्षेत्र में देह छोड़ी, तब उसके पश्चात राजा इंद्रदमन को स्वप्न हुआ। स्वप्न में श्रीकृष्ण ने उसे ऐसा बताया कि तुम मेरा मंदिर बनवा दो। हे राजा! तुम मंदिर बनवाकर मुझे स्थापित करो, मैं तुम्हारे पास इसी कार्य से आया हूं।

॥ चौपाई ॥

राजा यहि विधि सपना पाई। तत क्षण मंडप काम लगाई॥
मंडप उठा पूर्ण भा कामा। उदधि आय बोरा तिहि ठामा॥

जब इस प्रकार राजा ने स्वप्न देखा, तो उसी क्षण मंदिर बनवाने का कार्य लगवा दिया। मंदिर बना, उसका सब काम पूर्ण हुआ, परंतु समुद्र ने आकर मंदिर सहित उस स्थान को डुबो दिया।

॥ चौपाई ॥

पुनि जब मन्दिर लाग उठावा। क्रोधवंत सागर तब धावा॥
क्षण में धाय सकल सो बोरे। जगन्नाथ को मन्दिर तोरे॥

फिर जब मंदिर को बनवाने लगे, तब समुद्र क्रोधित होकर उस ओर दौड़ा। क्षण-भर में समुद्र ने दौड़कर सब डुबा दिया और जगन्नाथ का मंदिर तोड़ दिया।

॥ चौपाई ॥

मंडप सो षट बार बनाई। उदधि दौर तिहिं लेय डुबाई॥
हारा नृप करि यतन उपायी। हरि मन्दिर तहं उठै न पाई॥

मंदिर को छः बार बनवाया, परंतु समुद्र ने दौड़कर उसे डुबो दिया। राजा इंद्रदमन मंदिर बनवाने के सब यत्न-उपाय करके हार गया, परंतु समुद्र के कारण जगन्नाथ का मंदिर उठ नहीं पाया।

॥ चौपाई ॥

मन्दिर की यह दशा विचारी। वर पूरब मन माहिं सम्हारी॥
हम सन काल मांग अन्याई। बाचा बंध तहां हम जाई॥

मंदिर के बनने तथा टूटने की यह दशा देखकर मैंने विचार किया। क्योंकि अन्यायी काल-निरंजन ने पहले मुझसे यह मंदिर बनवाने की मांग की थी और मैंने उसे वर दिया था, इसीलिए मेरे मन में उसे संभालने का विचार आया। अतः वचन में बंधा होने से वहां मैं गया।

॥ चौपाई ॥

आसन उदधि तीर हम कीन्हा। काहू जीव न मोही चीन्हा॥
पीछे उदधि तीर हम आई। चौरा तहं बनायउ जाई॥

मैंने समुद्र के किनारे पर आसन किया, परंतु उस समय मुझे किसी जीव ने देखा नहीं, प्रत्युत मैंने वहां की स्थिति को देखा। उसके पश्चात मैं पुनः समुद्र के किनारे आया और वहां जाकर चौरा (निवास-स्थान) बनाया।

॥ चौपाई ॥

इंद्रदमन तब सपना पावा। अहो राय तुम काम लगावा॥
मंडप शंक न राखो राजा। इहवां हम आये यहि काजा॥

फिर मैंने (कबीर साहेब ने) राजा इंद्रदमन को स्वप्न दिखाया और कहा कि अरे राजा! तुम मंदिर का काम लगवाओ। हे राजा! अब मंदिर की यह शंका मत करो कि उसे समुद्र गिरा देगा, मैं यहां इसी काम के लिए, अर्थात यह जगन्नाथ का मंदिर बनवाने आया हूं।

॥ चौपाई ॥

जाहु बेगि जनि लावहु बारा। निश्चय मानहु वचन हमारा॥
राजा मंडप काम लगायो। मंडप देखि उदधि चल आयो॥

अतः अब तुम जाओ, देर मत लगाओ। मेरे वचन को निश्चय कर सत्य मानो। तब राजा ने फिर मंदिर का काम लगवाया और मंदिर बनने का काम होते देखकर समुद्र चलकर फिर आया।

॥ चौपाई ॥

सागर लहर उठी तिहि बारा। आवत लहर क्रोधचित धारा॥
उदधि उमंग क्रोध अति आवे। पुरुषोत्तम पुर रहन ना पावे॥

उस समय सागर में लहर उठी, आती हुई लहरों ने चित्त में क्रोध धारण किया। इस प्रकार लहराता समुद्र उमड़कर अत्यंत क्रोध में आता था कि वह पुरुषोत्तम-जगन्नाथ का बनता हुआ मंदिर रहने-बनने न पाए।

॥ चौपाई ॥

उमंगेउ लहर अकाशे जायी। उदधि आय चौरा नियरायी॥
दरश हमार उदधि जब पाई। अति भय मान रह्यो ठहराई॥

उस उमड़ते हुए समुद्र की लहरें ऊंची आकाश में जाती थीं और समुद्र मेरे चौरे के समीप आया। जब समुद्र ने मेरा दर्शन पाया, तो वह अत्यंत भय मानकर ठहर गया, अर्थात फिर आगे नहीं बढ़ा, वहीं शांत-स्थिति में रुक गया।

॥ छंद ॥

रूप धार्‌यो विप्र को तब, उदधि हम पहं आइया।
चरण गहिके माथ नायो, मर्म हम नहिं पाइया॥

उदधि वचन

जगन्नाथ से बैर स्वामी, ताहि ते हम आइया॥
अपराध मेरो क्षमा कीजे, भेद अब हम पाइया॥ 69॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि तब समुद्र ब्राह्मण का रूप धारण कर मेरे पास आया। उसने मेरे चरण स्पर्श कर मस्तक झुकाया और बोला कि मैं आपका रहस्य नहीं पाया। हे स्वामी! मेरा जगन्नाथ[1] से पुराना वैर है, उसी से मैं यहां तक आया हूं। आप मेरा अपराध क्षमा कीजिए, अब मैंने आपका भेद पाया है कि आप समर्थ पुरुष हैं।

॥ सोरठा ॥

तुम प्रभु दीनदयाला, रघुपति ओइल दिवाइए।
वचन करौं प्रतिपाल, कर जोरे विनती करौं॥ 73॥

हे प्रभु! आप दीनों पर दया करने वाले हैं, आप इस जगन्नाथ-स्वरूप श्रीराम चंद्र से मेरा बदला दिलवाइए। मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूं, मैं आपके वचन का पालन करूंगा।

॥ चौपाई ॥

कीन्हेउ गवन लंक रघुबीरा। उदधि बांध उतरे रणधीरा॥
जो कोइ करै जोरावरि आयी। अलख निरंजन ओइल दिवायी॥
मोपर दया करहु तुम स्वामी। लेउ ओइल सुनु अंतर्यामी॥

श्रीराम से वैर का कारण यह है कि जब श्रीरामचंद्र ने लंका-देश को गमन किया तब वे मुझ समुद्र पर पुल बांधकर पार उतरे। जो कोई आकर किसी दुर्बल पर कुछ बलपूर्वक करता है, तो समर्थ प्रभु उसका बदला अवश्य दिलवाता है। हे समर्थ स्वामी! आप मुझ पर दया करो, भीतर मानस-मन की जानने वाले हे अंतर्यामी! मेरी बात सुनो, मैं उससे बदला लूंगा।

सद्‌गुरु कबीर वचन समुद्र प्रति

॥ चौपाई ॥

ओइल तुम्हार उदधि हम चीन्हा। बोरहु नगर द्वारका दीन्हा॥
यह सुनि उदधि धरे तब पांई। चरण टेकिके चले हरषाई॥
उदधि उमंग लहर तब धायी। बोर्‌यो नगर द्वारका जाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे समुद्र! जगन्नाथ से तुम्हारे वैर को मैंने समझा, इसके बदले के लिए मैंने तुमको द्वारका दिया, तुम जाकर श्रीकृष्ण के द्वारका नगर को डुबो दो। यह सुनकर तब समुद्र ने मेरे चरणों में मस्तक रखा और वह प्रसन्न होकर चला।

---

1. जगन्नाथ से अभिप्राय श्रीकृष्ण से है, जो कि द्वापर-युग के अवतार कहे जाते हैं। इससे पूर्व त्रेता युग में उनका श्रीराम अवतार हुआ, जिसमें समुद्र से उनका वैर-भाव हुआ।

समुद्र उमड़ा पड़ा और उसकी लहरें तेज-गति से दौड़ीं और जाकर द्वारका नगर को डुबो दिया[1] (इस प्रकार समुद्र अपना बदला लेकर शांत हुआ)।

॥ चौपाई ॥

मण्डप काम पूर तब भयऊ। हरि को थापन तहवां कियऊ॥
तब हरि पण्डन स्वपन जनावा। सत्य कबीर मोहि पहं आवा॥

तब मंदिर का काम संपूर्ण हुआ और मैंने वहां पर जगन्नाथ की स्थापना करवाई। फिर जगन्नाथ जी ने पण्डा को स्वप्न में बताया कि सत्य कबीर मेरे पास आए हैं।

॥ चौपाई ॥

आसन सागर तीर बनाई। उदधि उमंग नीर तहं आई॥
दरश कबीर उदधि हट जाई। यहि विधि मण्डप मोर बचाई॥

उन्होंने समुद्र के तट पर अपना चौरा-स्थान बनाया है। समुद्र के उमड़ने से पानी वहां उनके स्थान तक आया। सत्य कबीर के दर्शन कर समुद्र वहां से हट गया और इस प्रकार मेरा मंदिर उन्होंने समुद्र में डूबने से बचाया।

॥ चौपाई ॥

पण्डा उदधि तीर चलि आये। करि अस्नान मंडप चलि जाये॥
पण्डन अस पाखंड लगाई। प्रथम दरश मलेच्छ दिखाई॥
हरि के दर्शन मैं नहिं पावा। प्रथमहि हम चौरा लगआवा॥

तब पण्डा-पुजारी समुद्र तट पर आया और स्नान कर मंदिर में चला गया। परंतु उस पण्डा ने ऐसा पाखंड अपने मन से लगाया कि पहले तो मलेच्छ का ही दर्शन देखना पड़ा। क्योंकि मैं पहले कबीर-चौरा तक आया, परंतु जगन्नाथ प्रभु का दर्शन मैं नहीं पाया।

॥ चौपाई ॥

तब हम कौतुक एक बनाये। कहौं वचन नहि राखु छिपाये॥
मण्डप पूजन जब पण्डा गयऊ। तहंवा एक चरित अस भयऊ॥

तब मैंने एक कौतुक बनाकर दिखाया, वह मैं तुम्हें कहता हूं, छिपाकर नहीं रखता। जब पण्डा मंदिर में पूजा के लिए गया, तब वहां एक ऐसा चरित्र हुआ कि—

॥ चौपाई ॥

जहं लग मूरति मण्डप माहीं। भये कबीर रूप धर ताहीं॥
हर मूरति नहिं पण्डा देखा। भये कबीर रूप धर भेखा॥

---

1. कहा जाता है कि जब समुद्र ने द्वारका को डुबोया, उस समय वह खाली पड़ा था। उसके सब यादव वीर परस्पर लड़ मरे थे। श्रीकृष्ण का देहावसान हो चुका था तथा अन्य सब लोग भी उसे खाली कर चले गए थे।

उस मंदिर में जहां तक मूर्ति थी, उसने कबीर का रूप धारण कर लिया। फिर पण्डा ने जगन्नाथ की उस मूर्ति को वहां नहीं देखा, क्योंकि वह तो वेष धारण कर कबीर-रूप हो गई।

॥ चौपाई ॥

अक्षत पुहुप ले विप्र भुलाई। नहिं ठाकुर कहं पूजहुं भाई॥
देखि चरित्र विप्र सिर नाया। हे स्वामी तुम मर्म न पाया॥

पूजा के लिए अक्षत एवं पुष्प लेकर पण्डा भूल में पड़ गया कि यहां ठाकुर जी, अर्थात भगवान तो हैं ही नहीं, फिर भाई! किसे पूजूं? यहां तो कबीर-ही-कबीर है। ऐसा चरित्र देखकर पण्डा ने सिर झुकाया और कहा कि हे स्वामी! मैंने आपका रहस्य नहीं पाया।

पण्डा वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हम तुम काहि नहीं मन लाया। ताते मोहि चरित्र दिखाया॥
क्षमा अपराध करो प्रभु मोरा। विनीत करौं दोइ कर जोरा॥

मैंने आपसे किसलिए मन नहीं लगाया? मैंने आपको नहीं जाना, उसी से आपने मुझे यह चरित्र दिखाया। हे प्रभु! मेरे अपराध को क्षमा करो, मैं दोनों हाथ जोड़कर आपसे विनती करता हूं।

सद्‌गुरु कबीर वचन पण्डा प्रति

॥ छंद ॥

वचन एक मैं कहौं तोसों, विप्र सुनु तू कान दे।
पूज ठाकुर दीन्ह आयसु, भाव दुविधा छोड़ दे॥
भरम भोजन करे जो जिव, अंगहीन हो ताहि को।
करे भोजन छूत राखे, सीस उलटे वाहि को॥ 70॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे विप्र! मैं तुम्हें एक बात कहता हूं, तू कान लगाकर सुन। मैं तुझे आज्ञा देता हूं कि ठाकुर-जगन्नाथ की पूजा करो, परंतु दुविधा का भाव छोड़ दे, अर्थात वर्ण-जाति का, ऊंच-नीच एवं छूत-अछूत का भाव त्याग दे, क्योंकि सभी मनुष्य एक समान हैं और सबकी एक मनुष्य-जाति है। इस जगन्नाथ मंदिर में आकर भेद-भाव मानता हुआ जो मनुष्य भ्रमित होकर भोजन करेगा वह अंग हीन होगा। भोजन करने में जो छूत-अछूत रखेगा, उसका शीश उल्टा होगा, अर्थात वह भ्रमपूर्ण उलट-बुद्धि रहेगा।

॥ सोरठा ॥

चौरा करि व्यवहार, भ्रम विमोचन ज्ञान दृढ़।
तहं ते कियो पसार, धर्मदास सुनु कान दे॥ 74॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! ध्यान से कान लगाकर सुनो। समुद्र तट पर अपने चौरा में ऐसा व्यवहार एवं चरित्र करके मैंने पण्डा को सदुपदेश दिया, उसका सब भ्रम दूर कर, ज्ञान में परिपक्व किया। फिर वहां से मैंने प्रस्थान कर दिया।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास कहे सतगुरु पूरा। तुव प्रसाद भयो दुख दूरा॥
जिहि विधि हरि कहं थापउ जाई। सो साहिब सब मोहिं सुनाई॥

धर्मदास जी विनीत-भाव से कहते हैं कि हे साहिब! आप पूरे सद्गुरु हो, आपकी दया से मेरा दुख दूर हुआ। जिस प्रकार समुद्र तट पर जाकर आपने श्री जगन्नाथजी को स्थापित किया, हे साहिब! वह सब आपने मुझे सुनाया।

॥ चौपाई ॥

ता पीछे कहवां तुम गयऊ। कौन जीव कैसे मुक्तयऊ॥
कलयुग केर कहो परभाऊ। और हंस परमोधेउ काऊ॥
सो मोहि वरणि कहो गुरुदेवा। कौन जीव कीन्ही तुम सेवा॥

उसके पीछे आप कहां गए और कौन जीव कैसे भवसागर से मुक्त कराया? कलियुग का प्रभाव कहिए, और कोई हंस-जीव गुरु-ज्ञान से दीक्षित किया? हे सद्गुरुदेव! वह सब मुझे वर्णन कर सुनाओ, फिर आपकी कौन-कौन जीव ने किस प्रकार सेवा की?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुम बूझहु भेदा। सो सब हमहु कहौं निखेदा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम मुझसे सब भेद पूछते हो, तो मैं तुम्हें सब प्रेमपूर्वक निर्णय कर कहता हूं।

चार गुरु की स्थापना का वृत्तांत

॥ चौपाई ॥

सुनो संत यह कथा अनूपा। गज अस्थल परमोध्यो भूपा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे संत धर्मदास! आगे की यह अनुपम कथा सुनो, मैंने गजस्थल देश के राजा को गुरु-ज्ञान-दीक्षा से संपन्न किया।

राय बंकेजी

॥ चौपाई ॥

राय बंकेज़ नाम तेही आही। दीनेउ सार शब्द पुनि ताही॥
कीन्ह्यो ताहि जीवन कडिहारा। सो जीवन का करे उबारा॥

गजस्थल देश के उस राजा का नाम बकेज था, मैंने उसे विधि-विधान से सार-शब्द दिया, अर्थात उसकी श्रद्धा को देखकर उसे कंठी-तिलक दिया एवं रहनि, गहनि तथा भक्ति का सत्यज्ञानोपदेश देकर, गुरु-दीक्षा और पान-प्रसाद दिया। उसको जीवों का उद्धार करने वाला कर्णधार-केवट बनाया, अर्थात भवसागर से जीवों का उद्धार करने निमित्त उसे गुरुवाई दी।

सहते जी

॥ चौपाई ॥

शिलमिली दीप तहां चलि आये। सहते जी एक सन्त चिताये॥
ताहू को कडिहारी दीन्हा। जब उन मोकहं निज कर चीन्हा॥

गजस्थल देश से चलकर मैं शाल्मलि द्वीप में आया, वहां मैंने एक संत सहतेजी को विधिपूर्वक चेताया। जब उसने मुझे अपना करके समझा एवं पहचाना, तो उसको जीव-उद्धारार्थ सब गुरुवाई प्रदान की।

चतुर्भुज

॥ चौपाई ॥

तहां ते चलि आये धर्मदासा। राय चतुरभुजपति जहां बासा॥
ताकर देश आहि दरभंगा। परखिसि मोहि सत परसंगा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! वहां से मैं चला आया और वहां गया, जहां राजा चतुर्भुज स्वामी का निवास था। उसका देश (क्षेत्र) दरभंगा है, उसने मेरे सत्यज्ञान-प्रसंग को सुनकर मुझे परख लिया।

॥ चौपाई ॥

देखि अधीन ताहि समझावा। ज्ञान भक्ति विधि ताहि दृढ़ावा॥
दृढ़ता देखि ताहि पुनि थापा। मिला मोहि छाड़ि भ्रम आपा॥

मैंने उसे अपने अधीन (विनम्र) देखकर समझाया और विधिपूर्वक उसे ज्ञान-भक्ति में सुदृढ़ किया। उसकी दृढ़ता (परिपक्वता) देखकर उसे भी गुरुवाई की श्रेणी में रखा, वह मुझसे सब दुविधा, मोह एवं अभिमान त्यागकर मिला।

॥ चौपाई ॥

माया मोह न तनिको कीन्हा। अमरनाम तब ताही दीन्हा॥
ताहू कहं कडिहारी दीन्हा। चतुरभुज शब्द हेत करि लीन्हा॥

उसने किंचित-मात्र भी माया-मोह नहीं किया, तब मैंने उसे सत्यपुरुष का अमर सत्यनाम दिया। उसको भी जीवोद्धार की कडिहारी (गुरुवाई) दी, उस राजा चतुर्भुज ने मेरे शब्द-उपदेश को प्रेमपूर्वक लिया।

॥ छंद ॥

हंस निरमल ज्ञान रहनी, गहनी नाम उजागरा।
कुल कानि सबै बिसारि विषया, जौहरी गुण नागरा॥
चतुर्भुज बंकेज और सहतेजी, तुम चौथ सही।
चारि हैं कडिहार जिव के, गिरा निश्चल हम कही॥ 71॥

मैंने हंस का निर्मल ज्ञान, रहनि-गहनि एवं ध्यान-सुमिरन के लिए सार-नाम कडिहार गुरुओं को भली-भांति बताया और उसमें उन्हें परिपक्व किया। सब कुल-मर्यादा एवं काम-मोहादि विषयों का त्याग कर, गुणों को परखने वाले ज्ञान-संपन्न जौहरी हुए। चतुर्भुज, बंकेज और सहतेजी तथा चौथे तुम धर्मदास, ये चारों जीव के कड़िहार हैं, अर्थात गुरु-ज्ञान-दीक्षा देकर जीवों को भवसागर से पार लगाने वाले हैं, यह मैंने तुमसे अटल वाणी कही है।

॥ सोरठा ॥

जम्बूदीप के जीव, तुम्हरी बांह मोकहं मिला।
गहे वचन दृढ़ पीव, ताहि काल पावै नहीं॥ 75॥

हे धर्मदास! अब तुम्हारे हाथ से मुझको जंबूद्वीप[1] के जीव मिलेंगे। जो मेरे सार वचन ग्रहण कर सत्यपुरुष स्वामी की दृढ़ता से भक्ति करेगा, उसे काल-निरंजन नहीं पाएगा।

***विशेष**—उपर्युक्त वर्णित चार गुरुओं का कबीर साहित्य एवं कबीरपंथी समाज में विशेष स्थान है। धर्मदास-प्रणाली में यह प्रसिद्ध है कि सद्गुरु कबीर साहेब ने संसार के मनुष्यों को मुक्ति प्रदान करने के लिए अपने चार शिष्य प्रकट किए और उन्हें पृथ्वी की चारों दिशाओं में नियत किया गया। प्रत्येक दिशा में उनका एक शिष्य मनुष्य जाति के कल्याण का गुरु माना गया। इस प्रकार समयानुसार वे चारों अपने अंशों सहित पृथ्वी पर प्रकट होकर मनुष्य-जाति को धर्म की सीख देते हैं तथा देंगे। वे चारों गुरु सत्यज्ञान-बल से मनुष्य को काल-माया से छुड़ाने वाले हैं। उनसे गुरु-दीक्षा प्राप्त कर तथा उनकी असीम अनुकंपा से मनुष्य सत्यपुरुष के परम-धाम को प्राप्त करते हैं।*

कबीर-मंशूर एवं कबीर सागर ग्रंथों में उक्त चार गुरुओं की स्थिति जिस प्रकार वर्णन की गई है, उसे नीचे तालिका में दर्शाया गया है—

क्र.	भवसागर में नाम	सत्यलोक में अंश	प्रा. स्थान	द्वीप	वाणी	वेद	दिशा	वंश
1.	गोसाईं धर्मदास जी	सुकृत अंश	बांधवगढ़, भारतखंड	जंबूद्वीप	कोटज्ञान	ऋग्वेद	उत्तर	42
2.	गोसाईं चतुर्भुजदासजी	अक्षय अंश	कर्नाटक	कुशहर द्वीप	टकसार	यजुर्वेद	दक्षिण	27

1. सात द्वीपों का केंद्रीय भाग जंबूद्वीप का है, जिसमें भारतवर्ष विद्यमान है।

क्र.	भवसागर में नाम	सत्यलोक में अंश	प्रा. स्थान	द्वीप	वाणी	वेद	दिशा	वंश
3.	राय बंकेजी	जोहंग अंश	दरभंगा	पालक्ष द्वीप	मूलज्ञान	सामवेद	पूर्व	16
4.	सहतेजी	हिरम्मर अंश	मानपुर	शालमल्ली द्वीप	बीजकज्ञान	अथर्ववेद	पश्चिम	7

__निर्देश__—अनुराग सागर में यहां गुरु चतुर्भुज दास जी का प्रा. स्थान दरभंगा और राय बंकेजी का गजस्थल देश बताया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि कहीं न कहीं कुछ भूल अवश्य है। कुछ ग्रंथों में राय बंकेजी के 27 और चतुर्भुज दास जी के 16 वंश कहे गये हैं।

स्मरण रहे कबीर मंशूर पृ. 298 में बताया गया है कि—इन चारों गुरुओं में अब तक केवल धर्मदास जी ही प्रगट हुए हैं, उनकी वंशगद्दी स्थिर हुई है। किंतु पूर्वोक्त लिखित तीनों गुरु अब तक प्रगट नहीं हुए हैं—जब वे भी प्रगट हो जाएंगे तब इस धर्म का प्रचार विशेष रूप से होगा।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धन सतगुरु तुम मोहिं चितावा। काल फंद से मुहिं मुकतावा॥
मैं किंकर तुम दास के दासा। लीन्हों मोरि काटि जम फांसा॥

धर्मदास जी कहते हैं कि हे सद्‌गुरु! आप धन्य हैं, आपने सत्यज्ञान प्रदान कर मुझे चेताया तथा काल-निरंजन के फंदे से मुझे मुक्त किया। मैं तुच्छ आपका दास और आपके दासों का भी दास हूं, आपने मेरी यम की फांसी काट दी है।

॥ चौपाई ॥

मोरे चित अति हरष समाना। तव गुण मोहिं न जाय बखाना॥
भागी जीव शब्द तुव माना। पूरण भाग जो तुव व्रत ठाना॥

आपके उपकार से मेरे चित्त में अत्यंत हर्ष समाया हुआ है, आपके महान गुणों का मुझसे वर्णन नहीं किया जाता। जिस जीव ने आपके शब्द-उपदेश को माना, वह भाग्यवान है और जिसने आपका व्रत करने का निश्चय किया है, वह पूर्ण भाग्यशाली है।

॥ चौपाई ॥

मैं अधकर्मी कुटिल कठोरा। रहेउ अचेत भ्रम जिव मोरा॥
कहा जानि तुम मोहिं जगाये। कौने तप हम दर्शन पाये॥
सो समुझाय कहो जिय मूला। रवि तव गिरा कमल मन फूला॥

मैं पाप-कर्म करने वाला, दुष्ट एवं निर्दयी था और मेरा जीवात्मा (मैं) सदा भ्रम से अचेत रहा। क्या समझकर आपने मुझे अज्ञान-निद्रा से जगाया है? और

कौन-से तप से मैंने आपका दर्शन पाया है ? हे मेरे हृदय के मूल-आधार! वह मुझे समझाकर कहो, सूर्य सदृश तेजोमय आपकी वाणी सुनकर, मेरा मन कमल के फूल की भांति खिल गया है।

धर्मदास के पिछले जन्मों की कथा
सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

इच्छा करि जो पूछेउ मोही। अब मैं गोइ न राखो तोही॥
धर्मनि सुनहु पाछली बाता। तुहिं समुझाय कहौं विख्याता॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम्हें चेताने और मेरे दर्शन देने के कारण जानने की जो तुम्हारी इच्छा मुझसे पूछने की हुई है, अब मैं वह तुमसे छिपाकर नहीं रखूंगा। तुम मुझसे अपने पिछले (पूर्व) जन्मों की बात ध्यानपूर्वक सुनो, मैं जिस कारण तुम्हारे पास आया तथा सदुपदेश किया, तुम्हें भली-भांति समझाकर कहता हूं।

॥ चौपाई ॥

सन्त सुदर्शन द्वापर भयऊ। तासु कथा तोहि प्रथम सुनयऊ॥
तिहिं ले गयो देश निज जबही। विनती बहुत कीन तबहीं॥

संत सुदर्शन, जो द्वापर युग में हुए, उसकी कथा तुमको मैंने पहले सुनाई है। उसको जब मैं अपने देश सत्यलोक ले गया, तब उसने मेरी बहुत विनती की थी।

श्वपच सुदर्शन वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

कहे सुपच सतगुरु सुनलीजै। हमरे मात-पिता गति दीजै॥
बन्दीछोर करहु प्रभुताई। यम के देश बहुत दुख पाई॥

श्वपच सुदर्शन ने मुझसे कहा था कि हे सद्‌गुरु! मेरी विनती सुन लीजिए, मेरी विनती यह है कि मेरे माता-पिता को सद्‌गति (मुक्ति) दीजिए। हे बंदीछोड़ प्रभु! उनका आवागमन से बंधन छुड़ाने की महानता आप करिए, यम के देश में उन्होंने बहुत दुख पाया है।

॥ चौपाई ॥

मैं बहु भांति तेहिं समुझावा। मातु पिता परतीति न पावा॥
बालकवत नहिं ज्ञान सिखावा। भक्ति करत नहिं मोहि डरावा॥

मैंने बहुत प्रकार से उनको समझाया, परंतु मेरे माता-पिता को मेरी धर्मयुक्त बातों पर विश्वास नहीं हुआ। उनका पुत्र होने से बालक के समान मैं उस समय उनको ज्ञान नहीं समझा पाया, परंतु उन्होंने भी मुझे भक्ति करते हुए कभी डराया-धमकाया नहीं।

॥ चौपाई ॥

भक्ति तुम्हारी करन जबलागे। कबहुं न द्रोह कीन्ह मम आगे॥
अधिक हर्ष ताही चित होई। ताते विनती करौं प्रभु सोई॥
आनहु तेहि सत शब्द दृढ़ाई। बन्दीछोर जीव मुकताई॥

मैं जब आपकी भक्ति करने लगता, तो उन्होंने मेरे सामने कभी कोई झगड़ा अथवा वैर-भाव नहीं किया। मुझे भक्ति करते देखकर उनके चित्त में बहुत प्रसन्नता होती थी। इसी से प्रभु! मैं आपसे विनती करता हूं। उन्हें अपने सत्योपदेश से संपन्न कर सत्यलोक ले आओ। सर्व-बंधनों से छुड़ाने वाले हे बन्दीछोड़! उनके जीव को मुक्त करो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

विनती बहुत संत जब कीन्हा। ताकर वचन मानि हम लीन्हा॥
ताकर विनय बहुरि जग आवा। कलियुग नाम कबीर कहावा॥

जब संत सुदर्शन ने मेरी बहुत विनती की, तो उसका वचन मैंने मान लिया। उसकी अनुनय-विनय से मैं फिर संसार में आया और कलियुग में मैं नाम से 'कबीर' कहलाया।

विशेष—*पूर्व प्रसंगों में यह भली-भांति दर्शाया गया है कि सबके मूल-आधार एवं सच्चे स्वामी सर्वशक्तिमान सत्यपुरुष की आज्ञा से, उनके विशेष सत्य-प्रतिनिधि ज्ञानी जी संत-सद्गुरु के रूप में संसार में आकर दुखित जीवों का उद्धार करते हैं। इस प्रकार जीवोद्धार के लिए वे चारों युग में आए और युगानुसार उन्होंने अपने भिन्न-भिन्न नाम धराए, जो भावार्थ की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, जैसे—वे सतयुग में सत्यसुकृत, त्रेतायुग में मुनींद्र, द्वापरयुग में करुणामय और इस कलियुग में 'कबीर' नाम से प्रसिद्ध हुए।*

॥ चौपाई ॥

हम इक वचन निरंजन हारा। वाचा बंधउ पुनि पगु धारा॥
और दीप हंसन उपदेशा। जम्बुदीप पुनि कीन प्रवेशा॥

मैं निरंजन के एक वचन से हट गया, मैं उससे वचन में बंधा था, फिर भी चलने के लिए पांव बढ़ाया। मैं और हंसों को उपदेश कर रहा था, परंतु सुदर्शन की विनती से मैंने फिर जंबूद्वीप (भारतखंड) में प्रवेश किया।

॥ चौपाई ॥

सन्त सुदर्शन के पितु माता। लक्ष्मी नरहर नाम सुहाता॥
सुपच देह छोड़ी तिन भाई। मानुष जन्म धरे तिन आई॥

मैं वहां गया, जहां तब संत सुदर्शन के माता-पिता का सुंदर नाम लक्ष्मी और नरहर था। हे भाई ! उन्होंने पूर्व की श्वपच-देह छोड़ दी थी और उन्होंने फिर संसार में आकर मनुष्य-जन्म पाया।

निर्देश—*कबीर मंशूर पृ. 236* के अनुसार संत श्वपच सुदर्शन के माता-पिता दोनों डोम का शरीर छोड़कर ब्राह्मण और ब्राह्मणी हुए थे तथा चंद्रवारे नगर में रहते थे। पहले उनका नाम कुलपति और महेसरी फिर नरहर एवं लक्ष्मी हुआ।

श्वपच सुदर्शन के माता-पिता का पहला जन्म महेश्वरी और कुलपति की कथा

॥ चौपाई ॥

सन्त सुदर्शन केर प्रतापा। मानुष देह विप्र के छापा॥
दोनों जन्म होय तब लीन्हा। पुनि विधि मिले ताहि कहं दीन्हा॥

संत सुदर्शन के पुण्य-प्रताप से, उसको माता-पिता दोनों को मनुष्य-देह मिली और ब्राह्मण-वर्ण हुए। जब दोनों का जन्म हो लिया, फिर समयानुसार विधाता ने दोनों को स्त्री-पुरुष के संबंध में मिला दिया।

॥ चौपाई ॥

कुलपति नाम विप्र कर कहिया। नारि नाम महेसरि रहिया॥
बहुत अधीन पुत्र हित नारी। करि अस्नान सूर्यव्रत धारी॥

उनमें ब्राह्मण का नाम कुलपति और उसकी स्त्री का नाम महेश्वरी था। बहुत समय बीत जाने पर भी महेश्वरी नारी को संतान नहीं थी, अतः वह बिना पुत्र बहुत व्याकुल थी। पुत्र प्राप्ति के लिए उसने स्नान कर सूर्यदेव का व्रत धारण किया।

॥ चौपाई ॥

अंचल लै विनवै कर जोरी। रुदन करे चित सुत कह दौरी॥
तत्क्षण हम अंचल पर आवा। हम कहं देखि नारि हरषावा॥

वह आंचल फैलाकर तथा दोनों हाथ जोड़कर सूर्यदेव से विनती करती थी। उसका चित्त रोता था तथा वह पुत्र के लिए सूर्य की ओर दौड़ती थी।

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि उस समय मैं उसके आंचल में बालक रूप धर प्रकट हो आया। बालक-रूप मुझे देखकर वह महेश्वरी नारी बहुत प्रसन्न हुई।

॥ चौपाई ॥

बाल रूप धरि भेटयों वोही। विप्र नारि गृह लै गइ मोही॥
कहै नारि कृपा प्रभु कीन्हा। सूर्य व्रत कर फल यह दीन्हा॥

बालक-रूप धारकर मैं उससे मिला, वह ब्राह्मण कुलपति की स्त्री मुझे घर ले गई। अपने पति से कहती है कि प्रभु ने मुझ पर कृपा की, मेरे सूर्य-व्रत करने का फल यह बालक मुझको दिया है।

॥ चौपाई ॥

बहुत दिवस लग तहां रहाये। नारि पुरुष मिल सेवा लाये॥
रहे दरिद्र ते दुखी अपारा। हम मन महं अस कीन विचारा॥

मैं वहां बहुत दिनों तक रहा, वे दोनों स्त्री-पुरुष मिलकर मेरी सेवा करते रहे। वे निर्धन होने से बहुत दुखी थे, तब मैंने मन में ऐसा विचार किया—

॥ चौपाई ॥

प्रथमहि दरिद्रता इनकर टारों। पुनि भक्ति मुक्ति कर वचन उचारों॥
जब मम पलना झटक झकोरा। मिलत सुवर्ण ताहि इक तोरा॥

पहले मैं इनकी दरिद्रता (गरीबी) दूर करूं और फिर इनको भक्ति-मुक्ति का वचनोपदेश करूं। इसके लिए मैंने ऐसा किया कि जब ब्राह्मण-स्त्री ने मेरा पलना हिलाया-झुलाया अथवा बिस्तर झाड़ा-झटका, तब उसे एक तोला सोना उसमें मिला।

॥ चौपाई ॥

नित प्रति सोन मिलै इक तोला। ताते भये वे सुखी अमोला॥
पुनि हम सत्य शब्द गोहराई। बहु प्रकार ते उनहिं समुझाई॥

मेरे बिछौने में उन्हें नित्य-प्रति एक तोला सोना मिलता था, उससे वे बहुत सुखी हो गए। फिर समयोपरांत मैंने उनको सत्य-शब्द का उपदेश किया और उन दोनों को बहुत प्रकार से समझाया।

॥ चौपाई ॥

ता हृदये नहिं शब्द समायी। बालक ज्ञान प्रतीत न आई॥
ताहि देह चीन्हेसि नहि मोहीं। भयो गुप्त तहं तन तजि वोहीं॥

परंतु उनके हृदय में मेरा शब्दोपदेश नहीं समाया। मुझे बालक जानकर उनको मेरे ज्ञान पर विश्वास नहीं आया। उस देह में उन्होंने मुझे नहीं पहचाना। तब मैं वहीं उस शरीर को त्यागकर गुप्त हो गया।

श्वपच सुदर्शन के माता-पिता के दूसरे जन्म में चंदन साहू और ऊदा की कथा

॥ चौपाई ॥

नारि द्विज दोई तन त्यागा। दरश प्रभाव मनुज तनु जागा॥
पुनि दोनों भये अंशु मिलाऊ। रहहि नगर चंदनवारे जाऊ॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि फिर उस ब्राह्मण कुलपति और उसकी स्त्री महेश्वरी दोनों ने शरीर छोड़ा और मेरे दर्शन के प्रभाव से उनको फिर मनुष्य-तन मिला। फिर दोनों के अंश मिले, अर्थात दोनों का स्त्री-पुरुष का संबंध हुआ और चंदवारे नगर में जाकर रहे।

॥ चौपाई ॥

ऊदा नाम नारी कहं भयऊ। पुरुष नाम चंदन धरि गयऊ॥
पुरुसोतम ते हम चलिआये। तब चन्दवारा जाइ प्रगटाये॥

तब उस स्त्री का नाम ऊदा हुआ और पुरुष का नाम चंदन रखा गया। मैं पुरुषोत्तम (सत्यपुरुष) के पास से चलकर आया और तब चंदवारे नगर में जाकर प्रकट हुआ।

॥ चौपाई ॥

बालक रूप कीन्ह तेहि ठामा। कीन्हेउ ताल माहि विश्रामा॥
कमल पत्र पर आसन लाई। आठ पहर हम तहां रहाई॥

मैंने उस स्थान में बालक रूप बनाया और वहां जो ताल था, उसमें विश्राम किया। तालाब में कमल-पत्र पर मैंने आसन लगाया तथा आठ पहर (रात-दिन) वहां रहा।

॥ चौपाई ॥

पीछे ऊदा अस्नानहि आयी। सुंदर बालक देखि लुभायी॥
दरश दियो तिहि शिशुतन धारी। ले गई बालक निज घर नारी॥

उसके पीछे वहां उस तालाब में ऊदा स्नान करने आई और सुंदर बालक देखकर वह मोहित हो गई। मैंने उसे शिशु का शरीर धारण कर दर्शन दिया, वह स्त्री मुझ बालक को अपने घर ले गई।

॥ चौपाई ॥

ले बालक गृह अपने आई। चंदन साहु अस कहा सुनाई॥

वह बालक लेकर अपने घर आई और उसने अपने पति चंदन साहू से ऐसा कहकर सुनाया—

चंदन साहू वचन ऊदा प्रति

॥ चौपाई ॥

कहु नारी बालक कहं पायी। कौने विधि ते इहंवा लायी॥

चंदन साहू ने कहा कि हे ऊदा! कहो, यह बालक कहां से पाया और किस प्रकार से इसे यहां लाई?

ऊदा वचन चंदन साहू प्रति

॥ चौपाई ॥

कह ऊदा जल बालक पावा। सुंदर देखि मोर मन भावा॥

ऊदा ने कहा कि मैंने इस बालक को तालाब के जल में कमल-पत्र पर पाया है, सुंदर देखकर यह मेरे मन भा गया।

चंदन साहू वचन ऊदा प्रति

॥ चौपाई ॥

कह चंदन तैं मूरख नारी। वेगि जाहु दै बालक डारी॥
जाति कुटुम्ब हंसिहैं सब लोगा। हंसत लोग उपजै तन सोगा॥

चंदन साहू ने कहा कि तू मूर्ख स्त्री है, शीघ्र जाओ और इस बालक को वहीं डाल दो। इस बालक को देखकर हमारी जाति-कुटुंब के सब लोग हंसेंगे, लोगों के हंसने पर हमारे भीतर शोक-संताप उत्पन्न होगा।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

ऊदा त्रास पुरुष कर माना। चंदन साहु जबै रिसियाना॥

सद्गुरु कबीर साहेब धर्मदास से कहते हैं कि जब चंदन साहू क्रोधित हुआ, तो ऊदा ने अपने पति का बहुत डर माना और वह मौन हो गई।

चंदन साहू वचन दासी प्रति

॥ चौपाई ॥

बालक चेरी लेहु उठाई। लै बालक जल देहु खसाई॥

तब चंदन साहू ने अपनी दासी से कहा कि इस बालक को उठा लो और इसे ले जाकर तालाब के जल में डाल दो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चलि चेरी बालक कहं लीन्हा। जल महं डारन ताहि चित दीन्हा॥
चलि भइ मोहि पवांरन जबहीं। अंतरधान भयो मैं तबहीं॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि उस बालक को लेकर दासी चल दी। उसने बालक को जल में डालने का चित्त बनाया। परंतु मुझ बालक-रूप को जब वह जल में डालने गई, तब उस समय मैं उसके हाथों से अंतर्धान (गुप्त) हो गया।

॥ चौपाई ॥

भयउ गुप्त तेहि कर से भाई। रुदन करे बहुतहि बिलखाई॥
बिकल होय मन ढूंढत डोलै। मुग्ध ज्ञान कछु मुख नहिं बोलै॥

हे भाई! मैं उसके हाथ से गुप्त हो गया, तो वह बहुत बिलख-बिलखकर रोने लगी। वह मन से व्याकुल हुई, मुझ-बालक को ढूंढ़ती हुई डोलती थी। ऐसा होने के ज्ञान से वह मुग्ध थी, परंतु मुंह से कुछ बोलती नहीं थी।

श्वपच सुदर्शन के माता-पिता तीसरे जन्म में नीरू-नीमा हुए

॥ चौपाई ॥

यहि विधि बहुत दिवस चलि गयऊ। तजि तन बहुरि तिन पयऊ॥
मानुष तन जुलहा कुल दीन्हा। दोउ संयोग बहुरि विधि कीन्हा॥

इस प्रकार चंदन साहू और ऊदा के बहुत दिन बीत गए। उन दोनों ने शरीर छोड़ा और फिर उन दोनों ने मनुष्य-जन्म पाया। उन दोनों को जुलाहा-कुल में मनुष्य-शरीर मिला और फिर विधाता ने उन दोनों का संयोग किया, अर्थात उन्हें फिर से मिला दिया।

सद्‌गुरु कबीर प्राकट्य

॥ चौपाई ॥

काशी नगर रहे पुनि सोई। नीरू नाम जुलाहा होई॥
नारि गवन लावे मग सोई। जेठ मास बरसाइत होई॥

(फिर चंदन साहू का नाम नीरू तथा उसकी पत्नी ऊदा का नाम नीमा हुआ) वह नीरू नाम का जुलाहा काशी में रहता था। एक समय ज्येष्ठ मास, शुक्ल-पक्ष एवं बरसाइत पूर्णिमा तिथि थी, वह अपनी पत्नी नीमा को उसी मार्ग से गवना लाया।

॥ चौपाई ॥

नारि लिवाय आय मग माहीं। जल अचवन गइ बनिता ताहीं॥
ताल माहिं पुरइन पनवारा। शिशु होय मैं तहं पगु धारा॥
तहां जस बालकै रहुं पौढ़ाई। करौं कुतूहल बाल स्वभाई॥

नीरू अपनी पत्नी नीमा को लिवाकर मार्ग में आ रहा था, तो ऐसा हुआ कि उसकी पत्नी को जल पीने की इच्छा हुई। उनके मार्ग के समीप काशी का लहरतारा तालाब था। मैं वहां शिशु-रूप धारण कर, कमल-पत्र पर आ गया, अर्थात प्रकट हुआ। वहां पर जैसे—कोई बालक लेटाया हुआ रहा हो, वैसे मैं बाल-स्वभाव की क्रीड़ा एवं मनोविनोद करने लगा।

***विशेष**—बरसाइत को वट सावित्री का अपभ्रंश-रूप कहा जाता है, जो ज्येष्ठा शुक्ल पूर्णमासी को होता है और उसे अत्यंत श्रेष्ठ माना जाता है। बरसाइत के दिन कबीर साहेब नीरू-नीमा को प्राप्त हुए, अतएव कबीर पंथियों में उसकी अत्यधिक मानता है, उस दिन को वे महोत्सव के रूप में मानते हैं। सद्‌गुरु कबीर साहेब धर्मदास को बरसाइत पूर्णिमा का माहात्म्य समझाते हुए कहते हैं—*

बरसाइत तिथि मम अहिपावन। कर्म भर्म भवरोग नशावन॥
पूनों बारह मासमों आवे। ब्रत करे हंसा घर जावे॥

वर्ष दिनमों बरसाइत होई। ता दिन ब्रत करें सब कोई॥

भावार्थ—*मेरी बरसाइत पूर्णिमा-तिथि पवित्र है। वह पाप कर्म, भ्रम-अज्ञान एवं संसार के दुख-रोगों का नाश करने वाली है। पूर्णिमा तो वर्ष के बारहों महीनों में आती है, उसका विधिपूर्वक व्रत करने वाला सद्‌गुरु का हंस-जीव अपने घर-सत्यलोक जाता है। परंतु ज्येष्ठ मास की बरसाइत पूर्णिमा तो वर्ष में एक दिन ज्येष्ठ मास में होती है, उस दिन हर किसी को नियमानुसार व्रत करना चाहिए।*

सद्‌गुरु कबीर साहेब का परम प्राकट्य काशी (उ.प्र.) में लहरतारा तालाब पर बरसाइत पूर्णिमा को हुआ। उससे संबद्ध निम्नलिखित पंक्तियां प्रसिद्ध हैं—

चौदह सौ पचपन साल गये, चंद्रवार इक ठाठ ठये॥
ज्येष्ठ सुदी बरसाइत को, पूरनमासी प्रकट भये॥

भावार्थ—*विक्रम संवत् चौदह सौ पचपन के साल, दिन सोमवार को एक अपार हर्षोल्लास हुआ, तब ज्येष्ठ शुक्ल बरसाइत पूर्णमासी को सद्‌गुरु कबीर साहेब प्रकट हुए।*

कबीर मंशूर में वर्णित कथानुसार वि.स. चौदह सौ पचपन, ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा, सोमवार के दिन आकाश मण्डल से सत्यपुरुष का तेज काशी (उ.प्र.) के लहरतारा तालाब[1] में उतरा। उस समय अंधेरा छाया हुआ था, बिजली चमक रही थी और वृष्टि हो रही थी। उस तेज से वह तालाब ज्योतिर्मय होकर जगमगाने लगा तथा सब दिशाएं जगमगाहट से पूर्ण हो गईं। उस अद्‌भुत दृश्य को वहां पर बैठे श्री अष्टानंद जी ने देखा। और उन्होंने उसका समस्त विवरण अपने गुरु स्वामी रामानंद जी को आकर सुनाया। उधर, फिर वह तेज मनुष्य के बालक-रूप में परिवर्तित हो गया और जल के ऊपर खिले कमल-पुष्पों पर हाथ-पांव फेंकने लगा। वह बालक अलौकिक शोभा लिए अत्यंत सुंदर दिखलाई देता था, वह बालक कबीर था।

॥ चौपाई ॥

नीमा दृष्टि परी तिहि ठाऊ। देखत दरश भयो अति चाऊ॥
जिमि रवि दरश पदुम बिगसाना। पाय गयो धन रंक समाना॥

नीमा जल पीने के लिए उस तालाब पर गई और उसकी दृष्टि उस स्थान पर पड़ी, जहां कमल-पत्र पर वह शिशु कुतूहल कर रहा था। उस बालक के दर्शन होते ही उसके मन में अत्यंत चाव (लाड़) हो गया। जैसे सूर्य के दर्शन से कमल-

---

1. सद्‌गुरु कबीर के उस प्राकट्य स्थल पर, उस घटना के लगभग 600 वर्ष बाद, धर्मदास-प्रणाली के नाद वंशीय परम प्रतापी कबीरपंथाचार्य (खरसिया-काशी) पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब ने अथक परिश्रम से 'विशाल कबीर प्राकट्य स्मारक' बनवाया, जो कि आज सद्‌गुरु कबीर का अन्यतम दर्शनीय स्थान है।

पुष्प विकसित होता है, वैसे ही उसका मन प्रफुल्लित हो गया। उसकी स्थिति ऐसे हो गई जैसे कोई कंगाल धन पा गया हो।

॥ चौपाई ॥

धाय गही कर लिया उठायी। बालक लै नीरू पहं आयी॥
जुलहा रोष कीन्ह तेहि वारी। बेगि देहु तुम बालक डारी॥

नीमा ने दौड़कर उस बालक को उठा लिया और उसे लेकर अपने पति नीरू के पास आई। उस समय नीरू जुलाहे ने उस पर बहुत क्रोध किया और कहा कि तुम शीघ्र इस बालक को वहीं डाल दो।

सद्‌गुरु कबीर वचन नीमा प्रति

॥ चौपाई ॥

हर्ष गुनावन नारी लाई। तब हम तासो वचन सुनाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि नीमा मुझ बालक-रूप को पाकर हर्षोल्लास में थी, परंतु नीरू के क्रोध करने पर सोच-विचार में पड़ गई, तब मैंने उसे अपना वचन सुनाया।

॥ छंद ॥

सुनहु वचन हमार नीमा, तोहि कहु समुझाय के।
प्रीति पिछली कारणे तुहि, दरस दीन्हों आय के॥
आपने गृह मोहि लै चलु, चीन्हि के जो गुरु करो।
देऊं नाम दृढ़ाय तोकहं, फंद यम के ना परो॥ 72॥

हे नीमा! मेरा वचन सुनो, मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं। पिछली प्रीत के कारण मैंने आकर तुम्हें दर्शन दिया है (क्योंकि तुम दोनों पिछले चौथे जन्म में संत सुदर्शन के माता-पिता थे। उसकी प्रार्थना पर मैंने उसे वचन दिया था कि मैं तुम्हारे माता-पिता का उद्धार अवश्य करूंगा, इसीलिए मैं तुम्हारे पास आया)। तुम मुझे अपने घर ले चलो और यदि तुम मुझे पहचान-समझकर अपना गुरु करो, तो मैं तुमको सत्यपुरुष परमात्मा के सत्यनाम का उपदेश दृढ़ा दूं, अर्थात उसके ध्यान-सुमिरन से तुम्हें परिपक्व कर दूं, जिससे तुम काल-निरंजन के फंदे में न पड़ो।

॥ सोरठा ॥

सुनत वचन अस नारि, नीरू त्रास न राखेऊ।
लै गइ गेह मंझारि, काशि नगर तब पहुंचेऊ॥ 76॥

मेरे ऐसे वचन सुनकर नीमा ने नीरू का भय नहीं माना। वह मुझे अपने घर में ले गई और इस प्रकार तब मैं काशी नगर में पहुंचा।

॥ चौपाई ॥

नारी न मान त्रास तेहि केरा। रंक धनद सम लै चलि डेरा॥
जोलहा देखि नारि लौलीना। लेइ चलो अस आयसु दीना॥

फिर नीमा ने किसी लोक-लाज आदि का भी भय नहीं माना और वह मुझे अपने घर इस प्रकार लेकर चली, जैसे कोई कंगाल धन लेकर जाता है। नीरू जुलाहे ने उसको मुझमें इतना लवलीन देखकर, आज्ञा दी कि इसे घर ले चलो।

॥ चौपाई ॥

दिवस अनेक रहे तेहि ठांई। कैसेहु तेहि परतीत न आई॥
बहुत दिवस तेहि भवन रहावा। बालक जान न शब्द समावा॥

उस स्थान पर मैं बहुत दिन रहा, उनके घर में रहा, परंतु किसी भी प्रकार उनको मेरा विश्वास नहीं आया। वे मुझे अपना बालक समझते रहे, अत: उनके भीतर मेरा शब्द-उपदेश नहीं समाया।

श्वपच सुदर्शन के माता-पिता का चौथे जन्म में मथुरा में प्रकट होकर सत्यलोक जाना

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

बिन परतीत काज नहिं होई। दृढ़ कै गहहु परतीत बिलोई॥
ताहि देह पुनि मुहिं न चीन्हा। जानि पुत्र मुहिं संग न कीन्हा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि बिना विश्वास जीवन-मुक्ति का कार्य नहीं होता, अत: निर्णय करके गुरु-वचनों पर दृढ़तापूर्वक विश्वास करना चाहिए। फिर नीरू-नीमा ने उस देह में मुझे नहीं पहचाना, मुझे अपना पुत्र जानकर मेरा सत्संग नहीं किया।

॥ चौपाई ॥

तजि सो देह बहुरि जो भाई। देह धरी सो देहुं चिन्हाई॥
जुलहा की तब अवधि सिरानी। मथुरा देह धरी तिन आनी॥

हे भाई! फिर वह देह त्याग कर, जो देह उन्होंने पाई, वह मैं समझाता हूं। उनकी जुलाहा-जाति में जन्म की अवधि पूरी हुई और फिर उन्होंने मथुरा में आकर मनुष्य देह धारण की, अर्थात दोनों पति-पत्नी वहां आकर जन्मे।

॥ चौपाई ॥

हम तहं जाय दरश तिन दीन्हा। शब्द हमार मान सों लीन्हा॥
रतना भक्ति करे चितलाई। नारि पुरुष परवाना पाई॥

मैंने वहां मथुरा में जाकर उनको दर्शन दिया। उन्होंने मेरे शब्दोपदेश को मान लिया। वह जो आकर रतना नाम से हुई थी, चित्त लगाकर भक्ति करती थी। स्त्री-पुरुष उन दोनों ने विधि-विधान से मेरे सार-शब्दोपदेश का परवाना पाया।

॥ चौपाई ॥

ताकहं दीन्हेउ लोक निवासा। अंकूरी पठये निज दासा॥
पुरुष चरण भेटे उर लाई। शोभा देह हंस कर पाई॥

वे शीघ्र चेतने वाले समर्पित दास-भाव में थे, अतः उनको सत्यलोक में निवास दिया। उन्होंने सत्यपुरुष के चरण पकड़कर हृदय से लगाया और हंस की देह पाकर सुशोभित हुए।

॥ चौपाई ॥

देखत हंस पुरुष हरषाने। सुकृति अंश कही मन माने॥
बहुत दिवस लगि लोक रहाये। तब लगि काल जीव संताये॥

उन हंसों को देखकर सत्यपुरुष हर्षित हुए और उनको सुकृत-अंश कहकर माना। सत्यलोक में रहते हुए मुझे फिर बहुत दिन रहते हो गए, तब तक काल-निरंजन ने बहुत जीव सताए।

॥ चौपाई ॥

जीवन दुख अतिशय भयो भाई। तबही पुरुष सुकृत हंकराई॥
आज्ञा कीन्हा जाहु संसारा। काल अपरबल जीव दुखारा॥

हे भाई! जब काल-निरंजन से जीवों को अत्यंत दुख होने लगा, अर्थात वह उन्हें अत्यधिक रूप से सताने-तड़पाने लगा, तब सत्यपुरुष ने सुकृत जी को हुंकार (पुकार) लगाई और आज्ञा की कि अब तुम संसार में जाओ, वहां असीम बलवान काल जीवों को बहुत दुख दे रहा है।

॥ चौपाई ॥

लोक संदेशा ताहि सुनाओ। देइ नाम जीवन मुक्ताओ॥
आज्ञा सुनत सुकृत हरषाये। तुरतहि लोक पयाना आये॥

जीवो को सत्यलोक का संदेश सुनाओ और उन्हें सत्यनाम-ज्ञान देकर काल-जाल से मुक्त कराओ। सत्यपुरुष की आज्ञा सुनकर सुकृत जी हर्षित हुए और वे तुरंत सत्यलोक से प्रस्थान कर भवसागर में आए।

॥ चौपाई ॥

सुकृत देखि काल हरषाई। इन कहं तो हम लेब फंसाई॥
करि उपाय बहुत तब काला। सुकृत फंसाय जाल महं डाला॥

अबकी बार सुकृत को संसार में आया हुआ देखकर, काल-निरंजन बहुत हर्षित हुआ कि इनको तो मैं अपने फंदे में फंसा लूंगा। तब काल ने बहुत उपाय करके सुकृत जी को अपने जाल में डाल लिया।

॥ चौपाई ॥

बहुत दिवस गयो जब बीता। एकहु जीव न कालहिं जीता॥
जीव पुकार सतलोक सुनाये। तबहीं पुरुष मोकहं हंकराये॥

इस प्रकार जब यूं ही बहुत दिन बीत गए और काल ने एक भी जीव को जीवित सुरक्षित नहीं छोड़ा, अर्थात सबको सताता, मारता तथा खाता रहा। तब सब जीवों ने सत्यलोक में सत्यपुरुष को अपनी पुकार (प्रार्थना) सुनाई, तब सत्यपुरुष ने मुझे हांक लगाई।

कबीर साहेब (ज्ञानी जी) का धर्मदास जी को चेताने के लिए लोक से पृथ्वी पर आना

सत्यपुरुष वचन कबीर साहेब (ज्ञानी जी) प्रति

॥ चौपाई ॥

पुरुष अवाज उठी तिहि बारा। ज्ञानी वेगि जाहु संसारा॥
जीवन काज अंश पठवाई। सुकृत अंश जग प्रगटे जाई॥

उस समय सत्यपुरुष की गंभीर आवाज हुई कि हे ज्ञानी जी! शीघ्र संसार में जाओ। जीवों के उद्धार-निमित्त सुकृत-अंश को भेजा था, वह संसार में जाकर प्रकट हो गया।

॥ चौपाई ॥

दीन्ह आज्ञा तेहि को भाई। शब्द भेद वाही समझाई॥
लावहु जीवन नाम अधारा। जीवन खेइ उतारो पारा॥

सार-शब्द का भेद समझाकर, हे भाई! हमने उसे संसार में जाने की आज्ञा दी कि जीवों को सत्यनाम के आधार पर लाओ और उन्हें खेकर भवसागर से पार उतारो।

॥ चौपाई ॥

सुनत आज्ञा वहि कीन पयाना। बहुरि न आए देश अमाना॥
सुकृत भवसागर चलि गयऊ। काल जाल ते सुधि बिसरेऊ॥

हमारी आज्ञा सुनकर उसने प्रस्थान किया, परंतु फिर वह अपने देश-अमरलोक वापिस नहीं आया। इस प्रकार वह सुकृत-अंश भवसागर चला गया और काल-जाल में फंसकर वह होश (स्मृति-चेतना) भूल गया, अर्थात अपने उद्देश्य को भूल गया।

॥ चौपाई ॥

तिन कहं जाय चितावहु ज्ञानी। जेहि ते पंथ चले निरवानी॥

वंश ब्यालिस अंस हमारा। सुकृत गृह लैहैं औतारा॥
ज्ञानी वेगि जाहु तुम अंसा। अब सुकृत अंस कर मेटहु फंसा॥

हे ज्ञानी जी! तुम जाकर उनको अचेत-निद्रा से चेताओ (जगाओ), जिससे मुक्ति-पंथ चले। वंश बयालीस हमारा अंश है, जो सुकृत के घर अवतार लेगा (जन्मेगा)। ज्ञानी जी! तुम शीघ्र सुकृत-अंश के पास जाओ और उसकी काल-फांस को मिटा दो, अर्थात वह जो काल की भक्ति एवं मूर्ति-पूजा आदि के भ्रम में पड़ गया, उसे छुड़ाकर सत्य-पथ पर लाओ।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चलेहु हम तव सीस नवाई। धर्मदास अब तुम लगआई॥
धर्मदास तुम नीरू औतारा। आमिन नीम प्रगट विचारा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तब मैं (ज्ञानी जी) सत्यपुरुष को शीष झुकाकर-प्रणाम कर, अब तुम्हारे पास आया हूं। हे धर्मदास! तुम विचारो और समझो कि तुम जैसे नीरू से होकर जन्मे हो और तुम्हारी स्त्री आमिन नीमा से होकर जन्मी है, अर्थात उनके उद्धार निमित्त मैं जैसे उनके पास गया था, वैसे ही तुम्हारे पास आया हूं और जैसा माता-पिता का स्नेह-लाड़ मैंने उनसे पाया था, वैसा ही मेरा अब तुम्हारे प्रति है।

॥ चौपाई ॥

तुम तो आहू प्रिय मम अंसा। जा कारन हम कीन्हा बहु संसा॥
पुरुषहि आज्ञा तुम्हरे ढिग आये। पिछली हेतु पुनि याद कराए॥

तुम तो मेरे सर्वाधिक प्रिय अंश हो, जिस कारण मैंने तुम्हारे हित निमित्त बहुत सोच-विचार किया। सत्यपुरुष की आज्ञा से तुम्हारे पास आया और तुम्हें पिछली प्रीत याद कराई।

॥ चौपाई ॥

यहि संयोग हम दर्शन दीन्हा। धर्मनि अबकी तुम मोहि चीन्हा॥
पुरुष अवाज कहूं तुम पासा। चीन्हेहु शब्द गहो विश्वासा॥

इसी संयोग से मैंने तुम्हें दर्शन दिया। हे धर्मदास! अबकी बार तुमने मुझे पहचाना। अब मैं तुम्हें सत्यपुरुष की वाणी कहूंगा, तुम मेरे शब्द उपदेश को परखो एवं समझो तथा विश्वासपूर्वक ग्रहण करो।

धर्मदास की प्रीत सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

धाय परे चरणन धर्मदासा। नैन बारि भर प्रगट प्रकासा॥
धरहि न धीरज बहुत संतोषा। तुम साहिब मेटहु जिव धोखा॥

सद्गुरु कबीर साहेब के वचन सुनकर, धर्मदास जी दौड़कर उनके चरणों में गिर पड़े। उनकी आंखों में जल भर आया तथा उनके भीतर ज्ञान-प्रकाश प्रकट हुआ। उस समय सुखानंद में उन्हें बहुत धैर्य एवं संतोष नहीं धारण होता था। वे अत्यंत विनीत-भाव से बोले कि हे साहिब! आप मेरे जीव (आत्मा) के अज्ञान रूपी धोखे को मेटो।

॥ चौपाई ॥

धरहि न धीरज बहु प्रबोधे। बिछुरि जन जिमि मिल्यो अबोधे॥
युग पग गहे सीस भुई लाए। निपट अधीर न उठत उठाए॥

धर्मदास जी प्रेम से विभोर हो गए, बहुत समझाने पर भी वे धैर्य नहीं धरते थे। उनकी दशा ऐसी थी, जैसे अनजाने (अज्ञान-स्थिति) में ही अपना कोई बिछुड़ा हुआ जन मिल गया हो और उसको पाकर प्रेम एवं खुशी में हृदय धैर्य न धरता हो। उन्होंने सद्गुरु कबीर साहेब के दोनों चरणों को स्पर्श तथा अपने शीश को भूमि पर उनके चरणों में रख दिया। उस समय वे इतने अधीर हो गए कि उठाने से उठते नहीं थे।

॥ चौपाई ॥

बिलखत बदन बचन नहीं बोले। सुरति चरण ते नेक न डोले॥
निरखत बदन बहुरि पद गहहीं। गदगद हृदय गिरा नहिं कहहीं॥
बिलखत बदन स्वास नहिं डोले। उनमुनि दशा पलक नहिं खोले॥

धर्मदास जी के रोते-बिलखते शरीर होने से कुछ शब्द नहीं बोला जाता था और सद्गुरु कबीर के चरणों से उनका चित्त तनिक भी नहीं डोलता था। वे सद्गुरु के स्वरूप का दर्शन पाकर फिर-फिर उनके चरणों को पकड़ते थे, उनके गद्गद हृदय से वाणी नहीं निकलती थी। यहां तक कि उनके बिलखते बदन से मानो श्वास भी नहीं डोलती-चलती थी, उनकी दशा उन्मुनि की हो गई, अर्थात साधना-समाधि के अंतर्गत परमात्म-साक्षात्कार की हो गई, जिससे वे अपनी आंखों की पलक नहीं खोलते थे।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

बहुरि चरण गहि रोवहिं भारी। धन्य प्रभु मोहि तारनहारी॥
धरि धीरज तब बोले सम्हारी। मोकहं प्रभु तारन पग धारी॥

सद्गुरु कबीर साहेब के चरण पकड़कर धर्मदास फिर जोर से रोने लगते हैं और रोते हुए कहते हैं कि मुझे भवसागर से तारने वाले हे प्रभु! आप धन्य हैं। तब धीरज कर संभलकर बोले कि हे प्रभु! मुझे तारने के लिए, अर्थात मेरे उद्धार के लिए आप यह तन धारण कर संसार में आए हो।

॥ चौपाई ॥

अब प्रभु दया करहु यहि मोही। एकौ पल ना बिसरौं तोहि॥
निशि दिन रहौं चरण तुव साथा। यह बर दीजै करहु सनाथा॥

हे प्रभु! अब मुझ पर यह दया करो कि मैं एक पल भी आपको भूल न जाऊं। आप मुझे यह वर देकर सनाथ एवं सबल करो कि मैं रात-दिन आपके साथ आपके चरण-कमलों में रहूं।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास निहसंशय रहहू। प्रेम प्रतीति नाम दिढ़ गहहू॥
चीन्हेउ मोहि तोर भ्रम भागा। रहहु सदा तुम दृढ़ अनुरागा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! अब तुम बिना संशय, अर्थात निश्चिंत रहो और प्रेम एवं विश्वास के साथ मुझसे सत्यपुरुष का सत्यनाम दृढ़ता से ग्रहण करो। मुझे सही रूप से पहचानते ही तुम्हारा भ्रम- अज्ञान भाग गया, अब तुम सदैव सुदृढ़ भक्ति एवं प्रेम में लीन रहो।

॥ चौपाई ॥

मन बच कर्म जाहि जो गहई। सो तेहि तज अंत कस रहई॥
आपन चाल बिना दुख पावे। मिथ्या दोष गुरु कहं लावे॥

मन, वचन एवं कर्म से जो सत्यपुरुष का सत्यनाम ग्रहण करता है, वही सच्चा साधक पार उतरता है, अर्थात उसी का उद्धार होता है[1]। परंतु उसे छोड़कर कोई सुखी कैसे रह सकता है? अपनी सत्य-चाल, अर्थात उत्तम रहनि-गहनि के बिना जीव दुख पाता है और अज्ञानवश गुरु को मिथ्या-दोष लगाता है।

॥ चौपाई ॥

पंथ सुपंथ गुरु समझावे। शिष्य अचेतन हृदय समावे॥
तुम तो अंश हमारे आहू। बहुतक जीव लोक ले जाहू॥

पंथ एवं सत्य-पंथ का यथार्थ ज्ञान गुरु ही समझाते हैं, शिष्य उसे अपने अचेतन (भ्रमित) हृदय में समाता है, जिससे वह सचेत हो जाता है। तुम तो मेरे अंश हो, बहुत-से जीवों को सत्यलोक ले जाओगे।

॥ चौपाई ॥

चार मोहि तुम अधिक पियारे। किहि कारण तुम सोच विचारे॥
हम तुम सों कछु अंतर नाहीं। परख शब्द देखो हिय माहीं॥

---

1. अथवा मन-वचन-कर्म से जो जिसे ग्रहण करता है, वह उसे छोड़कर दूसरे स्थान कैसे रह सकता है?

तुम चारों गुरु-रूप मुझे बहुत प्यारे हो। तुम किस कारण सोच-विचार में पड़े हो? मुझमें और तुममें कुछ भी अंतर नहीं है, अपने हृदय में मेरे शब्द-वचन को परख एवं समझकर देखो।

॥ चौपाई ॥

मन बच कर्म मोहि लौ लावे। हृदये दुतिया भाव न आवे॥
तुम्हरे घट हम वासा कीन्हा। निश्चय हम आपन कर लीन्हा॥

मन-वचन-कर्म से मुझमें लगन लगाओ, मेरे अतिरिक्त हृदय में दूसरा भाव नहीं आना चाहिए। मैंने तो तुम्हारे हृदय में वास किया है और निश्चय रूप से तुम्हें अपना कर लिया है।

॥ छंद ॥

आपनो कर लीन्ह धर्मनि, रहो निःसंशय हिये।
करहु जीव उबार दृढ़ ह्वै, नाम अविचल तुहि दिये॥
मुक्ति कारण शब्द धारण, पुरुष सुमिरण सार हो।
सुरति बीरा अंक धीरा, जीवि का निस्तार हो॥ 73॥

हे धर्मदास! मैंने तुम्हें अपना कर लिया है, अब तुम अपने हृदय से संशय-रहित (निश्चिंत) रहो। मैंने तुमको सत्यपुरुष का अटल नाम-निज नाम दिया है, उसमें दृढ़ (परिपक्व) होकर जीवों का उद्धार करो। मुक्ति का जो कारण है, वह सद्गुरु के शब्द-उपदेश को धारण करना और सत्यपुरुष ध्यान-सुमिरन सार है। सुरति (चित्त) लगाकर सद्गुरु से पान-बीड़ा एवं सत्यपुरुष का नाम (अंक-अक्षर) ग्रहण करने से जीव का कल्याण होता है।

॥ सोरठा ॥

तुम तो हौ धर्मदास, जम्बुदीप कडिहार जिव।
पावे लोक निवास, तुहि समेत सुमिरैं मुझे॥ 77॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम तो जंबूदीप (भारतखंड) के जीवों के कडिहार हो, अर्थात जैसे केवट नाव खेकर पार उतारता है, वैसे तुम जीवों के कर्णधार भवसागर से पार लगाने वाले हो। तुमसे जीव सत्यलोक में निवास करेंगे और तुम्हारे समेत मुझे सुमिरेंगे।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धन सतगुरु धन तुम्हरी वानी। मुहिं अपनाय दीन्ह गनि ज्ञानी॥
मोहिं आय तुम लीन्ह जगाई। धन्य भाग्य हम दर्शन पाई॥

धर्मदास कहते हैं कि हे सद्गुरु! आप धन्य हैं तथा आपकी अमृत-वाणी

धन्य है। आपने आकर मुझे अपनाया और ज्ञान दिया। आपने आकर अज्ञान-निद्रा से मुझे जगा लिया। मेरे धन्य भाग्य हैं कि मैंने आपका दर्शन पाया।

॥ चौपाई ॥

धन साहिब मुहिं शाप न कीन्हा। मम सिर चरण सरोरुह दीन्हा॥
मैं आपन दिन शुभ करि जाना। तुम्हरे दरश मोक्ष परमाना॥

हे साहिब! आप धन्य हैं कि आपने मुझको अभिशापित नहीं किया, अर्थात मुझ पर आक्रोश नहीं किया, डांटा-फटकारा नहीं, अपितु मेरे सिर को अपने चरण-कमलों में स्थान दिया, मेरा मान-भाव रखा। मैं अपने दिन एवं समय को शुभ समझता हूं, जो मोक्ष का प्रमाण प्रत्यक्ष आपका दर्शन पाया।

॥ चौपाई ॥

अब अस दया करहु दुख भंजन। कबहुं मोहि न धरे निरंजन॥
काल जाल जौनी विधि छूटे। यम बंधन जौनी विधि टूटे॥
सोई उपाय प्रभु अब कीजै। सार शब्द बताय मुहिं दीजै॥

सर्व दुखों को मिटाने वाले हे स्वामी! अब मुझ पर ऐसी दया करो कि निरंजन कभी भी मुझ पर अपना हाथ न धरे अथवा मेरी ओर दृष्टि न करे। जिस उपाय से मैं काल-जाल से छूटूं तथा जिस भी उपाय से मेरे काल के बंधन टूटें, हे प्रभु! अब वही उपाय कीजिए और कल्याणमय सार-शब्द मुझे बता दीजिए।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुम सुकृत अंशा। लेइ पान अब मेटहु संशा॥
धर्मदास आपन करि लेऊं। चौका करि परवाना देऊं॥

सद्‌गुरु कबीर प्रसन्न-मुद्रा में कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम मेरे सुकृत-अंश हो, अब मुझसे पान-प्रसाद लेकर सब संशय मिटा दो। हे धर्मदास! तुम मेरे हो, तो भी प्रत्यक्ष में विधि-विधान से मैं तुम्हें अपना कर लेता हूं और चौका-आरती कर तुम्हें सार-शब्द-स्वरूप परवाना देता हूं।

॥ चौपाई ॥

तिनका तुड़ाय लेहु परवाना। काल दशा छूटे अभिमाना॥
शालिग्राम की छाड़हु आसा। गहि सत शब्द होहु तुम दासा॥

अब तुम काल-जाल से छूटने का तिनका तुड़वाकर मुझसे सत्यज्ञान का परवाना (प्रमाण) लो, जिससे काल का सब अभिमान छूट जाएगा। शालिग्राम एवं अन्य की आशा छोड़कर, मेरे सत्य-शब्द को ग्रहण कर आदिपुरुष परमात्मा के दास हो जाओ।

॥ चौपाई ॥

दस औतार ईश्वरी माया। यह सब देखु काल की छाया॥
तुम जग जीव चितावन आए। काल फंद तुम आय फसाए॥

संसार में जो दस अवतार[1] हुए हैं, सब सगुण ईश्वर की माया है और ये सब काल की छाया के अंतर्गत आते हैं। तुम तो संसार के जीवों को चेताने आए हो, परंतु तुम्हें आते ही काल ने अपने फंदे में फंसा लिया।

॥ चौपाई ॥

अबहूं चेत करो धर्मदासा। पुरुषहिं शब्द करो परकासा॥
ले परवाना जीव चिताओ। काल जाल ते हंस मुक्ताओ॥
यहि कारज तुम जग में आए। अब न करहु दोसर मन भाए॥

हे धर्मदास! अब भी तुम ज्ञान से चेत जाओ और सत्यपुरुष के सार-शब्द का प्रकाश करो। मुझसे सत्यज्ञान का परवाना लेकर जीवों को चेताओं तथा काल-जाल से हंस-जीवों को मुक्त कराओ। स्वयं को पहचानो, इसी कार्य के लिए जग में आए हो, अब दूसरा मनभाया कार्य मत करना।

॥ छंद ॥

चतुर्भुज बंकेज सहतेज, और चौथे तुम अहो।
चार गुरु कडिहार जग के, वचन यह निश्चय गहौ॥
यही चार अंश संसार में, जीव काज प्रगटाइया।
स्वसंवेद सो इन संग दियो, जेहि सुनि काल भगाइया॥ 74॥

चतुर्भुज, बंकेजी, सहतेजी और चौथे तुम हो। ये चार गुरु संसार के कर्णधार, अर्थात उद्धारकर्ता हैं, निश्चयपूर्वक तुम मेरा यह वचन ग्रहण करो। जीवों के उद्धार निमित्त ये सत्यपुरुष के अंश क्रमशः अक्षय अंश, जोहंग अंश, हिम्मर अंश तथा सुकृत अंश संसार में प्रकटाए हैं। इनके साथ स्वसंवेद-वाणी क्रमशः टकसारवाणी, मूल ज्ञानवाणी, बीजक ज्ञानवाणी और कोटवाणी दी है, जिसे सुनकर काल-निरंजन भाग जाएगा।

॥ सोरठा ॥

चारों में धर्मदास, जम्बुदीप के गुरु सहि।
ब्यालिस वंश विलास, तरैं जीव तेहि शरण गहि॥ 78॥

उपर्युक्त इन चारों गुरुओं में हे धर्मदास! तुम जंबूद्वीप (भारतखंड) के सच्चे गुरु हो। तुम्हारे बयालीस वंश ज्ञान-सम्राट होकर सुख-आनंद करेंगे और उनकी शरण ग्रहण कर जीव भवसागर से तरेंगे।

---

1. मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहोऽथ वामनः, रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्की च ते दश॥ अर्थात मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, राम, परशुराम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि ये दस अवतार हैं।

सद्गुरु कबीर साहेब का चौका-आरती करके धर्मदास को परवाना देना

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास पद गहि अनुरागा। हो प्रभु मोहि कीन्ह सुभागा॥
हे प्रभु नहिं रसना प्रभुताई। अमित रसन गुण बरनि न जाई॥

धर्मदास ने अनन्य प्रेम से सद्गुरु कबीर साहेब के चरण पकड़ लिए और बोले, "हे प्रभु! आपने मुझे महान सौभाग्यशाली किया। हे प्रभु! आपकी विशिष्ट महिमा के लिए मेरे पास वाणी नहीं है, आपके अनंत गुणों का वर्णन मेरी वाणी से किया नहीं जाता।"

॥ चौपाई ॥

महिमा अमित अहै तुव स्वामी। केहि विधि बरनों अंतरयामी॥
मैं सब विधि अयोग्य अविचारी। मुझ अधमहिं तुम लीन उबारी॥

हे स्वामी! आपकी महिमा असीम है, मेरे भीतर की जानने वाले हे अंतर्यामी! किस विधि से आपकी महिमा का वर्णन करूं? मैं तो सब प्रकार से अयोग्य एवं विचारहीन हूं, मुझ गिरे हुए को आपने उबार लिया।

॥ चौपाई ॥

अब चौका भेद कहो मुहि स्वामी। काहि कहहु तिनका सुखधामी॥
जो तुम कहो करौं मैं सोई। तामहं फेर न परि हैं कोई॥

हे स्वामी! अब मुझे चौका का रहस्य समझाओ। हे परम सुख देने वाले सुख धाम! 'तिनका' किसे कहते हैं अथवा इसका क्या अभिप्राय है? जो आप कहोगे, मैं वहीं करूंगा, उसमें कोई फेर (अंतर) नहीं पड़ेगा।

चौका-आरती का साज

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास सुनु आरति साजा। जाते भागि चले यमराजा॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! जिस चौका-आरती से काल-निरंजन भागा चला जाता है, उसका साज-सामान सुनो—

॥ चौपाई ॥

सात हाथ को बस्तर लाओ। श्वेत चंदोवा छत्र तनाओ॥
घर आगन सब शुद्ध कराओ। चौका करि चंदन छिड़काओ॥

''सात हाथ का श्वेत वस्त्र लाओ और चंदोवा-छत्र तनवाओ। लीप-पोतकर एवं झाड़-पोंछकर घर-आंगन सब शुद्ध करवाओ और वहां चौका के लिए चंदन छिड़काओ।''

॥ चौपाई ॥

तापर आटा चौक पुराओ। सवा सेर तंदुल लै आओ॥
स्वेत सिंहासन तहां बिछाई। नाना सुगंध धरु तहां लगाई॥

सवा सेर चावल लेकर आओ और उस पर चावल के आटे से चौक पुरवाओ। फिर वहां श्वेत-सिंहासन बिछा दो तथा वहां नाना प्रकार की सुगंध लगा दो।

॥ चौपाई ॥

स्वेत मिठाई स्वेतै पाना। पुंगीफल स्वेतहि परमाना॥
लौंग इलायची कपुर संवारो। मेवा अष्ट केश पनवारो॥

श्वेत-शुद्ध मिठाई, पान तथा सुपारी चौका के प्रमाणानुसार लाओ। लौंग, इलायची तथा कपूर आदि को संवार कर रखो और अष्टमेवा, केला एवं केले का पत्ता आदि सब सामान लाओ।

॥ चौपाई ॥

जिव पीछे नरियल लै आओ। यह सब साज सुआनि धराओ॥
जो कछु साहब आज्ञा कीन्हा। धर्मदास सब कछु धरि दीन्हा॥

जितने जीव चौका-आरती में आकर गुरुमुख होना चाहते हैं, प्रत्येक के पीछे एक नारियल ले आओ। यह सब सुंदर सामान लाकर रखवाओ। जो कुछ सद्गुरु कबीर साहब ने आज्ञा की, धर्मदास ने वह सब कुछ लाकर धर दिया।

विशेष—*परम श्रद्धालु संत-भक्तों एवं पाठकों की विशेष जानकारी के लिए, चौका-आरती में प्रयुक्त होने वाला सब साज-सामान यहां नीचे वर्णित किया जा रहा है, जो परम वंदनीय कबीरपंथाचार्य पं. श्री 1008 हजूर प्रकाशमणिनाम साहेब (कबीर धर्मस्थान, खरसिया) की शुभ प्रेरणा से रचित पुस्तिका 'चौका-चंद्रिका' में प्रकाशित है—*

सात हाथ श्वेत वस्त्र—चंदोवा (चांदनी) के लिए।
विस्तारी (सवा दो हाथ सम चौरस वस्त्र)—चौक पूरने के लिए।
गेहूं का आटा—मानिक बनाने के लिए।
चावल का आटा—चौक पूरने के लिए।
धोती-अंगोछा—नारियल एवं प्रसाद ढांकने के लिए।
लोटा—कलश के लिए।
झारी—अमीदल के लिए
थाल—आरती तथा प्रसाद रखने के लिए।

दूध—अमीदल के लिए।

घी—आरती के लिए।

तेल—कलश के लिए।

चावल—आरती और कलश के लिए।

कटोरी—चंदन तथा इत्र के लिए।

अष्ट मेवा—चिरौंजी, किशमिश, दाख, पिस्ता, आलूबुखारा, छुहारा, काजू, अखरोट और अंजीर।

नारियल, सुपारी खारिक, बादाम, केशर, लौंग, इलायची, गोल मिर्च, कपूर, इत्र, चंदन, अगरबत्ती, अबीर, गुलाल, मिश्री, बतासा, केले फल, पान (बिना कटे-फटे-सड़े), फूल माला तथा फूल, कपास, कदली पत्र (बिना कटे-फटे), तांबे के पैसे।

आम के पत्ते—कलश एवं तोरण के लिए।

कास की सींक या छीर नामक घास—खिरचा और तिनका के लिए।

कपास या अरहर आदि की लकड़ी—ज्योतिस्तंभ एवं बरतनी बनाने के लिए।

शिला—(सम चौरस पत्थर) नारियल मोरने के लिए।

आदि-आदि।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

बहुरि धर्मनि विनती अनुसारा। अब समरथ कहु मुक्ति विचारा॥
सबहिं वस्तु मैं आनेऊं सांई। जस तुम निज मुख भाखि सुनाई॥
सुनत वचन साहब हर्षाने। धन्य धर्मनि अब तुम मनमाने॥

धर्मदास फिर यथा-अनुसार विनती करते हैं कि हे समर्थ प्रभु! अब मुझे आप मुक्ति का उपदेश कहिए। हे स्वामी! मैं वे सब वस्तुएं ले आया हूं, जैसी आपने अपने श्रीमुख से मुझे कही थीं।

धर्मदास के विनम्र वचन सुनकर सद्गुरु कबीर साहेब बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि धर्मदास! तुम धन्य हो, अब तुमको मेरे मन ने पूर्णतः मान लिया।

॥ छंद ॥

चौका विधि ते पोति प्रभु, आसन बैठिया जाय हो।
लघु दीरघ जीव धर्मनि, सबहिं लीन्ह बुलाय हो॥
नारि पुरुष एक मति करि, लीन नरियल हाथ हो।
गुरु सन्मुख धरि भेंट कीन्हा, बहु विधि नाये माथ हो॥ 75॥

सद्गुरु कबीर साहेब विधिपूर्वक चौका पोतकर (पूरकर), अपने आसन पर जाकर बैठ गए। धर्मदास ने अपने घर के सब छोटे-बड़े जीवों को बुला लिया तथा साहेब को फूलमाला पहनाकर स्वागत किया। धर्मदास और उनकी पत्नी आमिन दोनों स्त्री-पुरुष ने एक बुद्धि होकर, नारियल हाथ में लिया और सद्गुरु कबीर साहेब के सामने खड़े होकर नारियल भेंट किया तथा बहुत प्रकार से उनको मस्तक नवाया, बंदगी की।

॥ सोरठा ॥

सतगुरु चरण मयंक, चित चकोर धर्मनि कहो।
मेटयो सब मन शंक, भाव भक्ति अति चित धर्‍यो ॥ 79 ॥

सद्गुरु कबीर साहेब के चरण चंद्रमा के समान और धर्मदास का चित्त चकोर पक्षी के समान कहिए। सद्गुरु के चरणों को देखकर धर्मदास ने अपने मन के समस्त संदेहों को मिटा दिया और विश्वासपूर्वक सद्गुरु की भक्ति को चित्त में धारण किया।

॥ चौपाई ॥

चौका कीन शब्द धुनि गाजा। ताल मिरदंग झांझरी बाजा ॥
धर्मदास को तिनका तोरा। जाते काल न पकरे छोरा ॥

सद्गुरु कबीर साहेब ने चौका किया, उसमें शब्द-भजनों की ध्वनि गूंज उठी, मृदंग एवं झांझर आदि स्वर-ताल के साथ बज उठे। तब धर्मदास का तिनका तोड़ा, अर्थात उसका सांसारिक विषय एवं पाप-कर्मों से संबंध तोड़ा, जिससे काल-निरंजन कभी भी उसका पल्ला नहीं पकड़ेगा।

॥ चौपाई ॥

सत्य अंक साहब लिख दीना। ततछिन धर्मदास गहि लीन्हा ॥
धर्मदास परवाना लीन्हा। सात दण्डवत तबहीं कीन्हा ॥
सतगुरु हाथ माथ तिहि दीन्हा। दै उपदेश किरतारथ कीन्हा ॥

धर्मदास की अंत:करण-शुद्धि के लिए तथा उसमें सत्यनाम का संस्कार डालने के निमित्त सद्गुरु कबीर साहेब ने अमीदल से पान पर 'सत्यनाम' लिख कर दिया और उसी क्षण धर्मदास ने उसे ग्रहण कर लिया। धर्मदास जी ने पान-परवाना लिया तथा तब उस समय सद्गुरु कबीर साहेब को सात बार दण्डवत किया। सद्गुरु कबीर साहेब ने उसके मस्तक एवं शीश पर आशीर्वाद निमित्त हाथ रखा और उसे सदुपदेश देकर कृतार्थ किया, अर्थात उसका मन संतुष्ट किया।

सद्गुरु कबीर साहेब का धर्मदास जी को उपदेश देना

॥ चौपाई ॥

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। सत्य भेद मैं कियो परकासा ॥
नाम पान तुहि दीन लखाई। काल जाल सब दीन मिटाई ॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, मैंने तुमसे सत्य का भेद प्रकाशित किया है। मैंने तुमको सत्यपुरुष का नाम और पान-प्रसाद देकर लखा-परखा दिया तथा तुम्हारे सब काल-जाल को मिटा दिया।

॥ चौपाई ॥

अब सुनु रहनि गहनि की बाता। बिना जाने नर भटका खाता॥
सदा भक्ति करो चितलाई। सेवो साधु तजि मान बड़ाई॥

हे धर्मदास! अब रहनि-गहनि की बात सुन, जिसके जाने बिना मनुष्य स्वयं को भूलकर यूं ही भटकता रहता है। सदा चित्त लगाकर भक्ति-साधना करो और मान-बड़ाई को त्यागकर चैतन्य मूर्ति संत की सेवा करो।

॥ चौपाई ॥

पहले कुल मरजादा खोवो। भय से रहित भक्त तब होवो॥
सेवा करो छांड़ि मत दूजा। गुरु की सेवा गुरु की पूजा॥

पहले जाति, वर्ण एवं कुल की मर्यादा को नष्ट करो और तब भय से रहित होकर भक्ति करो तथा भक्त हो जाओ। दूसरे मत पत्थर-पानी आदि की पूजा छोड़कर, निष्काम गुरु की सेवा एवं गुरु की पूजा करो।

॥ चौपाई ॥

गुरु से करे कपट चतुराई। सो हंसा भव भरमे आई॥
याते गुरु से परदा नाहीं। परदा करे रहे भव माहीं॥

जो गुरु से कपट चतुराई करता है, वह जीव संसार में आकर भरमता फिरता है। इसलिए गुरु से कभी कपट-रूपी परदा अथवा कोई छिपाव नहीं रखना चाहिए। जो गुरु से कुछ भेद रखता है अथवा गुप्त कपट रखता है, वह संसार में ही रहता है, उसका उद्धार नहीं होता।

॥ चौपाई ॥

गुरु के वचन सदा चित दीजे। माया मोह सुकोर न भीजै॥
यहि रहनि भव बहुरि न आवे। गुरु के चरण कमल चित लावे॥

गुरु-वचन में सदा चित्त लगाओ और माया-मोह से दूर रहो, माया-मोह के कीच में तनिक भी भीगना नहीं चाहिए। इस रहनि में स्थित रहता हुआ साधक-भक्त फिर संसार में नहीं आता। सांसारिक विषयों से हटकर गुरु के चरण-कमलों में चित्त लगाना चाहिए।

॥ छंद ॥

सुनहु धर्मदास दृढ़कै गहो, एक नाम की आस हो।
जगत जाल बहु जंजाल है, काल लगाए फांस हो॥

पुरुष नाम परताप धर्मनि, सुमति होय सुधि लहे।
नारि नर परिवार सब मिलि, काल कराल तब ना रहे॥ 76॥

हे धर्मदास! सुनो, केवल एक सत्यपुरुष के सत्यनाम की आशा एवं भरोसा करो और उसे दृढ़तापूर्वक ग्रहण करो, अर्थात यथा-विधि उसकी भक्ति-साधना करो। हे धर्मदास! इस जगत का बहुत बड़ा जंजाल-झमेला है, इसी में छिपा हुआ काल अपनी फांस लगाए हुए है, जिससे कि जीव उसमें फंसते रहें। सत्यपुरुष के सत्यनाम के प्रताप से जीव की सद्बुद्धि होती है एवं वह सचेत रहता है, अत: उसका सुमिरन करना चाहिए। परिवार के सब नर-नारी आदि मिलकर, यदि नाम का सुमिरन करें तब भयंकर काल नहीं रह सकता, अर्थात वह उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता तथा उनसे दूर भाग जाएगा।

॥ सोरठा ॥

तुम घर जेतिक जीव, सब कहं बेगि बुलावहू।
सुरति धरो दृढ़ पीव, बहुरि काल पावे नहीं॥ 80॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि तुम घर के जितने भी जीव हैं, सबको शीघ्र बुलाओ, सब ज्ञान-दीक्षा लें। सब दृढ़ता से सत्यपुरुष स्वामी पर सुरति (चित्त) धरो, फिर तुम लोगों को काल नहीं पा सकता, अर्थात उससे सदा सुरक्षित रहोगे।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहेब प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु तुम जीवन के मूला। मेटेउ मोर सकल तन सूला॥
आहि नरायण पुत्र हमारा। सौंपहु ताहि शब्द टकसारा॥
इतना सुनत सद्गुरु हंसि दीन्हा। भाव प्रगट बाहर नहिं कीन्हा॥

धर्मदास जी कहते हैं हे प्रभु! आप जीवों के मूल (आदि एवं आधार) हो। आपने मेरे समस्त अज्ञान एवं दुख-रूपी शूल को मिटा दिया। मेरा पुत्र नारायण दास है, आप उसे भी अपना प्रामाणिक सार-शब्द प्रदान करो।

धर्मदास जी की इतनी बात सुनते ही सद्गुरु कबीर साहेब हंस दिए, परंतु अपने भीतर का भाव प्रकट नहीं किया।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुम बोलाव तुरंता। जिहि को जानहु तुम शुद्ध अंता॥

सद्गुरु कबीर साहेब ने कहा कि हे धर्मदास! जिनको तुम शुद्ध अंत:करण वाला समझते हो, उन्हें तुरंत बुलाओ।

धर्मदास का सबको सद्गुरु की शरण में बुलाना

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तब सबहिं बुलावा। आय खसम के चरण टिकावा॥
चरण गहो समरथ के आई। बहुरि न भव जल जन्मो भाई॥

धर्मदास जी ने तब सबको बुलाया और लाकर सबको सद्गुरु स्वामी के चरणों में टिका दिया। उन्होंने सबको संबोधित करते हुए कहा कि हे भाई! सब इन समर्थ सद्गुरु स्वामी के चरण पकड़ो तथा इन्हें समर्पित हो जाओ, जिससे कि फिर संसार में न जन्मो।

॥ चौपाई ॥

इतना सुनत बहुत जिव आए। धाय चरण सतगुरु लपटाए॥
यक नहिं आए दास नरायन। बहुतक आय परे गुरु पायन॥
धर्मदास सोच मन कीन्हा। काहे न आयो पुत्र परवीना॥

धर्मदास जी की इतनी बात सुनते ही बहुत जीव आए और दौड़कर सद्गुरु के श्रीचरणों में लिपट गए। बहुत-से जीव आकर सद्गुरु के चरणों में पड़े, परंतु एक धर्मदास जी के पुत्र नारायण दास नहीं आए।

धर्मदास जी ने मन में बहुत सोच-चिंता की कि पुत्र नारायण दास, जो कि चतुर है, किसलिए नहीं आया?

नारायण दास का सद्गुरु कबीर साहेब की अवज्ञा करना धर्मदास वचन अपने दास-दासियों प्रति

॥ चौपाई ॥

दास नरायन पुत्र हमारा। कहां गयो बालक पगु धारा॥
ताकहं ढूंढ लाहु कोइ जाई। दास नरायन गुरु पहं आई॥

मेरा नारायण दास पुत्र है, वह मेरा बालक कहां चला गया? कोई जाकर उसको ढूंढ़ लाओ और उस नारायण दास को सद्गुरु के पास लाओ।

चौपाई

रूपदास गुरु कीन्ह प्रतीता। देखहु जाय पढ़त जहां गीता॥
वेगि जाइ कहु तुम्हें बुलाई। धर्मदास समरथ गुरु पाई॥
सुनत संदेशी तुरतहि जाई। दास नरायण जहां रहाई॥

धर्मदास जी कहते हैं कि मेरे उस पुत्र ने गुरु रूपदास पर विश्वास किया है, उनकी शिक्षा के अनुसार, जाकर देखो वह जहां गीता पढ़ता है। शीघ्र जाओ और उसे कहो कि तुम्हें बुलाया है, उसे यह भी समझाओ कि तुम्हारे पिता धर्मदास ने पूर्ण समर्थ गुरु पाया है।

धर्मदास जी की बात सुनकर संदेश ले जाने वाला सेवक तुरंत वहां गया, जहां नारायण दास थे।

संदेशी वचन नारायण दास प्रति

॥ चौपाई ॥

चलहु बेगि जनि बार लगाओ। धर्मदास तुम कहं हंकराओ ॥

संदेश ले जाने वाले संदेशी ने नारायण दास से कहा कि आप शीघ्र चलो, देर मत लगाओ। आपके पिता धर्मदास जी ने आपको बुलाया है।

नारायण दास वचन संदेशी प्रति

॥ चौपाई ॥

हम नहिं जांय पिता के पासा। वृद्ध भये सकलो बुद्धि नासा॥
हरि सम कर्ता और कहं आही। ताको छोड़ जपैं हम काही॥

नारायण दास ने संदेशी से कहा कि मैं पिता के पास नहीं जाऊंगा, वे बूढ़े हो गए हैं और उनकी समस्त बुद्धि का नाश हो गया है। हरि (विष्णु जी) के समान और कौन कर्ता (स्वामी) है, उसको छोड़कर हम किसे जपें ?

॥ चौपाई ॥

वृद्ध भये जुलहा मन भावा। हम मन गुरु विठलेश्वर पावा॥
काहि कहौं कछु कहो न जाई। मोर पिता गया बौराई॥

मेरे पिता अब बूढ़े हुए तो उनके मन को वह जुलाहा गुरु भा गया। मेरे मन को तो गुरु विठलेश्वर पाया है, अर्थात मुझको वही अच्छा लगता है। क्या कहूं, कुछ कहा नहीं जाता, मेरे पिता तो पगला गए हैं।

संदेशी वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

चल संदेशी आया तहंवा। धर्मदास बैठा रह जहंवा॥
कह संदेशी रह अर गाए। दास नरायण नाहीं आए॥
यह सुन धर्मदास पगु धारा। गए तहां जहं बैठे बारा॥

नारायण दास की बात सुनकर संदेशी वापिस वहां आया, जहां पर धर्मदास जी बैठे हुए थे। संदेशी ने कहा कि आपके पुत्र नारायण दास नहीं आए और इतना कहकर वह चुप हो गया।

यह बात सुनकर धर्मदास जी चल पड़े और वहां आए, जहां उनके पुत्र नारायण दास बैठे हुए थे।

धर्मदास वचन नारायणदास प्रति

॥ छंद ॥

चलहु पुत्र भवन सिधारहु, पुरुष साहिब आइया।
करहु विनती चरण टेकहु, कर्म सकल कटाइया॥
सतगुरु करो तिहि आय कहुं चलु, बेगि तजि अभिमान रे।
बहुरि ऐसो दाव बने नहिं, छोड़ि दे हठ बावरे॥ 77॥

धर्मदास जी कहते हैं कि हे पुत्र नारायण दास! अपने भवन चलो, वहां सत्य पुरुष साहिब आए हुए हैं। उनके चरणों में मस्तक टेककर विनती करो और समस्त कर्म-बंधनों को कटाओ। मैं यहां आकर तुमसे कहता हूं कि चलो और उनको अपना सद्गुरु करो, शीघ्र सर्व अभिमान का त्याग करो। फिर ऐसा दांव नहीं बनेगा, अर्थात ऐसा सुअवसर नहीं मिलेगा, अरे, बावले! व्यर्थ की यह हठ छोड़ दे।

॥ सोरठा ॥

भल सतगुरु हम पाव, यम के फंद कटाइया।
बहुरि न जग महं आव, उठहु पुत्र तुम बेगिही॥ 81॥

मैंने बहुत अच्छे पूर्ण सद्गुरु पाए हैं। वे यम का फंदा काटने वाले तथा सर्व-बंधनों से छुड़ाने वाले बंदीछोड़ हैं। उनकी शरणागत होने पर फिर संसार में नहीं आओगे, अर्थात जन्म-मरण से मुक्त हो जाओगे। हे पुत्र! तुम शीघ्र उठो।

नारायण दास वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

तुम तो पिता गए बौराई। तीजे पन जिंदा गुरु पाई॥
राम नाम सम और न देवा। जाकी ऋषि मुनि लावहिं सेवा॥
गुरु विठलेश्वर छांडेउ हीता। वृद्ध भये जिंदा गुरु कीता॥

नारायण दास ने कहा कि हे पिताजी! ऐसा लगता है कि आप पागल हो गए हो, इसीलिए अब तीसरेपन की अवस्था में आपने जिन्दा[1] गुरु पाया है। जिसका नाम राम है, उसके समान और कोई देवता नहीं है, जिसकी ऋषि-मुनि सेवा-पूजा करते हैं। आपने गुरु विठलेश्वर का प्रेम छोड़कर, अब वृद्ध होने पर वह जिंदा गुरु किया है।

धर्मदास वचन नारायण दास प्रति

॥ चौपाई ॥

बांह पकर तब लीन्ह उठाई। पुनि सतगुरु के सन्मुख लाई॥
सतगुरु चरण गहो रे बारा। यम के फंद छुड़ावन हारा॥

---

1. मुसलमान वर्ग में कुछ फकीर 'जिंदा' नाम से पुकारे जाते हैं। जिंदा वेश में जाकर सद्गुरु कबीर साहेब ने धर्मदास जी को चेताया था।

तब धर्मदास जी ने नारायण दास की बांह पकड़कर उठा लिया और फिर उसको सद्‌गुरु कबीर साहेब के सामने लाए। उन्होंने उससे कहा कि हे पुत्र! इन सद्‌गुरु स्वामी के चरण पकड़ो, ये यम के फंद से छुड़ाने वाले हैं।

॥ चौपाई ॥

बहुरि न योनी संकट आवे। जो जिव नाम शरणागत पावे॥
तज संसार लोक कहं जाई। नाम पान गुरु होय सहाई॥

जो जीव सत्यपुरुष का नाम और सद्‌गुरु की शरण पाता है, वह फिर चौरासी लाख योनियों के भोग का संकट नहीं पाता। वह संसार को त्यागकर सीधा सत्यलोक को जाता है, सद्‌गुरु का सार नामोपदेश एवं पान उसका सदा सहायक होता है।

नारायण दास वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

तब मुख फेरे नरायन दासा। कीन्ह मलेच्छ भवन परकासा॥
कहंवाते जिन्दा ठग आया। हमरे पितहिं डारि बौराया॥

तब नारायण दास ने सद्‌गुरु से मुंह फेर लिया और कटु-शब्दों में कहा कि हमारे घर में मलेच्छ ने प्रवेश किया है। कहां से यह जिंदा ठग आया, जिसने मेरे पिता को पागल बना डाला।

॥ चौपाई ॥

वेद शास्त्र कहं दीन उठाई। आपनि महिमा कहत बनाई॥
जिन्दा रहे तुम्हारे पासा। तौ लग घर की छोड़ी आसा॥

वेद-शास्त्र को इसने उठाकर रख दिया और अपनी महिमा बना-बनाकर कहता है। यदि यह जिंदा आपके पास रहेगा, तो मैंने इस घर में रहने की आशा छोड़ दी है।

॥ चौपाई ॥

इतना सुनत धर्मदास अकुलाने। ना जानो सुत का मत ठाने॥
पुनि आमिन बहु विधि समुझायो। नारायण चित एकु न आयो॥
तब धर्मदास गुरु पहं आए। बहु विधि ते पुनि विनती लाये॥

नारायणदास की इतनी बात सुनते ही धर्मदास जी व्याकुल हो गए और कहने लगे कि न जाने पुत्र क्या मत ठाने हुए है। फिर आमिन माता ने पुत्र को बहुत प्रकार से समझाया, परंतु नारायण दास के चित्त में उनकी एक बात नहीं आई।

तब धर्मदास सद्‌गुरु कबीर साहेब के पास आए और बहुत प्रकार से उनकी विनती करने लगे।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

कहो प्रभु कारन मोहि बताई। कोइ कारन पुत्र दुचिताई॥

धर्मदास अत्यंत विनीत-भाव से कहते हैं कि हे प्रभु! कहो, मुझे कारण बताओ कि ऐसा कोई कारण क्या है, जो मेरा पुत्र इस प्रकार कटु वचन कहता हुआ, दुर्बुद्धि को प्राप्त भटका हुआ है?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

तब सद्गुरु बोले मुसकाई। प्रथमहिं धर्मनि भाख सुनाई॥
बहुरि कहौं सुनहू दे कानो। यामहं कछु अचरज ना मानो॥

तब सद्गुरु कबीर साहेब मुस्कराते हुए बोले कि हे धर्मदास! मैंने तो पहले ही तुमको नारायण से संबद्ध वर्णन करके सुना दिया है। तुम उसे भूल गए, मैं फिर से सुनाता हूं, तुम कान देकर सुनो, इसमें कुछ आश्चर्य मत मानो।

॥ चौपाई ॥

पुरुष अवाज उठी जिहि बारा। ज्ञानी वेगि जाहु संसारा॥
काल देत जीवन कहं त्रासा। वेगि जाहु काटहु यम फांसा॥

(पूर्व काल में) जिस समय सत्यपुरुष की वाणी हुई कि हे ज्ञानीजी! शीघ्र संसार में जाओ। काल-निरंजन जीवों को सता रहा है, तुम शीघ्र जाकर उसके फांस को काटो।

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी तत्क्षण मस्तक नाई। पहुंचे जहां धर्म अन्याई॥
धर्मराय ज्ञानी कहं देखा। विपरीत रूप कीन्ह तब भेखा॥

ज्ञानीजी ने उसी क्षण सत्यपुरुष को मस्तक नवाया और चले। वे वहां पहुंचे, जहां अन्यायी काल-निरंजन था। निरंजन ने जब ज्ञानी जी को आते हुए देखा, तब उसने अपना विपरीत रूप-वेश किया, अर्थात उसने विकराल रूप बनाया।

धर्मराय (निरंजन) वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

सेवा बस दीप हम पाया। तुम भवसागर कैसे आया॥
करौ संहार सही तोहि ज्ञानी। तुम तो मर्म हमार न जानी॥

निरंजन ने ज्ञानी जी को कहा कि सत्यपुरुष की सेवा के फलस्वरूप मैंने यह दीप (झांझरी दीप) प्राप्त किया। तुम भवसागर में कैसे आए हो? हे ज्ञानी! मैं तुम्हें सही कहता हूं कि मैं तुम्हें मार दूंगा, तुम मेरे रहस्य को नहीं जानते।

ज्ञानी जी वचन धर्मराय प्रति

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी कहै तब सुनु अन्याई। तुम्हरे डर हम नाहिं डराई॥
जो तुम बोलेउ वचन हंकारी। तत्क्षण तोकहं डारी मारी॥

तब ज्ञानीजी ने कहा कि हे अन्यायी निरंजन! सुन, तुम्हारे डर से मैं नहीं डरता और जो तुम मुझसे अहंकार के वचन बोलते हो, तो मैं तुमको इसी क्षण मार डालूंगा।

धर्मराय-निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

तबै निरंजन विनती लाई। तुम जग जाय जीव मुक्ताई॥
सकलो जीव लोक तुव जावे। कैसे क्षुधा सु मोरि बुझावे॥

तब निरंजन सहम गया और उसने ज्ञानी जी से विनती की कि हे ज्ञानी जी! आप संसार में जाकर जीव मुक्त करोगे। समस्त जीव आपके सत्यलोक जाएंगे, तो फिर मेरी भूख कैसे बुझेगी? अर्थात जब मुझे जीव न मिलेंगे, तब मैं क्या खाऊंगा?

॥ चौपाई ॥

लक्ष जीव हम निशि दिन खाया। सवा लक्ष नित प्रति उपजाया॥
पुरुष मोहिं दीन्हीं रजधानी। तैसे तुमहू दीजे ज्ञानी॥

मैंने लाख जीव रात-दिन में खाए तो नित्य प्रति सवा लाख जीव उत्पन्न किए। मेरी सेवा के वश सत्यपुरुष ने मुझको तीन लोक का राज्य दिया, आप भी उनके समान हो, अतः हे ज्ञानीजी! वैसे ही आप भी मुझको कुछ दीजिए।

॥ चौपाई ॥

जग में जाय हंसा तुम लावहु। काल जाल ते तिन्हें छुड़ावहु॥
तीनों युग जिव थोरा गयऊ। कलियुग में तुम माड मडयऊ॥

संसार में जाकर तुम हंस-जीवों को लाओ और मुझ काल जाल से उन्हें छुड़ाओ। परंतु ऐसा करना कि तीन युग (सतयुग, त्रेता एवं द्वापर युग) में जीव सत्यलोक में थोड़े जाएं और चौथे कलियुग में आप अधिक जीवों को अपनी शरण में लेकर मुक्ताएं।

॥ चौपाई ॥

अब तुम आपन पंथ चलैहो। जीवन लै सतलोक पठैहो॥
इतना कही निरंजन बोला। तुमते नहीं मोर बस डोला॥

अब आप अपना सत्य- पंथ चलाओ और जीवों को सत्यलोक भिजवाओ। इतना कहकर निरंजन फिर बोला कि आप पर तो मेरा कोई वश नहीं चला, परंतु—

॥ चौपाई ॥

और बंधु जो आवत कोई। छिन महं ताकहं खात बिगोई॥
मैं कहौं तो मनिहो नाहीं। तुम तो जान जगत के माहीं॥

आपके अतिरिक्त यदि कोई और भाई आता, तो मैं उसको क्षण में खा जाता। आगे मैं कहूंगा तो आप मानेंगे नहीं, आप तो संसार में जाकर सब जान जाओगे।

॥ चौपाई ॥

हमहूं करब उपाय तहांहीं। शब्द तुम्हार माने कोइ नाहीं॥
करम भरमें अस करूंठाटा। जाते कोइ न पावे बाटा॥

क्योंकि आपके कहने, अर्थात ज्ञानोपदेश से जीव सत्यलोक जाएगा, अतएव मैं भी वहां संसार में ऐसा उपाय करूंगा कि आपका शब्द-उपदेश कोई नहीं मानेगा। मैं कर्म-धर्म का मायाजाल रचकर, उसमें ऐसा ठाट (मौज-बहार) करूंगा कि जिससे मोहवश उसमें फंसकर कोई भी सत्यलोक का मार्ग नहीं पाएगा।

॥ चौपाई ॥

घर घर भूत भरम उपजायब। धोखा देइ देइ जीव भुलायब॥
मद्य मांस भक्षै नर लोई। सर्व मांस मद नर प्रिय होई॥

मैं घर-घर में भ्रम (अज्ञान) का भूत उत्पन्न करूंगा तथा धोखा दे-देकर जीवों को भूल में डालूंगा। प्राय: सभी मनुष्य मद्य (शराब) पिएंगे तथा मांस खाएंगे। मनुष्य को सर्वाधिक प्रिय मदिरा एवं मांस होगा।

॥ चौपाई ॥

तुम्हरी कठिन भक्ति है भाई। कोई न मनिहैं कहौ बुझाई॥
ताही ते मैं कहौं तुम पाहीं। अब जनि जाहु जगत के माहीं॥

हे भाई! आपकी भक्ति साधन में कठिन है, कहो-समझाओ उसे कोई नहीं मानेगा। उसी से मैं आपको कहता हूं कि अब संसार में मत जाओ।

सद्‌गुरु कबीर (ज्ञानी जी) वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

तेहिं क्षण काल सन हम भाखा। छल बल तुम्हरो जानि हम राखा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि उसी क्षण मैंने काल-निरंजन से कहा कि मैंने तुम्हारे सब छल-बल को समझ रखा है।

॥ छंद ॥

देऊं सत्य शब्द दिढाय, हंसहि भरम तेरो टारऊं।
लक्ष बल तुम्हार सब चिन्हाय डारूं, नाम बल जिव तारऊं॥
मन कर्म बानी मोहि सुमिरे, एक तत्व लौ लाइहै।
सीस तुम्हरे पांव दै जिव, अमरलोक सिधाइहै॥ 78॥

मैं सत्य-शब्द को दृढ़ाकर, जीवों में डाले हुए तेरे भ्रम को मिटा दूंगा। तुम्हारे लक्ष्य के छल-बल से सबको सतर्क कर दूंगा तथा तुम्हारी पहचान बता दूंगा और सत्य-पुरुष के नाम-बल से जीव को भवसागर से तारूंगा। जो मन, कर्म एवं वाणी से मुझे सुमिरेगा तथा एक परमात्म-तत्व से लगन लगाएगा, वह हंस-जीव तुम्हारे सिर पर पांव रखकर अमरलोक जाएगा।

॥ सोरठा ॥

मरदे तुम्हरे मान, सूरा हंस सुजान कोई।
सत्य शब्द परमान, चीन्हे हंसहि हर्ष अति॥ 82॥

जो कोई ज्ञानवान शूरवीर हंस होगा, वह तुम्हारा मान-मर्दन करेगा। सत्य-शब्द मुक्ति का प्रमाण है, जिसे अत्यंत हर्ष के साथ हंस-जीव परखेगा एवं समझेगा।

॥ चौपाई ॥

इतना सुनत काल जब हारा। छल मत्ता तब करन विचारा॥

मेरी इतनी बात सुनकर काल-निरंजन जब मुझसे हार गया, तब वह छल-मत फैलाने वाला विचार करने लगा।

निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

कहै धरम अंश सुखदायी। बात एक मुहिं कहो बुझाई॥
यहि युग कौन नाम तुम्ह होई। तौन नाम मुहि भाखो सोई॥

तब निरंजन कहता है कि पुरुष के अंश एवं जीवों को सुख देने वाले हे ज्ञानीजी! एक बात मुझे समझाकर कहो कि इस युग में तुम्हारा क्या नाम होगा? जो नाम हो, वह मुझे बताओ।

ज्ञानी जी वचन निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

नाम कबीर हमार कलि माहीं। कबीर कहत जम निकट न आहीं॥

ज्ञानी जी ने कहा कि इस कलियुग में मेरा नाम कबीर होगा और वह इतना प्रभावशाली होगा कि 'कबीर' कहने से यम पास नहीं आएगा।

धर्मराय-निरंजन वचन ज्ञानी जी प्रति

॥ चौपाई ॥

इतना सुनत बोला अन्यायी। सुनो कबीर मैं कहौं बुझाई॥
तुम्हरो नाम ले पंथ चलायब। यहि विधि जीवन धोख लखायब॥

ज्ञानी जी की इतनी बात सुनकर अन्याय करने वाला निरंजन बोला कि हे कबीर! सुनो, मैं आपको अच्छी प्रकार कहता हूं। आपका नाम 'कबीर' लेकर मैं अपना पंथ चलाऊंगा और इस प्रकार जीवों को धोखे में डालकर अपना मत लखाऊंगा।

॥ चौपाई ॥

द्वादश पंथ करब हम साजा। नाम तुम्हारे करब अवाजा॥
मृतु अन्धा है हमारो अंशा। सुकृत के घर होवे वंशा॥

मैं बारह पंथ चलाने की सुंदर व्यवस्था करूंगा, जो आपका ही नाम लेकर आवाज (घोषणा) करेंगे, अर्थात वे भी स्वयं को कबीर पंथी कहेंगे। मृतु अंधा मेरा अंश है, जो सुकृत (धर्मदास) के घर उनके वंश में उत्पन्न होगा।

॥ चौपाई ॥

प्रथम अंश हमारा जाई। पीछे अंश तुम्हारा भाई॥
इतनी विनती मानो मेरी। बार-बार मैं करौं निहोरी॥

पहले मेरा अंश (दूत) धर्मदास के घर में जन्मेगा और उसके पीछे हे भाई! आपका अंश धर्मदास के घर में जाएगा। मैं बार-बार आपको निहारते हुए विनती करता हूं कि जो मैंने कहा है इतनी-सी मेरी विनती मान लो।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

तब हम कहा सुनो धर्मराया। जीवन काज फंद तुम लाया॥
ताकहं वचन हार हम दीन्हा। पीछे जगहिं पयाना कीन्हा॥

सद्‌गुरु कबीर धर्मदास को समझाते हुए कहते हैं कि तब मैंने निरंजन को कहा कि सुनो, इस प्रकार तो जीवों के उद्धार-कार्य में तुमने फंदा लगाया है। अंततः मैंने तुमको वचन दिया, अर्थात जैसा तुमने कहा वैसा मैंने माना। उसके पीछे मैंने संसार में प्रस्थान किया।

॥ चौपाई ॥

सो मृतु अन्धा तुम घर आवा। भयउ नरायन नाम धरावा॥
काल अंश तो आहि नरायन। जीवन फंदा काल लगायन॥

हे धर्मदास! अब वह मृतु अंधा दूत तुम्हारे घर आया है और तुम्हारा पुत्र होकर 'नारायण दास' नाम धराया है। यह नारायण तो काल-निरंजन का अंश है। काल ने इसे भेजकर जीवों के लिए फंदा लगाया है।

॥ छंद ॥

हम नाम पंथ प्रकाश करि हैं, जीव धोखा लावई।
मूल भेद न जीव पावे, जीव नरकहिं नावई॥

जिमि नाद गावत पारधीवश, नाद मृग कहं कीन्हेऊ।
नाद सुनि ढिग मृग आयो जब, चोट तापर दीन्हेऊ॥ 79॥

यह मेरा नाम लेकर पंथ प्रकट करेगा और जीवों को धोखे में डालेगा। इसके धोखे में पड़कर जीव मूल-भेद नहीं पाएगा तथा यह जीव को नरक-यातना में डालेगा। जैसे—शिकारी नाद बजाकर हिरन को अपने वश में कर लेता है। जब हिरन शिकारी का नाद सुनकर उसके पास आता है, तब वह शिकारी उसे पकड़ लेता है और उस पर चोट करता है, अर्थात उसे मारता है।

॥ सोरठा ॥

तस यम फंद लगाय, चेतनहारा चेतिहैं॥
वचन वंश जिन पाय, ते पहुंचे सतलोक कहं॥ 83॥

वैसे शिकारी की भांति यम-काल अपना जाल लगाता है। चेतने वाला हंस-जीव चेतेगा और अनजान जीव उसके जाल में फंस जाएगा। जो जीव सद्‌गुरु के वचन वंश को पाएंगे, अर्थात शरण ग्रहण करेंगे, वे ही मुक्ति-धाम सत्यलोक पहुंचेंगे।

विशेष—*'वचन-वंश' से अभिप्राय धर्मदास जी की उस बिंद एवं नाद-वंश प्रणाली के पंथाचार्य महानुभावों से है, जिन्होंने सद्‌गुरु कबीर साहेब के वचनानुसार जीवों को सत्य नामोपदेश एवं पान-प्रसाद देकर उनका उद्धार किया एवं क्रमानुगत करते आ रहे हैं।*

यह भी स्मरण रखना चाहिए कि सद्‌गुरु कबीर साहेब ने 'गुरु-मर्यादा' के जिस नियम-संयम, सदाचार, सद्‌गुरु एवं त्याग-वैराग्य के आदर्श की व्याख्या की है, उसको यथावत् धारण करने वाला ही उनके वचन-वंश का यथार्थ अधिकारी है। वह उनके वचन-वंश का अधिकारी कदापि नहीं हो सकता, जो कि घर-गृहस्थ के जंजाल में पड़कर विषय-भोगों को भोगता हुआ मात्र संतानोत्पत्ति कर रहा है और सांप्रदायिक कबीर पंथ अथवा धर्मदास जी के वंश के नाम पर अपने पांव पुजवाने के साथ भोले लोगों से धन बटोर रहा है।

द्वादश पंथ का वर्णन

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

द्वादश पन्थ काल सों हारा। सो साहिब मुहिं कहो विचारा॥
कौन पंथ की कैसी रीती। कहिए सतगुरु होय प्रतीती॥

धर्मदास जी ने कहा कि हे साहिब! काल-निरंजन वाले जो बारह पंथ हैं, वे मुझे विचार कर कहो, अर्थात उनके बारे में स्पष्ट रूप से बताओ। उनमें कौन पंथ की कैसी रीति है? हे सद्‌गुरु! कहिए, जिससे मुझे विश्वास हो।

॥ चौपाई ॥

हम अजान कछु मर्म न जाना। तुम साहिब सतपुरुष समाना॥
मो किंकर पर कीजे दाया। उठि धर्मदास गहे दोइ पाया॥

हे साहिब! आप तो सत्यपुरुष के समान हो। मैं अनजान हूं, आपने जिन बारह पंथ की बात कही मैं उनके भेद को नहीं जानता, परंतु आप सब जानते हैं। मुझ दास पर दया कीजिए, अर्थात उनके बारे में मुझे बताइए। इस प्रकार कहते हुए धर्मदास ने उठकर सद्‌गुरु कबीर साहेब के दोनों पैर पकड़ लिए।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि बूझऊ प्रगट संदेशा। मेटहुं तोर सकल भ्रम वेषा॥
द्वादश पंथ नाम समझाऊं। चाल भेद सब तोहि लखाऊं॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! समझो, मैं तुम्हें प्रत्यक्ष रूप से समाचार कहता हूं और तुम्हारे समस्त भ्रम-अज्ञान को मिटाता हूं। बारह पंथों के नाम, उनकी चाल तथा उनके भेद सब तुम्हें समझाता हूं।

॥ चौपाई ॥

जस कछु होय चाल व्यवहारा। धर्मदास मैं कहौं पुकारा॥
तोरे जिव का धोख मिटाऊं। चित संशय सब दूर भगाऊं॥

उन बारह पंथों की जैसी कुछ चाल (रीति-नीति) होगी, हे धर्मदास! मैं तुम्हें भली-भांति कहूंगा। सब बताकर तुम्हारे जीव (आत्मा) का धोखा मिटाता हूं और तुम्हारे चित्त के सब संशय को दूर भगाता हूं।

1. मृत्यु अंधा दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

प्रथम पन्थ का भाखौ लेखा। धर्मदास चित करो विवेका॥
मृतु अन्धा इक दूत अपारा। तुम्हरे गृह लीन्हों अवतारा॥
जीवन काज होय दुखदाई। बार-बार मैं कहौं चिताई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि मैं प्रथम पंथ का वर्णन करता हूं, हे धर्मदास! तुम अपने चित्त में विवेक करो।

मृत्यु अंधा नाम का एक दूत, जो छल-बल में अपार है, तुम्हारे घर में जन्मा है। वह जीवों के उद्धार-कार्य में महान दुखदायी होगा, बार-बार मैं तुम्हें यह कहकर चेता रहा हूं।

2. तिमिर दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

दूजा तिमिर दूत चल आवे। जात अहीरा नफर कहावे॥
बहुतक ग्रंथ तुम्हारा चुरैहैं। आपन पंथ नियार चलैहैं॥

दूसरा तिमिर दूत चलकर आएगा। उसकी जाति अहीर होगी और वह नफर (गुलाम) कहलाएगा। वह तुम्हारे बहुत-से ग्रंथों को चुराएगा और अपना न्यारा पंथ चलाएगा।

3. अंध अचेत दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

पन्थ तीसरे तोहि बताऊं। अन्ध अचेत सो दूत लखाऊं॥
होय खवास आय तुमपासा। सुरति गुपाल नाम परकासा॥
अपनो पन्थ चलावै न्यारा। अक्षर योग जीव भ्रम डारा॥

मैं तुम्हें तीसरे पंथ की बात बताता हूं। उसका अंध अचेत दूत होगा, उसके बारे में तुम्हें समझाता हूं। वह तुम्हारे पास आकर सेवक होगा और अपना नाम सुरति गोपाल कहकर प्रसिद्ध करेगा। अपना पंथ अलग चलाएगा तथा जीव को अक्षर योग के भ्रम में डालेगा।

4. मनभंग दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

चौथा पन्थ सुनो धर्मदासा। मनभंग दूत करै परकासा॥
कथा मूल ले पंथ चलावे। मूल पन्थ कहि जग महिं आवे॥

हे धर्मदास! चौथे पंथ की बात सुनो, उसे मनभंग नाम का दूत प्रकट करेगा। वह कबीरपंथ की कथा का अथवा सद्गुरु कबीर की वाणी का मूल (आधार) लेकर अपना पंथ चलाएगा और संसार में उसे मूल पंथ[1] कहकर फैलाएगा।

॥ चौपाई ॥

लूदी नाम जीव समुझाई। यही नाम पारस ठहराई॥
झंग शब्द सुमिरन मुख भाखे। सकल जीव थाका गहि राखे॥

वह जीवों को लूदी नाम लेकर समझाएगा, अर्थात उपदेश करेगा और इसी नाम को पारस कहेगा। वह भीतर झंकृत होने वाले शून्य के 'झंग-शब्द' का सुमिरन अपने मुख से वर्णन करेगा। सब जीव उसे 'थाका' कहकर मानेंगे।

---

1. किसी विद्वान के अनुसार उसे 'मूल थाका पंथ' भी कहा गया है।

5. ज्ञानभंगी दूत का पंथ

॥ छंद ॥

पंथ पांचों सुनो धर्मिनि, ज्ञान भंगी दूत जो।
पंथ तिहि टकसार है, सुर साधु आगम भाख जो॥
जीभ नेत्र ललाट के सब, रेख जिवके परखावई।
तिल मसा परिचय देखिके, तब जीव धोख लगवावई॥ 80॥

हे धर्मदास! पांचवें पंथ की बात सुनो, जिसका चलाने वाला ज्ञानभंगी दूत होगा। उसका पंथ टकसार नाम से होगा। वह इंगला-पिंगला नाड़ियों के स्वर को साधकर भविष्य की बात कहेगा। जीव के जीभ, नेत्र एवं मस्तक की रेखा को परखाएगा। जीवों के तिल, मस्सा आदि चिह्न देखकर, तब उन्हें भ्रम रूपी धोखे में डालेगा।

॥ सोरठा ॥

जस जिहि दोष लगाय, तस तिंहि पान खावइहैं।
नारी नर बंधाय, चहु दिशि आपुन फरिहैं॥

वह जिस जीव के ऊपर जैसा दोष लगाएगा, वैसा ही उसको पान खिलाएगा। तथा स्त्री-पुरुष को बंधन में डालकर अपने चारों ओर फिराएगा।

6. मन मकरंद दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

छठे पन्थ कमालहि नाऊ। मन मकरन्द दूत जग आऊ॥
मुरदा माहिं कीन्ह तिहिं बासा। हम सुत होय कीन परकासा॥ 84॥

छठा पंथ कमाल नाम का है, वह मन मकरंद दूत के नाम से जग में आया है। उसने मुर्दे में वास किया और मेरा पुत्र होकर प्रसिद्ध हुआ।

॥ चौपाई ॥

जीवहि झिलमिल ज्योति दृढ़ाई। यहि विधि बहुत जीव भरमाई॥
जौं लगि दृष्टि जीव कर होई। तौ लगि झिलमिल देखो सोई॥

वह जीवों को झिलमिल-ज्योति[1] का उपदेश पक्का करेगा और इस प्रकार बहुत जीवों को भरमाएगा। जहां तक जीव की दृष्टि है, वहां तक वह झिलमिल ज्योति देखेगा।

॥ चौपाई ॥

दोनों दृष्टि नाहिं जिन देखा। कैसे झिलमिल रूप परेखा॥
झिलमिल रूप काल कर मानो। हिरदे सत्य ताहि जनि जानो॥

---

1. आंख दबाने से जो झिलमिल प्रकाश फूटता है, उसे झिलमिल-ज्योति कहते हैं।

जिसने दोनों आंखों से झिलमिल ज्योति नहीं देखी है, वह कैसे झिलमिल ज्योति के रूप को परखेगा। झिलमिल-ज्योति-रूप काल-निरंजन का मानो, उसको हृदय में सत्य (अविनाशी-अजन्मा-चैतन्य) मत समझो।

7. चितभंग दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

सातें दूत आहि चित भंगा। नाना रूप बोल मन रंगा॥
दौन नाम कहि पन्थ चलावे। बोलनहार पुरुष ठहरावे॥

सातवां दूत चितभंग है, वह मन की भांति नाना रंग-रूप बदलकर बोलेगा। वह दौन नाम कहकर पंथ चलाएगा और देह के भीतर चैतन्य आत्मा बोलने वाले को सत्यपुरुष बताएगा।

चौपाई

पांच तत्व गुण तीन बतावे। यहि विधि ऐसा पन्थ चलावे॥
बोलत वचन ब्रह्म है आपा। गुरु वसिष्ठ राम किमि थापा॥

वह जगत-सृष्टि में पांच तत्व और तीन गुण बताएगा और इस प्रकार, अर्थात शरीर में बोलने वाला जीव, पांच तत्व तथा तीन गुण हैं ऐसा कहकर पंथ चलाएगा (इसके अतिरिक्त आदि पुरुष, काल-माया एवं ब्रह्मादि कुछ नहीं हैं। सृष्टि सदा से है तथा कोई कर्ता-धर्ता नहीं है, इसी को वह ठोस बीजक ज्ञान कहेगा)।

वह कहेगा कि अपना आपा ही ब्रह्म है, वही वचन-वाणी बोलता है। तो फिर सोचो कि गुरु की क्या महत्ता एवं आवश्यकता है? श्रीराम ने वशिष्ठ जी को गुरु क्यों माना?

॥ चौपाई ॥

कृष्ण कीन्ह गुरु की सेवकाई। ऋषि मुनि और गने को भाई॥
नारद गुरु कहं दोष लगावा। ताते नरक वास भुगतावा॥

श्रीकृष्ण ने गुरु की सेवा की और ऋषि-मुनियों की तो गिनती ही क्या है, कौन गिने? एक बार भूलवश देवर्षि नारद ने गुरु को दोष लगाया, तो उससे विष्णु ने उनको नरक-वास भुगवाया।

॥ चौपाई ॥

बीजक ज्ञान दूत जो थापे। जस गूलर कीड़ा घट व्यापे॥
आपा थापी भला न होई। आपा थापि गये जिव रोई॥

उपर्युक्त प्रकार से जो बीजक-ज्ञान वह दूत थापेगा, अर्थात एक जीव, पांच तत्व और तीन गुण को ही मानकर, इसी को बीजक ज्ञान बताकर वह दूत स्थापित करेगा, तो वह बस ऐसे होगा जैसे गूलर के भीतर कीड़ा घूमता है तथा वह समझता

है कि संसार इतना ही है। अपने आपको सब कुछ कर्ता-धर्ता मानने से जीव का भला न होगा, अपने आपको थापने वाला जीव रोता रहेगा।

8. अकिलभंग दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

अब मैं आठवें पन्थ बताऊं। अकिल भंग दूत समझाऊं॥
परमधाम कहि पंथ चलावे। कछु कुरान कछु वेद चुरावे॥

अब मैं आठवें पंथ को बताता हूं और उसके संचालक अकिल भंग दूत के बारे में समझाता हूं। वह परम धाम कहकर अपना पंथ चलाएगा। कुछ कुरान तथा कुछ वेद की बातें चुराएगा।

॥ चौपाई ॥

कछु कछु निरगुण हमरो लीन्हा। तारतम्य पोथी इक कीन्हा॥
राह चलावे ब्रह्म का ज्ञाना। करमी जीव बहुत लपटाना॥

कुछ-कुछ मेरे निर्गुण-मत की बातों को लेगा। उन सबको मिलाकर एक पुस्तक (पोथी) बनाएगा। इस प्रकार जोड़कर वह ब्रह्म-ज्ञान का पंथ चलाएगा, उसमें कर्मी जीव बहुत लिपटेंगे।

9. विशंभर दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

नववें पंथ सुनो धर्मदासा। दूत विशम्भर केर तमासा॥
राम कबीर पंथ कर नाऊ। निरगुण सरगुण एक मिलाऊ॥
पाप पुन्य कहं जाने एका। ऐसे दूत बतावे टेका॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! नौवें पंथ की बात सुनो। उसका दूत विशंभर होगा और उसका जीवन-चरित्र ऐसा होगा कि वह राम-कबीर नाम का पंथ चलाएगा। वह निर्गुण-सगुण दोनों को एक में मिलाकर उपदेश करेगा। पाप-पुण्य को एक समझेगा, वह दूत ऐसा पक्ष रखकर बताएगा।

10. नकटा नैन दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

अब मैं दसवां पंथ बताऊं। नकटा नैन दूत कर नाऊं॥
सतनामी कह पन्थ चलावै। चार वरण जिव एक मिलावै॥

अब मैं दसवां पंथ बताता हूं। उसके दूत का नाम नकटा नैन है। वह सतनामी कहकर पंथ चलाएगा और चार वर्ण के जीवों को एक में मिलाएगा, अर्थात सबको एक समान मनुष्य मानेगा।

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मण और क्षत्री परभाऊं। वैश्य शूद्र सब एक मिलाऊं॥
सतगुरु शब्द न चीन्हें भाई। बांधे टेक नरक जिव जाई॥
काया कथनी कहि समुझावे। सत्यपुरुष की राह न पावे॥

वह अपने वचनोपदेश के प्रभाव से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र सबको एक समान मिलाएगा। परंतु वह सद्गुरु के शब्द को नहीं पहचानेगा, वह अपने पक्ष को बांधकर रखेगा, जिससे जीव नरक को जाएंगे। वह शरीर का ज्ञान कथन कर समझाएगा, परंतु सबसे परे सत्यपुरुष के सत्यपथ को नहीं पाएगा।

॥ छंद ॥

सुनहु धर्मनि काल बाजी, करहि बड़ फंदावली।
अनेक जीवन लइ गरास, काल कर्म कर्मावली॥
जो जीव परखे शब्द मम, सो निसतरें जम जाल ते।
गहे नाम प्रताप अविचल, जाय लोक अमान ते॥ 81॥

हे धर्मदास! काल-निरंजन की चालबाजी की बात सुनो, वह फंसाने के लिए बड़े फंदों की रचना करता है। वह काल नाना कर्म एवं कर्म-फंदों में फांसकर, अनेक जीवों को ग्रस (खा) लेता है। जो जीव मेरे सार-शब्द को परखता एवं समझता है, वह यम के जाल से छूट जाता है। श्रद्धापूर्वक ग्रहण किए हुए अटल सत्य नाम के प्रताप से, जीव निश्चय अमरलोक को जाता है।

॥ सोरठा ॥

पुरुष शब्द है सार, सुमिरण अमी अमोल गुण।
हंस होय भौ पार, मन बच कर जो दृढ़ गहे॥ 85॥

सत्यपुरुष का शब्द (सत्यनाम) सार है और उसका सुमिरन अमृत-तुल्य अनमोल गुण वाला है। मन, वचन एवं कर्म से जो सत्यपुरुष के सार-शब्द को दृढ़ता से ग्रहण करता है, वह हंस-जीव भवसागर से पार हो जाता है।

11. दुरगदानी दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

पंथ इकादश कहौं विचारा। दुरगदानि जो दूत अपारा॥
जीव पंथ कहि नाम चलावे। काया थाप राह समुझावे॥

अब मैं ग्यारहवें पंथ को विचारकर कहता हूं, जिसका दुरगदानी दूत अपार बलशाली होगा। वह जीव-पंथ नाम कहकर पंथ चलाएगा और शरीर-ज्ञान की बात समझाएगा।

॥ चौपाई ॥

काया कथनी जीव बताई। भरमे जीव पार नहिं पाई॥
जो जिव होय बहुत अभिमानी। सुनके ज्ञान प्रेम अति ठानी॥

वह शरीर से संबद्ध ज्ञान कथन कर जीवों को बताएगा, उससे जीव भरमेंगे और भव से पार नहीं होंगे। जो जीव बहुत अधिक अभिमानी होगा, उसका ज्ञान सुनकर बहुत प्रेम करेगा।

12. हंसमुनि दूत का पंथ

॥ चौपाई ॥

अब कहुं द्वादस पंथ प्रकासा। दूत हंसमुनि करे तमासा॥
वचन बंस घर सेवक होई। प्रथम करे सेवा बहु तोई॥

अब मैं बारहवें पंथ के प्रकट होने की बात कहता हूं। उसका हंसमुनि दूत बहुत चरित्र करेगा। वह वचन-वंश के घर में सेवक होगा और पहले बहुत सेवा करेगा।

॥ चौपाई ॥

पाछे अपनो मत प्रगटावे। बहुतक जीवन फंद फंदावे॥
अंश बंस का करे विरोधा। कछु अमान कछु मान प्रबोधा॥

फिर पीछे अपना मत प्रकट करेगा और बहुत-से जीवों को अपने फंदे में फांस लेगा। अंश-वंश (चूरामणि से प्रचलित अंश) का विरोध करेगा, वह उसके ज्ञान की कुछ बातों को मानेगा तथा कुछ को नहीं मानेगा।

॥ चौपाई ॥

यहि विधि यम बाजी लावे। बारह पंथ निज अंश प्रगटावे॥
फिरि फिरि आवे फिरि फिरि जाई। बार बार जग में प्रगटाई॥

इस प्रकार काल-निरंजन अपना दांव लगाएगा। वह अपने अंशों से बारह पंथ प्रकट कराएगा और वे दूत मात्र एक बार प्रकट नहीं होंगे, अपितु वे उन पंथों में फिर-फिर आएंगे तथा फिर-फिर जाएंगे। वे बार-बार संसार में प्रकट होंगे।

॥ चौपाई ॥

जहां जहां प्रगटे यमदूता। जीवन से कह ज्ञान बहूता॥
नाम कबीर धरावे आपा। कथित ज्ञान काया कहं थापा॥

काल-निरंजन के वे दूत जहां-जहां भी प्रकट होंगे, जीवों को बहुत ज्ञान कहेंगे। और वे अपने आपका नाम (मेरा नाम) कबीर धराएंगे, अर्थात स्वयं को पक्का कबीरपंथी कहेंगे। वे शरीर-ज्ञान का कथन कर, उसे स्थापित करेंगे।

॥ चौपाई ॥

जब जब जनम धरे संसारा। प्रगट होय कै पन्थ पसारा॥
करामात जीवन बतलावे। जिव भरमाय नरक महं नावे॥

जब-जब वे निरंजन के दूत संसार में जन्म लेकर प्रकट होंगे, तब-तब वे अपना पंथ फैलाएंगे। वे जीवों को चकित करने वाली करामाती बातें बताएंगे और जीवों को भरमा कर नरक में डालेंगे।

॥ छंद ॥

अस काल परबल सुनहु धर्मनि, करे छल मति आयके।
मम बचन दीपक दृढ़ गहे, मैं लेहुं ताहि बचायके॥
अंश हंसन तुम चितायउ, सत्य शब्दहिं दान ते।
शब्द परखे यमहि चीन्हे, हृदय दृढ़ गुरु ज्ञान ते॥ 82॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, वह काल-निरंजन ऐसा प्रबल है कि वह तथा उसके दूत आकर छल-कपट से पूर्ण बुद्धि करेंगे। जो दीपक रूपी मेरे वचन को दृढ़ता से ग्रहण करेगा, मैं उसे बचा लूंगा। तुम अपने अंश-वंश एवं हंस जीवों को, मेरे सत्य-शब्दोपदेश का दान देकर चेताना। मेरे सार-शब्द को जीव परखे, हृदय में गुरु-ज्ञान को दृढ़ता से धारण करे और यम को पहचाने।

॥ सोरठा ॥

चित चेतो धर्मदास, यमराजा अस छल करे।
गहे नाम विश्वास, ता कहूं यम नहिं पावई॥ 86॥

हे धर्मदास! अपने चित में चेतो, अर्थात जाग्रत हो जाओ। यमराज ऐसा छल करेगा, जिससे जीव नहीं बचेगा। जो मेरे उपदेशित सत्यनाम को विश्वासपूर्वक ग्रहण करेगा, फिर उसे निरंजन नहीं पाएगा, अर्थात फिर वह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु तुम जीवन के मूला। मेटहु मोर सकल दुख शूला॥
आहि नरायन पुत्र हमारा। अब हम तहंकर दीन्ह निकारा॥

धर्मदास जी विनीत भाव से सद्‌गुरु कबीर साहेब को कहते हैं कि हे प्रभु! आप जीवों के मूल हो। आपने मेरे समस्त शूल सदृश दुख को मिटा दिया। नारायण दास मेरा पुत्र है, अब मैंने उसको अपने घर से निकाल दिया।

॥ चौपाई ॥

काल अंश गृह जन्मो आई। जीवन काज भयो दुखदाई॥

धन सतगुरु तुम मोहि लखावा। काल अंश को भाव चिन्हावा॥
पुत्र नरायन त्यागि हम दीन्हा। तुमरो वचन मानि हम लीन्हा॥

काल का अंश होकर पुत्र रूप में उसने मेरे घर में जन्म लिया और जीवों के उद्धार कार्य में दुख देने वाला हुआ। हे सद्गुरु! आप धन्य हैं कि आपने सब बातें बताकर मुझे समझा दिया और काल के जो अंश दूत हैं, उनके भाव-विचारों एवं कार्यों की पहचान करा दी।

मैंने आपकी सब बातों को विश्वासपूर्वक मान लिया तथा पुत्र नारायण को त्याग दिया।

विशेष**—** *धर्मदास जी ने अपने पुत्र नारायणदास को काल का अंश जानकर, त्याग दिया। फिर वहां पर सब जीवों को सद्गुरु कबीर साहेब की शरणागत किया। सद्गुरु से सबको विधिपूर्वक दीक्षा का सत्यज्ञानोपदेश एवं पान-परवाना दिलवाया। सत्संग-ज्ञान चर्चा करते हुए, इस प्रकार बहुत दिन बीत गए।*

धर्मदास जी को नौतम अंश (मुक्तामणि) का दर्शन होना

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास विनवै सिर नाई। साहिब कहो जीव सुखदाई॥
किहि विधि जीव तरै भौसागर। कहिये मोहि हंसपति आगर॥

धर्मदास जी सिर झुकाकर विनती करते हैं कि हे साहिब! आप जीवों को सुख देने वाले हैं, कहो कि किस प्रकार जीव भवसागर से पार हो? हे सुख-धाम, हंसों के स्वामी! मुझे समझाकर कहिए।

॥ चौपाई ॥

कैसे पन्थ करौं परकासा। कैसे हंसहि लोक निवासा॥
दास नरायन सुत जो रहिया। काल जान ताकहं परिहरिया॥

आपके कथनानुसार अब मैं कैसे पंथ प्रकट करूंगा और कैसे हंस-जीवों का सत्यलोक में निवास होगा? क्योंकि नारायण दास जो मेरा पुत्र था, उसको काल का दूत जानकर मैंने त्याग दिया।

॥ चौपाई ॥

अब साहिब देहु राह बताई। कैसे हंसा लोक समाई॥
कैसे बंस हमारो चलिहै। कैसे तुम्हरो पंथ अनुसरईहै॥
आगे जेहिते पंथ चलाई। ताते करौं विनती प्रभुताई॥

हे साहिब! अब आप ही राह (उपाय) बता दो कि जीव सत्यलोक में कैसे

जाएंगे? कैसे मेरा वंश चलेगा? और मेरे मरने के बाद कैसे आपके पंथ का अनुसरण होगा, अर्थात आपका पंथ कैसे चलेगा? हे प्रभु! आगे जिससे पंथ चले, उसके लिए मैं आपसे विनती करता हूं।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास सुनु शब्द सिखापन। कहौं संदेश जानि हित आपन॥
नौतम सुरति पुरुष के अंशा। तुव गृह प्रगट होइहै वंशा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! मेरे शब्दोपदेश को ध्यान से सुन, अपना हित जानकर मैं तुम्हें यह संदेश कहता हूं। नौतम सुरति सत्यपुरुष के अंश हैं, वे तुम्हारे घर में प्रकट होंगे और वे ही तुम्हारे वंश होंगे।

॥ चौपाई ॥

वचन वंश जग प्रगटे आई। नाम चुरामणि ताहि कहाई॥
पुरुष अंश के नौतम वंशा। काल फंद काटे जिव संशा॥

मेरे वचन-उपदेश से उत्पन्न होने के कारण वे वचन-वंश कहलाएंगे। वे वचन-वंश संसार में आकर प्रकट होंगे तथा उनका नाम चूड़ामणि कहलाएगा। सत्यपुरुष के अंश नौतम सुरति, तुम्हारा वंश होकर काल-निरंजन का जाल काटेंगे तथा जीवों का संशय एवं भय दूर करेंगे।

॥ छंद ॥

कलि यह नाम प्रताप धर्मनि, हंस छूटे काल सो।
सत्तनाम मन बच दृढ़ गहे, सो निस्तरे यम जाल सों॥
यम तासु निकट न आवई, जेहि बंस की परतीति हो।
कलि काल के सिर पांव दै, चले भव जल जीति हो॥ 83॥

हे धर्मदास! यह कलियुग है, इसमें सत्यनाम के प्रताप से, जीव काल से छूटेंगे। जो मनुष्य सत्यनाम को मन एवं वचन से दृढ़तापूर्वक पकड़ेगा, वह यम के जाल से बच जाएगा। यम तथा यमदूत उसके पास नहीं आएंगे, जिसे वचन-वंश का विश्वास होगा। वह इस कलियुग और काल-निरंजन के सिर पर पांव रखकर, संसार-सागर को जीत, सत्यलोक जाएगा।

॥ सोरठा ॥

तुम सों कहौं पुकार, धर्मदास चित परखहू।
तेहि जिव लेउं उबार, वचन वंश जो दृढ़ गहे॥ 87॥

हे धर्मदास! मैं तुमसे पुकार कर कहता हूं कि तुम अपने चित्त में परख कर देखो। मैं उस जीव को उबार लूंगा, अर्थात संसार से उसका उद्धार करूंगा,

जो वचन-वंश को दृढ़ता से पकड़ेगा (वचन-वंश जीवों को सत्यनाम की दीक्षा देगा)।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु विनय करौं कर जोरी। कहत वचन जिव त्रासै मोरी॥
वचन वंश पुरुष के अंशा। पावउं दर्श मिटे जिव संशा॥
इतनी विनय मान प्रभु लीजे। हे साहिब यह दाया कीजे॥
तब हम जानहिं सत की रीति। वचन तुम्हार होय परतीती॥

धर्मदास जी कहते हैं कि हे प्रभु! मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूं, परंतु कहते हुए मेरा जीव डरता है। वचन-वंश सत्यपुरुष के अंश हैं, यदि मैं उनके दर्शन पा जाऊं तो मेरे जीव का संशय मिट जाए।

हे प्रभु! मेरी इतनी विनती मान लीजिए। हे साहिब! मुझ पर दया कीजिए, अर्थात मुझे उनका दर्शन कराइए। तब मैं आपके कथनानुसार सत्य की रीति समझूं और आपके वचनों पर मुझे विश्वास हो।

सद्गुरु कबीर वचन मुक्तामणि प्रति

॥ चौपाई ॥

सुन साहिब अस वचन उचारा। मुक्तामणि तुम अंश हमारा॥
अति अधीन सुकृत हठलायी। तिन कहं दर्शन देहु तुम आयी॥
तब मुक्तामणि क्षण इक आये। धर्मदास तब दर्शन पाये॥

धर्मदास जी की बात सुनकर सद्गुरु कबीर साहेब ने ऐसा वचन बोला कि हे नौतम सुरति मुक्तामणि! तुम तो मेरे, अर्थात सत्यपुरुष के अंश हो। धर्मदास ने अत्यंत विनम्र होकर तुम्हारे दर्शन के लिए हठ लगाई है, तुम आकर इनको दर्शन दो।

तब नौतम सुरति मुक्तामणि (चूड़ामणि) एक क्षण के लिए आए और तब धर्मदास जी ने उनके दर्शन पाए।

धर्मदास वचन मुक्तामणि प्रति

॥ चौपाई ॥

गहिके चरण परे धर्मदासा। अब हमरे चित उपजी आसा॥
बारम्बार चरण चित लाया। भले पुरुष तुम दर्श दिखाया॥
दर्श पाय चित भयो अनंदा। जिमि चकोर पाए निशि चंदा॥

नौतम सुरति मुक्तामणि जी के चरण पकड़कर धर्मदास जी उन पर गिर पड़े,

और बोले कि अब मेरे चित्त में वंश उत्पन्न होने की आशा प्रकट हो गई। उनके चरणों में उन्होंने बारंबार चित्त लगाया तथा कह उठे कि हे पुरुष! आपने मुझको भला दर्शन दिखाया। दर्शन पाकर मेरा चित्त आनंदमय हो गया, जैसे—चकोर पक्षी रात में चंद्रमा को पाकर आनंदित होता है।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

अब प्रभु दाया करो तुम ज्ञानी। वचन वंश प्रगटे जग जानी॥
आगे जेहिते पंथ चलाई। तेहिते करौं विनती प्रभुताई॥

फिर धर्मदास जी सद्‌गुरु कबीर साहेब को कहते हैं कि हे प्रभु ज्ञानी जी! अब आप मुझ पर दया करो कि जिससे संसार में वचन-वंश प्रकट हो। जिससे आगे पंथ चले, उसी से हे प्रभु! मैं आपसे विनती करता हूं।

चूड़ामणि की उत्पत्ति की कथा

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। दशै मास प्रगटे जिव कासा॥
तुम गृह आय लेहि अवतारा। हंसन काज देह जग धारा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, दस महीने में तुम्हारे वंश जीवरूप में प्रकट होगा। तुम्हारे घर आकर वह अवतार लेगा, वह जीवों के उद्धार के कार्य के लिए ही संसार में आएगा।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास सुनु शब्द सिखापन। कहौं संदेश जान हित आपन॥
वस्तु भंडार दीन तुम पांहीं। सौंपहु वस्तु बतावहु ताहीं॥
अब जो होइ है पुत्र तुम्हारा। सो तो होई है अंश हमारा॥

हे धर्मदास! मेरी शिक्षा-उपदेश सुनो, अपना हित जानकर मैं यह संदेश कह रहा हूं। मैंने तुम्हें अनमोल वस्तु-रूपी ज्ञान का भंडार दिया है, वही ज्ञान-वस्तु उस वंश को सौंपकर बतानी है। अब जो तुम्हारा पुत्र होगा, वह तो मेरा अंश होगा, अर्थात उस पर मेरा ज्ञान-प्रताप रहेगा।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास अस विनती लाई। हे प्रभु मोकहं कहु समुझाई॥
हे पुरुष हम इंद्री वश कीन्हा। कैसे अंश जन्म जग लीन्हा॥

धर्मदास ने फिर इस प्रकार विनती की कि हे प्रभु! मुझे समझाकर कहो। हे सद्गुरु, सत्पुरुष! मैंने तो अपनी कामेंद्री को वश में कर लिया है, फिर कैसे पुरुष के अंश नौतम सुरति मुक्तामणि संसार में जन्म लेंगे।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

तब आयसु साहब अस भाखे। सुरति निरति करि आज्ञा राखे॥
पारस नाम धर्मनि लिखि देहू। जाते अंश जन्म सो लेहू॥

तब सद्गुरु कबीर साहेब ने आज्ञा देते हुए इस प्रकार कहा कि तुम स्त्री-पुरुष दोनों काम-विषयासक्ति से दूर रहते हुए मात्र सुरति से रति करो। हे धर्मदास! सत्यपुरुष का नाम पारस है, उसे पान पर लिखकर अपनी पत्नी आमिन को दो, जिससे सत्यपुरुष का अंश नौतम सुरति जन्म लेगा।

॥ चौपाई ॥

लखहु सैन में देऊं लखाई। धर्मदास सुनियो चित लाई॥
लिखो पान पुरुष सहिदाना। आमिन देहु पान परवाना॥

हे धर्मदास! तुम चित्त लगाकर सुनो, संकेत में समझो मैं तुम्हें समझाता हूं। पान पर सत्यपुरुष की पहचान, पारस नाम लिखो और वह पान-परवाना आमिन को दो।

धर्मदास वचन आमिन प्रति

॥ चौपाई ॥

तब गयउ धर्मदास कहं शंका। दृष्टि समीप कीन्हा परसंगा॥
धर्मदास आमिन हंकरावा। लाय खसम के चरन परावा॥

धर्मदास जी को शंका हो गई थी कि उक्त प्रकार से मैथुन होना कैसे संभव होगा? उनकी वह शंका तब गई, जब पति-पत्नी दोनों ने पास बैठकर, परस्पर दृष्टि मिलाकर सुरति से रति की। धर्मदास ने अपनी पत्नी आमिन को बुलाया और उसे सद्गुरु कबीर साहिब के चरणों में पड़ाया।

॥ चौपाई ॥

पारस नाम पान लिख दीन्हा। गरभवास आसा सो लीन्हा॥
रति सुरति सो गरभ जो भयऊ। चूरामनि बास तहां लयऊ॥
धर्मदास परवाना दीन्हा। आमिन आय दंडवत कीन्हा॥

आज्ञानुसार धर्मदास ने पान पर सत्यपुरुष का 'पारस' नाम लिखकर आमिन को दिया, उसने गर्भवास की आशा से वह पान लिया। इस प्रकार सुरति से रति करने से जो गर्भ हुआ, वहां चूड़ामणि ने वास लिया। धर्मदास ने विधिपूर्वक

सदुपदेश के साथ पान-परवाना दिया, आमिन ने आकर श्रद्धापूर्वक सद्गुरु साहिब को दण्डवत्-बंदगी की।

चूड़ामणि जी का प्रकट होना

॥ चौपाई ॥

दसों मास पूजी जब आसा। प्रगटे अंश चूरामणि दासा॥
कहिए अगहन मास बखानी। शुक्ल पक्ष उत्तम दिन जानी॥

आशा करते हुए जब दस मास पूरे हुए, तो सत्यपुरुष के अंश नौतम सुरति चूड़ामणि (मुक्तामणि) जी प्रकट हुए। वह अगहन का महीना था और शुक्ल-पक्ष का उत्तम दिन था।

॥ चौपाई ॥

मुक्तामणि परगटि जब आये। द्रव्य दान और भवन लुटाए॥
धन्य भाग मोरे गृह आए। धर्मदास गहि टेके पाए॥

जब मुक्तामणि जी का जन्म हो गया, तब धर्मदास जी ने प्रसन्नतापूर्वक धन-संपत्ति एवं घर आदि दान में बहुत लुटाए। धर्मदास जी विनम्रता से कहते हैं कि मेरे धन्य भाग्य हैं, जो मेरे घर मुक्तामणि प्रकट हुए, ऐसा कहते हुए उन्होंने मुक्तामणि जी के चरणों में अपना मस्तक रख दिया (उस समय उनकी आनंदमय स्थिति का अनुमान लगाना कठिन था, जिसको वे स्वयं ही जानते थे)।

सद्गुरु कबीर साहिब का आना तथा मुक्तामणि जी की प्रशंसा करना

॥ चौपाई ॥

जाना कबीर मुक्तामन आए। धर्मदास गृह तुरत सिधाए॥
अहै मुक्त केर अक्षर मुक्तामन। जीवन काज देह धर आयन॥
अजर छाप अब प्रगटे आए। यम सो जीव लेहु मुक्ताए॥
जीवन केर भयो निस्तारा। मुक्तामनि आए संसारा॥

जब सद्गुरु कबीर साहिब को पता चला कि मुक्तामणि का जन्म हो गया है, तो वे तुरंत धर्मदास जी के घर पहुंचे। मुक्तामणि जी को देखकर वे कहते हैं कि यह मुक्तामणि मुक्ति का स्वरूप है और यह जीवों के उद्धार-कार्य के लिए देह धारकर आया है।

यह मुक्ति की अजर छाप अब आकर प्रकट हो गया है। यह काल-निरंजन से जीवों को मुक्त करा लेगा। संसार में जो मुक्तामणि आए हैं, इनसे जीवों का उद्धार होगा।

वंश बयालीस की स्थापना

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

कछुक दिवस जब गएबितायी। तब साहिब इक वचन सुनायी॥
धर्मदास लो साज मंगाई। चौका जुगत करब हम भाई॥

जब कुछ दिन बीत गए, तब सद्गुरु कबीर साहिब ने अपना एक वचन सुनाया कि हे धर्मदास! सब साज-सामान मंगा लो, हे भाई! मैं विधि-विधान से चौका करूंगा।

॥ चौपाई ॥

थापव वंश बयालीस राजू। जाते होय जीव का काजू॥
धर्मदास सब साज मंगाई। ज्ञानी आगे आन धराई॥

मैं तुम्हारे बयालीस वंश के ज्ञान-राज्य की स्थापना करूंगा, जिससे जीवों का उद्धार कार्य हो। धर्मदास जी ने चौका का सब सामान मंगाया और सद्गुरु कबीर साहिब के आगे लाकर रख दिया।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहिब प्रति

॥ चौपाई ॥

और साज चाहो सो ज्ञानी। सो साहिब मोहि कहो बखानी॥

धर्मदास कहते हैं कि हे ज्ञानी जी साहिब! और जो साज-सामान आप चाहो, तो मुझे स्पष्ट-रूप से कहो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

साहिब चौका जुगत मंडावा। जो चाहिए सो तुरत मंगावा॥
बहुत भांति सों चौक पुरायी। चूरामणि कहं ले बैठायी॥

सद्गुरु कबीर साहिब को जो सामान चाहिए था, वह तुरंत मंगवाया और युक्ति से चौका पूरना आरंभ किया। उन्होंने बहुत प्रकार से चौक पुरवाया तथा चूड़ामणि जी को लेकर पास बैठाया।

॥ चौपाई ॥

पुरुष वचन जग महं आये। तिहि विधि जीव लेहु मुकताये॥
वंश बयालिस दीन्हा राजू। तुमते होय जीव कहं काजू॥

सद्गुरु कबीर साहेब मुक्तामणि (चूड़ामणि) को कहते हैं कि तुम सत्यपुरुष का वचन मानकर संसार में आए हो, विधिपूर्वक जीवों को मुक्ता लोगे। मैंने तुमको

वंश बयालीस का राज्य दिया है, जिससे कि तुमसे, अर्थात वंश बयालीस से जीवों का उद्धार-कार्य होगा।

चूड़ामणि को सद्‌गुरु कबीर का उपदेश देना

॥ चौपाई ॥

तुमते वंश बयालिस होई। सकल जीव कहं तारै सोई॥
तिनसों साठ होइ हैं शाखा। तिन शाखन ते होइ हैं परशाखा॥

तुमसे बयालीस वंश होंगे, जो समस्त श्रद्धालु जीवों को तारेंगे, अर्थात उनका कल्याण करेंगे। तुम्हारे उन बयालीस वंशों से साठ शाखाएं होंगी और फिर उन शाखाओं से प्रशाखाएं होंगी।

॥ चौपाई ॥

दस सहस्त्र परसाख तुव ह्वैहैं। वंश साथ सबै निरवहि हैं॥
नाता जान करें अधिकाई। ताकहं लोक बदों नहिं भाई॥
जस तुम्हार हुइ है कड़िहारा। तैसे जानो साख तुम्हारा॥

इस प्रकार तुम्हारी दस हजार तक प्रशाखाएं होंगी। वंशों के साथ मिलकर उन सबका निर्वाह हो जाएगा। परंतु तुम्हारे वंश उनसे नाता जानकर यदि अधिक लगाव करेंगे, तो हे भाई! उनको सत्यलोक प्राप्त नहीं होगा, अतः तुम्हारे वंशों को मोह-माया से दूर रहना चाहिए।

मेरे उपर्युक्त वर्णित उपदेशानुसार जैसे तुम्हारे वंश जीवोद्धार के कर्णधार होंगे, वैसे ही तुम्हारी शाखाओं के जानो, क्योंकि तुम्हारे वंशों के अनुरूप ही वे आचरण करेंगे।

॥ छंद ॥

पुरुष अंस नहिं दूसरे तुम, सुनहु सुवंश नागरा।
अंश नौतम पुरुष के तुम, प्रगट भै भौसागरा॥
देख जीवन कहं विकल तब, पुरुष तोहि पठायऊ।
वंश दूजो कहै तेहि, जीव यम लै खायऊ॥ 84॥

हे बुद्धिमान सुवंश चूड़ामणि! तुम सत्यपुरुष के अंश हो, कोई दूसरे नहीं। तुम नौतम सुरति सत्यपुरुष के अंश, भवसागर में प्रकट हुए हो। जीवों को अत्यंत व्याकुल (दुखी) देखकर, उनके उद्धार के लिए सत्यपुरुष ने तुमको भेजा है। मेरे उपदेशानुसार यदि तुम्हारे वंश आचरण करेंगे, तो वे भी तुम्हारे सदृश होंगे और यदि कोई उनको दूसरा कहे अथवा समझेगा, तो उस जीव को यम खा लेगा।

॥ सोरठा ॥

वंश पुरुष के रूप, ज्ञान जौहरी परखि हैं।
होवे हंस स्वरूप, वंश छाप जो पाइहैं॥ 88॥

मेरे सत्योपदेश के अनुसार आचरण करने पर, तुम्हारे वंश सत्यपुरुष के समान रूप होंगे। परंतु इस बात को वही परखेंगे, अर्थात समझेंगे जो ज्ञान-जौहरी होंगे। जिनके ऊपर तुम्हारे वंशों की छाप पड़ेगी, वे जीव हंस-स्वरूप होंगे (स्पष्ट अभिप्राय यह है कि जो तुम्हारे वंशों से ज्ञान-दीक्षा प्राप्त कर उसका यथावत आचरण करेगा, उस हंस-जीव का उद्धार होगा)।

विशेष—*यहां पर यह सुस्पष्ट कर देना उचित है कि सद्गुरु कबीर साहिब ने जीवों के उद्धार निमित्त जिस ज्ञान-स्वरूप वंश बयालीस की स्थापना की, उसको उन्होंने कोई मनमानी से चलने-बरतने अथवा सामान्य संसारी-जनों की भांति जगत के मायिक-विषय-प्रपंच में स्वछंद विचरने का अधिकार कदापि नहीं दिया, प्रत्युत उसको एक आदर्श ज्ञान-मर्यादा के आधार पर नियुक्त किया। अध्ययन से यह साफ पता चलता है कि वंश बयालीस की प्रणाली को उन्होंने गुरु-ज्ञान-मर्यादा के विशेष नियमों से अनुबद्ध किया। उनके सदुपदेश से अनुबंधित वंश बयालीस की एक अनुशासित वैधानिक व्यवस्था है, जिसके साथ सदाचार, सत्यज्ञान एवं त्याग-विवेक वैराग्यादि महान सद्गुणों का भरपूर उल्लेख है, जिनका पालन करना उसके सभी संत-महंत तथा वंश के 'पं. श्री आचार्य' के लिए अपरिहार्य है। वस्तुत: सदाचार एवं सत्यज्ञान ही मूल्यवान हैं, ये ही महानता के परिचायक हैं और इनसे ही सत्य का दिग्दर्शन संभव है। अतएव उपदेशित रहनि गहनि एवं विशुद्ध आचार-संहिता के नियमों का उल्लंघन करने पर कोई संत-महंत के पूज्य पद पर कैसे रह सकता है? उसका पतन होना स्वाभाविक है। उसी प्रकार वंश बयालीस की गुरु-मर्यादा का नियत आदर्श समाप्त हो जाने पर, उसका विघटन हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं—*

बचन जो चूके बंस तुम्हारा। होय न बंस वहां औतारा॥
धर्मनि चूके बंस तुम्हारा। लेय न बंस यहां औतारा॥

अर्थात हे धर्मदास! यदि तुम्हारा वंश सार-वचनोपदेश को चूक जाएगा, तो फिर उसमें उद्धार करने वाले पुरुष का अवतार नहीं होगा।

बोध पाई गुरु पद गहे, धर्मदास निज रूप।
इंद्री बयालिस बोधिके, वंश बयालिस भूप॥

हे धर्मदास! सद्गुरु के श्रीचरणों में समर्पित होने वाला बोध प्राप्त करेगा, वह निज-रूप, अर्थात परम आत्मस्वरूप को उपलब्ध होगा और ऐसा समस्त इंद्रियों को वश में रखने वाला महापुरुष वंश बयालीस का सम्राट (पं. श्री आचार्य) होगा।

वचन गहे सो वंश है, बिना वचन नहिं वंश।
वंश अंश सब वचन है, बिना वचन विध्वंश॥

यह स्मरण रहे कि सार-वचन को ग्रहण करने वाला ही वंश है, प्रत्युत बिना

सार-वचन के वंश नहीं। सार-वचनोपदेश से संपन्न वंश के अंश (पं. श्री) द्वारा उच्चारित वाणी वचन है और बिना वचन तो विनाश, अर्थात यूं ही मृत्यु-मुख में पड़ना है।

ताते धर्मनि कर परचारा। बिना शब्द नहिं जीव उबारा॥
शब्द गहे सो पंथ चलावे। बिना शब्द नहिं सत्य लखावे॥
शब्द गहे सो भवजल पारा। बिना शब्द बूड़े मंझधारा॥
ताते वंशन देहु चिताई। जो चाहें निज हित वह भाई॥
शब्द हुकुम नहिं टारैं कबहीं। आनंद राज सुख विलसे तबहीं॥
कहं लगि कहों सुनो धर्मदासा। आगम भेद कियो परगासा॥

अतएव, हे धर्मदास! तुम यह प्रचार करो कि बिना शब्द ग्रहण किए जीव का उद्धार नहीं होगा। जो शब्द ग्रहण करेगा, वह पंथ चलाएगा। बिना शब्द वह सत्य को नहीं लखा सकता। जो शब्द ग्रहण करेगा, वह भवसागर से पार होगा, अन्यथा वह मंझधार में डूबेगा। इसलिए हे भाई! तुम अपने वंश को चेता दो कि यदि वे अपना भला चाहते हैं तो सार-शब्दोपदेश को कभी भी न टालें, अन्यथा तभी सब आनंदमय राज-सुख नष्ट हो जाएगा। हे धर्मदास! मैं तुमको कहां तक कहूं, मैंने यह आगे का भेद प्रकट किया है।

शब्द अथवा वचन से तात्पर्य सद्गुरु कबीर साहिब की उस सारगर्भित अमृत-वाणी से है, जो उन्होंने सत्योपदेश के रूप में यथानुसार सर्व पंथाचार्य, संत-महंत एवं जन-सामान्य के कल्याण के लिए उच्चारित की। उनके शब्द वचन के अंतर्गत सांसारिक माया-मोह एवं काम-क्रोधादि समस्त विषय-विकारों का स्पष्ट निर्देश है और इसी के साथ-साथ उन्होंने तन-मनेंद्रियों का पूर्ण संयम कर, विधिवत ध्यान-सुमिरन की निश्चल साधना से सत्यपुरुष के साक्षात्कार का यथोचित उपाय सुझाया है, जिससे जीव भवसागर से पार होता है। उनके उपदेशित सार-शब्द-वचन को दृढ़ता से ग्रहण करने वाला वचन-वंश का अधिकारी होकर भवसागर से पार होता है तथा दूसरों को भवसागर से पार उतारता है। इसके विपरीत उनके शब्द-वचन को न मानने वाला, निज मनमानी करने वाला, व्यर्थ में भरमता हुआ भवसागर में डूबेगा। इसीलिए उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा है—

वचन मान सों वंश हमारा। नातरु बूड़ि मुये संसारा॥
जौन चाल संसार की, तौन बंस की नाहिं।
इनमें जो अंतर परे, हमें दोष कछु नाहिं॥

अर्थात, जो हमारे सार-वचन को मानेगा, वही हमारा वंश होगा, नहीं तो वह संसार-सागर में डूब मरेगा। संसार के सामान्य लोगों की जो चाल है, वह वचन-वंश की नहीं होगी। परंतु इनमें यदि अंतर पड़ा, तो इनके मिटने का दोष हमें मत देना।

बंस रहनि यह सार, अटल लिख दीन्ह हो।
चले जो चाल तुम्हार, तब वे ब्यालिस पूरि हो॥

अर्थात वंश की रहनि सार है, जो अटल लिख दी है। जो तुम्हारी चाल, अर्थात तुम्हारी भांति शुद्ध-सात्विक, आध्यात्मिक आचार-विचार एवं रहनि-गहनि में रहता हुआ मेरे सार-वचनोपदेश का यथावत् पालन करेगा, तब वे वंश बयालीस पूरे होंगे। अन्यथा—

वंश अंस कड़िहार नसाई। बिनु करनी जो पंथ चलाई॥
चूके भक्ति करनी नहिंसारा। रोके बीच काल बटपारा॥
बीचहि ते खण्डन होय सोई। करामात सब जाय बिगोई॥
नाद बंस की छोड़हि आसा। ताते बिन्द जाय यम फांसा॥

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि बिना शुद्ध करनी (आचरण) एवं बिना सार-शब्दोपदेश के, मर्यादाहीन होकर जो पंथ चलाएंगे, तो वे वंश के कर्णधार अंश नष्ट हो जाएंगे। सार-करनी तथा भक्ति-साधना के चूकने पर, काल उन्हें बीच में रोककर विभाजित कर देगा। तब वंश की सब आश्चर्यपूर्ण विशेषता मिट जाएगी और उसका बीच में ही खण्डन हो जाएगा। वंश-प्रणाली के विरक्त नाद-वंश की आशा छोड़कर, अर्थात उनसे दूर होकर, बिंद वंश (गृहस्थ) यम के फांस में फंस जाएगा। ऐसी स्थिति में सद्गुरु कबीर साहेब ने आगम वाणी में कहा है—

''तेरहें पीढ़ी ज्ञान रजधानी, चूरामन औतारा हो।
उनके अंग छाया नहिं होई, देह विदेह अपारा हो॥
उनके आगे जोग मत चलिहै, राजनीति उठ जाई हो।
पांच स्वाद की इच्छा नाहीं, सो मति सब उन आई हो॥''

अर्थात वंश बयालीस की तेरह पीढ़ी समाप्त हो जाने पर, चूरामन का अवतार होगा, जिससे ज्ञान का प्रचार-प्रसार होगा और यह चूरामन कोई देहधारी व्यक्ति नहीं, अपितु विदेह स्वरूप होगा। उसके आगे राजनीति उठ जाएगी तथा योग-मत, अर्थात विरक्त संतों का मत चलेगा।

श्री स्वामी युगलानंद विहारी ने अपनी 'कबीरपंथी शब्दावली' में प्रस्तावना तथा 'ध्यान देकर पढ़ो' (पृ. 22-23-24) में वंश बयालीस तथा तेरह पीढ़ी के पश्चात चूड़ामन के प्रकट होने से संबद्ध चर्चा की है, जो पठनीय है। वे आगम संदेश की पंक्तियों का उदाहरण देते हुए लिखते हैं—

''परगटे वचन चूरामन अंसू। शब्द रूप सब जगत प्रसंसू॥
शब्दे पुरुष शब्दे गुरुराई। बिना शब्द नहिं जिव मुकताई॥
जाते जीव मुक्त हो भाई। मुक्तामन सोइ नाम कहाई॥''

अर्थात, वचन चूड़ामन कोई देहधारी पुरुष नहीं है, अपितु वह तो शब्द-

स्वरूप, अर्थात सद्‌गुरु कबीर साहिब का सत्यज्ञान-विचार और अमृतवाणी है, जिसकी सारा जगत प्रशंसा करता है। वह सार शब्द ही पुरुष एवं सद्‌गुरु है, बिना उस सार शब्द के जीव मुक्त नहीं होगा। जिस सार-शब्द के यथा आचरण से जीव मुक्त होगा, हे भाई! वही मुक्तामणि नाम कहाएगा।

कबीरपंथ में धर्मदास जी के बयालीस वंश की सद्‌गुरु कबीर साहिब ने सुनिश्चित स्थिति ठहराई है, जो कबीर सागर में स्वसमवेद बोध प्रकरण के पृ. 153 पर इस प्रकार वर्णित है—

''वंश बयालिस की थिति भाखौं। सत्य कबीर प्रमान जो राखौं॥
बीस द्यौस अरु वर्ष पचीसा। सिंहासन थिति येती दीसा॥
वर्ष पचीस बीस दिन केरी। भोग पूर्ण थित हो जिहि बेरी॥
गद्दी सौंपे जो अधिकारी। निज इच्छा परधाम पधारी॥
जबलों थित करार नहिं पूजै। तबलों राजसिंहासन भूजै॥
तिनको कबहूं न मृत्यु की पीरा। अमर कीन तेहि सत्यकबीरा॥
गद्दी को करार नियरावै। सन्त महन्त खबरि तब पावै॥
सुनें सन्त पृथ्वी चहुं खूटे। दरशन हेत जाय तहं जूटे॥
लेहि चलाने को जब बीरा। जग प्रत्यक्ष निरखे तेहिं धीरा॥
यहि विधि आप लोक चलि जाई। सन्त महन्त बिदा तब पाई॥''

उपर्युक्त अनुसार वंश बयालीस का प्रत्येक वंश पच्चीस वर्ष और बीस दिन तक गद्दी पर बैठेगा, इससे अधिक या कम नहीं। पच्चीस वर्ष और बीस दिन पूरे हो जाने पर, पं. श्री साहिब अधिकारी को गद्दी सौंपकर, अपनी इच्छा से शरीर छोड़कर मोक्ष-धाम को प्रस्थान करते हैं। सद्‌गुरु कबीर साहिब ने उनको अमर किया है, जिससे उन्हें कभी मृत्यु की पीड़ा नहीं होती। जब गद्दी का सुनिश्चित समय निकट आता है, तो पंथ के सर्व संत-महंतों को समाचार दिया जाता है और वे सब दर्शन के लिए एकत्रित होते हैं। अधिकारी को गद्दी सौंपने का सब कार्य संपन्न हो जाने पर, साहिब चलने का बीड़ा लेते हैं, जिसे जगत के लोग प्रत्यक्ष देखते हैं। इस प्रकार आप सत्यलोक को चले जाते हैं।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सतगुरु कहैं धर्मनि सुनि लेहू। अब भंडार सौंपि तुम देहू॥
प्रथम तुमहिं जो सौंपा भाई। सबहिं सबहि तुम देहु लखाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, अब तुम चूड़ामणि को ज्ञान-वाणी का भंडार सौंप दो। हे भाई! पहले तुमको जो मैंने ज्ञान-वाणी का भंडार सौंपा था, अब उसका सब ही तुम चूड़ामणि को दर्शा दो।

॥ चौपाई ॥

तब चूड़ामणि होवैं पूरा। देखत काल होय चकचूरा॥
आज्ञा सुनत उठे धर्मदासा। चूरामणि हंकराए पासा॥

तब चूड़ामणि ज्ञान से पूरे होंगे, जिसे देखकर काल भी चकनाचूर हो जाएगा। सद्गुरु कबीर साहेब की आज्ञा सुनकर धर्मदास उठे और चूड़ामणि को अपने पास बुलाया।

॥ चौपाई ॥

वस्तु लखाय तेहि छन दीन्हा। तनिको विलम्ब न तामहं कीन्हा॥
दोउ आय पुनि गुरु पद परसे। कांपन लग्यो काल तब डर से॥

उन्होंने उसी समय सब ज्ञान-वस्तु उसे लखा दी, उसमें तनिक भी विलंब नहीं किया। फिर धर्मदास और चूड़ामणि दोनों ने आकर सद्गुरु कबीर साहिब के चरण-स्पर्श किए, तब यह सब देखकर काल-निरंजन डर से कांपने लगा।

॥ चौपाई ॥

सतगुरु भये हुलास मन माहीं। देखि चुरामणि अति हरषाहीं॥
बहुरि धर्मनि सन भाषन लागे। सुनहु सुकृत तुम बहुत सुभागे॥

सद्गुरु कबीर साहिब मन में बहुत प्रसन्न हुए। चूड़ामणि को देखकर वे अत्यंत हर्षित हुए। फिर वे धर्मदास से कहने लगे कि हे सुकृत सुनो! तुम बहुत सौभाग्यशाली हो।

॥ चौपाई ॥

वंश तोर भये जग कड़िहारा। जग जीवन होइहै भव पारा॥
इन्हें होइहैं ब्यालिस बंसा। प्रथमै प्रकटै सोई मम अंसा॥
वचन वंश मम सोइ कहावै। बहुरि होय सों बिन्द जग आवै॥

तुम्हारे वंश जग-जीवों के कर्णधार-गुरु (तारक) होंगे, इनके द्वारा जग-जीव भवसागर से पार होंगे। इनसे बयालीस वंश होंगे, इनमें जो पहले प्रकट हुआ वह नौतम सुरति मेरा अंश है। वही मेरा वचन वंश कहलाएगा, फिर इनसे बिंद वंश जगत में आएगा।

वंश का माहात्म्य

॥ चौपाई ॥

वंश हाथ परवाना पइहैं। सो जिव निरभय लोक सिधैहैं॥
ताकहं यम नहिं रोके बाटा। कोटि अठासी ढूंढ़ें घाटा॥

जो वंश के हाथ से परवाना (विधिवत् सार-ज्ञानोपदेश) पाएगा, वह जीव निर्भय सत्यलोक जाएगा। उसका सत्यलोक जाने का काल-निरंजन रास्ता नहीं रोक सकता, भले ही वह अठासी करोड़ घाट ढूंढ़े।

॥ चौपाई ॥

कोटि ज्ञान भाखे मुख बाता। नाम कबीर जपे दिन राता॥
बहुतक ज्ञान कथे असरारा। वंश बिना सब झूठ पसारा॥

कोई करोड़ों ज्ञान की बातें कहता हो और प्रदर्शन में बिना विधान दिन-रात 'कबीर' का नाम जपता हो। व्यर्थ में कितना भी असार ज्ञान कथन करता हो, परंतु वंश बिना सब ज्ञान झूठ का फैलाव है।

॥ चौपाई ॥

जो ज्ञानी करि है बकवादा। तासों बूझहु व्यंजन स्वादा॥
कोटि यतन से व्यंजन करई। साम्हर बिन फीका सब रहई॥

जो स्वयं को ज्ञानी समझकर ज्ञान के नाम पर बकवास करता है, उससे ज्ञान-रूपी व्यंजन (भोजन) के स्वाद को पूछो। करोड़ों यत्न से यदि भोजन तैयार करें, परंतु नमक बिना सब फीका रहता है, अर्थात वह खाने में अच्छा नहीं लगता।

॥ चौपाई ॥

जिमि व्यंजन तिमि ज्ञान बखाना। वंश छाप सतरस सम जाना॥
चौदह कोटि है ज्ञान हमारा। इनते सार शब्द है न्यारा॥

जैसे भोजन की बात है, वैसे ही ज्ञान को कहा गया है। ज्ञान पर वंश-छाप, अर्थात वंश का सिद्धान्तमय ज्ञानोपदेश सत्य-रस के समान जानो, बिना वंश का ज्ञान फीका है। हमारा विस्तृत ज्ञान चौदह करोड़ है, परंतु इन सब ज्ञानों में सार-शब्द न्यारा है।

॥ चौपाई ॥

नौ लख उडुगन उगें अकाशा। ताहि देख सब होत हुलासा॥
होवे दिवस भानु उगि आवे। तब उडुगन की ज्योति छिपावे॥

आकाश में नौ लाख, अर्थात असंख्य तारागण (गृह-नक्षत्रादि) उदित होते हैं, उन्हें देखकर सब प्रसन्न होते हैं। जब सूर्य उदय हो आता है तथा दिन हो जाता है, तब सब तारों की ज्योति छिप जाती है, फिर वे दिखाई नहीं पड़ते।

॥ चौपाई ॥

नौ लख तारा कोटि गियाना। सार शब्द देखहु जसभाना॥
कोटि ज्ञान जीवन समुझावै। वंश छाप हंसा घर जावे॥

रात्रि के नौ लाख (असंख्य) तारों के समान करोड़ों ज्ञान को समझो और सार-शब्द को सूर्य के समान समझो। कोई करोड़ ज्ञान-कथन कर जीवों को समझाए, परंतु जीव अपने घर (सत्यलोक) वंश के सार-उपदेश से ही जाएगा।

॥ चौपाई ॥

उदधि मांझ जस चलै जहाजा। ताकर और सुनो सब साजा॥
जस वोहित तस शब्द हमारा। जस केवट तस वंश तुम्हारा॥

जैसे समुद्र को पार करता हुआ जहाज चलता है, उसी की भांति पार करने वाले और साधन सुनो। जैसे समुद्र पार करने वाला जहाज होता है, वैसा ही अथाह संसार-सागर पार करने वाला मेरा सार-शब्द है तथा जहाज चलाने वाले केवट की भांति सार-शब्द का उपदेश करने वाले तुम्हारे वंश होंगे।

॥ छंद ॥

बहु भांति धर्मनि कहा तुमसों, पुरुष मूल बखानि हो।
वंश सो दूजो करे जोइ, सो जाय यमपुर थानि हो॥
वंश छाप न पाव जो जिव, शब्द निशि दिन गावई।
काल फंद में फंद तेहि, मोहि दोष न लावई॥ 85॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! मैंने तुमको बहुत प्रकार से समझाकर कहा है कि सबका मूल आदि पुरुष है, जिसका वर्णन किया है। उस आदि पुरुष का सत्योपदेश वंश करेगा, उसके अतिरिक्त जो दूसरा करेगा, तो वह यमपुर के स्थान नरक में जाएगा। जो जीव वंश का सारोपदेश नहीं पाएगा और रात-दिन दूसरा शब्द गाता रहेगा, वह काल-निरंजन के जाल में फंसेगा। इस पर फिर मुझे कोई दोष न लगाए।

॥ सोरठा ॥

तजे काग की चाल, परखि शब्द सो हंस हो।
ताहि न पावै काल, सार शब्द जो दृढ़ गहे॥ 89॥

मेरे सार-शब्द को परखकर, जो जीव कौवे की चाल, अर्थात दुष्कर्मों एवं दुर्गुणों को छोड़ दे तो वह सार-ग्राही हंस हो जाएगा। जो सार-शब्द को भली-भांति दृढ़ता से ग्रहण करेगा, उसे काल-निरंजन नहीं पा सकता।

भविष्य कथा प्रारंभ

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास विनती अनुसारी। हे प्रभु मैं तुम्हरी बलिहारी॥
जीवन काज वंश जगआवा। सो साहिब सब मोहिं सुनावा॥

धर्मदास ने दीन-भाव से सद्गुरु कबीर साहिब से विनती की कि हे प्रभु! मैं तुम्हारी बलिहारी हूं। जीवों के उद्धार निमित्त वचन-वंश (चूड़ामणि) संसार में आया, हे साहेब! वह सब आपने मुझको सुनाया।

॥ चौपाई ॥

वचन वंश चीन्हे जो ज्ञानी। ताकहं नहिं रोके दुर्गदानी॥
पुरुष रूप हम वंशहि जाना। दूजा भाव न हृदये आना॥

जो ज्ञानी वचन-वंश को पहचानेगा, उसको निरंजन का दुर्गदानी जैसा दूत भी नहीं रोक सकता। मैंने तो वंश को सत्यपुरुष का रूप जाना है, इसके अतिरिक्त दूसरा भाव मेरे हृदय में नहीं आया।

॥ चौपाई ॥

नौतम अंश परगट जग आये। सो मैं देखा ठोक बजाये॥
तबहूं मोहि संशय इक आवे। करहु कृपा जाते मिट जावे॥

नौतम सुरति अंश चूड़ामणि (मुक्तामणि) प्रकट होकर जग में आए हैं, वह मैं पूर्णतः ठोक-बजाकर देख लिया है। तब भी मुझे एक संशय आता है, हे साहिब! मुझ पर कृपा कीजिए, जिससे मेरा संशय मिट जाए।

॥ चौपाई ॥

हम कहं समरथ दीन पठायी। आए जग तब काल फंसायी॥
तुम तो कहो मुहिं सुकृत अंसा। तबहूं काल कराल मुहि डंसा॥

हे साहिब! मेरी बात पर ध्यान दो कि मुझको समर्थ सत्यपुरुष ने भेज दिया था, परंतु जब मैं संसार में आया तब काल-निरंजन ने मुझे फंसा लिया। आप तो मुझे सत-सुकृत का अंश कहते हो, तब भी भयंकर काल ने मुझे डसा।

॥ चौपाई ॥

ऐसहिं जो वंशन कहं होई। जगत जीव सब जाय बिगोई॥
ताते करहु कृपा दुखभंजन। वंश छले नहिं काल निरंजन॥
और कछू मैं जानौं नाहीं। मोर लाज प्रभु तुमकहं आहीं॥

ऐसे ही जो वंशों के साथ हुआ, तो जगत के सब जीव नष्ट हो जाएंगे, अर्थात उन्हें यूं ही काल खा जाएगा। इसलिए हे सर्व दुखों को मिटाने वाले। कृपा करिए कि काल-निरंजन वंशों को न छले। और मैं कुछ नहीं जानता, हे प्रभु! मेरी लाज तुमको है (मैं हर प्रकार से आपके अधीन हूं)।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुम नीक विचारा। यह संशय सत आदि तुम्हारा॥
आगे अस होइहिं धर्मदासा। धर्मराय इक करै तमासा॥
सो मैं तुमसे गोय न राखौं। जस होइहिं सत सत भाखौं॥

सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुमने ठीक विचारा है और

पहले ही तुम्हारा यह संशय होना भी सत्य है। हे धर्मदास! आगे ऐसा होगा कि धर्मराय-निरंजन एक तमाशा (खेल) करेगा। उसे मैं तुमसे गुप्त नहीं रखूंगा, जैसा होगा वह मैं तुमको सच-सच बताता हूं।

॥ चौपाई ॥

प्रथम सुनो आदि की बानी। करिके ध्यान लेहु तुम जानी ॥
सतयुग पुरुष मोहिं हकराई। आज्ञा कीन्ह जाहु जग भाई ॥

पहले तुम आदिपुरुष की वाणी सुनो और ध्यान करके सब समझ लो। सतयुग में सत्यपुरुष ने मुझे पुकारा तथा आज्ञा की कि हे भाई! तुम संसार में जाओ।

॥ चौपाई ॥

तहंते चले काल मग भेंटा। बहु तकरार दर्प तिहि मेटा ॥
तब तिन कपट मोसन कीन्हा। तीन युग मांगि मुहिं सन लीन्हा ॥

सत्यपुरुष की आज्ञा मानकर मैं वहां से चला तो काल-निरंजन मुझे रास्ते में ही मिला और उसके बहुत झगड़ा करने पर मैंने उसका दर्प (अहंकार) मिटाया। तब उसने मेरे साथ एक कपट किया कि मुझसे तीन युग मांग लिए[1]।

॥ चौपाई ॥

पुनि अस कहेसि कालअन्याई। चौथा युग नहिं मांगौं भाई।
ऐसा वचन हार हम दीन्हा। तब संसार गमन हम कीन्हा ॥

अन्याय करने वाले काल-निरंजन ने फिर ऐसा कहा कि हे भाई! मैं चौथा युग (कलियुग) नहीं मांगता। अंततः ऐसा वचन मैंने काल को दे दिया और तब जीवों के उद्धार के लिए मैंने संसार में गमन किया।

॥ चौपाई ॥

युग तीनों हार तिहिं हम दीन्हा। ताते पंथ प्रगट नहिं कीन्हा ॥
चौथा युग जब कलियुग आयो। बहुरि पुरुष मुहिं जगत पठायो ॥

क्योंकि काल-निरंजन के कथनानुसार मैंने तीनों युग उसे दे दिए, उसी से उस समय मर्यादित सत्य-पंथ प्रकट नहीं किया। चौथा युग जब कलियुग आया, तब फिर सत्य-पुरुष ने मुझको संसार में भेजा।

॥ चौपाई ॥

मग महं रोक्यो काल कसाई। बहुत विधि सों करी बरियाई ॥
सो कथा हम प्रथम जनाई। बारह पन्थ को भेद बताई ॥

---

1. उस समय काल-निरंजन ने ज्ञानी-स्वरूप कबीर साहिब से कहा था कि सतयुग, त्रेता तथा द्वापर तीन युगों में जीव सत्यलोक में थोड़े जाएं और चौथे कलियुग में अपनी शरण में लेकर अधिक जीवों को मुक्ताना।

पूर्व की भांति कसाई काल-निरंजन ने मुझे मार्ग में रोका और बहुत प्रकार से मेरे साथ झगड़ा किया। वह सब कथा हमने पहले बता दी है और काल-निरंजन के बारह पंथ का भेद भी बता दिया है।

॥ चौपाई ॥

कपट कर्‌यो बारह बतलाओ। औरो बात न मोहि जनायो॥
तीनि युगन मुहि दीन हिराई। कलियुग महं बहु फंद मचाई॥

परंतु काल-निरंजन ने उस समय मुझसे कपट किया कि मुझे केवल बारह-पंथ बतलाए और गुप्त बात मुझको नहीं बताई। तीन युगों में तो उसने मुझे विवश कर दिया तथा कलियुग में बहुत जाल रचकर उधम मचाया।

॥ चौपाई ॥

बारह पंथ प्रगट मुहिं भाखा। चार पन्थ सो गुप्तहिं राखा॥
जब मैं चार गुरु निरमाया। कालहु आपन अंश पठाया॥

काल ने मुझसे अपने बारह पंथ के प्रकट करने का वर्णन किया, किंतु अपने चार पंथ को गुप्त रखा। जब मैंने भारतखंड में चार गुरु के निर्माण की व्यवस्था की, तो काल ने अपना अंश (दूत) भेज दिया।

॥ चौपाई ॥

जब हम कीन्हा चार कडिहारा। धर्मराय छल बुधि विस्तारा॥
पुरुष हम सन कीन परकासा। जानि परमारथ कहों धर्मदासा॥
यह चरित्र सोइ बुझि हैं भाई। जासु हृदय निज नाम सहाई॥

जब मैंने जीवों के उद्धार के लिए चार कर्णधार नियुक्त किए, तब धर्मराय-निरंजन ने उसी प्रकार अपनी छल-बुद्धि का फैलाव किया। हे धर्मदास! सत्यपुरुष ने मेरे साथ जो प्रकाशित किया, उसे परमार्थ जानकर मैंने तुमको कहा है। हे भाई! इस चरित्र को वही समझता है, जिसके हृदय में निज सत्यनाम सहायक होता है।

निरंजन का अपने चार अंश को पंथ चलाने की आज्ञा देने की कथा

॥ चौपाई ॥

चारहि अंश निरंजन कीन्हा। तिन कहुं बहुत सिखापन दीन्हा॥

काल-निरंजन ने अपने चार अंश (दूत) प्रकट किए और उनको अपने अनुसार बहुत शिक्षा दी।

निरंजन वचन अपने दूतों प्रति

॥ चौपाई ॥

तिनते कह्यो सुनहु हो अंशा। तुम तो आहु मोर निज बंसा॥
तुमसे कहौं मानि सो लीजै। आज्ञा मोर सो पालन कीजै॥

काल-निरंजन ने अपने उन दूतों से कहा कि हे मेरे अंशों सुनो! तुम तो मेरे अपने वंश के हो। तुमसे मैं जो कहूं वह मान लीजिए तथा जैसी मेरी आज्ञा हो उसका पालन कीजिए।

॥ चौपाई ॥

वैरी हमार अहै एक भाई। नाम कबीर जग माहिं कहाई॥
भवसागर मेटन सो चाहै। और लोक सो बसावत आहै॥

हे भाई! हमारा एक वैरी (दुश्मन) है, जो संसार में 'कबीर' नाम कहाता है। वह हमारा भवसागर मिटाना चाहता है और जीवों को दूसरे लोक में बसाना चाहता है।

॥ चौपाई ॥

करि छल कपट जगत भरमावै। मोर राह ते सबहिं छुटावै॥
सत्यनाम कर टेर सुनाई। जीवन कहं सो लोक पठाई॥

वह मेरे विरुद्ध छल-कपट कर जगत को भरमाता है और मेरी राह से सबको छुटाता है। वह सत्यनाम की सुमधुर टेर सुनाकर जीवों को सत्यलोक भेजता है।

॥ चौपाई ॥

जगत उजारन सो मन दीन्हा। ताते तुमहिं हम उत्पन्न कीन्हा॥
आज्ञा मानि जगत महं जाहू। नाम कबीर पंथ प्रगटाहू॥

मैंने अपना मन इस जगत को उजाड़ने में दिया हुआ है और इसीलिए मैंने तुमको उत्पन्न किया है। मेरी आज्ञा मानकर तुम संसार में जाओ और 'कबीर' नाम से पंथ प्रकट करो।

॥ चौपाई ॥

जगत जीव विषया रस माते। मैं जो कहहुं करहु सोइ घाते॥
पंथ चार तुम जग निरमाओ। आपन आपन राह बताओ॥

संसार के जीव काम-मोहादि विषयों के रस में लवलीन हैं। मैं जो कहता हूं अर्थात जिस प्रकार कहता, वैसे ही उन पर घात करो। संसार में तुम चार पंथ स्थापित करो और उनको अपनी-अपनी राह बताओ।

॥ चौपाई ॥

नाम कबीर चारों धरि राखो। बिना कबीर न वचन मुख भाखो॥
नाम कबीर जब जिव आवैं। कहहु वचन तिनके मन भावैं॥

चारों के नाम 'कबीर' नाम पर रखो, बिना कबीर के मुख से कोई वचन न बोलो। कबीर नाम से आकर्षित होकर जब जीव तुम्हारे पास आएं, तो उनको कबीर के शब्द-वचन कहो, जो उनके मन को भाते हैं (इस प्रकार उनको अपने वाणी जाल में फंसाओ)।

॥ चौपाई ॥

कलियुग जीव ज्ञान सुधि नाहीं। देखा देखी राह चलाहीं॥
सुनत वचन तुम्हरो हरषावैं। बार बार तुम्हरे ढिग आवैं॥

कलियुग में जीवों को ज्ञान की सुधि (चेतना) नहीं है, वे देखा-देखी की राह चलते हैं। तुम्हारे वचन सुनकर वे प्रसन्न होंगे और बार-बार तुम्हारे पास आएंगे।

॥ चौपाई ॥

जब सरधा तिनकी दृढ़ होई। भेद भाव ना मनिहैं कोई॥
तिन पर जाल आपनो डारो। भेद न पावैं देखि सम्हारो॥

जब उनकी श्रद्धा दृढ़ हो जाए तथा वे कोई भेद-भाव न मानें, अर्थात कबीर के सत्यपंथ और तुम्हारे मत-पंथ में वे अंतर न मानें। तब उन पर अपना जाल डालो, परंतु देख-संभलकर कि जिससे वे कोई भेद न पाएं।

॥ चौपाई ॥

जम्बुदीप महं करिहो थाना। नाम कबीर जहां परमाना॥
जब कबीर बांधोगढ़ जावे। धर्मदास कहं निज अपनावे॥

जंबूद्वीप अर्थात भारतवर्ष में अपना स्थान सुनिश्चित करो, जहां पर कबीर के नाम एवं ज्ञान का प्रमाण है। जब कबीर बांधोगढ़ (छत्तीसगढ़) में जाएं और धर्मदास को अपना समझकर अपनाएं, अर्थात ज्ञान-दीक्षा देकर उसे अपना शिष्य बनाएं।

॥ चौपाई ॥

ब्यालीस वंश तब थापै राजू। तबही सोवे राज विराजू॥
चौदह यम ते नाका रोका। बारह पन्थ हम लाया धोका॥

तब वे उसके बयालीस वंश के ज्ञान-राज्य को स्थापित करेंगे, तब उसी समय प्रवेश कर तुम्हें उनके स्थापित राज्य को डावांडोल करना है। वैसे मैंने चौदह-यमों से सत्यलोक जाने का मार्ग रोक दिया है और 'कबीर' नाम पर बारह पंथ चलाकर जीवों को धोखे में डाल दिया है।

॥ चौपाई ॥

तबहूं हम कहं संशय भाई। ताते तुम कहं देत पठाई॥
ब्यालीस पर तुम करिहो घाता। तिनहिं फंसावहु अपनी बाता॥
तबहीं तो हम जानब भाई। वचन मोर तुम लियहु उठाई॥

हे भाई! तब भी मुझको संशय है, उसी से तुमको वहां भेज देता हूं। तुम उनके बयालीस वंशों पर क्रमशः घात करो और उन्हें अपनी बातों में फंसा लो। हे भाई! तब ही मैं तुमको कुछ जानूंगा, जब तुम मेरे वचन को पूर्ण-रूप से उठा लोगे, अर्थात निबाहोगे।

चारों दूत वचन काल-निरंजन प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनत वचन हरषे तब दूता। आज्ञा मान लीन्ह तुव बूता॥
जैसी आज्ञा तुव हमहि दीन्हा। मानि वचन हम सिर पर लीन्हा॥
हाथ जोड़ विनवन लागे। तुम किरपा हम होब सुभागे।

काल-निरंजन का वचन सुनकर तब उसके दूत हर्षित होकर बोले कि हे देव! हमने आपकी आज्ञा मान ली है। जैसी आज्ञा आपने हमें दी, उसके अनुसार आपका वचन मानकर हमने सिर पर लिया है।

वे चारों दूत हाथ जोड़कर विनती करने लगे कि आपकी कृपा से हम सौभाग्यशाली हो गए। आपकी आज्ञा का हम अक्षरशः पालन करेंगे।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

इतना सुनत काल हरषाना। अतिही सुख दूतन ते जाना॥
औरहु तिनको बहुत बुझावा। काल अन्याई राह बतावा॥

अपने दूतों से इतना सुनते ही काल-निरंजन प्रसन्न हो गया। उसने अपने दूतों की बात से अत्यंत सुख माना। फिर अन्याय करने वाले उस काल ने और भी उनको बहुत समझाया तथा छल-कपट करने की राह बताई।

॥ चौपाई ॥

जीव घात बहुत मन्त्र सुनाई। तिन कहं कहे जाहु जग भाई॥
चारहु चार भाव धनि जाहू। ऊंच-नीच छोड़हु जनि काहू॥

जीवों पर घात करने के उसने बहुत मंत्र-विचार सुनाए और फिर उनको कहा कि हे भाई! अब तुम संसार में जाओ। तुम चारों चार दिशाओं में अपने भाव लेकर जाओ तथा किसी भी ऊंच-नीच को मत छोड़ो, अर्थात सब पर वार करो।

॥ चौपाई ॥

अस करि फान फनहु तुम भाई। जेहि करि मोर अहार न जाई॥
सुनत वचन तिन मन अति हरषे। काल वचन जिमि अमृत वरषे॥

तुम ऐसा फन-फनाओ, अर्थात कपट-चालाकी करो कि हे भाई! जिससे मेरा आहार (जीव) कहीं चला न जाए। काल-निरंजन के ये वचन सुनकर चारों दूत मन में अत्यंत हर्षित हुए। काल के ये वचन उनको ऐसे लगे, जैसे अमृत बरसा हो।

॥ चौपाई ॥

यही चार दूत जग प्रगटै हैं। चार नाम ते पंथ चलै हैं॥
चार दूत कहं नायक जानो। बारह पन्थ कर अगुवा मानो॥

यही चार दूत संसार में प्रकट होने हैं, जो चार नाम से पंथ चलाएंगे। इन चार दूतों को नायक (प्रमुख) जानो तथा बारह पंथ का अग्रणी मानो।

॥ चौपाई ॥

इन्हहीं चार जो पंथ चलैहैं। उलट पुलट तिनहू अरथैहें॥
चार पंथ बारह कर मूला। वचन वंश कहं होइहैं शूला॥
सुनत वचन धर्मनि घबराने। हाथ जोर विनती तिन ठाने॥

इनसे जो चार पंथ चलेंगे, उनसे सब अर्थ उलट-पुलट हो जाएगा। वे चार पंथ बारह पंथों का मूल (आधार) होंगे, जो वचन वंश के लिए शूल समान होंगे।

सद्गुरु कबीर साहिब के ऐसे वचन सुनकर धर्मदास घबरा उठे और हाथ जोड़कर वे विनती करने लगे।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर साहिब प्रति

॥ चौपाई ॥

कह धर्मदास सुनो प्रभु मोरा। अब तो संशय भयो बरजोरा॥
अब तो विलम्ब न कीजे साईं। प्रथम बतावहु तिनकर नाईं॥
जीवन काज मैं पूछौं तोही। तिनकर चरित्र सुनावहु मोही॥

धर्मदास कहते हैं कि हे मेरे प्रभु सुनो! अब तो मेरा संशय बहुत बढ़ गया है। हे स्वामी! अब तो देर मत कीजिए और मुझे पहले उन कालदूतों के बारे में बताओ। जीवों के उद्धारार्थ मैं आपसे पूछता हूं कि आपका उनका चरित्र मुझको सुनाओ।

॥ चौपाई ॥

तिन दूतन कर भेष बताओ। कहो चिह्न ताको परभाओ॥
कौन रूप तिन जग में धारैं। केहि विधि ते सो जीवन मारैं॥
कौन देश परगटि हैं आई। हे साहिब मुहिं देहु बताई॥

उन काल-दूतों का वेष बताओ। उनका लक्षण कहो तथा उसका प्रभाव बताओ। वे संसार में कौन-सा रूप धारेंगे और किस प्रकार जीवों को मारेंगे? वे कौन-से देश में आकर प्रकट होंगे? हे साहिब! मुझको सब स्पष्ट बता दो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास मैं तोहि लखाऔं। चारों दूत कर भेद बताऔं॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! मैं तुम्हें सब लखाता हूं और चारों काल-दूतों का भेद बताता हूं।

चार दूतों का वर्णन

॥ चौपाई ॥

तिनकर नाम प्रथम सुनि लीजै। रंभ कुरंभ जय विजय भनीजै॥

सद्गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि पहले उन काल-दूतों का नाम सुना लो—पहला रंभदूत, दूसरा कुरंभ दूत, तीसरा जय दूत और चौथा विजय दूत है।

1. रंभ दूत का वर्णन

॥ चौपाई ॥

रम्भ दूत कर करौं बखाना। गढ़ कालिंजर रोपिहै थाना॥
भगवान भगत वहि नामधराई। बहुतक जीव लेई अपनाई॥

मैं पहले रंभ दूत का वर्णन करता हूं। वह भारतवर्ष के गढ़ कालिंजर में अपनी गद्दी स्थापित करेगा। वह अपना नाम भगवान भगत धरेगा और बहुत जीवों को अपनाएगा, अर्थात अपना शिष्य करेगा।

॥ चौपाई ॥

जो जिवरा होइहिं अंकूरी। सो बांचहि यम फंदा तूरी॥
रम्भ जोरावर यम बड़ द्रोही। तुमहि खंडि अरु खंडिहि मोही॥

जो जीव अंकूरी होगा, अर्थात जिसमें ज्ञान-चेतना होगी तथा जिसके पूर्व के शुभ-कर्म होंगे, वह यम के फंदे को तोड़कर बच जाएगा। वह काल-रूप रंभ दूत बहुत बलवान तथा षड्यंत्र करने वाला होगा। वह तुम्हारी और मेरी बातों का खंडन करेगा।

॥ चौपाई ॥

आरती नरियर चौका संहारी। खंडिहि लोक दीप सब झारी॥
ज्ञान ग्रंथ औ खंडिहिं बीरा। कथहिं रमैनी काल गभीरा॥

वह वंश के आरती, नारियल तथा चौका-विधान को रोकेगा और सत्यपुरुष के सत्यलोक एवं द्वीपों का खंडन करेगा। सत्यज्ञान-ग्रंथों और पान-बीड़ा का खंडन करेगा तथा अपनी रमैनी कथेगा, ऐसा वह काल दूत बहुत प्रबल होगा।

॥ चौपाई ॥

मोर वचन लेई करे तकरारा। तेही फांस फंसे बहु सारा॥
चारों धार कथे असरारा। हमारा नाम ले करे पसारा॥

वह मेरे वाणी-वचन को लेकर झगड़ा (वाद-विवाद) करेगा, उससे उसके जाल में बहुत लोग फंसेंगे। चारों धाराओं का, अर्थात सब ओर का अपने मनानुसार ज्ञान कथेगा। मेरा नाम 'कबीर' लेकर अपना प्रचार-प्रसार करेगा।

॥ चौपाई ॥

आपहि आप कबीर कहाई। पांच तत्त्व बसि मोहि ठहराई॥
थापिहीं जीव पुरुष सम भाई। खंडिहिं पुरुष जीव वर लाई॥

वह आप ही अपने-आपको 'कबीर' कहाएगा और मुझे पांच तत्वों की देह में बसा हुआ अथवा पांच तत्वों के अधीन ठहराएगा। हे भाई! वह जीव को सत्यपुरुष के समान सिद्ध करेगा तथा सत्यपुरुष का खंडन कर जीव को श्रेष्ठ बतलाएगा।

॥ चौपाई ॥

हंस कबीर इष्ट ठहराई। करता कहं कबीर गुहराई॥
कर्ता काल जीवन दुखदाई। तेहि सरीख मोहिं यह यमराई॥

हंस, अर्थात जीव को इष्ट कबीर ठहराएगा तथा कर्ता को कबीर कहकर पुकारेगा। सबका कर्ता काल-निरंजन जीवों के लिए दुखदायी है और उसके समान ही यह यमदूत मुझको समझता है।

॥ चौपाई ॥

कर्मी जीवहि पुरुष ठहराई। पुरुष गोइहिं आपु प्रगटाई॥
जो यह जीव आपुहिं होई। नाना दुख कस भुगते सोई॥

वह कर्म करने वाले जीव को ही समर्थ पुरुष ठहराएगा और सत्यपुरुष के नाम-ज्ञान को छिपाकर अपने-आपको प्रकट करेगा। विचार करो कि यदि यह जीव अपने-आप ही सब कुछ होता, तो फिर वही नाना प्रकार के दुख कैसे भुगतता है?

॥ चौपाई ॥

पांच तत्त्व वसि जीव दुख पावे। जीव पुरुष कहं सम ठहरावे॥
अजर अमर पुरुष की काया। कला अनेक रूप नहिं छाया॥

पांच तत्वों (पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु एवं आकाश) के वश हुआ जीव दुख पाता है और रंभ दूत जीव को सत्यपुरुष के समान ठहराता है। सत्यपुरुष का शरीर तो अजर-अमर है। उसकी अनेकानेक कलाएं हैं तथा उसको रूप एवं छाया नहीं है।

॥ चौपाई ॥

अस यमदूत खण्ड देइ ताही। थापे जीव पुरुष यह आही॥
तिस सागर झाईं निज देखी। धोखा गहै निअच्छर लेखी॥
बिनु दर्पण दरसे निज रूपा। धर्मनि यह गुरुगम्य अनूपा॥

ऐसे—यमदूत उसका खण्डन कर कहेगा कि यह जीव ही सत्यपुरुष है, जिस प्रकार सागर में निज देह की परछाईं देखी हो और धोखे में पड़कर अज्ञानी जीव उसे अपना स्वरूप मान लेता हो।

हे धर्मदास! यह गुरु-ज्ञान अनुपम है, जिससे बिना दर्पण ही अपना यथार्थ रूप (आत्मस्वरूप) दिखाई पड़ता है।

॥ छंद ॥

यहि विधि रम्भ अपरबल सुनि धर्मनि, करइ छल मत आइकै।
बहु जीवहि फांस फंसावहि जग, नाम कबीरहि गाइकै॥
अंश वंशहि चेताइ हौं तुम, शब्द के सहिदान तै।
परखि मम शब्द हिय माहि चीन्हे, रहे गुरु मन ज्ञान तै॥ 86॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, इस प्रकार काल-निरंजन का वह रंभ दूत अपार बलशाली होगा और आकर छलपूर्ण मत फैलाएगा। वह 'कबीर' नाम गाकर संसार के बहुत जीवों को झूठ एवं कपट के जाल में फंसाएगा। उससे बचने के लिए तुम मेरे सार-शब्द की सही पहचान से अपने अंश-वंश (बयालीस वंश) को चेताना कि सब मेरे सार-शब्द को परख एवं समझकर हृदय में धारण करें तथा सदैव सद्‌गुरु के गंभीर सत्यज्ञान में स्थित रहें।

॥ सोरठा ॥

चित चेतो धर्मदास, यमराजा अस छल करे।
गहि शब्द विश्वास, हंसन शब्द चिताइहौं॥ 90॥

हे धर्मदास! अपने चित्त से चेतो, अर्थात पूर्णतः सावधान हो जाओ, यमराज निरंजन ऐसा भारी छल अवश्य करेगा। अतः विश्वासपूर्वक मेरा सार-शब्द ग्रहण करके, उस सार-शब्द से सब जीवों को चेताओ।

2. कुरंभ दूत का वर्णन

॥ चौपाई ॥

रम्भ कथा तुहि कहि समुझावा। अब कुरम्भ के बरनूं भावा॥
मगध देश में परगटि है जाई। धनीदास वहि नाम धराई॥

मैंने तुमको काल-दूत रंभ की कथा समझाकर कही। हे भाई! अब दूसरे कुरंभ दूत का वर्णन करता हूं। वह मगध देश में जाकर प्रकट होगा और वह अपना नाम धनीदास धराएगा।

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी जीवन कहं भटकावे। कुरम्भ दूत बहु जाल खिंड़ावे॥
जाको छुद्र ज्ञान घट होई। धोक दे यम ताहि बिगोई॥

वह कुरंभ दूत छल-प्रपंच के बहुत जाल बिखराएगा और ज्ञानी जीवों को भटकाएगा। जिसके हृदय में अल्प एवं तुच्छ ज्ञान होगा, वह यमदूत उसे धोखा देकर नष्ट कर देगा।

धर्मदास वचन सद्गुरु प्रति

॥ चौपाई ॥

हे साहिब मुहिं कहो बुझाई। कौन ज्ञान वह कथि है आई॥

धर्मदास ने विनीत भाव से कहा कि हे साहिब! मुझे समझाकर कहो कि काल-निरंजन का वह कुरंभ दूत आकर कौन-से ज्ञान को कहेगा?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि सुनो कुरम्भ की बाजी। कथि टकसार फंद दृढ़ साजी॥
चंद्र सूर तत लगन पसारा। राहु केतु कथिहैं असरारा॥

हे धर्मदास! तुम कुरंभ दूत की चालबाजी सुनो, वह अपने कथन को टकसार बताकर मजबूत जाल सजाएगा। वह चंद्र (इड़ा), सूर (पिंगला) नाड़ियों के अनुसार शुभाशुभ लगन का प्रसार करेगा तथा राहु-केतु आदि ग्रहों का विस्तार से वर्णन करेगा।

॥ चौपाई ॥

पांच तत्त्व मति सार बखानी। जीव अचेत भर्म नहिं जानी॥
ज्योतिष मत टकसार पसरिहैं। ग्रह गोचर वश प्रभु बिसरैहैं॥

वह पांच तत्व तथा उनके गुणों के मत को सार बताकर बखान करेगा। अज्ञानी जीव उसके फैलाए हुए भ्रम को नहीं जानेंगे। वह ज्योतिष के मत को टकसार कहकर फैलाएगा और जीवों को ग्रह-नक्षत्र एवं इन्द्रियों के वश में करके उनसे सत्यपुरुष प्रभु को भुला देगा।

॥ चौपाई ॥

नीर पवन कहं कथिहैं ज्ञाना। पवन पवन के नाम बखाना॥
आरति चौका बहु अरथैहैं। धोखा दे जीवन भरमैहैं॥

वह नीर-पवन का ज्ञान कथन करेगा और पवन-पवन के विभिन्न नामों एवं गुणों का बखान करेगा। सत्य-भाव से हटकर आरती-चौका के वह बहुत अर्थ करेगा तथा जीवों को धोखा देकर भरमाएगा।

॥ चौपाई ॥

शिष जब करिहै करिहिं विशेषा। अंग अंग की निरखै रेखा॥
नख सिख सकल निरखिहै भाई। करम जाल जीवन भरमाई॥

जब वह अपने शिष्य करेगा तो विशेष रूप से करेगा। शिष्य करते समय वह उसके अंग-अंग की रेखा को देखेगा। हे भाई! वह पांव के नाखून से सिर की चोटी तक देखेगा और जीवों को कर्म-जाल में फांसकर भरमाएगा।

॥ चौपाई ॥

निरखि परखि जिव सूर चढ़ाई। सूर चढ़ाय जीव धरि खाई॥
कनक कामिनी दछिना अरपाई। यहि विधि जीव ठगौरी लाई॥

वह जीव को निरख-परखकर तथा भ्रम में डालकर शूरवीर कहकर चढ़ाएगा और जीव को शूरवीर के मद-मोह में चढ़ा-बढ़ाकर धरकर खाएगा। भरमाए हुए अपने शिष्यों से दक्षिणा में स्वर्ण तथा स्त्री को अर्पण कराएगा, इस प्रकार वह जीवों को ठगता रहेगा।

॥ चौपाई ॥

गांठ बांधि फेरहिं तब फेरा। करम लगाय करिहि यम चेरा॥
पवन पचासी काल की आहीं। पवन नाम लिखि पान खवाहीं॥

तब वह शिष्य की गांठ बांधकर फेरा फेरेगा और कर्म-दोष लगाकर उसे यम का दास करेगा। पचासी पवन काल की हैं, अत: वह उस शिष्य को 'पवन' नाम लिखकर पान खिलाएगा।

॥ चौपाई ॥

नीर पवन कथि करै पसारा। पवन नाम गहि आरति तारा॥
पवन पचासी करि अनुसारी। आरति चौका करे विचारी॥

वह नीर-पवन का ज्ञान-कथन कर प्रसार करेगा और शिष्य वर्ग को पवन नाम ग्रह कराकर आरती उतरवाएगा। काल के पचासी पवन के अनुसार, आरती-चौका करने का विचार करेगा।

॥ चौपाई ॥

क्या नारी क्या पुरुष रे भाई। तिल मासा निरखे सब ठाई॥
शंख चक्र औ सीपकर देखिहैं। नख सिख रेखा सबै परखैहैं॥

अरे भाई! क्या नारी और क्या पुरुष, वह सबके शरीर के तिल-माशा की निरख-परख करेगा। शंख-चक्र और सीप के चिह्न देखेगा तथा पांव के नख से सिर की शिखा तक की सब रेखाओं को परखेगा।

॥ चौपाई ॥

ऐसो काल दुष्ट मति भाई। जीवन कहं संशय उपजाई॥
संशय लगाय गरसि है काला। करहि जीव को बहुत बेहाला॥

हे भाई! काल-निरंजन का वह दूत ऐसा दुष्ट-बुद्धि होगा। वह जीवों को संशय उत्पन्न करेगा। जीवों को संशय लगाकर वह काल दूत ग्रसेगा तथा जीवों को बहुत बेहाल (अत्यंत व्याकुल एवं पीड़ित) करेगा।

॥ चौपाई ॥

औरहु सुनहु काल व्यवहारा। जस कछु कथिहै काल लबारा॥
साठि समै बारह चौपाई। देहि उठाय भरम उपजाई॥
पंच अमी एकोत्तर नामा। सुमिरन सार शब्द गुण धामा॥

और भी उस कालदूत का व्यवहार सुनो कि जैसा कुछ वह झूठा एवं प्रपंची कालदूत कथन करेगा। वह अपनी साठ समै तथा बारह चौपाइयों को उठा देगा, जिससे जीवों को भ्रम उत्पन्न होगा। वह पंचामृत एकोत्तर नाम का सुमिरण तथा सार-शब्द के गुण को मुक्ति-धाम पहुंचाने वाला कहेगा।

॥ चौपाई ॥

जीव काज बदि जो कछुराखा। तामें काल धोखा अभिलाखा॥
पांचों तत्त्व केर उपचारा। कथिहैं यही मता है सारा॥
पांचों तत्त्व प्रकृति पच्चीसा। तीनों गुण चौदह यम ईशा॥

जीवों के उद्धार-कार्य के लिए जो कुछ सत्यज्ञान एवं सदाचार बताकर निश्चित कर रखा है, उसमें वह कालदूत धोखा बतलाएगा। पांचों तत्व के निर्मित शरीर के ज्ञान को ही वह कहेगा कि यही सार मत है। वह कहेगा कि पांचों तत्व पच्चीस प्रकृति, तीनों गुण एवं चौदह यम बस यही ईश्वर है।

॥ चौपाई ॥

यहि फंदे जिव फंदैं भाई। पांच तत्त्व यम जाल बनाई॥
तन धरि सुरति तत्त्व महंलावे। तन छूटे कहू कहां समावे॥

पांचों तत्वों का वह यमदूत जाल बनाएगा और हे भाई! इसी जाल में वह जीवों को फांसेगा। विचार करो कि शरीर धारण कर जब उसके तत्वों में ध्यान लगाएं, तो फिर कहो कि शरीर छूटने पर कहां समाएंगे?

॥ चौपाई ॥

जहं आशा तहं बासा पावे। तत्त्व मतो गहि तत्त्व समावे॥
नाम ध्यान सो देह छुड़ाई। राखै तत्त्व फांस अरुझाई॥

यह सिद्धांत अटल है कि जीव की जहां आशा होती है, वह वहीं वास पाता है। अतएव, तत्वों के मत को ग्रहण करके, वह तत्वों में ही समाएगा, अर्थात उसकी मुक्ति न होकर वह तत्वों के शरीर को ही धारण करेगा। वह नाम सुमिरन एवं ध्यान से हटाकर शरीर छुड़ाएगा और जीवों को तत्वों में फांसकर-उलझाकर रखेगा।

॥ चौपाई ॥

धर्मनि कहं लगि कहौं बखानी। दूत कुरम्भ करिहै घमसानी॥

ताकी छलमति चीन्हे सोई। जो जिव मोहि लखिहै समोई॥
पांचों तत्त्व काल के अंगा। ताके मते जीव होय भंगा॥

हे धर्मदास! कहां तक वर्णन कर कहूं? कुरंभ दूत विनाश करेगा। उसकी छलबुद्धि को वही समझेगा, जो जीव मेरे ज्ञानोपदेशानुसार मुझे लखेगा तथा समायुक्त होगा। पांचों जड़-तत्व तो काल के अंग हैं, अर्थात ये परिवर्तनशील हैं और इनसे बना शरीर नाशवान है। अत: तत्वों के मत में पड़कर जीव की दुर्गति होगी।

॥ छंद ॥

सुनेउ धर्मनि कुरम्भ बाजी, करि बहु फंद फंसावई।
अनंत जीवन गरासि लेवे, तत्त्व मता फैलावई॥
लेई नाम कबीर जग महं, पंथ वहि परगट करै।
भ्रमवश जिव जाय तेहि ढिग, काल के मुख में परै॥ 87 ॥

हे धर्मदास! काल-निरंजन के कुरंभ दूत की छलबाजी सुनो, वह बहुत फंदों को रचकर जीवों को फंसाएगा। वह अनेकानेक जीवों को ग्रस लेगा तथा तत्वों के मत को फैलाएगा। वह संसार में कबीर नाम लेकर, अपना पंथ प्रकट करेगा। भ्रमवश जीव उसके पास जाएंगे और काल-निरंजन के मुख में पड़ेंगे।

॥ सोरठा ॥

पुरुष शब्द है सार, सुमिरन अमी अमोल गुण।
सो हंस हो भव पार, मन वच कर्म जो दृढ़ गहे॥ 91 ॥

सत्यपुरुष का शब्द (सत्यनाम) सार है और उसका सुमिरन अमृत-तुल्य अनमोल गुण वाला है। मन, वचन एवं कर्म से जो सार-शब्द को दृढ़ता से ग्रहण करे, वह हंस भवसागर से पार हो जाता है।

3. जयदूत का वर्णन

॥ चौपाई ॥

रंभ कुरम्भ यह कह्यो बखानी। अब परखहु तुम जय की बानी॥
यह यमदूत कठिन विकरारा। मूल मूल वह कथिहि लबारा॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि मैंने यह रंभ-कुरंभ दूतों का वर्णन कर कहा। अब तुम तीसरे जय दूत की वाणी को समझो। यह यमदूत अत्यंत कठिन विकराल होगा। वह झूठा एवं प्रपंची अपनी वाणी को मूल-मूल कहेगा।

॥ चौपाई ॥

ग्राम कुरकुट प्रगटे आई। गढ़ बांधों के निकट रहाई॥
कुल चमार के प्रगटे सोई। ऊंचे कुल की जात विगोई॥

वह जय दूत कुरकुट ग्राम में आकर प्रकट होगा, जो बांधोगढ़ के निकट ही पड़ेगा। वह चमार-कुल में उत्पन्न होगा और ऊंचे कुल वालों की जाति को बिगाड़ने का प्रयत्न करेगा।

॥ चौपाई ॥

साहब दास कहावै दूता। गणपत होइहैं ताकर पूता॥
दोई काल प्रबल दुखदाई। तुम्हरे बंस को घेरिहिं आई॥

वह यमदूत साहब दास कहाएगा और गणपत नाम का उसका पुत्र होगा। वे दोनों पिता-पुत्र प्रबल कालस्वरूप दुखदायी होंगे और तुम्हारे वंश को आकर घेरेंगे।

॥ चौपाई ॥

कथई मूल हमारे पासा। तुम्हें उठाय दई धर्मदासा॥
अनुभव कहिहैं ग्रंथ बहु भाई। ज्ञानी पुरुष संवाद बनाई॥

वह कहेगा कि मूल हमारे पास है और हे धर्मदास! वह तुम्हें, अर्थात तुम्हारे वंश उठा देगा अथवा उठाने का प्रयत्न करेगा। हे भाई! वह अपना अनुभव कहकर बहुत ग्रंथ बनाएगा और उसमें ज्ञानी पुरुष के समान संवाद बनाएगा।

॥ चौपाई ॥

कथिहैं मूल पुरुष मोहिं दीन्हा। धर्मदास निज मूल न चीन्हा॥
अस वहि काल जोरावर होई। देई भरम वंश को सोई॥

वह जयदूत कहेगा कि मूल तो सत्यपुरुष ने मुझे दिया है तथा धर्मदास ने निज मूल को नहीं समझा। ऐसा वह काल-निरंजन का दूत शक्तिशाली होगा। वह तुम्हारे वंश को भरमा देगा, अर्थात ज्ञान-मार्ग से विचलित करने का प्रयास करेगा।

॥ चौपाई ॥

वंशहि निज मत देह दिढ़ाई। पारस थाका मूल चलाई॥
मूल छाप ले वंश बिगोई। पारस देहिं काल मति सोई॥

वह तुम्हारे वंश में अपना मत दृढ़ करेगा और मूल पारस थाका पंथ चलाएगा। मूल-छाप लेकर वंश को बिगाड़ेगा। वह काल दूत अपना मूल पारस देकर सबकी वैसी ही बुद्धि करेगा।

॥ चौपाई ॥

झंग शब्द वह कथिहैं भाई। कच्चे जीवन देइ भुलाई॥
जाहि नीर ते काया होई। थापिहि ताकहं निज मति सोई॥

हे भाई! वह भीतर शून्य में झंकृत होने वाले 'झंग' शब्द का कथन करेगा, जिससे ज्ञानहीन कच्चे जीवों को भुला देगा। नारी-पुरुष के जिस रज-वीर्य के नीर से शरीर की रचना होती है, उसको ही वह अपना मूल मत थापेगा, अर्थात उसके आधार पर वह अपना मत प्रचलित करेगा।

॥ चौपाई ॥

काया मूल बीज है कामा। राखिहि ताकहं गुप्तहिं नामा॥
प्रथमहिं थाका गुप्तहिं राखी। सिषहिं साधि संधी तब भाखी॥

शरीर का मूल बीज काम-विषय है, परंतु उसका नाम वह गुप्त रखेगा। पहले तो वह अपने मूल थाका को गुप्त ही रखेगा। जब शिष्यों को जोड़कर पूरी तरह साध लेगा, तब उसका बखान करेगा।

॥ चौपाई ॥

प्रथमहिं ज्ञान ग्रंथ समुझायी। तेहि पीछे फिर काल दिढ़ायी॥
नारी अंग कहं पारस दैहैं। आज्ञा मानि शिष्य पहं लइहैं॥

पहले तो वह ज्ञान-ग्रंथों को समझाएगा, उसके पीछे फिर वह कालदूत अपना मत दृढ़ाएगा। वह स्त्री के अंग का पारस-ज्ञान देगा, जिसे आज्ञा मानकर उसके शिष्य लेंगे।

॥ चौपाई ॥

प्रथमहिं ज्ञान शब्द समुझैहैं। तेहि पीछे फिर मूल पिलैहैं॥
नरक खानि तेहि मूल बखानी। यम बंका अस छल मति ठानी॥

पहले वह ज्ञान का शब्द-उपदेश समझाएगा, उसके पीछे फिर अपना मूल थाका मत रखेगा। काम-विषय-वासना जो नरक की खान है, उसे वह मूल बखानेगा। वह बांका यमदूत ऐसी छल-बुद्धि ठानेगा।

॥ चौपाई ॥

झंझरी दीप कथा अरथाई। झंग नाम लै ध्यान धराई॥
अनहद बाजे जम को थाना। पांच तत्त्व करिहैं घमसाना॥

वह झंझरी दीप की कथा अर्थाएगा (सुनाएगा) और भीतर शून्य में झंकृत होने वाले 'झंग' नाम का ध्यान धराएगा। शून्य में जहां बिना बजाए अनहद बाजा बजता है, वह यम का स्थान है तथा वहां पांचों तत्त्व बहुत भरमाते एवं विचलित करते हैं।

॥ चौपाई ॥

पांचों तत्त्व गुफा में जाई। नाना रंग करें तहं भाई॥
पांचों तत्त्व करैं उजियारी। ऊठे झंग गुफा में भारी॥

हे भाई! पांच तत्व से निर्मित शरीर की शून्य गुफा में जाकर, ये पांचों तत्व नाना रंग करते हैं। अपने-अपने रंगों का ये पांचों तत्व आकर्षक उजाला करते हैं और उस शून्य गुफा में 'झंग' शब्द बहुत भारी उठता है।

॥ चौपाई ॥

जब सोहंगम जीव तन छांड़े। तब कहौ झंग कवन विधि मांड़े॥
झंझरी दीप काल रचि राखा। झंग हंग दोउ काल को शाखा॥

विचारणीय है कि जब सोहंगम-जीव अपना शरीर छोड़ेगा, तब कहो कि कौन विधि से 'झंग' शब्द उसके सामने आएगा अथवा उसका साथ देगा? क्योंकि वह तो शरीर रहने भर तक है, फिर शरीर के छूटते ही वह भी समाप्त हो जाएगा। झंझरी द्वीप काल-निरंजन ने रच रखा है और झंग-हंग दोनों काल की ही शाखा हैं।

॥ चौपाई ॥

कथिहै अविहर काल अन्याई। अविहर धोख धर्म कर भाई॥
आरति चौका कथिहि अपारा। होइहैं तैस बहुत कडिहारा॥

अन्यायी कालदूत जय अविहर (स्त्री-पुरुष के विषय संबंध का) ज्ञान कथेगा। हे भाई! अविहर-कथन धर्मराय-निरंजन का धोखा है। वह आरती-चौका की महिमा बहुत कहेगा, इसलिए उसके मत में बहुत कडिहार-महंत भी होंगे।

॥ चौपाई ॥

काल नाम वह साजै बीरा। परखो धर्मदास मति धीरा॥
ठाम ठाम घटि कर्म करैहैं। हमरे नाम लै हमहिं हसैहैं॥

काल संबंधी नाम से वह जयदूत पान-बीड़ा सजाएगा तथा जीवों को देगा। हे धीर-बुद्धि धर्मदास! यह सब परखो-समझो। वह कालदूत स्थान-स्थान पर नीच-कर्म करेगा और हमारा नाम लेकर हम पर ही हंसेगा।

॥ चौपाई ॥

जानिहैं जगत सब यहि सम आही। बूझहि भेद भरम तब जाही॥
कहं लगि कहौं काल कर लेखा। ज्ञानी होय सो करे विवेका॥

जगत के लोग समझेंगे कि ये सब समान हैं, अर्थात कबीर मत और जयदूत का मत एक ही है। जो भेद को पूछेगा एवं समझेगा, तब उसका भ्रम जाएगा। कालदूत जय का वर्णन कहां तक करूं, जो ज्ञानी होगा वही निरख-परख कर उसका विवेक करेगा।

॥ छंद ॥

मम ज्ञान दीपक जाहि कर सो, चीन्हिहै यमराज हो।
तजि काल विषय जंजाल हंसा, धाइहै निज काज हो॥
रहनि गहनि विवेक बानी, परखिही कोइ जौहरी।
गहहिं सार असार परिहरि, गिरा मम जेहि सूधरी॥ 88॥

जिसके हाथ में मेरा सत्यज्ञान-रूपी दीपक होगा, वह यमराज-निरंजन को पहचानेगा। वह हंस काल के विषय-जंजाल को तजकर, अपने उद्धार के लिए दौड़ेगा। रहनि-गहनि तथा विवेक संपन्न वाणी, कोई ज्ञानवान जौहरी ही परखेगा। सुधारने वाली मेरी उत्तम वाणी को सुनकर हंस-जीव सार को ग्रहण करेगा और असार का त्याग करेगा।

॥ सोरठा ॥

धर्मदास लेहु जान, जम बालक को छल मतो।
हंसहिं कहु सहिदान, जाते यम रोकैं नहीं॥ 92 ॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! तुम यम निरंजन के बालक उस जयदूत का छल-मत जान लो। हंसों के लिए उसकी पहचान कही है, जिससे काल उन्हें सत्यलोक जाने से न रोके।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुव बंस अज्ञाना। चिन्हिहैं नहीं काल सहिदाना॥
जब लग बंस रहौं लवलीना। तब लग काल रहै अतिदीना॥

हे धर्मदास! यदि तुम्हारा वंश भूल-अज्ञान में रहा, तो वह काल को यथार्थ रूप में नहीं पहचानेगा। जब तक वंश सत्यनाम में लवलीन रहेगा, तब तक उसके सामने काल अत्यंत दीन बना रहेगा।

॥ चौपाई ॥

रहै काल ध्यान बक लाई। तजिहैं नाम काल प्रगटाई॥
बेधि मूल बंस महं लगिहैं। तब टकसार धोक महं परिहैं॥

काल कपटी बगुले का ध्यान लगाए रहेगा और सत्यनाम को छोड़कर काल संबंधी नामों को प्रगटाएगा। वह मूल को बेधकर वंश में लगेगा, तब जो टकसार है वह धोखे में पड़ेगा।

॥ चौपाई ॥

छेकै काल बंस कहं आई। वस्तु कें धोखे काल अरुझाई॥
हमरी चाल से बंस उठैहैं। मूल टकसार के अरुझैहैं॥
नाद पुत्र सो न्यारा रहिहैं। मम बानी नहिं वह दृढ़ गहिहैं॥

वह काल वंश को आकर छेदेगा और वस्तु (सत्य) के धोखे में डालकर वंश को उलझाएगा। हमारी चाल से, अर्थात हमारे सत्योपदेशानुसार चलने से वंश उठेगा, परंतु उसके मूल टकसार में पड़कर उलझेगा। वह काल विषय-विकारों से रहित सदाचारी नाद-पुत्र से न्यारा रहेगा और मेरी वाणी को दृढ़ता से ग्रहण नहीं करेगा।

॥ चौपाई ॥

रहै उजागर शब्द अधारा। रहनि गहनि गुरु ज्ञान विचारा॥
ताहि न ग्रासे काल अन्याई। यह तुम जानहु निश्चय भाई॥

शब्दोपदेश के आधार पर जो स्पष्ट उजागर रहेगा और गुरु-ज्ञान-विचार के अनुसार रहनि-गहनि में रहेगा, हे भाई! तुम यह निश्चय जानो कि उसे अन्यायी काल-निरंजन नहीं ग्रसेगा।

4. विजय दूत का वर्णन

॥ चौपाई ॥

अब तुम सुनहु विजय को भाऊ। एक एक बरनि सुनाऊ॥
बुन्देलखण्ड यह प्रगटे जाई। ज्ञानी जीवहि नाम धराई॥

हे भाई! अब तुम काल-निरंजन के चौथे विजय दूत को सुनो। मैं उसकी एक-एक बात वर्णन कर सुनाता हूं। यह बुंदेलखण्ड में जाकर प्रकट होगा और अपना ज्ञानी जीव नाम धराएगा।

॥ चौपाई ॥

सखा भाव को भक्ति दिढ़ाई। रास रचहिं और मुरलि बजाई॥
सखी अनेक संग लौ लाई। आपहिं दूसरा कृष्ण कहाई॥

यह विजय दूत सखा-भाव की भक्ति दृढ़ करेगा। यह सखियों के साथ रास रचाएगा और मुरली बजाएगा। अनेक सखियों को संग लगन (प्रेम) लगाएगा तथा अपने-आपको दूसरा कृष्ण कहाएगा।

॥ चौपाई ॥

धोखा देई जीवन कहं सोई। बिन परिचे कस जाने कोई॥
चक्षु अग्र रह मन की छाया। नासा उरध अकाश बताया॥

वह जीवों को धोखा देकर फांसेगा। बिना परिचय उसे कोई कैसे जान सकता है? ध्यान-योग के लिए वह बताएगा कि आंखों के आगे मन की छाया रहती है और नासिका के ऊपर की ओर आकाश (शून्य) है।

॥ चौपाई ॥

कुहिरा परै धोखा यम केरा। श्याम सेत चित रंग चितेरा॥
छिन छिन चंचल अस्थिरनाहीं। चर्म दृष्टि से देखे ताहीं॥

नेत्र एवं कर्ण बंद कर ध्यान लगाने की स्थिति में कुहरा पड़ते जैसे दीखना और श्याम, श्वेत, नीला, पीला तथा चितकबरा आदि विभिन्न रंगों का दिखाई पड़ना, वह सब स्वाभाविक शारीरिक-क्रिया है, परंतु मुक्ति के नाम पर उसमें जीवों को डालना-भरमाना सब काल का धोखा है। वह क्रिया क्षण-क्षण में परिवर्तित होने से चंचल है, स्थिर नहीं है, उसे स्थूल चर्म-दृष्टि से कोई देखे।

॥ चौपाई ॥

मन की छाया काल दिखावै। मुक्ति मूल छाया ठहरावै॥
सत्यनाम ते देइ छुड़ाई। जाते जीव कालमुख जाई॥

वह कालदूत विजय ध्यान-योग में मन की छाया-माया ही दिखाएगा और मुक्ति का मूल छाया को ठहराएगा। सत्यपुरुष के सत्यनाम से वह छुड़ा देगा, जिससे जीव दुख भोगता हुआ काल के मुख में जाएगा।

॥ चौपाई ॥

धर्मनि तोहि कहा समझाई। जस चरित्र करि है जमराई॥
चारों दूत करैं घन घोरा। यहि विधि जीव चोरावै चोरा॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! यमराव जैसा चरित्र करेगा, मैंने तुम्हें समझाकर कहा है। काल-निरंजन के चारों दूत रंभ, कुरंभ, जय तथा विजय चारों ओर भयंकर स्थिति उत्पन्न करेंगे और इस प्रकार जीव को अपने चक्कर में चलाते रहेंगे, जिससे उसका कल्याण नहीं हो सकेगा।

***निर्देश**—उपर्युक्त चारों कालदूतों के जो नाम एवं स्थान आदि परिचय-रूप में बताए गए हैं, हो सकता है कि ये लाक्षणिक हों और इनका वास्तविक अर्थ कुछ और निकलता हो अथवा समयानुसार इनमें कुछ परिवर्तन आ गया हो, जिसका आज के परिप्रेक्ष्य में समझ पाना कठिन है। अतएव, समस्त संत-भक्त एवं माननीय पाठक वर्ग उन कालदूतों के गुण-लक्षण एवं चरित्र को समझते हुए अपने-अपने स्थान पर सदैव सतर्क रहें, कहीं ऐसा न हो कि वे कालदूत अपने आस-पास ही हों और उनका प्रभाव अपने आदर्श भक्तिमय जीवन पर न पड़ जाए। सद्गुरु के उपदेशानुसार सत्यज्ञान एवं सदाचार में स्थित रहें, तभी जीवन कल्याण संभव है।*

कालदूतों से बचने का उपाय

॥ चौपाई ॥

दीपक ज्ञान धरौ दृढ़ बारी। जाते काल न करे उजारी॥
इंद्रमती कहं प्रथम चितावा। रही सुचेत काल नहिं पावा॥

सद्गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि सद्गुरु का ज्ञान-दीपक अपने हृदय में दृढ़तापूर्वक बाल कर रखो, जिससे काल-निरंजन अपना प्रभाव न कर सके और अज्ञानांधकार न फैला सके। पहले भक्तिमति इंद्रमती को मैंने चेताया था, वह सचेत रहकर गुरु-ज्ञान में स्थित रही, जिससे काल-निरंजन उसे नहीं पा सका।

भविष्य कथन अलग व्यवहार

॥ चौपाई ॥

जस कछु आगे होय है भाई। सो चरित्र तोहि कहौं बुझाई॥
जबलों तुम रहिहौ तन माहीं। तौलों काल प्रगटिहैं नाहीं॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे भाई! जैसा कुछ आगे होगा, वह चरित्र मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं। जब तक तुम इस शरीर में जीवित रहोगे, तब तक काल-निरंजन प्रकट नहीं होगा।

॥ चौपाई ॥

गहो किनार ध्यान बक लाए। जब तन तजो काल तब आए॥
छेकहि तोर बंस को आई। काल धोक सो बंस रिझाई॥

तुम भवसागर के विषयों में न डूबकर, भक्ति रूपी किनारे पर ऐसे रहो जैसे बगुला ध्यान लगाए रहता है। जब तुम शरीर छोड़ोगे तभी काल आकर प्रकट होगा। काल आकर तुम्हारे वंश को छेदेगा और काल धोखे से वंश को रिझाएगा।

॥ चौपाई ॥

बहु कडिहार बंस के नादा। पारस बंस करहिं विष स्वादा॥
बिन्दहि मूल और टकसारा। होइहि खमीर बंस मझारा॥

वंश के बहुत नाद संत-महंत कर्णधार होंगे। काल के प्रभाव से पारस वंश को विष के स्वाद जैसा करेंगे। बिंद मूल और टकसार, वंश के अंदर मिश्रित होंगे।

॥ चौपाई ॥

बंसहि एक धोक बड़ होइहै। हंग दूत देहिं माहिं समैहै॥
आप हंग अधिक है ताही। आप माहिं सो झगर कराही॥

वंश में एक बहुत बड़ा धोखा होगा कि काल-स्वरूप अहंकार दूत उसकी देह में समाएगा। उससे अपने-आप में अहंकार अधिक होगा, वह अपने आपस में झगड़ा कराएगा, अर्थात पारस्परिक वाद-विवाद एवं कलह-क्लेश कराएगा।

॥ चौपाई ॥

बिन्द सुभाव हंग नहिं छोड़ै। मन मन आय विन्द मन मोड़ै॥
अंस मोर सुपन्थ चलैहै। ताहि देख सो रार बढ़ैहै॥

बिंद-वंश के शील स्वभाव को अहंकार नहीं छोड़ेगा। वह मन-ही-मन आकर बिंद-वंश के मन को मोड़ेगा। मेरा अंश जो सत्य-पंथ चलाएगा, उसे देखकर वह राड़ (झगड़ा) बढ़ाएगा।

॥ चौपाई ॥

ताको चिन्हि देखि नहिं सकिहै। आपन वाट बंस महं तकिहै॥
बंस ग्रंथ अनुभव कथि रखिहैं। नाद पुत्र की निन्दा भखिहैं॥

उसके चिह्न अथवा चाल को वह देख नहीं सकेगा और अपना मार्ग वंश में तकेगा। वंश अपने अनुभव-ग्रंथ कथकर रखेगा, परंतु नाद-पुत्र की निंदा बखानेगा।

॥ चौपाई ॥

सोइ पढ़िहैं वंश कडिहारा। ताको होइ बहुत हंकारा॥
स्वारथ आपा चीन्ह न पैहैं। अनंत जीवन कहं भटकैहैं॥

उन अनुभव-ग्रंथों को वंश के कर्णधार संत-महंत पढ़ेंगे, जिससे उनको

बहुत अहंकार होगा। वे स्वार्थ एवं अहंकार को परख (समझ) नहीं पाएंगे और कल्याण के नाम पर अनेक जीवों को भटकाएंगे।

॥ चौपाई ॥

ताते तोहि कहौं समुझाई। अपने वंशन देहुं चिताई॥
नाद पुत्र जो प्रगट होई। ताको मिले प्रेम से सोई॥

उसी से मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं कि अपने वंश को चेता दो। नाद-पुत्र[1] जो प्रकट होगा, उसको वे सब प्रेम से मिलें।

॥ चौपाई ॥

तुमहु नाद पुत्र मम आहू। यहि मन परखहु धर्मनि साहू॥
कमाल पुत्र जो मृतक जियावा। ताके घट में दूत समावा॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धनी धर्मदास! अपने इसी मन से स्वयं को परखो, तुम सर्वथा विषय-विकारों से रहित मेरे नाद-पुत्र हो। कमाल पुत्र जो मैंने मृतक से जीवित किया, उसके घट में भी कालदूत समा गया।

॥ चौपाई ॥

पिता जानि तिन आहंग कीन्हा। तब हम थाति तोहि कहं दीन्हा॥
हम हैं प्रेम भगति के साथी। चाहौं नहीं तुरी औ हाथी॥

उसने मुझे पिता जानकर अहंकार किया, तब मैंने अपना ज्ञान-धन तुमको दिया। मैं तो प्रेम-भक्ति का साथी (मित्र-सहायक) हूं, मुझे घोड़े और हाथी की चाह नहीं।

॥ चौपाई ॥

प्रेम भक्ति से जो मोहिं गहिहैं। सो हंस मम हृदय समैहैं॥
अहंकार ते होतेउ राजी। तो मैं थापत पंडित काजी॥

अनन्य प्रेम एवं भक्ति से जो मुझे ग्रहण करेगा, अर्थात मुझे समर्पित होगा, वह हंस-भक्त मेरे हृदय में समाएगा। यदि मैं अहंकार से ही प्रसन्न होता, तो मैं सब ज्ञान-ध्यान एवं अध्यात्म-शक्ति अथवा मुक्ति का अधिकार पंडित-काजी को सौंप देता।

॥ चौपाई ॥

अधीन देखि थाति तुहि दीना। देखेउ जब तुहि प्रेम अधीना॥
ताते धर्मनि मानु सिखाई। नाद थाती सौंपिहू भाई॥

जब मैंने तुम्हें प्रेम में लवलीन अपने अधीन देखा, तो तुमको अपनी सब

---

1. धर्मदास वंश-प्रणाली के यथानुसार सद्गुरु कबीर साहिब के सत्य मत-पंथ का सत्यानुयायी परम विरक्त संत पुरुष। पुत्र से अभिप्राय शिष्य, नादपुत्र—नादशिष्य।

अलौकिक आध्यात्मिक ज्ञान-संपदा दी। उसी से हे धर्मदास! तुम मेरी शिक्षा मानो, हे भाई! नाद, अर्थात विषय रहित सदाचार संपन्न विरक्त को मोक्षदायी ज्ञान-संपदा सौंपो, अर्थात यह सब अपने वंश को समझाना।

॥ चौपाई ॥

नादपुत्र कहं सौंपिहु सोई। पंथ उजागर जासों होई॥
बंस करिहैं अहंकार बहूता। हम हैं धर्मदास कुलपूता॥

जैसे मैंने तुमको विरक्त सदाचार संपन्न नादपुत्र (शिष्य) जानकर अपनी सब ज्ञान-संपदा सौंपी, वैसे नादपुत्र को अपनी आध्यात्मिक ज्ञान-संपदा सौंपो, जिससे सत्यपंथ उजागर एवं विकसित होगा। काल के प्रभाव से वंश बहुत अहंकार करेगा और अहंकारवश कहेगा कि हम तो धर्मदास-कुल के पुत्र हैं, अर्थात हमारे समान ज्ञानवान अन्य कोई नहीं है। अहंकार होने से उनमें और भी अनेकानेक दोष उत्पन्न हो सकते हैं।

॥ चौपाई ॥

जहां हंग तहवां हम नाहीं। धर्मनि देखु परखि मन माहीं॥
जहां हंग तहं काल सरूपा। नहिं पावे सतलोक अनूपा॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! मन में भली प्रकार परख एवं समझकर देखो, जहां अहंकार होता है वहां मैं नहीं होता, अर्थात मैं वहीं होता हूं, जहां सहज सरलता, विनम्रता, अनन्य प्रेम एवं भक्ति होती है।

जहां अहंकार होता है वहां तो सब काल-स्वरूप होता है, अतएव अहंकारी मुक्ति के अनुपम सत्यलोक को नहीं पा सकता।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु मैं तुव दास अधीना। तुव आज्ञा ते होउं न भीना॥
नादहिं थाती सौंपब स्वामी। वंश तरै मोर अंतरयामी॥

धर्मदास अत्यंत विनम्र भाव से कहते हैं कि हे प्रभु! मैं आपका दास आपके अधीन हूं। आपकी आज्ञा से मैं कभी अलग नहीं हो सकता। हे स्वामी! आपकी दी हुई मोक्षदायी ज्ञान-संपदा नाद शिष्य को सौंपी जाएगी, जिससे हे अंतर्यामी! मेरा वंश सत्य-पंथ पर चलता हुआ कल्याण को प्राप्त हो।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धरमदास तुव तरिहैं वंशा। याहि बात को मेटो संशा॥
नाम भक्ति जो दृढ़कै धरिहैं। सुनु धर्मनि सो कस ना तरिहैं॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि धर्मदास! तुम्हारा वंश तरेगा, अर्थात उसका उद्धार होगा, इस बात का तुम संशय मिटा दो। सत्यनाम की भक्ति जो दृढ़तापूर्वक धारण करेगा, हे धर्मदास सुनो! वह कैसे नहीं तरेगा?

॥ चौपाई ॥

रहनि रहै तो सबै उबारौं। वचन गहै तो ब्यालिस तारौं॥
वचन गहे सो बंस पियारा। बिना वचन नहिं उतरे पारा॥

सद्गुरु के सदुपदेशानुसार यदि रहनि रहेगा तो वह सबको उबारेगा और जो सद्गुरु के सार-वचन को ग्रहण करेगा, अर्थात उसका यथावत् आचरण करेगा तो बयालीस वंश को तारेगा (उद्धार करेगा)।

जो सद्गुरु के सार-वचन (सत्यनाम) को ग्रहण करेगा, वही प्यारा वंश होगा, किंतु बिना सार-वचन को ग्रहण किए कोई पार नहीं उतरेगा, अर्थात बिना सार-वचन वह अहंकार एवं प्रमादवश होकर भवसागर में डूबेगा।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

बंस ब्यालिस तो तुम्हाराअंशा। ताको तार्‌यो कौन प्रसंसा॥
बंस अंश जो तारहु साईं। तबहीं जग में आई बड़ाई॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहिब से कहते हैं कि वंश बयालीस तो आपका ही अंश है, उसको तारने में कौन प्रशंसा है? हे स्वामी! वंश और अंश को जो तारो, तब ही संसार में सब ओर आपकी बड़ाई होगी।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

बंस ब्यालिस बिंद तुम्हारा। सो मैं एक वचन ते तारा॥
और वंश लघु जेते होई। बिना छाप छूटे नहिं कोई॥

सद्गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि तुम्हारा वंश बयालीस बिंद[1] है, उसे मैंने एक सार-वचन से तार दिया, अर्थात जो वंश मेरे सार-वचन को विधिपूर्वक ग्रहण कर उसका यथा आचरण करेगा, उसका उद्धार होगा।

और जितने भी छोटे वंश-अंश होंगे, बिना वंश-छाप, अर्थात वंश के सत्य-ज्ञानोपदेश एवं विधिपूर्वक ज्ञान-दीक्षा के बिना कोई भव-जंजाल से नहीं छूटेगा। क्योंकि मेरी दी हुई कल्याणदायी अनमोल ज्ञान संपदा वंश के पास होगी, जिससे वे औरों का उद्धार करेंगे।

---

1. धर्मदास वंश-प्रणाली में सदाचार एवं सत्यज्ञान संपन्न सद्गृहस्थ।

॥ चौपाई ॥

बिंद मिलै तो बंस कहावे। बिना वचन नाहीं घर आवै॥
वचन बंस ब्यालिस ठेका। तिनको समरथ दीन्हों टेका॥

सदाचार एवं सत्यज्ञान संपन्न बिंद मिलेगा तो वंश कहाएगा। बिना सार-वचन को ग्रहण किए अपने घर, अर्थात सत्यलोक नहीं आएगा। सार-वचन को मानने वाले वंश बयालीस को जीवोद्धार का ठेका है, उसको समर्थ सत्यपुरुष ने अधिकार दिया है कि वह सत्यज्ञानोपदेश प्रदान कर जीवों का उद्धार करे।

॥ चौपाई ॥

बंस अंस वचन एकै सोई। दीर्घ बंस अंस लघु होई॥
जेठो अंस वचन मोर जागे। और बंस लघु पीछे लागे॥

वंश और अंश के लिए एक वही सार-वचन होगा। उनमें वंश बड़ा तथा अंश छोटा होगा। जो मेरे वचन से जाग्रत हुआ वह ज्येष्ठ अंश और वंश छोटा, जो उसके पीछे लगकर उसका अनुकरण करेगा।

॥ चौपाई ॥

चाल चलै औ पंथ चलावै। भूले जीवन को समुझावै॥
नाद बिन्द जो पंथ चलावे। चूरामणि हंसन मुक्तावै॥

वह (वंश) उत्तम रहनि-गहनि में रहता हुआ, सत्यज्ञानोपदेशानुसार चाल चलेगा और सत्य-पंथ चलाएगा। भूले-भटके जीवों को समझाएगा। नाद-बिंद जो सत्य-पंथ चलाएगा, वह चूड़ामणि स्वरूप हंस-जीवों को मुक्ताएगा।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुव बंस अज्ञाना। चीन्है नहीं अंस सहिदाना॥
जस कछु आगे होइहै भाई। सो चरित्र तुहि कहौं बुझाई॥

हे धर्मदास! तुम्हारा वंश अज्ञानवश, अंश की सही पहचान नहीं समझेगा। हे भाई! आगे जैसा कुछ होगा, वह चरित्र मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं।

॥ चौपाई ॥

छठे पीढ़ी बिन्द तुव होई। भूलै बंस बिन्दु तुव सोई॥
टकसारी को लैहें पाना। अस तुव बिन्दु होय अज्ञाना॥

छठी पीढ़ी में तुम्हारा जो बिंद पं. श्री होगा, वह तुम्हारे बिंद वंश के सिद्धांत भूलेगा, अर्थात उसका विश्वास डगमगा जाएगा। वह टकसारी मत का पान लेगा, ऐसा अज्ञानी वह तुम्हारा बिंद होगा।

॥ चौपाई ॥

चाल हमार बंस तुव छाड़ै। टकसारी के मत सब मांड़ै॥
चौका तैसे करे बनायी। बहुत जीव चौरासी जायी॥

वह तुम्हारा बिंद वंश हमारे सत्य ज्ञानोपदेश की चाल (नीति) छोड़ेगा और टकसारी के सब मतों का मण्डन (पक्ष) करेगा। वह वैसे ही बनाकर चौका करेगा, जिससे बहुत जीव चौरासी में जाकर पड़ेंगे।

॥ चौपाई ॥

आपा हंस अधिक होय ताही। नाद पुत्र से झगर कराही॥
होवे दुरमत बंस तुम्हारा। वचन बंस रोके बटपारा॥

उससे जीवों में अहंकार अधिक होगा और अहंकार-वश वे नाद पुत्र (विरक्त संत-महंत) से झगड़ा करेंगे। इस प्रकार तुम्हारा वंश दुर्मति हो जाएगा तथा वचन-वंश के सत्य-पंथ में रुकावट पैदा करेगा।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

अब तो संशय भयो अधिकाई। निश्चय वचन करहु मुहि साईं॥
प्रथमे आप वचन अस भाखा। निज रच्छा महं ब्यालिस राखा॥
अब कहहु काल बस परिहैं। दोइ बात किहि विवधि निस्तरिहैं॥

धर्मदास ने सद्‌गुरु कबीर साहिब से कहा कि हे स्वामी! अब तो मुझको बहुत अधिक संशय हो गया, आप मुझे निश्चय वचन करो, अर्थात मुझे एक सत्य वचन सुनाओ। पहले तो आपने ऐसा वचन कहा था कि मैं अपनी रक्षा में वंश बयालीस रखा है। परंतु अब आप कहते हैं कि वंश कालवश पड़ेगा, ये दो बातें किस प्रकार सही उतरेंगी इन दोनों बातों का घटित होना मुझे संशय में डालता है, मेरा संशय दूर करो।

नाद वंश की बड़ाई

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धरमदास तुम चेतहु भाई। वचन बंस कहं देहु बुझाई॥
जब जब काल झपाटा लाई। तबै तबै हम होब सहाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास भाई! तुम चेत जाओ और वचन-वंश को समझा दो कि जब-जब काल-निरंजन वंश पर झपाटा (वार) लाएगा, तब-तब मैं उनका सहायक होऊंगा।

॥ चौपाई ॥

नाद हंस तबहिं प्रगटायब। भरम तोड़ि जग भक्ति दृढायब॥
नाद पुत्र सो अंश हमारा। तिनते होय पंथ उजियारा॥

तब ही मैं हंस-स्वरूप नाद (विरक्त विवेकी संत महापुरुष) को प्रगटाऊंगा, जो जीवों का भ्रम तोड़कर, जग में भक्ति सुदृढ़ करेगा। वह नाद-पुत्र, जो मेरे सार-शब्दोपदेश को ग्रहण करने वाला अनन्य शिष्य होगा, वह मेरा ही अंश होगा, उससे सत्यपंथ का उजाला होगा।

॥ चौपाई ॥

वचन वंश तो होय सचेता। बिन्द तुम्हार न माने हेता॥
वचन वंश नाद संग चेते। मेटै काल घात सब जेते॥

उससे वचन-वंश तो सचेत होगा, परंतु तुम्हारा बिंद उससे प्रेम नहीं करेगा। वचन-वंश नाद के संग से चेतेगा और काल के सब घातों को मेटेगा।

॥ चौपाई ॥

बिन्द तुम्हार न मानै ताही। आपा वंश न शब्द समाही॥
शब्द की चास नाद कहं होई। बिन्द तुम्हारो जाय बिगोई॥

तुम्हारा बिंद उस नाद को नहीं मानेगा और अहंकारी वंश में सार-शब्द नहीं समाएगा। कल्याणमय सार-शब्द की चाह नाद को होगी। सार-शब्द के बिना तुम्हारा अहंकारी बिंद नष्ट होता जाएगा।

॥ चौपाई ॥

बिन्द ते होय न नाद उजागर। परखि के देखहु धर्मनि नागर॥
चारहु युग देखहु समवादा। पन्थ उजागर कीन्हों नादा॥

हे ज्ञानवान धर्मदास! भली प्रकार परखकर देखो कि गृहस्थ में स्थित बिंद से विरक्त-विवेकी नाद उजागर नहीं होता। चारों युग के संवाद, अर्थात प्रामाणिक पवित्र ज्ञान-ग्रंथों की चर्चा को देखो, सत्य-पंथ को नाद-संतों ने उजागर किया है।

॥ चौपाई ॥

कहं निरगुण कहं सरगुणभाई। नाद बिना नहिं चल पंथाई॥
धर्मनि नाद पुत्र तुम मोरा। ताते दीन्ह मुक्ति का डोरा॥

हे भाई! बात चाहे निर्गुण की हो या सगुण की, परंतु नाद के बिना सत्य-पंथाई नहीं चलती। हे धर्मदास! तुम विषय-विकारों से सर्वथा रहित, वैराग्य में स्थित एवं सत्यज्ञान से संपन्न परम विवेकी मेरे नाद पुत्र (शिष्य) हो, उसी से मैंने जीवों को मुक्ताने का डोरा (अधिकार) तुमको दिया है।

॥ चौपाई ॥

याहि विधि हम ब्यालिस तारैं। जब गिरै वह तबै उबारैं॥
नाद वचन जो बिन्द न माने। देखत जीव काल धर ताने॥

इसी विधि से, अर्थात नाद के संग-सहयोग से हम वंश बयालीस को तारेंगे,

और जब वह मत-सिद्धांत से गिरेगा अथवा विचलित होगा तब सत्य-युक्ति से उबारेंगे। नाद-वचन जो बिंद नहीं मानेगा, तो सत्योपदेश के बिना जीवों को देखते ही काल धर तानेगा, अर्थात उन्हें सताने लगेगा।

॥ चौपाई ॥

और बंस जो नाद सम्हारै। आप तरै औ जीवहिं तारै॥
कहं नाद कहं बिन्दु रै भाई। नाम भक्ति बिनु लोक न जाई॥

और तुम्हारा बिंद-वंश जो नाद-वंश के साथ सहयोगी हो, तो वह आप भी तरेगा और जीवों को भी तारेगा। हे भाई! चाहे नाद हो अथवा चाहे बिंद हो, सत्यनाम की भक्ति-बिना सत्यलोक नहीं जा सकता, अर्थात उसका उद्धार होना संभव नहीं।

विशेष— *सद्गुरु कबीर साहेब के अनमोल अमृत-वाणी वचनों का प्रचार-प्रसार करने वाले और उनके सत्यज्ञानोपदेशानुसार सत्य-पंथ चलाने वाले बिंद एवं नाद वंश दोनों ही प्रमुख माने जाते हैं, जैसा कि यहां पर वर्णित भी है। सामान्य तौर पर बिंद से गृहस्थ और नाद से विरक्त भाव प्रदर्शित होता है, जिसके अंतर्गत अनेकानेक सुविज्ञ संत-महात्मा अपने-अपने मतानुसार बरतते हुए प्रचार-कार्य करते हैं। उसी प्रकार यहां बिंद वंश से अभिप्राय गृहस्थ के आधार पर वंशानुक्रम से सत्य-पंथ चलाने से है, अर्थात सद्गृहस्थ में रहकर सदाचार एवं सत्यज्ञान का पालन करते हुए, सद्गुरु कबीर साहेब के उपदेशानुसार सत्य-पंथ चलाना और नियमानुसार नियत अवधि पूरी होने पर, वंश में उत्पन्न हुए पुत्र को सर्व ज्ञान-संपदा के साथ पं. श्री हजूर का अधिकार देकर गद्दी सौंपना। इसके विपरीत नाद वंश का अभिप्राय विवेक संपन्न वैराग्य पर आधारित है, अर्थात विरक्त-भाव की परम स्थिति में रहकर सुनिश्चित नियत-आदर्शों एवं सत्यज्ञान का पालन करते हुए सद्गुरु कबीर साहेब के उपदेशानुसार सत्य-पंथ चलाना और नियमानुसार समय समाप्ति होने पर, नियत धर्माधिकारी संत को पंथ श्री हजूर के नाम से सुशोभित कर गद्दी पर बिठाना। वैसे नादवंशी का तात्पर्य है, उपदेश द्वारा चलाई गई विरक्त-परंपरा।*

यद्यपि ये दोनों बिंद एवं नाद वंश सद्गुरु कबीर साहेब के उपदेशानुसार ही सत्य-पंथ चलाते हैं और समान रूप से सत्यज्ञान प्रदान कर जीवोद्धार का सर्वोत्कृष्ट कार्य करते हैं, तथापि तपो त्यागमय विरक्त-भाव में स्थित और ज्ञान-साधना में प्रवीण होने से नाद-वंश श्रेष्ठ है। बिंद से नाद वंश की महत्ता अधिक है। विशेष गुण होने से ही सद्गुरु कबीर साहेब ने नाद-वंश की महिमा कही है। जिससे यह भी सिद्ध होता है कि बिंद वंश की कमियों को समझते हुए, समयानुसार इस नाद वंश को भी उन्होंने ही प्रकटाया है। उनके कथनानुसार तथा अन्य उदाहरणों से भी सुस्पष्ट है कि सदा से सत्यज्ञान अथवा परमात्म-ज्ञान के पंथ को नाद-वंश ने

प्रकाशित किया है। इससे सहज ही यह भी भली प्रकार समझा जा सकता है कि कोई भी क्यों न हो, बिना वैराग्य भाव में स्थित हुए सत्यज्ञान की साधना सिद्धि को उपलब्ध नहीं हो सकता। परंतु यहां पर नाद वंश की श्रेष्ठता कहने का मेरा तात्पर्य बिंद वंश की गरिमा कम करना नहीं है, अपितु यथार्थ से अवगत कराना है। सत्य को सत्य कहना कभी अनुचित नहीं ठहराया जा सकता और संदेहावरण से मुक्त होने के लिए सत्य से परिचित होना भी परमावश्यक है।

सद्गुरु कबीर साहेब के अनन्य शिष्य एवं माननीय नाद पुत्र परम पूज्य धनी-धर्मदास जी के पीछे पं. श्री चूड़ामणि नाम साहिब से शुभारंभ हुआ बिंद वंश अपने पंथाचार्यों तथा संत-महंतों से सदा गौरवपूर्ण रहा। उसके पंथ श्री आचार्यों ने सद्गुरु कबीर के सत्य पंथ को चलाने में यथाशक्ति भरपूर प्रयास किया, उसकी जितनी सराहना की जाए कम है। यहां तक कि यह बिंद-वंश को ही श्रेय है कि आगे चलकर उसकी शाखा से उक्त नाद-वंश प्रस्फुटित हुआ। इस तथ्यानुसार विचारणीय है कि यदि बिंद वंश न हुआ होता तो उसको सद्गुरु कबीर साहिब का सत्यज्ञानोपदेश एवं चौका-आरती के विधानानुसार सत्यनाम की ज्ञान-दीक्षा कहां से मिलती ? ऊपर की मुस्काती हरियाली को देखकर उसकी आधार-भूमि को नहीं भुलाया जा सकता। सर्व विदित है कि धर्मदास-प्रणाली के बिंद वंश में जो गुरु-पूजा स्वरूप चौका-आरती एवं सत्यनामोपासना का विधि-विधान है, वही तो नाद-वंश में है और यह बिंद वंश की देन है। दोनों वंशों की ज्ञान-संपदा एक समान है। हां, दोनों की आचार संहित में थोड़ा अंतर है और अपनी-अपनी मान्यता को लेकर दोनों में वैचारिक मतभेद है। सद्गुरु कबीर साहिब के कथनानुसार जब बिंद वंश पर काल का प्रभाव पड़ा और वह अभिमानवश अपने सिद्धांत एवं वंशानुक्रम से गिर गया, तब ही तो नाद-वंश की यथा-स्थिति उत्पन्न हुई।

बिंद-वंश की मनमानी तथा स्वेच्छाचारिता आदि कुछ विवादास्पद बातों को देखते हुए, नाद-वंश ने अपनी स्थिति सुदृढ़ की और उसने अपना सत्यनाम का झंडा उससे अलग फहराया। वह निष्ठापूर्वक उसी पूर्व विधि-विधान से सद्गुरु कबीर साहिब के सत्य-पंथ को चलाने में प्रवृत्त हुआ। नाद-वंश के समर्थक संत-महंतों एवं सेवक-भक्तों की सर्व-सम्मति से उसकी ज्ञान-राजधानी कबीर धर्म स्थान खरसिया, जि. रायगढ़ (छत्तीसगढ़) स्थापित हुई, जिसके प्रथम आचार्य नाद-वंश प्रवर्तक सदा स्मरणीय पं. श्री हजूर ग्रंधमणिनाम साहेब नियुक्त हुए। दूसरे आचार्य अपने समय के प्रकांड पंडित, वेद-शास्त्र एवं नाना ज्ञान-ग्रंथों के ज्ञाता और कबीरपंथ के मूर्धन्य विद्वान परम पूज्य पं. श्री हजूर प्रकाशमणिनाम साहेब हुए, जिन्होंने सद्गुरु कबीर साहिब के महान ग्रंथ बीजक की प्रबोधिनी टीका सहित, छोटे-बड़े अनेक ग्रंथों की रचना की। तीसरे आचार्य कबीरपंथ के ऐतिहासिक महापुरुष संत-भक्तों एवं सर्व जन मानस के प्रिय परम वंदनीय

पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब हुए, जिन्होंने वाराणसी (उ.प्र.) में सद्गुरु कबीर साहिब के यथार्थ प्राकट्य स्थल लहरतारा तालाब पर महान दर्शनीय 'सद्गुरु कबीर प्राकट्य धाम' का निर्माण कराया, जिसकी ओर उनसे पूर्व शायद कभी किसी का ध्यान ही नहीं गया था। अब वर्तमान में चौथे नाद-वंश के आचार्य सबको प्रेम-प्रसाद देने वाले सेवक संतों के हृदय सम्राट पूज्यपाद पं. श्री हजूर मुकुंदमणिनाम साहेब गद्दी पर विराजमान हैं, जो कबीर धर्म स्थान खरसिया, रायगढ़ (छत्तीसगढ़) तथा कबीर बाग, लहरतारा आश्रम, वाराणसी (उ.प्र.) के साथ-साथ विभिन्न स्थानों पर स्थापित नाद-वंशीय शाखाओं का संचालन कर रहे हैं। आपके कर्मठ सहयोगी परम पूज्य धर्माधिकारी श्री विजयदास शास्त्री जी आश्रमों के प्रबंध की देख-रेख के साथ, सब ओर जा-जाकर सद्गुरु कबीर का अमृत संदेश प्रसारित कर रहे हैं।

यहां मेरा आशय बिंद अथवा नाद वंश का इतिहास कहना कतई नहीं था, अपितु उसका थोड़ा परिचय कराना आवश्यक था कि कबीरपंथ के अनुयायी एवं जन-सामान्य सत्यासत्य को समझें, भ्रम-पंक से निकलें और पक्षपात रहित होकर निर्मल दृष्टि से दोनों वंशों का अवलोकन करें। जन-कल्याण के लिए सद्गुरु कबीर साहिब के सत्यज्ञान का प्रचार-प्रसार करते हुए विधिवत् रूप से सत्य-पंथ चलाने से बिंद एवं नाद दोनों वंश अपने-अपने स्थान पर समादरणीय हैं। सद्गुरु कबीर साहिब के उपदेशानुसार यदि दोनों वंश पारस्परिक सहयोग में तत्पर रहें, प्रेमपूर्वक एक-दूसरे का सम्मान करें और गुरु-मर्यादा का यथावत् पालन करें, तो निश्चय ही कबीरपंथ का चरम विकास होगा और जन-कल्याण का परमोद्देश्य भी अधिकाधिक पूर्ण होगा। अतएव, इसकी पहल करने में बिंद वंश कहलाने वाले पं. श्री हजूर एवं उनके संत-महंतों को सकुचाना नहीं चाहिए। सद्गुरु कबीर साहिब द्वारा दी गई चेतावनी को उन्हें सदैव स्मरण रखना चाहिए कि वे नाद-वंश की श्रेष्ठता को ध्यान में रखते हुए, सर्वथा अभिमान रहित होकर श्रद्धा-भाव से उसका सम्मान करें, सहयोग करें और अपना समझकर सदा उससे अपनत्व का सद्व्यवहार करें, अन्यथा उस पर काल का शिकंजा उत्तरोत्तर कसता जाएगा।

❑❑

गुरु महिमा और बिंद वंश के प्रति चेतावनी

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

गुरु ते अधिक काहु नहिंपेखै। सबते अधिक गुरु कहं लेखै॥
सबते श्रेष्ठ गुरु कहं मानै। गुरु सिखापन सतकै जानै॥

सद्गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि गुरु सर्वोपरि है, अतः शिष्य को चाहिए कि वह गुरु से अधिक किसी को न माने। सबसे अधिक गुरु को समझे। सबसे श्रेष्ठ गुरु को माने और गुरु के सिखाए हुए (ज्ञान-शिक्षा) को सत्य करके जाने।

॥ चौपाई ॥

बिन्द तुम्हार करै असरारा। बिनु गुरु चहै होन भवपारा॥
निगुरा होइ जगत समुझावे। आप बुडै सौ जगत बुड़ावे॥

एक समय ऐसा आएगा कि तुम्हारा बिंद वंश उलटा काम करेगा, वह बिना गुरु भवसागर पार होना चाहेगा। जो निगुरा होकर जगत को समझाता है, वह आप भी डूबेगा तथा जगत को भी डुबोएगा, अर्थात न उसका उद्धार होगा न जगत का।

॥ चौपाई ॥

बिना गुरु नाहि निस्तारा। गुरुहिं गहै सो भवते पारा॥
नाता जानि करै अधिकाई। बंसहि काल गरासै आई॥

बिना गुरु कल्याण नहीं होता। जो गुरु को ग्रहण करता है, अर्थात गुरु-शरणागत होता है, वह संसार-सागर से पार हो जाता है। गुरु का ऐसा नाता जानकर जो और अधिक उलटा करेगा, तो तुम्हारे वंश को काल आकर ग्रसेगा।

॥ चौपाई ॥

जब जग नात गोतअरुझावे। वचन बंस धोखा तब पावे॥
तबहिं काल गरासै आई। नाना रूप फिरै जग लाई॥

जब जगत के नाते एवं गोत आदि संबंध मोह में उलझाएंगे, तब वचन-वंश

धोखा पाएगा। तब उसे काल आकर ग्रसेगा और वह नाना रूप लिए जगत में फिरेगा।

॥ चौपाई ॥

तबहिं गोहार नाद मम आवे। देखत काल तुरत भगि जावे॥
ताते धर्मनि देहु चिताई। वचन बंस बहु विधि समुझाई॥

तब पुकारने से मेरा नादस्वरूप आएगा, जिसे देखते ही काल तुरंत भाग जाएगा। उसी से हे धर्मदास! मैं तुम्हें चेताए देता हूं कि अपने वचन-वंश को बहुत प्रकार से समझाओ कि—

॥ चौपाई ॥

नाद बंस संग प्रीति निबाहे। काल धोख ते बचन जु चाहे॥
नाद बंस की छोडै आसा। ताते बिन्द जाय यम फांसा॥

जो वह काल के धोखे से बचना चाहे तो नाद-वंश से प्रीत निबाहे एवं उसका यथा सम्मान करे। यदि नाद-वंश बिंद-वंश की आशा छोड़ देगा, अर्थात उससे अपनी दृष्टि हटा लेगा तो उससे बिंद यम के फांसे में फंस जाएगा।

॥ चौपाई ॥

बहु विधि दूत लगावै बाजी। देखैं जीव होय बहु राजी॥
ते तो जाय काल मुख परिहैं। नाद वंश जो हित नहिं धरिहैं॥

फिर बहुत प्रकार से कालदूत बाजी लगाएगा, अर्थात छल-कपट करेगा और बिना गुरु जीवों को देखकर बहुत राजी (खुश) होगा। नाद-वंश जो हित नहीं करेगा, तो वे सब जाकर काल के मुख में पड़ेंगे।

॥ चौपाई ॥

ताते तोहि कहौं समझायी। सबहीं कहं तुम देहु चितायी॥
नाद बंस कहं जो जिव जाना। वचन बंस चीन्हे सहिदाना॥

उसी से मैं तुम्हें समझाकर कहता हूं कि तुम सबको चेता दो। नाद-वंश को जो जीव जानेगा, वही वचन-वंश को सही रूप से पहचानेगा।

॥ चौपाई ॥

ताकहं यम नहिं रोके आई। सत्य शब्द जिन चीन्हा भाई॥
धरमदास मैं कहौं बुझाई। वचन हमार गहो चितलाई॥

हे भाई! उसको आकर यम नहीं रोकेगा, अर्थात नहीं सताएगा, जिसने सत्य-शब्द को भली प्रकार समझा होगा। हे धर्मदास! मैं तुम्हें पुनः समझाकर कहता हूं, तुम मेरे वचनों को चित्त लगाकर ग्रहण करो कि—

॥ चौपाई ॥

जीवन कहं तुम कहिहो जाई। वचन बंस तब तारन भाई॥
वचन बंस वहि नाद न छांड़ै। सदा प्रीति नाद संग मांड़ै॥

हे भाई! जीवों को तुम जाकर कहना-समझाना, वचन-वंश को तब तारोगे कि वास्तव में वचन-वंश वही है जो नाद-वंश को न छोड़े और सदा नाद के साथ प्रीत करे।

॥ चौपाई ॥

नात गोत कहं पच्छ न करई। पच्छ करै तो दुखमहं परई॥
बहुत विधी मैं दीन्ह चिताई। चेत करै दुख नहिं पाई॥

तुम्हारा बिंद-वंश नात-गोत आदि संबंधों का पक्ष न करे, पक्ष करेगा तो दुख में पड़ेगा। बहुत प्रकार से मैंने चेता दिया है, यदि चेत करेगा, अर्थात मेरी चेतावनी को समझकर उस अनुसार पालन करेगा तो दुख नहीं पाएगा।

॥ चौपाई ॥

बिन्द तुम्हार नाद संग जावै। देखत दूत मनहिं पछतावै॥
यहि उपाय सुख होय बहूता। वचन नाद बिन्द लगे न दूता॥

तुम्हारा बिंद जब नाद के संग प्रीत करता हुआ जाएगा, तो कालदूत देखकर मन में पछताएगा। इसी उपाय से बहुत सुख होगा और वचन-वंश के नाद एवं बिंद को कालदूत नहीं लगेगा।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास उठि विनती लाए। अब प्रभु मोही कहहु बुझाए॥
नाद महातम ऐसो राखा। वचन बंस अधीन करि भाखा॥

बिंद वंश के प्रति सद्गुरु कबीर साहिब की ऐसी चेतावनी के वचन सुनकर धर्मदास ने उठकर विनती की कि हे प्रभु! अब मुझे समझाकर कहो। आपने नाद-वंश का ऐसा माहात्म्य रखा कि वचन-वंश को उसके अधीन कर वर्णन किया।

॥ चौपाई ॥

कारन कौन कहहु मुहि साई। वचन बंस काहे निरमाई॥
नादे बंस जगत चेतैहैं। वचन बंस कामें कब ऐहैं॥

हे स्वामी! कहो कि इसका कौन कारण है? यदि नाद वंश का इतना भारी माहात्म्य है तो वचन वंश बिंद किसलिए बनाया? जब नाद वंश ही जगत चेताएगा तो बिंद वचन-वंश कब काम आएगा?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनत वचन सतगुरु विहंसाए। धर्मदास कहं विविधि समझाए॥
गर्वित नाद वचन नहिं मानै। ताते बिन्द हम निरनय ठानै॥

धर्मदास के ऐसे दीन-वचन सुनकर सद्गुरु कबीर साहिब मुस्कराए और उन्होंने धर्मदास को विविध प्रकार से समझाया। उन्होंने कहा कि जो गर्व करके नाद वचन नहीं मानेगा, अर्थात स्वयं को श्रेष्ठ मानकर अन्य को कुछ नहीं समझेगा अथवा अनुशासन से विचलित होगा, उसी से मैंने बिंद स्थापित करने का निर्णय लिया, जिससे नाद भी अपने-आप को सदा अनुशासित रखे।

॥ चौपाई ॥

बिन्द एक नाद बहुताई। बिन्द मिले सो बिन्द कहाई॥
वचन बंस है पुरुष के अंसा। तिनके सदन छूटे जग हंसा॥

बिंद एक नाद बहुत होते हैं[1]। जो बिंद की भांति मिले, अर्थात बिंद जैसा संयोग हो तो वह बिंद कहाता है। वचन वंश सत्यपुरुष का अंश है, उसके साथ से, अर्थात उसके सत्य ज्ञानोपदेश से हंस-जीव संसार से छूट जाता है।

॥ चौपाई ॥

नाद बिन्द युग बंध जब होई। तबहीं काल रहै मुख गोई॥
प्रथमैं जस हम तुमहिं बताना। नाद बिन्द कर योग दिखाना॥

नाद और बिंद वंश दोनों एकताबद्ध होंगे, तब उनसे काल मुंह छिपाकर रहेगा। जैसे मैंने तुम्हें पहले बताया, वैसे नाद एवं बिंद का योग (एकता-प्रेम) दिखाना।

॥ चौपाई ॥

बिना नाद नहिं बिन्द पसारा। बिना बिन्द नहिं नाद उबारा॥
कलियुग काल कठिन है भाई। अहंरूप धरि सबको खाई॥

ध्यान देने योग्य बात है कि बिना नाद तो बिंद का फैलाव नहीं होगा और बिना बिंद नाद नहीं उबरेगा। हे भाई! इस कलियुग में काल बहुत कठिन है, जो अहंकार का रूप धारण कर सबको खाता है।

॥ चौपाई ॥

नादे अहं त्याग कर होई। बिन्दे अहं बिन्द संजोई॥
याते अंकुश पुरुष निरमाया। नाद बिन्द दोउ रूप बनाया॥

नाद अहंकार त्यागकर होगा और बिंद का अहंकार बिंद संजोएगा। इसी से सत्यपुरुष ने इनको अनुशासित रखने के लिए, अर्थात मनमानी से रोक, मर्यादा में रखने लिए यह ढंग बनाया अथवा उपाय किया कि नाद और बिंद दो रूप बनाए।

॥ चौपाई ॥

छाड़ि अहं भजिहैं सतरूपा। सो होइहैं हंस सरूपा॥
नाद बिन्द कोई हो भाई। अहं भाव नहिं नीक बताई॥

---

1. जैसे एक गृहस्थ में बहुत बच्चों का होना, वैसे एक गुरु-आश्रम में बहुत नाद-शिष्यों का होना स्वाभाविक है।

जो अहंकार छोड़कर सत्यरूप परमात्मा को भजेगा—उसका ध्यान सुमिरन करेगा, वह हंस स्वरूप हो जाएगा। हे भाई! नाद अथवा बिंद कोई हो, अहंकार का भाव किसी के लिए भी नेक (ठीक) नहीं बताया गया।

॥ चौपाई ॥

अहं करै सो भव में डूबे। काल फांस पड़िहैं सो खूबे॥
अहंभाव जब बंसहि आवे। नादे बिन्दु भेद पड़ जावे॥
बंस विरोध चले पुनि आगे। काल दाग तब पंथहि लागे॥

यह सुनिश्चित है कि जो अहंकार करेगा वह भवसागर में डूबेगा। वह अधिक-से-अधिक काल की फांस में पड़ेगा। जब वचन-वंश में अहंकार का भाव आएगा, तो नाद एवं बिंद वंश में भेद पड़ जाएगा। फिर आगे वचन-वंश में पारस्परिक विरोध चलेगा और तब काल का दाग सत्य-पंथ को लगेगा।

धर्मदास मिती एवं वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

साहब विनती सुनो हमारी। तुम्हारी दया जीव निस्तारी॥
नाद बिन्द कहं रूप लखाया। तिनके तरन को भेद बताया॥

धर्मदास सद्गुरु कबीर साहिब से कहते हैं कि हे साहब स्वामी! मेरी विनती सुनो, आपकी दया से जीवों का उद्धार किया जाएगा। आपने नाद और बिंद वंश का रूप मुझे लखाया और उनके उद्धार का भेद (उपाय) बताया।

॥ चौपाई ॥

सकल जीव तुव लोकहिं जाई। दास नरायण काह कराई॥
मोर पुत्र जग माहिं कहावे। ताते चिन्ता मोर मन आवे॥

सत्यज्ञान को ग्रहण करने वाले समस्त जीव आपके सत्यलोक जाएंगे, परंतु वह नारायणदास क्या करेगा? वह जगत में मेरा पुत्र कहाता है, उसी से मेरे मन में उसकी चिंता आती है।

॥ चौपाई ॥

भवसागर के जिव सब तरिहैं। दास नरायण कालमुख परिहैं॥
यह तो भली होय नहिं बाता। सुनु बिनती सुखसागर दाता॥
ताकी मुक्ति करो तुम स्वामी। यहि मोर बिनती अंतरयामी॥

सत्यज्ञान के अंतर्गत आने वाले भवसागर के जीव सब तरेंगे और विरोधी नारायणदास काल के मुख में पड़ेगा। यह तो अच्छी बात नहीं होगी, हे सुख के सागर अनंत सुख देने वाले! विनती सुन। हे स्वामी! किसी भी प्रकार से उसकी मुक्ति करो, हे अंतर्यामी प्रभु! बस मेरी यही विनती (प्रार्थना) है।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

बार-बार धर्मनि समुझावा। तुम्हरे हृदय प्रतीत न आवा॥
चौदह यम तो लोक सिधावे। जीवन फंद कहों किन लावे॥

सद्गुरु कबीर साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! बार-बार मैंने तुमको समझाया, परंतु तुम्हारे हृदय में मेरी कही बातों का विश्वास न हुआ। चौदह यमदूत तो मुक्त होकर सत्यलोक चले जाएं, तब फिर कहो कि जीवों को फंसाने के लिए फंदा कौन लगाएगा, अर्थात छल-प्रपंच में डालकर उन्हें कौन मारेगा?

॥ चौपाई ॥

अब हम चीन्हा तुम्हारो ज्ञाना। जानि बूझि तुम भयो अजाना॥
पुरुष आज्ञा मेटन लागे। बिसर्‍यो ज्ञान मोह मद जागे॥

अब मैंने तुम्हारा ज्ञान समझा। जान-बूझकर तुम अनजान हुए हो। तुम मेरी बातों की परवाह न कर, सत्यपुरुष की आज्ञा मेटने लगे हो। सब ज्ञान भूलकर अब तुम्हें मोह-मद जागा हुआ है।

॥ चौपाई ॥

मोह तिमिर जब हिरदे छावे। बिसर ज्ञान तब काज नसावे॥
बिनु परतीत भक्ति नहिं होई। बिनु भक्ति जिव तरै न कोई॥

जब मनुष्य के हृदय में मोह का अंधकार छा जाता है, तब सारा ज्ञान भूलकर वह अपना परमार्थ-कर्म नष्ट करता है। बिना विश्वास भक्ति नहीं होती और बिना भक्ति कोई जीव भवसागर नहीं तर सकता।

॥ चौपाई ॥

बहुरि काल फांस तोहि लागा। पुत्र मोह तब हिरदय जागा।
प्रतच्छ देखि सबे तुम लीना। दास नरायण काल अधीना॥

फिर से तुम्हें काल का फांसा लगा है, तब तुम्हारे हृदय में पुत्र का मोह जागा है। तुमने प्रत्यक्ष अपनी आंखों से देख लिया है कि नारायणदास काल के अधीन है।

॥ चौपाई ॥

ताहू पर तुम पुनि हठ कीना। मोर वचन तुम एकु न चीन्हा॥
धर्मराय जो मोसन कहिया। सोउ ध्यान तुव हृदय न रहिया॥

उस पर भी तुमने फिर वही हठ किया। तुमने मेरी एक भी बात को नहीं समझा। धर्मराय निरंजन ने जो मुझसे कहा था (कि मेरा एक मृत्यु अंधा दूत पहले धर्मदास के घर में जन्मेगा और वह सब मैंने तुम्हें बताया था), वह ध्यान भी तुम्हारे हृदय में न रहा।

॥ चौपाई ॥

मोर प्रतीत तुम्हें नहिं आवे। गुरु परतीत जगत कस लावे॥
आपा छोड़ि मिले गुरु आई। सत सीढ़ी पर चढ़े सु भाई॥

मेरे वचनों पर जब तुम्हें विश्वास नहीं आता, तो जगत के सामान्य लोग गुरु पर कैसे विश्वास लाएंगे ? जो अहंकार को छोड़कर विनम्रतापूर्वक गुरु को आकर मिलता है, वह भाई सत्य की सीढ़ी पर चढ़ता है, अर्थात वह सद्गति प्राप्त करता है।

॥ चौपाई ॥

माया पकड़े मोह मद जागे। भक्ति ज्ञान सब तजे अभागे॥
पुरुष अंश तुम जग में आए। जीव चितावन भार उठाए॥

जो त्रिगुणी माया को पकड़ते हैं, उनमें मोह-मद जागता है और वे अभागे जन भक्ति-ज्ञान सब छोड़ देते हैं। सत्यपुरुष के अंश तुम संसार में आए हो और सत्यज्ञान से जीवों को चेताने का भार उठाए हो।

॥ चौपाई ॥

तुम्हहिं प्रतीत गुरु कर त्यागो। देखत दृष्टि मोह जग पागो॥
और जीव का कौन ठिकाना। यह तो अहै काल सहिदाना॥

जब तुम ही गुरु का विश्वास त्याग दोगे और अपनी दृष्टि से देखते हुए संसार के मोह में पड़ोगे, तो और सामान्य जीवों का भला क्या ठिकाना कि वे गुरु पर विश्वास कर सकें ? इस प्रकार भ्रमित करने की यही तो काल-निरंजन की सही पहचान है।

॥ चौपाई ॥

जस तुम करहु सुनहु धर्मदासा। तस तुव बंस करै परकासा॥
मोह आग सदा सो जरिहैं। बंस विरोध याहिते परिहैं॥

हे धर्मदास सुनो! जैसा तुम कर रहे हो, वैसा ही तुम्हारा वंश करेगा। मोह की आग में वह सदा जलेगा और इसी से तुम्हारे वंश में विरोध पड़ेगा, जिससे दुख होगा।

॥ चौपाई ॥

सुत बित धाम नारि परिवारा। कुल अभिमान सब काल पसारा॥
इनमें तुव परिवार भुलैहैं। सत्यनाम की राह न पैहैं॥

पुत्र, धन, धाम, स्त्री, परिवार और कुल का अभिमान इन सबमें काल का विस्तार (फैलाव) है, अर्थात इनके माध्यम से ही वह जीव को बंधन में डालता है। इनमें तुम्हारा वंश-परिवार भूल में पड़ जाएगा और सत्यनाम की राह नहीं पाएगा।

॥ चौपाई ॥

देखा देखी जीव फंसाई। देखत दूत मगन ह्वै जाई॥
तबहिं दूत प्रबल ह्वै जैहै। धरि जीवन कहं नरक पठैहैं॥

संसार के जीवों की देखा-देखी से तुम्हारे वंश के लोग भी पुत्र, धन, धाम और स्त्री आदि के मोह में फंस जाएंगे और इस प्रकार वंशों को फंसा हुआ देखकर काल के दूत प्रसन्न हो जाएंगे। तब उस समय में काल के दूत प्रबल हो जाएंगे और वे जीवों को नरक भेजेंगे।

॥ चौपाई ॥

काल फांस जब जीव फंसावे। काम मोह मद लोभ भुलावे ॥
गुरु परतीति तेहि नहिं रहई। सत्यनाम सुनतै जिव दहई ॥

जब काल अपने जाल में जीव को फंसाता है, तो उसे काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह विषयों में भुला देता है। फिर उसे गुरु पर विश्वास नहीं रह जाता, तब वह जीव सत्यनाम सुनते ही जलने, अर्थात चिढ़ने लगता है। फिर उसका पतन होना अवश्यंभावी है, गुरु की विश्वासहीनता का यही लक्षण है।

विशेष—*काल जीव को फंसाने के लिए उसके जीवन में अनेक छल-षड्यंत्र रचता है। उसका भरपूर प्रयास होता है कि कहीं कोई जीव किसी प्रकार भवसागर से मुक्त न हो जाए। इसीलिए वह जीव की बुद्धि कुंठित करने का प्रयास करता है और उसे गुरु भक्ति, प्रेम, विश्वास एवं उसकी कर्तव्य परायणता से गिराने का दांव लगाता है। वह काम, क्रोध, लोभ, मद एवं मोह विषयों का जाल बिछाकर, उसकी ओर जीव को आकर्षित करता है। उससे सचेत करते हुए सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं—*

जगत मांहि धोखा घना, अहं क्रोध अरु काल।
पौरि पहुंचा मारिए, ऐसा जम का जाल॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

अर्थात, संसार में अहंकार, क्रोध और काल कल्पना से बहुत बड़ा धोखा है। यह यम का ऐसा जाल है, जिसमें फंसकर अनेक जीव धोखा खाते हैं, अतः ऐसे पाप रूप काल को द्वार पर पहुंचते ही, अर्थात अपने निकट आभास होते ही मार डालना चाहिए।

काल के विषय जाल में फंसा हुआ जीव, उसका शिकार हो जाता है। काल के अधीन हुआ जीव सत्यासत्य को भूल जाता है और भ्रमित हुआ अनुचित कर्म करने लगता है। उदाहरण के तौर पर जैसे यहां दर्शाया गया है कि समर्थ सद्गुरु कबीर साहिब से दीक्षित होकर और उनके इतना समझाने-बुझाने पर भी धर्मदास काल के प्रभाव से विचलित हो जाते हैं। उसी से मोहवश वे बार-बार अपने उस पुत्र नारायणदास की मुक्ति के लिए विनती करते हैं, जो उनके परिवार में साक्षात काल का दूत उत्पन्न हुआ है। वस्तुतः यह उन पर काल के प्रभाव का ही लक्षण है। अब सोचिए कि जब धर्मदास जैसे उन्नत शिष्य को भी काल प्रभावित कर सकता है, तब सामान्य जीव उससे कैसे बच सकता है?

काल अज्ञानी जीव को दिखाई नहीं देता, परंतु ज्ञानवान की दृष्टि से वह बच नहीं सकता। अज्ञानी काल के रूप-स्वरूप को नहीं पहचानता, ज्ञानी भली भांति पहचानता है। काल की विशेष पहचान है कि वह किसी सूक्ष्म अथवा स्थूल बुराई एवं विकार के रूप में जीव पर सवार होता है। प्रत्यक्ष रूप से काल कहां, कब और किस प्रकार आ जाए, कहा नहीं जा सकता। उससे प्रति-पल सावधान रहने की आवश्यकता है कि कहीं किसी पाप अथवा बुराई के रूप में वह हमारे भीतर प्रवेश न कर जाए। सद्‌गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं—

काल फिरै सिर ऊपरे, हाथों धरी कमान।
कहैं कबीर गहु नाम को, छोड़ सकल अभिमान॥

(स. क. सा. ग्रंथ)

अर्थात, हाथों में धनुष-बाण लिए, काल सबके सिर पर सवार हुआ फिरता है। न जाने वह कब मार डाले? अतः सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि सर्व मिथ्या अभिमान को छोड़कर सद्‌गुरु की शरण में सत्यनाम-ज्ञान को ग्रहण करो।

काल से बचाव एवं शांति पाने का एकमात्र उपाय है कि सद्‌गुरु के उपदेशानुसार सब समय सदाचार एवं सत्यज्ञान में स्थित रहते हुए अपने मत-सिद्धांत का पालन करते रहें। जैसा कि नीचे भली प्रकार दर्शाया गया है।

॥ चौपाई ॥

जाके घट सतनाम समाना। ताकर कहौं सुनो सहिदाना॥
काल बान तिहि लागे नाहीं। काम क्रोध मद लोभ न ताहीं॥
मोह तृष्णा दुर आश निवारै। सतगुरु वचन सदा चित धारै॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब धर्मदास को समझाते हुए कहते हैं कि जिसके हृदय में सत्यनाम समा गया, उसकी सही पहचान कहता हूं, तुम ध्यानपूर्वक सुनो—

उस भक्त को काल का बाण नहीं लगता और उसे काम, क्रोध, मद एवं लोभ नहीं होते। वह मोह, तृष्णा तथा किसी सांसारिक वस्तु की मिथ्या आशा को नष्ट कर, अर्थात छोड़कर, सद्‌गुरु के वचन पर सदा चित्त धरता है।

॥ छंद ॥

जस भुवंगम मणि जुगावे, अस शिष गुरु आज्ञा गहे।
सुत नारि सब बिसराय विषया, हंस होय सत पद लहे॥
गुरु बचन अटल अमान धर्मनि, लहै विरला शूर हो।
हंस होय सतपुर चलै, तेहि जीवन मुक्ति न दूर हो॥ 89॥

जैसे सर्प मणि को धारण कर प्रकाशित करता है, ऐसे ही शिष्य सद्‌गुरु की आज्ञा एवं ज्ञान-वचन को हृदय में धारण करे। पुत्र, स्त्री तथा समस्त विषयों को भुलाकर, सारग्राही विवेकी हंस बनकर सत्यपद (अविनाशी निज मुक्त स्वरूप) प्राप्त करे। हे धर्मदास! गुरु के वचन पर अटल एवं अभिमान रहित रहने की इस दशा को

कोई विरला शूरवीर संत ही प्राप्त करता है। फिर वह हंस होकर सत्यलोक को चलता है। तब उसके लिए जीवन-मुक्ति (जीवित रहते मुक्त-स्थिति) दूर नहीं है।

॥ सोरठा ॥

गुरुपद कीजै नेह, कर्म भर्म जंजाल तजि।
निज तन जाने खेह, गुरुमुख शब्द विश्वास दृढ़॥ 93॥

हे धर्मदास! इस प्रकार जीवित रहते मुक्त-स्थिति प्रदान करना, यह सद्गुरु का ही पुण्य-प्रताप है। अत: गुरु के श्रीचरणों से प्रेम करो और सब पाप-कर्म, अज्ञान एवं सांसारिक माया-मोह के जंजाल को छोड़ दो। अपने नश्वर शरीर को धूल के समान समझो तथा गुरु के श्रीमुख से निकले शब्दों पर दृढ़ विश्वास करो।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

सुनत बचन धर्मदास सकाने। मनहीं माहिं बहुत पछताने॥
धाइ गिरे सतगुरु के पाई। हौ अचेत प्रभु होहु सहाई॥

सद्गुरु कबीर साहिब के वचन सुनकर धर्मदास सकपका गए और मन में बहुत पछताए। वे दौड़कर सद्गुरु कबीर साहेब के पांवों में गिर पड़े तथा दुखित स्वर में बोले कि हे प्रभु! मैं अचेत हो गया था, आप मेरे सहायक होओ।

॥ चौपाई ॥

चूक हमारी बकसहु स्वामी। विनती मानहु अंतरयामी॥
हम अज्ञान शब्द तुम टारा। विनय कीन्ह हम बारम्बारा॥

हे स्वामी! मेरी भूल-चूक को क्षमा करो, हे अंतर्यामी! आप मेरी विनती मान लो। मैंने अज्ञानवश आपके शब्द-वचन को टाल दिया, मैं आपसे बारंबार विनती करता हूं कि आप मुझे क्षमा कर दो।

॥ चौपाई ॥

अब मैं चरण तुम्हारे गयऊं। जो संतनि की विनती करऊं॥
पिता जानि बालक हठ लावे। गुण औगुण चित ताहि न आवे॥
पतित उधारण नाम तुम्हारा। औगुण मोर न करहु विचारा॥

अब मैं आपके चरणों में पड़ा, उसकी क्षमा याचना करता हूं, जो मैंने अपने पुत्र के लिए विनती की। पिता जानकर ही बालक अपने पिता से हठ करता है और पिता उसके गुण-अवगुण को चित्त में नहीं धरता, अर्थात स्नेहपूर्वक उसकी बात को समझता है। हे सद्गुरु स्वामी! हीन से हीन पापी-जनों का उद्धार करने वाला होने से आपका पतित-उद्धारण नाम है, मेरे अवगुणों पर विचार न करो, बस आप मुझे क्षमा कर दो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास तुम पुरुष के अंशा। त्यागहु दास नारायण वंशा॥
हम तुम धर्मनि दूजा नाहीं। परखहु शब्द देखि हिय माहीं॥
तुम जो जीवकाज जगआऊ। भौसागर महं पन्थ चलाऊ॥

धर्मदास के विनम्रतापूर्ण शब्दों को सद्गुरु कबीर साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! तुम सत्यपुरुष के अंश हो, वंश नारायणदास, जो काल का दूत है, उसे छोड़ दो। हे धर्मदास! मैं और तुम दूसरे नहीं हैं, अर्थात तुम मेरे तथा मैं तुम्हारा अपने (आत्मीय) हैं, अपने हृदय में मेरे सत्य-शब्द को परख कर देखो। तुम जो जीवोद्धार-कार्य के लिए संसार में आए हो, उसके लिए भवसागर में सत्य-पंथ चलाओ।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु तुम सुखसागर दाता। मुझ किंकर को कर्‌यो सनाथा॥
जब लग हम तुमहीं नहिं चीन्हा। तब लग मता काल हर लीन्हा॥

धर्मदास ने कहा कि हे प्रभु! आप तो अनंत सुख देने वाले सुखसागर हो, आपने मुझ अनाथ दास को सनाथ कर दिया, यह आपकी मुझ पर महान कृपा है। जब तक मैंने आपको सही रूप से पहचाना अथवा समझा नहीं था, तब तक काल ने मेरी बुद्धि को हर लिया था।

॥ चौपाई ॥

जबते तुम आपन कर जाना। तबते मोहिं भयो दृढ़ ज्ञाना॥
अब नहिं दुतिया मोहि समायी। निश्चय गही चरण तुव धायी॥
तुम तजि मोहि आन की आसा। तो मुहिं होय नरक महं वासा॥

हे स्वामी! जब से आपने मुझे अपना करके जाना (समझा) है, तब से मुझे पक्का ज्ञान हो गया है। अब आपके अतिरिक्त मेरे हृदय में कोई दूसरा विचार नहीं समाएगा, निश्चयपूर्वक मैंने दौड़कर आपके चरण पकड़ लिए हैं। अब मैं यदि आपको छोड़कर किसी दूसरे की आशा करूं, तो मैं सत्य-संकल्प के साथ कहता हूं कि मुझे नरक में वास हो।

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास धन मोकहं चीन्हा। वचन हमार पुत्र तजि दीन्हा॥
जब शिष हृदय मुकुर मलनाहीं।गुरु स्वरूप तबहीं दरसाहीं॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब प्रसन्न-भाव से बोले कि हे धर्मदास! तुम धन्य हो, जो मुझको पहचाना और मेरे वचनानुसार अपने पुत्र नारायणदास को त्याग दिया। जब शिष्य के हृदय-रूपी दर्पण में मैल नहीं होगा, तब ही गुरु का स्वरूप दिखाई पड़ेगा।

॥ चौपाई ॥

जब शिष निज हिय गुरुपद राखे। मेटे सबहीं काल की साखे॥
जौ लगि सात पांच की आसा। तौ लगि गुरु नहिं निरखे दासा॥

जब शिष्य अपने पवित्र हृदय में गुरु के श्री चरणों को रखता है, तो काल की सब शाखाओं, अर्थात खानी-वाणी के समस्त बंधनों को मेटता है। परंतु जब तक सात-पांच[1], अर्थात सात स्वर्ग तथा काल-माया के तीनों पुत्रों सहित की आशा लगी रहेगी, तब तक दास-शिष्य वास्तव में गुरु एवं गुरुपद को नहीं देख-समझ सकता।

॥ चौपाई ॥

इक मत शिष्य गुरुपद लागे। छूटे मोह ज्ञान तब जागे॥
दीपक ज्ञान हृदय जब आवे। मोह भर्म तब सबै नसावे॥

सर्व आशाओं को छोड़कर जब शिष्य एकमत होकर गुरु के श्री चरणों से लगता है, तब उसका मोह छूटता है और उसमें ज्ञान जगता है। दीपक के समान जब ज्ञान हृदय में प्रकाशित होता है, तब मोह-भ्रम रूपी अंधकार सब नष्ट हो जाता है।

॥ चौपाई ॥

उलटि आय सतगुरु कहं हेरा। बुन्द सिन्धु का भयो निबेरा॥
सिन्धुहि बुन्द समाना जाई। कहे कबीर मिटी दुचिताई॥

सत्यज्ञान उत्पन्न होने पर शिष्य उलटकर सद्‌गुरु को देखता है, तो बूंद के समान शिष्य और सिंधु समान सद्‌गुरु-स्वरूप सत्यपुरुष का निर्णय हो गया, अर्थात द्वैत-भाव मिट गया और दोनों शुद्ध चैतन्य-अविनाशी एक स्वरूप सिद्ध हुए। सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि जिस प्रकार समुद्र में बूंद समा जाती है, उसी प्रकार दोनों के बीच का भेद मिट गया, अर्थात बूंद-शिष्य और सागर-सत्यपुरुष दोनों मिलकर एक समान हो गए।

॥ चौपाई ॥

धर्मनि यह गुरुपद परतापा। गुरुपद गहे तजे भ्रम आपा॥
यहै गहे सब दुखहि नशायी। बिनु गुरु शिष्य निरासे जायी॥

हे धर्मदास! यह गुरु चरणों का प्रताप है। इसलिए शिष्य गुरु-चरणों को

1. विभिन्न बहुमूल्य-पदार्थ, जो सात-पांच की संख्या में माने जाते हैं, यहां पर उनकी आशा एवं मोहाभिमान को छोड़ने की बात भी युक्ति-संगत लगती है।

ग्रहण करे और भ्रम-अज्ञान एवं अहंकार को छोड़े। ये ही गुरु के श्री चरण-कमल ग्रहण कर शिष्य के जन्म-मरण रूपी सब दुखों का नाश हो जाएगा और बिना गुरु के शिष्य निराश-हताश यूं ही जाएगा, अर्थात उसका जीवन व्यर्थ जाएगा।

धर्मदास के पुत्र नारायणदास के प्रति शुभ सम्मति

॥ चौपाई ॥

अब मैं तोहीं कहौं बुझाई। सुनि संशय तव दूर पराई॥
दास नरायन तोर न मनिहै। वह तो आपन मत निज तनिहै॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि अब मैं तुमको समझाकर कहता हूं, जिसे सुनकर तुम्हारा संशय दूर हो जाएगा। नारायणदास तुम्हारी बात नहीं मानेगा, वह तो अपना निज-मत फैलाएगा।

॥ चौपाई ॥

ताकर पंथ चले संसारा। यामहं नहिं कछु सोच विचारा॥
अंश हमार जो पन्थ चलाई। ताहि देखि सो रार बढ़ाई॥

उसका पंथ संसार में चलेगा, इसमें कुछ भी सोच- विचार की बात नहीं है। हमारा अंश जो सत्य-पंथ चलाएगा, उसे देखकर वह (नारायणदास) झगड़ा करेगा।

॥ चौपाई ॥

ताकर चढ़ी देखि नहिं सहिहै। आपन बढ़ी बंस मत कहिहै॥
पंथ चलाय हंग बहु आनै। आपन सब छोट बखानै॥

उस सत्य-पंथ को चढ़ते, अर्थात विकसित होते हुए देखकर वह सहन नहीं कर सकेगा और अपनी बढ़त को अथवा अपना मत बढ़ाने को असली वंश-मत कहेगा, क्योंकि वह धर्मदास का पुत्र है। अपना नारायणदास-पंथ चलाकर वह बहुत अहंकार करेगा और अपने को बड़ा तथा सबको छोटा कहेगा।

॥ चौपाई ॥

साधु संत सो कर अभिमाने। नाद पुत्र सों नहिं वह माने॥
जब लग ऐसी चाल चलावे। तब लग तो नहिं सत पथ पावे॥

वह साधु संत से अभिमान करेगा और वह नाद-पुत्र, अर्थात विरक्त नाद-शिष्य-संत को भी नहीं मानेगा। जब तक वह ऐसी चाल चले-चलाएगा, तब तक तो वह सत्य-पंथ नहीं पा सकेगा।

॥ चौपाई ॥

बचन बंस औ नाद कडिहारा। उन संग मिलै तो होय उबारा॥
छोड़ अहंकार मान बड़ाई। सत्य शब्द जब हृदय धराई॥

वचन वंश, अर्थात चूड़ामणिनाम साहेब और नाद-वंश के कडिहार (कर्णधार) महंत-गुरु जो होंगे, उनके साथ वह मिलेगा तो उसका उद्धार होगा। अहंकार एवं मान-बड़ाई छोड़कर, जब मेरा सत्य-शब्द धारण करेगा।

॥ चौपाई ॥

वचन बंस को अंस कहैहैं। धर्मनि तबै मोर मन भैहैं॥
जाति तजै औ मोह न आवै। सोई अंश बंस कहलावै॥
कुल की दशा जानकर खोवे। निश्चय अंश बंस वह होवे॥

और जब वह वचन-वंश चूड़ामणि को सत्यपुरुष का नौतम सुरति अंश कहेगा, हे धर्मदास! तब वह मेरे मन भाएगा। जाति के अहंकार को त्याग और किसी के प्रति मोह न आए, वही अंश (पुत्र) वास्तव में वंश कहलाएगा। कुल की दशा, अर्थात मर्यादा को जो खोए (लांघ जाए) निश्चय ही वह अंश वंश होगा। इस प्रकार वह नारायणदास समझे, तो—

॥ चौपाई ॥

तब तेही हम लेब उबारी। निश्चय कहहुं नहिं संत लबारी॥
यहि विश्वास धर्मनि मनराखो। बिनु विश्वास वचन नहिं भाखो॥

तब मैं उसको उबार लूंगा। मैं तुम्हें यह निश्चयपूर्वक सत्य कह रहा हूं, किसी झूठे (लबारी) साधु की भांति नहीं। हे धर्मदास! मेरे इन कहे हुए वचनों का विश्वास अपने मन में रखो और बिना विश्वास वचन मत बोलो।

विशेष—*जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि धनी धर्मदास जी तो परम विरक्त संत थे। उनके सदाचार, सत्यज्ञान एवं सेवा-भक्ति से प्रसन्न होकर सद्‌गुरु कबीर साहिब ने उनको अपना नाद-पुत्र कहा। सद्‌गुरु कबीर साहिब के सत्य-पंथ में धर्मदास जी के पीछे वंश इस प्रकार प्रदर्शित हुआ—*

1. वचन वंश—*सद्‌गुरु कबीर साहिब के वचन से चूड़ामणि नामसाहिब उत्पन्न हुए, इसलिए वे वचन-वंश कहलाए।*

2. बिंद-वंश—*चूड़ामणिनाम साहिब के पुत्र से जो वंशानुक्रम (गृहस्थी) चला, वह बिंद-वंश कहलाया।*

3. नाद-वंश—*उपदेश द्वारा चलाई गई विरक्त-संत-महंतों की परंपरा, नाद-वंश कहलाया।*

❑❑

सत्यनाम
सद्गुरवे नमः

मोक्ष-साधन

गुरु महिमा

॥ चौपाई ॥

बिन विश्वास जीव नहिं तरई। गुरु परतीत बिनु नरकहिं परई॥
गुरु सम और न दानी भाई। गुरु चरनन चित राखु समाई॥

गुरु पर विश्वास किए बिना जीव भवसागर नहीं तरता, गुरु-विश्वास बिना तो वह नरक में पड़ता है। सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे भाई धर्मदास! गुरु के समान मुक्ति-दान देने वाला और नहीं है, अतएव सदा गुरु के चरणों में अपना चित्त समाकर रखो।

विशेष—संसार में मुक्ति-दान से बड़ा कोई दान नहीं है और सांसारिक माया-मोह, धन-संपत्ति आदि को छोड़कर मुक्ति-याचना से बड़ी कोई याचना नहीं। परंतु, यह केवल तब संभव है, जब मुक्ति देने वाला समर्थ गुरु हो और मांगने वाला सुपात्र शिष्य। उस स्थिति में गुरु एवं शिष्य दोनों अपने-अपने स्थान पर महान होते हैं, अर्थात जहां गुरु त्याग-संपन्न विवेक-वैराग्य में स्थित होता है, वहां शिष्य भी तुच्छ-कामनाओं से परे यथार्थ में ज्ञान-मोक्ष को चाहने वाला होता है। इसी संदर्भ में गुरु-शिष्य का पारस्परिक-भाव तथा महत्व दर्शाते हुए सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं—

गुरु समान दाता नहीं, याचक सीष समान।
तीन लोक की संपदा, सो गुरु दीन्हीं दान॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

अर्थात, संसार में गुरु के समान मुक्ति-दाता कोई नहीं और शिष्य के समान कोई याचक (मांगने वाला) नहीं। तीन लोक की अनमोल-संपदा मुक्ति गुरु ने शरणागत शिष्य को दान दे दी।

वस्तुतः पूर्ण समर्थ गुरु ही सुपात्र शिष्य को भव-बंधनों से छुड़ाकर मुक्ति-दान देते हैं।

॥ छंद ॥

दानी और न दूसरा जग, गुरु मुक्तिदानी जानिया।
अधम चाल छुड़ायके गुरु, ज्ञान अंग लखानिया॥
हंसहि भक्ति दृढ़ावहीं दे, अंक बीरा नाम हो।
दुष्ट मित्र चिन्हाय के, पहुंचावहीं निज ठाम हो॥ 90॥

संसार में गुरु के समान दानी और नहीं है, केवल गुरु को ही मुक्ति का दान देने वाला दानी समझो। गुरु नीच-वृत्ति एवं पाप-कर्म की चाल को छुड़ाकर, ज्ञान के स्वरूप को लखाते हैं, क्योंकि ज्ञान से ही मुक्ति होती है। गुरु हंस-जीव को सत्यपुरुष की भक्ति दृढ़ाकर, सत्यनाम का अंक बीड़ा प्रदान करते हैं, अर्थात सत्यपुरुष के नाम का पान-बीड़ा देते हैं। दुष्ट शत्रु-मित्र की पहचान कराकर, गुरु हंस-जीव को उसके मूल-स्थान अथवा निज-घर पहुंचा देते हैं।

॥ सोरठा ॥

गुरु पुरुष नहिं आन, निश्चय कै जो मानहीं।
ताहि मिलै सहिदान, मिटै काल क्लेश सब॥ 94॥

मुक्ति का दान देने वाले समर्थ सद्गुरु और सत्यपुरुष दो नहीं, अर्थात एक समान ही हैं, परंतु जो निश्चय करके माने। उस सुपात्र शिष्य को अमरलोक जाने का सही दान (चिह्न) मिलेगा और उसका सब काल-क्लेश मिट जाएगा।

॥ चौपाई ॥

सर्गुण भाव पेखु धर्मदासा। कस दृढ़ गह प्रतीत विश्वासा॥
कर्मी जीवन देखु विचारी। कस दृढ़ गहे प्रतीत सम्हारी॥

हे धर्मदास! सगुण-भाव के भक्तों की श्रद्धा-भक्ति को देखो कि किस प्रकार वे दृढ़ भरोसा एवं विश्वास ग्रहण करते हैं? उनके भक्ति-कर्म-संपन्न जीवन को देखो और विचारो कि किस प्रकार अपने इष्ट के प्रति संभालकर दृढ़ विश्वास पकड़ते हैं तथा उसमें स्थित रहते हैं?

॥ चौपाई ॥

आपहि लै आवे नर माटी। करता कहं मूरति गढ़ ठाटी॥
तापर अक्षत पुहुप चढ़ावे। प्रेम प्रतीत ध्यान मन लावे॥

आप ही मनुष्य मिट्टी लेकर आता है और उस मिट्टी से ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम-कृष्ण, शारदा-लक्ष्मी, गणेश एवं दुर्गा आदि देवी-देवों की मूर्ति गढ़कर बनाता है। फिर उसे सुंदर वस्त्र तथा गहनों से सजाता और उसको कर्ता कहता है।

उस मूर्ति पर वह अक्षत एवं पुष्प चढ़ाता है और प्रेम तथा विश्वासपूर्वक उस मूर्ति का ध्यान अपने मन में लाता है।

॥ चौपाई ॥

करता कर थापे पुनि ताही। भंग प्रतीत होय नहिं जाही॥
जस धोखहु महं प्रेम समावे। सोई प्रेम सजीव बन आवे॥

सगुण भक्त उस इष्ट-मूर्ति को कर्ता मानकर स्थापित करता है, जिससे उसका विश्वास कभी भंग नहीं होता। एक प्रकार से जैसे धोखे में उस जड़-मूर्ति में उसका प्रेम समाता है, फिर वही प्रेम सजीव बनकर आता है।

॥ चौपाई ॥

सो जिव होय अमोल अपारा। साहिब को है्व हंस पियारा॥
उन जीवन को प्रेम बखाने। कैसे दृढ़ होय धोख लपटाने॥

वह भक्त-जीव अत्यंत मूल्यवान हो जाता है और वह हंसस्वरूप अपने इष्टदेव-स्वामी को प्रिय होता है। ऐसे उन भक्त-जीवों के प्रेम की प्रशंसा की जाती है कि कैसे दृढ़ होकर (जड़-मूर्ति से प्रेम कर) धोखे में लिपटे हुए हैं?

॥ चौपाई ॥

गुरु नाम हम आप कहाया। गुरु पुरुष नहिं भिन्न बताया॥
अस जिव काल बस है्व रहई। दृढ़ प्रतीत कै गुरु नहिं गहई॥

अज्ञानांधकार को नष्ट कर ज्ञान-प्रकाश में लाने वाला[1], जड़-चैतन्य एवं सत्यासत्य का बोध कराने वाला होने से मैं स्वयं आप गुरु कहलाया। सत्यानुभवी गुरु और सत्यपुरुष को अलग नहीं बताया गया, अर्थात वे एक-ही हैं, इस अनुसार गुरु की सेवा-भक्ति सत्यपुरुष की ही सेवा भक्ति है। परंतु जीव काल के वश में ऐसा हो रहा है अथवा होकर रहेगा कि वह मिथ्यावाद में फंसा रहेगा, विश्वासपूर्वक गुरु को ग्रहण नहीं करेगा।

॥ चौपाई ॥

जब मूरति परतीत न आवै। शून्य ध्यान धोखेहु मन लावै॥
जो निश्चय है्व गुरु प्रन धरहीं। मुक्ति होय टारे नहिं टरहीं॥

जब अज्ञानी जीव को गुरु की चैतन्य मूर्ति पर विश्वास नहीं आता, तो वह जड़-मूर्ति के धोखे में पड़कर शून्य में अपना मन लगाकर ध्यान करता है, परंतु उससे उसे शांति अथवा मुक्ति प्राप्त नहीं होती। जो निश्चयपूर्वक गुरु की सेवा-भक्ति का प्रण धारण करता है, उसकी मुक्ति होती है, निस्संदेह उसकी मुक्ति टाले नहीं टलती।

---

1. गु अंधियारी जानिये, रु कहिये परकास।
मिटे अज्ञान तम ज्ञान ते, गुरु नाम है तास॥
(स.क.सा.ग्रंथ)

॥ चौपाई ॥

ऐसे करि जो विश्वास दृढ़ावै। गुरु तजि चित्त अनत नहिं लावै॥
यहि रहनि को हंस अमोला। प्रेम रंग जो रंगे चोला॥

इस प्रकार जो गुरु पर दृढ़ विश्वास करता है और गुरु को जो छोड़कर चित्त कहीं दूसरी ओर नहीं लगाता। ऐसी रहनि का वह जीव अनमोल ज्ञानस्वरूप हंस हो जाता है, जो गुरु के प्रेम रंग में अपना चोला, अर्थात तन-मन रंगता है।

॥ चौपाई ॥

प्रेम जानिहैं अमृत गिरा गुरु। अंचवत होत खानि दुरमति दुरु॥
धर्मदास हिय देखु विचारी। गुरु प्रतीत दृढ़ गहो समहारी॥

समर्पित शिष्य का प्रेम जानकर गुरु उसको अमृत-वाणी का सदुपदेश करता है, जिसका पान करने से आगे-पीछे की सब दुष्ट-बुद्धि की खानि दूर हो जाती है। हे धर्मदास! अपने हृदय में विचार कर देखो कि चैतन्य गुरु-मूर्ति एवं कल्पित जड़-मूर्तियों में क्या अंतर ? अतः गुरु का विश्वास दृढ़तापूर्वक संभालकर पकड़ो।

॥ छंद ॥

अस कै प्रतीत दृढाय गुरुपद, नेह इस्थिर लाइए।
गुरुज्ञान दीपक बार निज उर, मोह तिमिर नसाइए॥
गुरुपद पराग प्रताप ते अघ, पुंज निश्चय जावई।
भव मध्य और युक्ति न तरन की, विश्वास शब्द समावई॥ 91॥

इस प्रकार गुरु के चरणों में विश्वास दृढ़ करके, पावन प्रेम स्थिर करे और अपने हृदय में गुरु-ज्ञान का दीपक जलाकर, सर्व मोह-अंधकार को नष्ट करे। गुरु के चरण-कमलों की धूल के प्रताप से, पाप-समूह निश्चय ही नाश हो जाएगा। गुरु-ज्ञान के अतिरिक्त संसार में तरने का और उपाय नहीं है, मेरे इस शब्दोपदेश में विश्वास करो।

॥ सोरठा ॥

यह भव अगम अथाह, नाम प्रेम दृढ़के गहे।
लेह कृपा गुरु थाह, गुरु गिरा कडिहार मिले॥ 95॥

यह संसार-सागर मन-बुद्धि की पहुंच से परे अगम-अथाह है, अतः गुरु प्रदत्त सत्यनाम को दृढ़ता से पकड़े, तो गुरु की कृपा से थाह पा जाए, परंतु गुरु सत्यज्ञान-वाणी बोलने वाला कर्णधार मिले, अर्थात सत्यज्ञानोपदेश करने वाला सत्यानुभवी तारक गुरु ही संसार-सागर से पार लगा सकता है।

गुरु-शिष्य की रहनी और गुरु-महिमा

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास विनती अनुसारे। तुम साहब हम दास तुम्हारे॥
चूक जो कछु पूछौं गुरुराया। सो कहिए करिकै अब दाया॥
गुरु शिष्य की रहनी है जैसी। सो समुझाय कहो गुरु तैसी॥

धर्मदास जी सद्‌गुरु कबीर साहिब से विनती करते हैं कि आप साहिब हैं और मैं आपका दास हूं। हे गुरु महाराज! जो कुछ मैं चूक गया आपसे पूछता हूं वह अब दया करके कहिए। गुरु और शिष्य की जैसी रहनी है, हे गुरुवर! वह समझाकर कहो।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

सतगुरु कहै गुरु व्रतधारी। अगुन सगुन बिच गुरु आधारी॥
गुरु बिना नहिं होय अचारा। गुरु बिना नहिं होय भव पारा॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं कि गुरु का व्रत धारण करने वाले शिष्य को समझना चाहिए कि निर्गुण और सगुण के बीच गुरु ही आधार है। गुरु के बिना आचार, अर्थात बाहर-भीतर की पवित्रता नहीं होती और गुरु के बिना कोई भवसागर से पार नहीं होता।

॥ चौपाई ॥

शिष्य सीप गुरु स्वाती जानो। गुरु पारस शिष लोह समानो॥
गुरु मलयागिर शिष्य भुजंगा। गुरु परसि शीतल होय अंगा॥

शिष्य सीप के समान और गुरु को स्वाति बूंद के समान समझो (जो शिष्य रूपी सीप में पड़कर ज्ञान-रूपी मोती बनता है)। गुरु पारस के समान तथा शिष्य लोहे के समान है (जो गुरु-पारस के स्पर्श से शुद्ध सोना बनता है)। गुरु मलयागिरि-चंदन के समान शीतल हैं तो शिष्य विषैले-सर्प की भांति गरम है, अर्थात जिस प्रकार सर्प शीतलता पाने के लिए मलयागिरि-चंदन में लिपटता है, उसी प्रकार गुरु के स्पर्श-मिलन से शिष्य का तन-मन शीतल (सुखी) होता है।

॥ चौपाई ॥

गुरु समुद्र है शिष्य तरंगा। गुरु दीपक है शिष्य पतंगा॥
शिष्य चकोर गुरु को शशि जानो। गुरु रवि कमल शिष विकसानो॥

गुरु समुद्र है तो शिष्य उसमें उठने वाली तरंग है। गुरु दीपक है तो शिष्य उसे समर्पित होने वाला पतंग है। शिष्य को चकोर तथा गुरु को चंद्रमा के समान समझो,

अर्थात जिस प्रकार चकोर पक्षी रात्रि में चंद्रमा को निरखता रहता है, उसी प्रकार शिष्य गुरु को। गुरु सूर्य है, जो कमल-रूपी शिष्य को खिलाते हैं।

॥ चौपाई ॥

यदि स्नेह शिष निश्चय लहई। गुरुपद परस दरस हिय गहई॥
जब शिष यहि विधि ध्यान बिशेखा। सोई शिष्य गुरु सम लेखा॥

इस प्रकार गुरु-प्रेम को शिष्य निश्चयपूर्वक प्राप्त करे, गुरु के श्रीचरणों का स्पर्श एवं दर्शन प्राप्त करे। जब इस विधि से शिष्य गुरु का विशेष ध्यान करता है, वह शिष्य गुरु के समान होता है।

॥ चौपाई ॥

गुरु गुरुन में भेद विचारा। गुरु गुरु कहै सकल संसारा॥
गुरु सोई जिन शब्द लखाया। आवागमन रहित दिखलाया॥

गुरु एवं गुरुओं में विचार-भेद है, अर्थात सब गुरु एक समान विचार के नहीं हैं, यूं तो समस्त संसार गुरु-गुरु कहता है। परंतु यथार्थ में गुरु वही है, जो सत्य-शब्द को लखाए—भली प्रकार समझाए और सत्यज्ञानानुसार आवागमन से रहित मुक्त घर दिखलाए।

॥ चौपाई ॥

गुरु सजीवन शब्द लखावे। जाके बल हंसा घर जावे॥
ता गुरु सों कछु अंतर नाहीं। गुरु औ शिष्य मता एक आहीं॥

गुरु, मृत्यु के भय से छुड़ाकर सदा जीवन (अमरत्व) देने वाले अलौकिक शब्द को लखाए, जिसके बल से हंस-जीव अपने घर सत्यलोक को जाए। उस गुरु से कुछ अंतर नहीं है, अर्थात वह गुरु मुझ समान ही है और ऐसे उस गुरु तथा उसको गुरु करने वाले शिष्य का मत एक हो।

॥ छंद ॥

मन कर्म नाना भावना, यह जगत सब लपटान हो।
जीव यम भ्रम जाल डारेउ, उलट निज नहिं जान हो॥
गुरु बहुत हैं संसार में सब, फंदे कृत्रिम जाल हो।
सतगुरु बिना नहिं भ्रम मिटे, बड़ा प्रबल काल कराल हो॥ 92॥

संसार के लोगों के मन में नाना प्रकार के कर्म करने की भावना है, यह सारा जगत उसी में लिपटा है। यम-निरंजन ने जीव को भ्रम (अज्ञान) एवं खानी-वाणी के जाल में डाल दिया है, जिससे उलटकर वह अपने-आप को नहीं जान पाता कि वह नित्य, अविनाशी, चैतन्य एवं ज्ञानस्वरूप है। संसार में गुरु बहुत हैं, परंतु वे सब मिथ्या मान्यताओं एवं अंधविश्वासों के कृत्रिम जाल में फंसे हैं और दूसरे

जीवों को फंसाते हैं। समर्थ सद्गुरु के बिना जीव का भ्रम नहीं मिटेगा, वस्तुतः काल-निरंजन बहुत बलवान एवं भयंकर है।

॥ सोरठा ॥

सतगुरु की बलिहार, अजर संदेशा जो कहे।
ताही मिले होय न्यार, सतपुरुष जिव भेंटई ॥ 96 ॥

सब मिथ्या-मान्यताओं, अंधविश्वासों एवं संकीर्णताओं से छुड़ाने वाले उस सद्गुरु की बलिहारी है, जो सत्यपुरुष का अजर-अमर संदेश कहता है। ऐसे गुरु से मिलकर सब भ्रम-जंजाल से न्यारा हो, तो जीव सत्यपुरुष से मिलता है।

विशेष—*उपर्युक्त छंदानुसार संसार में गुरु तो बहुत हैं, परंतु वे गुरु की रहनि में न रहकर मिथ्या भ्रम-जाल में फंसे हैं। भला जो गुरु आप ही भ्रम जाल में है, वह शिष्य को कैसे उबारेगा? जो स्वयं बंधन में बंधा है, वह अन्य को क्या मुक्ति प्रदान करेगा? वस्तुतः संसार में गुरु होना, गुरु नाम धराना अथवा गुरु कहाना तो सहज है, किंतु गुरु की रहनि (आचरण) में रहना अत्यंत कठिन है। और गुरु की रहनि रहे बिना गुरु गुरु नहीं हो सकता, प्रत्युत वह झूठा, लबारी, ढोंगी-प्रपंची एवं स्वार्थी होगा। ऐसे आचरणहीन गुरु कहाने वाले स्वयं तो डूबते ही हैं, औरों को भी डुबाते हैं। प्रायः ऐसे ही तथाकथित गुरवा-लोगों की संसार में भरमार है। इसीलिए सद्गुरु कबीर साहेब सचेत करते हुए कहते हैं—*

बहुत गुरु भै जगत में, कोई न लागे तीर।
सबै गुरु बहि जाएंगे, जाग्रत गुरु कबीर॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

अर्थात, संसार में गुरु बहुत हैं, परंतु भ्रम एवं अंधविश्वासों में पड़े होने से कोई भी पार लगने-लगाने वाला नहीं है। आचरणहीन सब अचेत गुरु काम-मोहादि विषय-प्रवाह में बह जाएंगे। सद्गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि सदाचार-सत्यज्ञान में स्थित रहने वाले सचेत गुरु ही पार लगते-लगाते हैं।

॥ चौपाई ॥

निशिदिन सुरत गुरु सो लावे। साधु सन्त के चितहि समावे॥
जिन पर दाया सतगुरु करै। तिनका फांस करम सब जरै॥

रात-दिन शिष्य अपनी सुरति गुरु से लगाए और अपने शुद्ध सेवा-भाव से साधु-संतों के चित्त में समाए। जिन सेवक-भक्तों पर सद्गुरु दया करते हैं, उनके सब अशुभ-कर्म एवं दुख-फांस जलकर भस्म हो जाते हैं।

॥ चौपाई ॥

करनी करै और सुरति लगावै। ताको लोक सतगुरु पहुंचावै॥
सेवा करि मन राखे न आसा। ताका सतगुरु काटै फांसा॥

जो शुद्ध करनी करे और अपना ध्यान सत्यपुरुष से लगाए, उसको सद्गुरु सत्यलोक पहुंचाते हैं। सेवक- शिष्य गुरु की सेवा करके उसके बदले में किसी फल की आशा न रखे, अर्थात पूर्णत: निष्काम सेवा करे, तो सद्गुरु उसका सब दुख-फांस काट देते हैं।

॥ चौपाई ॥

गुरु चरणन जो राखे ध्याना। अमरलोक वह करे पयाना॥
योगी योग साधना करई। बिना गुरु सो भव नहिं तरई॥

जो गुरु-चरणों में ध्यान रखता है, वह अमरलोक को प्रस्थान करता है। योगी योग-साधना करता है, जिसकी खेचरी, अनहद नाद एवं षट-चक्र भेदन आदि अनेक क्रियाएं हैं, जिसमें उलझा हुआ वह शुद्ध सत्यज्ञान को उपलब्ध नहीं हो पाता, बिना सद्गुरु वह संसार-सागर को नहीं तैरता (पार नहीं होता)।

॥ चौपाई ॥

शिष्य जो गुरु आज्ञा धारी। गुरु की कृपा होय भव पारी॥
गुरु भगता जो जिव आही। साधु गुरु नहिं अंतर ताही॥

जो शिष्य गुरु की आज्ञा धारण करने वाला है, गुरु की कृपा से वह संसार-सागर से पार हो जाता है। जो जीव गुरु का एकनिष्ठ अनन्य भक्त है, उसमें और साधु-गुरु में कोई अंतर नहीं है।

॥ चौपाई ॥

सांचा गुरु ताहि कर माने। साधु गुरु नहिं अंतर आने॥
जो स्वारथ पागे संसारी। नहिं गुरु शिष्य न साधु अचारी॥

शिष्य सच्चा गुरु उसको माने, जो (गुरु) साधु एवं गुरु में अंतर नहीं लाता, अर्थात जो अपने-आप में गुरु-अभिमान नहीं करता और साधु को गुरु समान आदर देता है। परंतु जो संसारी है और अपने ही स्वार्थ में लगा रहता है, न तो वह गुरु है, न शिष्य, न साधु और न आचारी (बाहर-भीतर की पवित्रता रखने वाला) है।

॥ चौपाई ॥

तिनको काल फंद तुम जानो। दूत अंस काल कर मानो॥
तिनते होय जीव की हानी। यह तो अहे धर्म सहिदानी॥

उन स्वार्थी-जनों को तुम काल का फंदा समझो और काल का अंश दूत मानो। उनसे जीव की हानि होती है, यह स्वार्थ तो काल-निरंजन की पहचान है।

॥ चौपाई ॥

जोई गुरु प्रेम गति जाने। सत्य शब्द को राह पिछाने॥
परम पुरुष की भक्ति दृढ़ावे। सुरति निरति कर तहं पहुंचावे॥

जो गुरु वास्तविक प्रेम की गति को जानता है और सत्य-शब्द के मार्ग को पहचानता है, वह परम पुरुष की भक्ति समझाकर दृढ़ कराता है तथा सुरति को ध्यान-लीन करने की क्रिया बताकर सत्यपुरुष के सत्यलोक पहुंचाता है।

॥ चौपाई ॥

तासों प्रीति करै मन लाई। छोड़ै दुरमति और चतुराई॥
तबहीं निह संशय घर पावै। भव तरिके जग बहुरि न आवै॥

ऐसे उस गुरु से मन लगाकर प्रेम करे और दुष्ट-बुद्धि एवं कपट-चालाकी को छोड़ दे। तब निस्संदेह जीव अपने घर (सत्यलोक) को पाता है, संसार-सागर से तरकर फिर वह लौटकर संसार में नहीं आता।

॥ छंद ॥

सतनाम अमी अमोल अविचल, अंक बीरा पावई।
तजि काग चाल मराल मति गहि, गुरु चरण लौ लावई॥
और पंथ कुमारग सकल बहु, सो नहीं मन लावई।
गुरु चरण प्रीति सुपंथ धर्मनि, हंस लोक सिधावई॥ 93॥

तीनों काल से मुक्त सदा अविनाशी सत्यपुरुष का सत्यनाम अमृत-तुल्य, अनमोल और अविचल (स्थिर) अपने घर-सत्यलोक पहुंचाने वाला है। जो सत्यनाम का अंक पान-बीड़ा पाए, वह कौवे की कपट-चाल छोड़कर हंस की सारग्राही सद्बुद्धि ग्रहण करे और गुरु के चरणों में ध्यान लगाए। और सब बहुत पंथ जो कुमार्ग की ओर जा रहे हैं, उनसे कदापि मन न लगाए। हे धर्मदास! सत्यपंथ ग्रहण कर शिष्य सदा गुरु-चरणों में प्रेम रखे, तो वह हंस सत्यलोक को जाएगा।

॥ सोरठा ॥

गुरुपद कीजे नेह, कर्म भर्म जंजाल तजि।
निज तन जाने खेह, गुरुमुख शब्द प्रतीति करि॥ 97॥

शिष्य गुरु-चरणों में प्रेम करे और अशुभ नीच-कर्म, अज्ञान तथा सांसारिक, घर-परिवार का झगड़ा-झमेला त्याग दे। अपने शरीर को धूल-मिट्टी के समान जाने तथा गुरु के मुख से निकले शब्द पर विश्वास करे।

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास हिय बिच अति हरषे। गदगद गिरा नयन जल बरषे॥
पुनि धीरज धरि बोल विचारी। केहि विधि करौं प्रभु स्तुति तुम्हारी॥

सद्गुरु कबीर साहिब के अमृतमय वचन सुनकर धर्मदास अपने हृदय में

बहुत हर्षित हुए, वे प्रेम में गद्‌गद हो गए, उनकी आंखों से जल बरसने लगा तथा भाव-विभोर होकर मानो उनकी वाणी रुक-सी गई। फिर वे धीरज धरकर विचारपूर्वक बोले कि हे प्रभु! मैं आपकी स्तुति किस प्रकार करूं?

॥ चौपाई ॥

मम हिय तिमिर आहि अंधियारा। मिहर पतंग कीन्ह उजियारा॥
अब गुरु विनती सुनो हमारी। जीवन निरनय कहो विचारी॥
कौन जीव कहं देहों पाना। समरथ कहो वचन सहिदाना॥

मेरे हृदय में तो अज्ञानांधकार है और आपने मुझ पतंग के समान तुच्छ जीव पर दया करके ज्ञान का प्रकाश किया है। हे सद्‌गुरु! अब मेरी विनती सुनो, आप मुझे ज्ञान के अधिकारी-अनाधिकारी जीवों का निर्णय विचारकर कहो। कौन जीवों को ज्ञानोपदेश कर पान दें, हे समर्थ! उन जीवों के सही लक्षण-चिह्न (पहचान) कहो।

अधिकारी जीवों के लक्षण

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास निहसंशय रहहू। मुक्ति संदेशा जीवन कहहू॥
देखहु जाहि दीन लौलीना। भक्ति मुक्ति कह बहुत अधीना॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! तुम निसंकोच-भाव से रहो और जीवों को मुक्ति का संदेश कहो। जिसको तुम दीन (विनम्र) देखो और जिसमें सत्यपुरुष की भक्ति की लगन है तथा जो मुक्ति के लिए बहुत वशीभूत है।

॥ चौपाई ॥

दया शील क्षमा चित जाही। धर्मनि नाम पान दो ताही॥
तासन पुरुष संदेशा कहिहो। निशिदिन नाम ध्यान दृढ़ गहिहो॥

जिसके चित्त में दया, शील एवं क्षमा आदि सद्‌गुण हों, हे धर्मदास! उसको नाम-पान (ज्ञान-दीक्षा) दो। उसके सामने सत्यपुरुष का संदेश (सत्यज्ञानोपदेश) कहो कि तुम रात-दिन सत्यपुरुष के सत्यनाम एवं ध्यान को दृढ़ता से ग्रहण करो, अर्थात यथा-आचरण करो।

अनाधिकारी जीवों के लक्षण

॥ चौपाई ॥

दयाहीन जो शब्द नहिं माने। काल दिशा हो बाद बखाने॥
चंचल दृष्टि होय पुनि जाही। सत्य शब्द न ताहि समाही॥

दयाहीन हो, जो सार-शब्दोपदेश को न माने और काल का पक्ष लेकर व्यर्थ का वाद-विवाद करे। फिर जिसकी दृष्टि चंचल हो, उसके हृदय में मेरा सार-शब्द नहीं समाएगा।

॥ चौपाई ॥

चिबुक बाहर दशन दिखाए। जानहु दूत भेष धरि आए॥
मध्य नेत्र जिहि तिल अनुमाना। निश्चय कालरूप तिहि जाना॥

ओठों के बाहर जिसके दांत दिखाई पड़ें, उसको जानो कि दूत का वेष धारण कर आया है। जिसकी आंख के मध्य में तिल हो, उसको निश्चय जानो कि वह काल का रूप है।

॥ चौपाई ॥

ओछा शीश दीर्घ जिहि काया। ताके हृदय कपट रह छाया॥
तेहि जनि देहु पुरुष सहिदानी। यह जिव करे पंथ की हानी॥

जिसका सिर छोटा हो और शरीर विशाल लंबा-मोटा हो, उसके हृदय में प्रायः कपट की छाया रहती है। अतः उसे सत्यपुरुष की निशानी (पहचान) मत दो, क्योंकि यह ऐसा जीव सत्य-पंथ की हानि करेगा।

विशेष-निर्देश—*यूं तो प्रत्येक मानव को ज्ञान पाने एवं अपना कल्याण करने का अधिकार है, परंतु उपर्युक्त वर्णित लक्षण समझने परखने योग्य हैं। संभवतः इनसे कुछ तो अच्छे बुरे अथवा अधिकारी-अनाधिकारी को समझने में सहायता मिले।*

काया कमल विचार

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु जन्म सुफल मम कीन्हा। यम सों छोरि अपन कर लीन्हा॥
जो सहस्त्र रसना मुख होई। तो तव गुण वरणे नहिं कोई॥

धर्मदास ने कहा कि हे प्रभु! आपने अमृत वचन सुनाकर मेरा जन्म सफल कर दिया और मुझे यम-निरंजन से छुड़ाकर अपना कर लिया। जो मुख में हजार जीभ हों, तो भी कोई आपके गुणों का वर्णन नहीं कर पाएगा।

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु हम बड़ भागी आहीं। निज सम भाग कहौं मैं काही॥
सोइ जीव बड़ भागी होई। जासु हृदय तव नाम समोई॥

हे प्रभु! मैं बड़ा भाग्यवान हूं। अपने समान भाग्य मैं किसका कहूं? वही जीव बड़ा भाग्यवान होता है, जिसके हृदय में आपका नाम-ज्ञान समाता है।

॥ चौपाई ॥

अब इक विनती सुनो हमारी। यहि तन निर्णय कहो विचारी॥
कौन देव कहु कहवां रहई। कहवां रहि कारज सो करई॥

अब आप मेरी एक विनती सुनो। इस शरीर का निर्णय विचारकर कहो। कहिए इसमें कौन देवता कहां रहता है और कहां रहकर वह कार्य करता है?

॥ चौपाई ॥

नाड़ी रोम रुधिर कत अहई। कौने मारग स्वासा बहई॥
आंत पित्त औ फेफसा झोरी। साहिब कहहु विचार बहोरी॥

नाड़ी रोम कितने हैं और रक्त किसलिए है तथा श्वास कौन-से मार्ग से चलती है? आंत, पित्त, फेफड़ा और आमाशय, हे साहिब! इन्हें विचारकर कहो।

॥ चौपाई ॥

जाहि ठाम है जासु अस्थाना। साहब बरनि कहो सहिदाना॥
कौन कमल केता जप प्रकासा। रात दिवस लग केतिक स्वासा॥

जिस स्थान पर जिस देवता का स्थान है, हे साहिब! उसकी पहचान का वर्णन करो। कौन कमल में कितना जप होता है और रात-दिन तक कितनी श्वास चलती हैं?

॥ चौपाई ॥

कहवां ते शब्द उठि आवे। कहो कहवां वह जाइ समावे॥
कोइ जीव झिलमिल कहंदेखा। सो साहिब मुहिं कहो विवेका॥
कौन देव के दरशन पाई। तिहि अस्थान कहो समुझाई॥

कहां से शब्द उठकर आता है तथा कहिए वह कहां जाकर समाता है? जो कोई जीव झिलमिल-ज्योति को देखता है, तो हे साहिब! मुझे उसका विवेक-ज्ञान कहो कि उसने कौन देवता का दर्शन पाया? उसका स्थान समझाकर कहो।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि सुनहु शरीर विचारा। पुरुष नाम काया ते न्यारा॥
प्रथमहि मूल कमल दलचारी। तहं रहु देव गणेश पसारी॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! अब तुम शरीर का विचार सुनो। सत्यपुरुष का नाम शरीर से न्यारा है, क्योंकि वह आदि पुरुष स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण और कैवल्य शरीरों से न्यारा है, इसीलिए उसका नाम भी न्यारा है। प्रथम मूलाधार चक्र गुदा-स्थान है और वह चार दल का कमल है, वहां गणेश देवता का निवास है।

॥ चौपाई ॥

विद्या गुणदायक तिहि कहिये। षटशत अजपा ध्यान सो लहिये॥
मूल कमल के उर्ध अखारा। षट पखुरी को कमल विचारा॥

उसको विद्या गुण का देने वाला कहना चाहिए, वहां छः सौ अजपा जाप कर ध्यान से उसे प्राप्त किया जाता है। मूलाधार कमल के ऊपर स्वाधिष्ठान-चक्र है, वह छः पंखुड़ी का कमल विचारा जाता है।

॥ चौपाई ॥

ब्रह्मा सावित्री सुर राजे। षट सहस्त्र अजपा तहं गाजे॥
पदुम अष्ट दल नाभि स्थाना। हरि लक्ष्मी तहं बसहिं प्रधाना॥

वहां ब्रह्मा-सावित्री देवता विराजते हैं और वहां छः हजार अजपा जाप होता है। नाभि-स्थान मणिपूर चक्र है, जहां आठ पंखुड़ी का कमल है[1]। वहां प्रधान देवता विष्णु और लक्ष्मी बसते हैं।

॥ चौपाई ॥

जाप जहां षट सहस्त्र परमाना। गुरु गम ते लखि परइ ठिकाना॥
ता ऊपर पंकज दल द्वादस। रुद्र पारवती ताहि कमल बस॥

जहां पर छः हजार अजपा-जाप का प्रमाण है, गुरु-ज्ञान से वह स्थान समझ पड़ता है। उसके ऊपर हृदय स्थान अनहद चक्र है, वह बारह पंखुड़ी का कमल है, उस कमल में शिव-पार्वती बसते हैं।

॥ चौपाई ॥

षट सहस्त्र अजपा तहं होइ। गुरु गम ज्ञान ते देखु बिलोई॥
षोडश पत्र कमल जिव रहई। सहस एक जपा तहं चहई॥

वहां छः हजार अजपा-जाप होता है, गुरु के गहन-ज्ञान से उसका निर्णय करके देखो। विशुद्ध चक्र कंठ स्थान है। सोलह पंखुड़ियों का कमल है, जहां जीव[2] रहता है, उसके लिए एक हजार अजपा-जाप चाहिए।

॥ चौपाई ॥

भवर गुफा दल दोहु परमाना। तहवां मन राजा को थाना॥
सहस एक अजपा तिहि ठाई। धरमदास परखो चितलाई॥

भवर-गुफा[3], अर्थात भृकुटी स्थान आज्ञा चक्र है, वह दो दल के कमल का

---

1. योगशास्त्र में मणिपूर चक्र को दस पंखुड़ी का कमल बताया है।

2. कुछ शास्त्रानुसार विशुद्ध चक्र सोलह कमल दल में सरस्वती का वास कहा है, जबकि यहां जीव दर्शाया गया है।

3. भवर-गुफा को किसी ने मस्तक का शून्य-स्थान कहा है और उसे एक हजार पंखुड़ी का कमल मानकर निरंजन का स्थान माना है तथा आज्ञा-चक्र त्रिकुटी को दो पंखुड़ी का कमल मानकर वहां महाविष्णु का वास कहा है।

प्रमाण है, वहां मन राजा (निरंजन) का स्थान है। उसके लिए एक हजार अजपा-जाप ठाना है, हे धर्मदास! चित्त लगाकर परखो एवं समझो।

॥ चौपाई ॥

दुइदल उर्ध्व शून्य अस्थाना। झिलमिल ज्योति निरंजन जाना॥
सुरति कमल सतगुरु के वासा। तहं एतिक अजपा परकासा॥

दो दल वाला ऊपर वह जो शून्य-स्थान (त्रिकुटी) है, वहां झिलमिलाती-ज्योति को निरंजन जानो। सर्वोच्च, अर्थात सबसे ऊपर सुरति-कमल में सद्गुरु का वास है, वहां अनंत अजपा-जाप प्रकाशित होते हैं (उसे सहस्त्र दल कमल कहा जाता है)।

॥ चौपाई ॥

एक सहस षटशत औ बीसा। परखहु धर्मनि दिन और नीसा॥
धर्मदास सुनु, शब्द संदेशा। घट परचे का कहुं उपदेशा॥

नीचे के मूलाधार चक्र से लेकर ऊपर से सहस्त्र दल कमल तक इक्कीस हजार छः सौ श्वास दिन-रात चलती हैं, हे धर्मदास! परखकर देखो। हे धर्मदास! तुम मेरा शब्द-संदेश सुनो, मैं शरीर के परिचय का उपेदश कह रहा हूं।

॥ चौपाई ॥

सबै कुम्भ तन रुधिर संवारा। कोटि रोम तन पृथी सुधारा॥
नाड़ि बहत्तर हैं परधाना। नौ महं तीन प्रधान सुजाना॥

पांच तत्व (पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और आकाश) से निर्मित सब कुंभरूपी शरीर हैं। शरीर में सात धातुएं (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा एवं शुक्र) हैं, इनमें रस-निर्मित रक्त संपूर्ण शरीर में संचरण करता हुआ शरीर को पोषता-संवारता है। जैसे पृथ्वी पर असंख्य पेड़-पौधे होते हैं, वैसे पृथ्वी-रूपी शरीर पर करोड़ों रोम (रोएं) होते हैं।

हे सुजान धर्मदास! इस शरीर की संरचना में बहत्तर कोठे माने गए हैं, जहां बहत्तर हजार नाड़ियों की गांठ बंधी है और इस प्रकार सारे शरीर में धमनी एवं शिरा नामक नाड़ियों का जाल फैला हुआ है। जिनसे शरीर की प्रक्रिया चलती रहती है। सब नाड़ियों में बहत्तर नाड़ियां प्रधान हैं। बहत्तर नाड़ियों में नौ (पुहूखा, पयस्विनी, गंधारी, हस्तिनी, कुहू, शंखिनी, अलंबुषा, गणेशनी और वारुणी) नाड़ियां प्रधान हैं तथा इन नौ नाड़ियों में भी तीन (इंगला, पिंगला एवं सुषुम्ना) प्रधान नाड़ियां हैं।

॥ चौपाई ॥

त्रय नाड़ी महं एक अनूपा। सो ले रहे गहे सतरूपा॥

उक्त तीन नाड़ियों में भी एक सुषुम्ना नाड़ी सर्वश्रेष्ठ एवं अनुपम है, उस

नाड़ी को लेकर योगी योग-साधना में स्थित हो और निज अविनाशी सत्य-रूप को ग्रहण करे।

विशेष— *संक्षिप्त में सुषुम्ना नाड़ी को समझ लेना अच्छा है। शरीर का प्रमुख आधार उसमें होने वाली अस्थियां हैं, जो कि संख्या में कहीं दो सौ तो कहीं तीन सौ साठ बताई गई हैं। अस्थियों में एक मेरुदण्ड (रीढ़) है, जो कमर के बीच में से होता हुआ नीचे कटि से लेकर ऊपर सिर के नीचे तक गया है। मेरुदण्ड अनेक गांठों से विशेष ढंग से गठित है, जिससे मनुष्य शरीर को चाहे जिधर मोड़ सकता है। मेरुदण्ड के भीतर दो शक्ति प्रवाह नाड़ियां बाईं ओर इड़ा तथा दाईं ओर पिंगला हैं और ठीक बीच में से जो शून्य नाली गई है, वही सुषुम्ना नाड़ी है। सुषुम्ना नाड़ी मेरुदण्ड से होती हुई मस्तिष्क में सहस्त्र दल कमल तक गई है। इसी सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा शरीर के सब समाचार मस्तिष्क तक और मस्तिष्क के आदेश शरीर में पहुंचते हैं। यह भी स्मरण रहे कि मेरुदण्ड में अवस्थित यह नाड़ी-केंद्र श्वास-प्रश्वास यंत्रों को नियमित करता है और दूसरे जो नाड़ी-चक्र हैं, उन पर भी कुछ प्रभाव डालता है। सुषुम्ना नाड़ी अति सूक्ष्म ज्योतिर्मय सूत्र सदृश है, जो मुक्ति का द्वार कहलाती है।*

योगियों के मतानुसार सुषुम्ना नाड़ी के सबसे नीचे मूलाधार में कुण्डलिनी शक्ति अवस्थित है। योग-साधना के द्वारा कुण्डलिनी शक्ति को जगाने पर, वह सुषुम्ना के भीतर से मार्ग बनाकर उठने का प्रयत्न करती है। ज्यों-ज्यों वह एक-एक सोपान ऊपर उठती जाती है, त्यों-त्यों मानो मन के स्तर खुलते जाते हैं और योगी को अलौकिक दर्शन के साथ अद्‌भुत शक्तियां प्राप्त होने लगती हैं। जब वह कुण्डलिनी शक्ति सब चक्रों को पार कर मस्तिष्क पर आ जाती है तो योगी को अपने मुक्त स्वभाव एवं निज अविनाशी-चैतन्य-सत्यस्वरूप की उपलब्धि होती है। अतएव, योग-साधना में सुषुम्ना का ध्यान करना अत्यंत लाभदायक है।

॥ चौपाई ॥

जेतिक पत्र पदुम जो आही। उठे शब्द प्रगटे गुण ताही॥
तहवां ते पुनि शब्द उठायी। शून्य माहिं सो जाप समायी॥

नीचे के मूलाधार से लेकर ऊपर के ब्रह्मरंध्र तक जितने भी कमल-दल एवं चक्र जो आते हैं, उनसे शब्द उठता है और उनका गुण प्रकट करता है। वहां से फिर शब्द उठकर शून्य में जाकर समाता है।

॥ चौपाई ॥

आंत एकइस हाथ प्रमाना। सवा हाथ झोरी अनुमाना॥
सवा हाथ नभ फेरी कहिये। खिरकी सात गुफा में लहिये॥

जो भी मुंह के द्वारा खाया-पिया जाता है, वह जाकर जहां इकट्ठा होता है,

उसे झोरी (आमाशय) कहा जाता है। आमाशय का सवा हाथ होने का अनुमान है। खाया-पिया पदार्थ आमाशय में पककर रस बन जाता है, जो नाड़ियों द्वारा रसाशय में चला जाता है। आमाशय में बच रहने वाला शेष मोटा पदार्थ अंतड़ी (आंत) में चला जाता है। आंत का इक्कीस हाथ होने का प्रमाण है।

संत-योगियों ने मनुष्य के शरीर को दो भागों में बांटकर उसे भिन्न-भिन्न नाम दिए हैं। गले (कंठ) के नीचे वाले भाग को पिण्ड और गले के ऊपर वाले भाग को ब्रह्माण्ड अथवा आकाश, नभ, गगन एवं गुफा आदि नामों से कहा है। उपर्युक्त चौपाई में ब्रह्माण्ड-सिर को नभ एवं गुफा नाम दिया गया है। सिर अथवा नभ का क्षेत्र सवा हाथ का होता है और नभ-गुफा (सिर) में सात खिड़की होती हैं, जो इस प्रकार हैं—दो आंखें, दो कान, दो नाक के छेद और एक मुख।

॥ छंद ॥

पित्त अंगुल तीन जानो, पांच अंगुल दिल कही।
सात अंगुल फेफसा है, सिन्धु सात तहां रही॥
पवन धार निवार तन सो, साधु योगी गम लहे।
यहि कर्मयोग किए रहित नाहिं, भगति बिनु जो इन बहे॥ 94॥

शरीर में दाईं ओर पसली के नीचे एक भीतरी अंग यकृत अथवा लीवर होता है, जो पित्त बनाता है तथा रक्त-शुद्धि करता है। पित्त की थैली को पित्ताशय कहा जाता है, जिसे तीन अंगुल का समझो। पित्त को जठराग्नि अथवा पाचक अग्नि कहा जाता है, अर्थात शरीर में पित्त ही अग्नि है। शरीर में पित्त नाम, स्थान तथा क्रिया के भेद से पांच प्रकार का (पाचक, रंजक, साधक, आलोचक और भ्राजक) कहा गया है। यह पित्त सारे शरीर में फैलकर क्रिया करता है और आहार पचाने से लेकर बल-बुद्धि बढ़ाने तक विभिन्न अंगों को विकसित करता है।

दिल अथवा हृदय पांच अंगुल का कहो, जो छाती की बाईं ओर पसली के नीचे होता है। इसका काम है, रक्त को शरीर एवं फेफड़ों में फेंकना। शरीर में हृदय की क्रिया दिन-रात लगातार होती रहती है, जिससे धक-धक की आवाज होती है। हृदय की धड़कन को स्पष्ट समझा जा सकता है। रक्त को शरीर में फेंककर हृदय शरीर का पालन-पोषण करता है।

फेफसा, अर्थात फेफड़ा को सात अंगुल का कहा गया है। फेफड़े के द्वारा फैलना और सिकुड़ना की दो क्रियाएं होती हैं। फेफड़ा जब फैलता है, तो बाहर की हवा को भीतर खींचता है, जिसको सांस कहते हैं और जब सिकुड़ता है, तो भीतर की हवा को बाहर फेंकता है, जिसे प्रश्वास (उसांस) कहते हैं। फेफड़े की क्रिया दिन-रात लगातार चलती रहती है, जिससे रक्त की सफाई होती है तथा शरीर स्वस्थ रहता है।

शरीर में सात समुद्र के बारे में निम्नांकित दोहा प्रसिद्ध है—

'मीठा लोण दधि घृत, मदिरा अमृत दूध।
सात समुद्र का नाम यह, गुरुवन कल्पित बूध॥'

1. मीठा अथवा इक्षुरस समुद्र—वीर्य, 2. लोण अथवा क्षार समुद्र—मूत्र, 3. दधि समुद्र—कफ (खकार का स्थान), 4. घृत समुद्र—नाक से बहने वाला गाढ़ा पानी, 5. मदिरा समुद्र—पित्त, 6. अमृत अथवा दुर्गंध युत सागर—पानीयुत मल, जिसे योगीजन अमृत समझकर (लार) पीते अथवा चखते हैं, 7. दूध अथवा क्षीर समुद्र—स्त्री के स्तनों में दूध, जिसे शिशु पीता है।

शरीर में पवन (वायु) की प्रधानता होती है। बिना पवन के शारीरिक-क्रियाएं नहीं हो सकतीं। नाम, स्थान एवं क्रिया के भेद से पवन दस प्रकार के माने जाते हैं—पांच प्राण और पांच उपप्राण। पवन सारे शरीर में घूमता है तथा सभी अंगों की क्रियाओं का सहायक है। इसी से हृदय में गति एवं धड़कन होती है तथा सांस का आना-जाना होता है। पवन में क्रिया करने की शक्ति पिण्ड एवं ब्रह्माण्ड अभिमानी चैतन्य से प्राप्त होती है।

बहुत संत-योगी, योग-साधना द्वारा पवन का संयम करते हैं, अर्थात प्राणायाम की क्रिया—पूरक, कुंभक एवं रेचक करते हैं, जिससे वे तन-मन का संयम करके आत्म-साक्षात्कार करने का प्रयास करते हैं। पवन का संयम करके वे शरीर को स्वस्थ बनाने के साथ अपनी आयु तक बढ़ाते हैं। परंतु इस कर्म योग के करने से वे आवागमन (जन्म-मृत्यु) से रहित नहीं होते। सद्गुरु की सेवा एवं सत्यपुरुष की भक्ति किए बिना वे लख-चौरासी में ही जाते हैं।

॥ सोरठा ॥

ज्ञान योग सुख राशि, नाम लहे निज घर चले।
अरि परबल को नाशि, जीवन मुक्ता होय रहे॥ 98॥

हर प्रकार से ज्ञानयोग कर्मयोग से श्रेष्ठ है। शरीर के सब अंगों, क्रियाओं एवं भेदों को समझते हुए उसके मोह-चक्कर में न पड़े, उन सबसे स्वयं को पृथक समझे। ज्ञान-योग सुख की राशि (ढेर-समूह) है। अत: सत्यज्ञानानुसार सत्यपुरुष के सत्यनाम को ग्रहण करके अपने घर (सत्यलोक) चले। शरीर में जो अत्यंत बलवान काम, क्रोध, मद, लोभ एवं मोह आदि शत्रु हैं, ज्ञान के द्वारा उनका नाश कर जीवन-मुक्त होकर रहे।

॥ चौपाई ॥

धर्मनि यह मन को व्यवहारा। गुरु गम ते परखो मत सारा॥
मनुआ शून्य ज्योति दिखलावे। नाना भर्म मनहिं उपजावै॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! जो कर्मकांड की क्रियाएं हैं,

यह सब मन का कार्य-व्यवहार है, गुरु के गंभीर ज्ञान से सारा मत परखो। मन-निरंजन शून्य में ज्योति दिखाता है, जिसे देखकर जीव ईश्वर के धोखे में पड़ जाता है। इस प्रकार मन ही नाना प्रकार के भ्रम-अज्ञान उत्पन्न करता है।

॥ चौपाई ॥

निराकार मन उपजा भाई। मन की मांड तिहूं पुर छाई॥
अनेक ठाव जिव माथ नवावे। आप न चीन्हे धोखा पावे॥

हे भाई धर्मदास! योग-साधना में मस्तक में प्राण रोकने से जो ज्योति उत्पन्न होती है, वह आकार-रहित निराकार मन ही है। मन में जीवों को भरमाने की, उन्हें विषयों एवं पाप-कर्मों में प्रवृत्त करने की शक्ति है, उसी शक्ति से वह सब जीवों को कुचलता है और उसकी वह शक्ति तीनों लोकों में छायी है।

मन से सब जीव भ्रमित हैं, जिससे जीव अनेक स्थानों में कल्पित देवी-देवों एवं जड़-मूर्ति आदि को माथा झुकाता है। वह अपने-आपको नहीं समझता कि मैं कौन हूं? और यह भी नहीं समझता कि जिन्हें मैं शीश झुकाता हूं, वे सब देवी-देवा मनुष्य के ही गढ़े हुए हैं तथा इन सबका कर्ता-धर्ता मनुष्य ही है, इस प्रकार मन-वश होकर वह धोखा पाता है।

॥ चौपाई ॥

यह सब देखु निरंजन आसा। सत्यनाम बिनु मिटे न फांसा॥
जैसे नट मर्कट दुख देई। नाना नाच नचावन लेई॥

हे धर्मदास देख! यह सब निरंजन का जाल है कि जीव कल्पित देवी-देवों एवं पत्थर-पानी की पूजा-सेवा में कल्याण पाने की आशा करते हैं। परंतु सत्यनाम के सुमिरन एवं सत्यज्ञान के आचरण बिना निरंजन का जाल-फांस नहीं मिटेगा।

जैसे नट बन्दर से अनेक प्रकार के नाच नचाता है और उसे दुख देता है—

॥ चौपाई ॥

यहि विधि यह मन जीवनचावे। कर्म भर्म भव फंद दिढ़ावे॥
सत्य शब्द मन देइ उछेदी। मन चीन्हे कोइ बिरले भेदी॥

इसी प्रकार यह मन जीव को नचाता है तथा उसे दुख देता है। यह मन जीव को भ्रमित कर नीच-कर्म में प्रवृत्त करता है तथा उसे सांसारिक-बंधन में दृढ़ता से बांधता है। सत्य-शब्दोपदेश की ओर जीव को जाते हुए देखकर मन उच्छेद देता है, अर्थात उसे जाने से रोकता है, एक प्रकार से कल्याणमय शुभ कर्मों के करने में यह उचाट उत्पन्न करता है। मन को कोई विरला ज्ञानी पुरुष ही समझता है।

॥ चौपाई ॥

पुरुष संदेश सुनत मन दहई। आपन दिशा जीव ले बहई॥
सुनु धर्मनि मन के व्यवहारा। मन को चीन्ह गहे पद सारा॥

यदि कहीं सत्यपुरुष संदेश अथवा सत्यज्ञानोपदेश सुनता है तो मन जलने लगता है और यह जीव को अपनी दिशा की ओर ले जाकर बहता है।

हे धर्मदास! तुम मन के ये कार्य एवं व्यवहार सुनो, भक्त-सज्जन मन को पहचान (समझ) कर सार पद (सत्यपुरुष) को ग्रहण करें।

॥ चौपाई ॥

या तन भीतर और न कोई। मन अरु जीव रहे घर दोई॥
पांच पचीस तीन मन झेला। ये सब आहिं निरंजन चेला॥

इस शरीर के भीतर और कोई नहीं है, केवल मन और जीव इस घर में दो रहते हैं। पांच तत्व, पांच तत्वों की पच्चीस प्रकृति, सत-रज-तम तीन गुण और दस इंद्रियां, ये सब मन-निरंजन के साथ शिष्य-शाखा हैं।

॥ चौपाई ॥

पुरुष अंश जिव आन समाना। सुधि भूली निज घर सहिदाना॥
इन सब मिलिके जीव ही घेरा। बिनु परिचय जिव यम का चेरा॥

सत्यपुरुष का अंश जीव आकर शरीर में समाया, अर्थात शरीर में प्रवेश किया है। शरीर में आकर जीव अपने घर (अमरलोक) की याद एवं पहचान भूल गया। पांच तत्व, पच्चीस प्रकृति, तीन गुण तथा मनेंद्रियों ने मिलकर जीव को घेर रखा है। जीव को इन सबका ज्ञान अनुभव नहीं है और अपना भी पता नहीं है कि मैं कौन हूं? इस प्रकार बिना परिचय जीव यम-निरंजन का दास बना हुआ है।

॥ चौपाई ॥

भर्म वशी जिव आप न जाना। जस सुगना नलनी फंदाना॥

जीव अज्ञानवश अपने-आपको एवं अपने बंधनों को नहीं जानता, यही उसके दुख-बंधन का कारण है, जैसे तोता लकड़ी के नलनी यंत्र में फंसकर बंधन में पड़ जाता है।

***दृष्टांत**—पक्षियों को पकड़ने वाले शिकारी लोग लकड़ी का नलनी यंत्र बनाते हैं। उसे बनाने के लिए वे लगभग सवा हाथ लंबी, सीधी एवं चिकनी लकड़ी लेते हैं। उसमें बांस की पोली नली डाल देते हैं और उसके दोनों सिरों में एक एक खड़ी लकड़ी बांध देते हैं, इसी को नलनी कहते हैं। जहां पर तोते होते हैं, वहां पर उस नलनी को किसी पेड़ की डाल में बांध देते हैं और उसके सामने एक लाल फल बांधकर लटका देते हैं। तोता उस लाल फल को देखकर खाने के लिए ललचाता है, परंतु खाने का क्या उपाय करे? केवल उस नलनी के अतिरिक्त उसका बैठने का और कोई आधार नहीं। अंततः वह उस नलनी पर बैठ जाता है और फल खाने के लिए अपनी गरदन आगे बढ़ाता है। गरदन बढ़ाते ही आगे भार अधिक होने से बांस की नली घूम जाती है, जिससे तोते का सिर नीचे हो जाता है*

और पैर ऊपर। तब तोता भयभीत होकर बांस की नली को जोर से पकड़ लेता है और टें-टें चीखने लगता है। तोता समझता है कि यदि बांस की नली को छोड़ दूंगा तो नीचे गिर जाऊंगा। इसीलिए वह बांस की नली को छोड़ता नहीं और टें-टें चीखता रहता है। शिकारी जाकर शीघ्र उस तोते को पकड़ लेता है तथा उसे पिंजरे में बंद कर देता है। जैसे तोता अज्ञानवश आप बंधन में पड़ गया, वैसी ही स्थिति जीव (मनुष्य) की है कि वह अज्ञानवश बंधन में पड़ा है।

॥ चौपाई ॥

जिमि केहरि छाया जल देखे। निज छाया दुतिया वह लेखे॥
धाय परे जल प्राण गंवावे। अस जिव धोख चीन्ह न पावे॥

जैसे शेर ने अपनी छाया (प्रति छाया) को जल में देखा और अपनी छाया को उसने दूसरा शेर समझा। उसे शेर समझ वह दौड़कर कुएं के जल में कूद पड़ा और मर गया, ऐसे ही जीव काल-माया के धोखे को समझ नहीं पाता तथा बंधन में पड़ जाता है।

॥ चौपाई ॥

कांच महल जिमि भूके स्वाना। निज अकार दुतिया कर जाना॥
दुतिया आवाज उठे तहं भाई। भूंकत स्वान लेहु लखि धाई॥

जैसे कांच के महल के पास कुत्ता गया और उसका प्रतिबिंब कांच के महल में दिखाई पड़ा। उसने अज्ञानवश अपने आकार प्रतिबिंब को दूसरा कुत्ता जाना और भूंकने लगा। हे भाई! वहां दूसरी आवाज उठती थी, जिसे सुनकर तथा अपनी परछाई देखकर वह कुत्ता भूंकता हुआ दौड़ता था।

विशेष—*उपरोक्त ज्ञान-दृष्टांत के अनुसार ही सद्गुरु कबीर साहिब ने बीजक के शब्द-प्रकरण में अति सुंदर शब्द कहा है, यथा—*

आपन पौ आपुहि बिसरयो।
जैसे श्वान कांच मन्दिर में, भरमित भूसि मरयो।
ज्यों केहरि बपु निरखि कूप जल, प्रतिमा देखि परयो।
वैसे ही गज फटिक शिला में, दशनन आनि अरयो।
मर्कट मूठि स्वाद नहिं बिहुरे, घर-घर रटत फिरयो।
कहहिं कबीर ललनी के सुवना, तोहि कवने पकरयो।

भावार्थ—*जीव (मनुष्य) अपने आपको आप ही भूल गया। जैसे कांच के महल में घुसा हुआ कुत्ता भ्रमित होकर अपने प्रतिबिंब देखकर तथा उन्हें अपने विरोधी कुत्ते मानकर भूंकते-भूंकते मर जाता है। जैसे शेर कुएं में अपनी परछाई देखकर कूद पड़ता है। वैसे ही हाथी स्फटिक शिला में अपने प्रतिबिंब को दूसरा हाथी समझकर उसे मारने के लिए पत्थर में दांत मार-मार कर मर जाता है। जैसे*

बंदर तंग बर्तन में रखे चने को मुट्ठी में लेकर हाथ नहीं निकाल सका और चने के लोभ के कारण मुट्ठी न छुड़ा सका, फिर बंधन में पड़कर घर-घर नचाया गया। जैसे तोता लाल मिर्च खाने के लोभ में नलिका-यंत्र में फंसकर शिकारी द्वारा पकड़ा जाता है, सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे ललनी के सुग्गे (तोता)! तुझको किसने पकड़ा है? भाव यह है कि यह जीवात्मा भ्रमवश आप ही काल-माया के फंदे में पड़ जाता है।

॥ चौपाई ॥

ऐसे यम जिव धोख लगाई। ग्रासे काल तबै पछताई॥
सतगुरु शब्द प्रीति नहिं करई। ताते जीव नष्ट सब परई॥

ऐसे ही यम-निरंजन जीव को पकड़ने के लिए माया-मोह का धोखा लगाता है और जब काल-निरंजन उसे ग्रासता है, तब पछताता है। सद्‌गुरु के सार शब्द से जीव प्रेम नहीं करते, उसी से सब जीव नष्ट होते हैं। भाव यह है कि सद्‌गुरु के सार शब्दोपदेश का प्रेमपूर्वक यथावत् आचरण करना चाहिए, यही काल-माया से बचने का उपाय है।

॥ चौपाई ॥

कृत्रिम नाम निरंजन साखा। आदिनाम सतगुरु अभिलाखा॥
सतगुरु चरण प्रीति न करई। सतगुरु मिलि निज घर संचरई॥

निरंजन एवं निरंजन की शाखाओं ने जो नाम रखे हैं, वे नकली (बनावटी) हैं, जो देखने-सुनने से शुद्ध, मायारहित एवं महान लगते हैं, जैसे—परब्रह्म, परमात्मा, परात्पर इत्यादि। परंतु सद्‌गुरु ने जो नाम कहा है, वह यथार्थ आदिपुरुष का आदिनाम है।

जीव कालाधीन होने से सद्‌गुरु के चरणों से प्रीत नहीं करता। यदि वह विश्वासपूर्वक सद्‌गुरु से मिले तो अपने घर-सत्यलोक को चले।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास जिव भये बिगाना। धोखे सुधा गरल लपटाना॥
अस कै फंद रच्यो धर्मराई। धोखा वसि जिव परे भुलाई॥
और सुनो मन कर्म पसारा। चीन्हि दुष्ट विज होय नियारा॥

हे धर्मदास! जीव बेगाना हो गए हैं, अर्थात भूल-भुलैया में पड़ गए हैं, उन्हें उचित-अनुचित एवं अच्छाई-बुराई का पता नहीं रह गया है। वे अमृत-रूप आदिपुरुष के धोखे में विष-रूपी निरंजन को लिपटे हुए हैं। धर्मराव-निरंजन ने ऐसा जाल रचा है कि जीव उसके धोखे में पड़कर अपने-आपको, आदिपुरुष को और अपने घर सत्यलोक को भूल गए हैं। और जितना भी पाप-कर्म एवं मिथ्या विषयाचरण का फैलाव है, वह सब मन-निरंजन का है। यदि जीव इस दुष्ट मन को पहचान-समझकर, इससे न्यारा हो जाए तो निश्चित ही जीव का कल्याण हो जाए।

॥ छंद ॥

चीन्ह है रहे भिन्न धर्मनि, शब्द मम दीपक लहे।
यह भिन्न दिखात तोकहं, देख जिव यम ना गहे॥
जौलौं गढ़पति जगे नाहीं, संधि पावत तस्करा।
रहत गाफिल भर्म के वशि, तहां तस्कर संचरा॥ 95॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! दीपक के समान प्रकाश करने वाला मेरा सार-शब्द जीव ग्रहण करे और मन को चीन्ह-समझकर उससे अलग हो रहे। यह मन और जीव की भिन्नता मैंने तुमको दिखाई एवं समझाई है, जो जीव सचेत होकर ज्ञान-दृष्टि से मन को देखेगा तो यम-निरंजन उसे नहीं पकड़ेगा। जब तक घर का स्वामी सोता रहता है, जगता नहीं है, तभी तक चोर उसके घर में सेंध लगाते हैं एवं घर में घुसकर धन लूटने का अवसर पाते हैं। ऐसे ही जब तक शरीर-रूपी घर का स्वामी जीव अज्ञानवश अचेत एवं मन से अनजान बना रहता है, तभी तक मन-रूपी चोर उसका भक्ति एवं ज्ञान रूपी धन चुराता रहता है और जीव को पाप कर्म तथा दुराचरण की ओर प्रेरित करता है। परंतु जब जीव सचेत हो जाता है और ज्ञान-दृष्टि से मन को पहचान लेता है, तो वह उस पर संयम रखता है तथा पाप-अनाचार की ओर नहीं जाता।

॥ सोरठा ॥

जाग्रत कला अनूप, ताहि काल पावे नहीं।
भर्म तिमिर अंधकूप, छल यमरा जीव न ग्रसे॥ 99॥

जो जीव मन को समझने वाला हो जाता है, अर्थात मन को जीतने वाला हो जाता है, उस जीव की जाग्रत-कला (सचेत होने की ज्ञान-कला) अनुपम हो जाती है, उसे फिर काल नहीं पाता। जीव के लिए भ्रम (अज्ञान) अंधकार बहुत भयंकर अंधकूप के समान है, परंतु जो मन से सचेत हो जाते हैं, उस जीव को छल से यम निरंजन ग्रस नहीं सकता।

मन के पाप-पुण्य का विचार

॥ चौपाई ॥

मन को अंग सुनो जन सूरा। चोर साहु परखो गुरु पूरा॥
मन ही आही काल कराला। जीव नचावे करे बिहाला॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब धर्मदास जी के साथ सबको संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे शूरवीर सज्जनो! मन के अध्याय को सुनो। चोर एवं साहु मन की परख (परीक्षा) करो और सत्यज्ञानोपदेश के लिए पूरा गुरु करो, जो मन का सर्व भ्रम दूर करेगा। मन ही भयंकर काल है, जो जीव को अपने संकेत पर नचाकर बेहाल करता है, अर्थात अनेकानेक दुखों से व्याकुल करता है।

॥ चौपाई ॥

सुंदर नारि दृष्टि जब आवे। मन उमगे तन काम सतावे॥
भये जोर मन ले तिहि धावे। ज्ञानहीन जन भटका खावे॥

सुंदर स्त्री जब दृष्टि में आती है, तब मन उमड़ता है और उससे प्रेरित होकर शरीर में कामदेव जीव को बहुत सताता है। उस स्थिति में मन में बहुत जोर होता है और वह जीव को लेकर स्त्री की ओर दौड़ता है। इस प्रकार स्त्री के विषय-भोग में पड़कर ज्ञानहीन मनुष्य भटका जाता है।

॥ चौपाई ॥

नारि भोग इंद्री रस लीन्हा। ताकर पाप जीव सिर दीन्हा॥
द्रव्य पराइ देख मन हरषा। कहे लेब अस व्यापेउ तिरषा॥

स्त्री के विषय-भोग का आनंद रस कामेंद्री एवं मन ने लिया और उसका पाप जीव के सिर दिया, अर्थात उसका पाप-दण्ड जीव ने पाया।

दूसरे का धन देखकर मन हर्षित हुआ तथा उसमें लोभ उत्पन्न हुआ। उस धन को पाने के लिए मन में ऐसी प्यास (चाह) जगी कि उसने जीव को वह धन लेने को कहा और अज्ञानवश वह धन पाने को तैयार हो जाता है।

॥ चौपाई ॥

द्रव्य पराइ आन सो आने। ताके पाप जीव ले साने॥
कर्म कमावे या मन बोरा। सांसत सहे जीव मति भोरा॥

दूसरे का धन दूसरा लाता है, अर्थात मन की प्रेरणा से वह धन लाया जाता है और उसके पाप में लाकर जीव को सान दिया (मिला लिया)। पाप-कर्म को करानें वाला, दुर्व्यसनों में प्रवृत्त कराने वाला तथा समस्त अनाचार कराने वाला यह पागल मन है और उसके फलस्वरूप अनेक दुख सहता है भोला-भाला जीव।

॥ चौपाई ॥

पर निन्दा पर द्रव्य गिरासी। सो सब देखहु मन कर फांसी॥
संत द्रोह अरु गुरु की निन्दा। यह मन कर्म काल मति फंदा॥

दूसरों की निंदा करना तथा दूसरे का धन ग्रसना, वह सब देखो मन की फांसी है। संतों से वैर और गुरु की निंदा करना, यह सब मन मति का कर्म काल का जाल है, जिसमें अनजान जीव फंस जाता है।

॥ चौपाई ॥

गृही होय पर नारि न जोवै। यह मन अंध कर्म विष बोवै॥
जीव घात मन उमंग करावे। तासु पाप जिव नर्क भुगावे॥

गृहस्थी होकर पर-स्त्री के साथ व्यभिचार कदापि न करे, अपने मन पर संयम रखे। यह मन तो अंधा है, विषय विष रूपी कर्मों को बोता है, और प्रत्येक

इंद्री को उसके विषय-कर्म में प्रवृत्त करता है। मन जीव को उमंग (प्रेरणा) देकर जीव-हत्या करवाता है और उसके पाप से जीव को नरक भुगवाता है।

॥ चौपाई ॥

तीरथ व्रत अरु देवी-देवा। यह मन धोख लगावे सेवा॥
दाग द्वारका मनहिं दिखावे। दाग दिवाय मनहिं बिगरावे॥

नाना कामनाओं की पूर्ति का प्रलोभन देकर यह मन जीव को तीर्थ, व्रत, देवी-देवों एवं जड़-मूर्तियों की सेवा-पूजा में लगाकर, धोखे में डालता है। बहुत-से लोगों को द्वारिकापुरी में यह मन दाग (छाप) लगवाता है। मुक्ति आदि की झूठी आशा देकर मन ही जीव को दाग (छाप) दिलवाकर बिगाड़ता है।

॥ चौपाई ॥

एक जनम राजा को होई। बहुरि नरक में भुगते सोई॥
बहुरि होय सांड कर औतारा। बहु गाइन को होय भरतारा॥
कर्मयोग है मन को फंदा। होय निहकर्म मिटै दुख द्वन्दा॥

तप-दान आदि पुण्य-कर्मों के करने से यदि किसी का एक जन्म राजा का होता है, तो पुण्य-फल भोग लेने पर फिर वही नरक भुगतता है। विषय-विकारी होने से फिर उसका जन्म सांड का होता है और वह बहुत गायों का पति होता है।

पाप एवं पुण्य दो प्रकार के कर्म होते हैं, उनमें पाप से नरक तो पुण्य से स्वर्ग की प्राप्ति बताई गई है, परंतु पुण्य क्षीण होने पर फिर नरक भुगतना पड़ता है, ऐसा विधि-विधान है। अतएव, कामनावश (सकाम) किए गए पुण्य का यह कर्मयोग भी मन का जाल है, निष्काम (कामना-रहित) कर्म ही सर्वश्रेष्ठ है, जिससे जीव का सब दुख-उपद्रव मिट जाता है।

॥ छंद ॥

सुनो धर्मनि मन भावना, कहंलों कहों निखार के।
त्रय देव तेंतिस कोटि फंदे, शेष सुर रहे हार के॥
सतगुरु बिना कोई लख न पावे, पड़े कृत्रिम जाल हो।
विरला संत विवेक करी, चीन्हि छोड़यो काल हो॥ 96॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! मन की भावना सुनो, कहां तक मैं इसका निर्णय करके कहूं? ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों प्रधान देवता, शेषनाग तथा तेंतीस करोड़ देवता सब फंदे और हारकर रहे, अर्थात मन को वश में न कर सके। सद्गुरु के बिना कोई मन को नहीं देख पाता और मन-माया के बनावटी जाल में फंसे पड़े हैं। कोई विरला संत ही विवेक-विचार करके, मन-काल को पहचानकर छोड़ता है, अर्थात इसके जाल में न फंसकर अलग हो जाता है।

॥ सोरठा ॥

सतगुरु के विश्वास, जनम मरण भय नाशइ।
धर्मनि सो निज दास, सत्यनाम जो दृढ़ गहे ॥ 100 ॥

जो सद्गुरु पर विश्वास करता है तथा उनके सत्योपदेश का यथावत् आचरण करता है, उसका जन्म-मरण (आवागमन) का भय नाश हो जाता है। हे धर्मदास! वह मेरा अपना दास (भक्त) है, जो सत्यपुरुष के सत्यनाम को दृढ़ता से ग्रहण करता है, अर्थात पकड़ता है, मनोयोग से उसका यथाविधि सुमिरन करता है।

निरंजन चरित्र

॥ चौपाई ॥

धर्म चरित्र सुनो धर्मदासा। छल बुधि कर जीवन तिन फांसा॥
धरि औतार कथा तिन गीता। अन्ध जीव कोई गम्य न कीता॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! यम-निरंजन का चरित्र सुनो, वह जीवों की छल-बुद्धि कर उन्हें अपने जाल में फांसता है। उसने कृष्ण-अवतार धरकर गीता कथा कही, परंतु अज्ञानी जीव कोई उसके ज्ञान-रहस्य को नहीं समझता।

॥ चौपाई ॥

अर्जुन सेवक अति लौलीना। तासों ज्ञान कह्यो सब भीना॥
ज्ञान प्रवृत्ति निवृत्ति सुनावा। तज निवृत्ति परवृत्ति दृढ़ावा॥

अर्जुन श्रीकृष्ण का सच्चा सेवक था और श्रीकृष्ण की भक्ति में अत्यंत लवलीन था, श्रीकृष्ण ने उसे सब सूक्ष्म-ज्ञान कहा। आध्यात्मिक-ज्ञान, आसक्ति-अनासक्ति, अर्थात सांसारिक-विषयों से लगाव एवं सांसारिक विषयों से परे आत्म-मोक्ष सब सुनाया, परंतु कालानुसार उसे मोक्ष-मार्ग से हटाकर, सांसारिक कर्म-कर्तव्य में लगने की ओर प्रेरित किया (जिसके फलस्वरूप भीषण महाभारत युद्ध हुआ और असंख्य जीवों की हत्या हुई)।

॥ चौपाई ॥

दया क्षमा प्रथमैं तिन भाषा। ज्ञान विज्ञान कर्म अभिलाषा॥
अर्जुन सत्य भक्तिलवलीना। कृष्णदेव सों बहुत अधीना॥

श्रीकृष्ण ने गीता ज्ञानोपदेश में पहले दया-क्षमा आदि सद्गुणों को कहा और ज्ञान-विज्ञान एवं कर्मयोग आदि कल्याणप्रद उपदेश वर्णित किया। अर्जुन सत्य-भक्ति में लवलीन था तथा वह श्रीकृष्ण के बहुत अधीन (आश्रित) था।

॥ चौपाई ॥

प्रथम कृष्ण दीन्ही तिहि आशा। पीछे दीन्ह नर्क में बासा॥

ज्ञानयोग तजि कर्म दृढ़ाया। कर्म वशी अर्जुन दुख पाया॥
मीठ दिखाय दियो विष पीछे। जिव बटपार संत छबि काछे॥

पहले श्रीकृष्ण ने अर्जुन को मुक्ति की आशा दी, परंतु पीछे उसे नरक में वास दिया। कल्याणमय ज्ञानयोग छुड़वाकर, उसे सांसारिक-कर्म-कर्तव्य की ओर प्रेरित कर दृढ़ किया, जिससे कर्म के वश हुआ अर्जुन दुख पाया। मीठा-अमृत दिखाकर उसे विष दिया, अर्थात पहले उसे अमृत रूपी ज्ञान दर्शाया और पीछे कर्म कराकर विष-समान दुख दिया। इस प्रकार काल जीवों को बहका-फुसलाकर संतों की छवि बिगाड़ता है, अर्थात उपदेश के नाम पर जीव को शोक-उपद्रव में डालकर, उसमें संतों के प्रति अविश्वास एवं संदेह उत्पन्न करता है।

॥ छंद ॥

कहंलों कहौं छल बुद्धि यम के, संत कोइ कोइ परखिहैं।
ज्ञान मारग दृढ़ रहे जब, सत्य मारग सूझिहैं॥
चीन्हिहैं यम छलमता तब, चीन्हि न्यारा सो रहे।
सतगुरु शरण यम त्रास नाशै, अटल सुख आनंद लहे॥ 97॥

यम-निरंजन की छल-बुद्धि कहां तक कहूं, उसे कोई-कोई विवेकी संत ही परखता समझता है। जब कोई ज्ञान मार्ग में दृढ़ रहता है, तो उसे सत्य का मार्ग सूझता है। तब वह यम-काल के छल-मत को समझता है और चीन्ह-समझकर उससे अलग रहता है। सदगुरु की शरण में जाने पर यम के त्रास (भय-आतंक) का नाश हो जाता है तथा अटल, अर्थात अक्षय सुख प्राप्त होता है।

॥ सोरठा ॥

हंसराज धर्मदास, तुम सतगुरु महिमा लहो।
करहुं पंथ परकास, अजर संदेशा तोहि दियो॥ 101॥

हे धर्मदास! तुम तो ज्ञानवान हंस-जीवों में हंसराज हो, तुम सद्‌गुरु की महिमा जानो-पाओ और उस सत्य-पंथ का प्रकाश करो, जिसका अजर-अमर संदेश मैंने तुमको दिया है।

मुक्तिमार्ग पंथ-सहिदानी वर्णन

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु तुम सतपुरुष दयाला। वचन तुम्हार अमित रसाला॥
मन की रहनि जानि हम पावा। धन सतगुरु तुम आय जगावा॥
अब भाषो प्रभु आपन डोरी। किहि रहनी जम तिनुका तोरी॥

धर्मदास ने सद्गुरु कबीर साहिब से कहा कि हे प्रभु! आप दयालु सत्यपुरुष हो और आपके मधुर-रसीले वचन असीम हैं। मन की रहनी (आचरण) को मैंने भली-भांति जान लिया है। हे सद्गुरु आप धन्य हैं कि आपने आकर मुझको अज्ञान-निद्रा से जगा लिया।

हे प्रभु! अब आप अपने सत्य-पंथ की डोरी (विधि-युक्ति) कहो कि जिसे पकड़कर किस रहनी से यम से अपना तिनका (संबंध) तोड़ा जा सके?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास सुनु पुरुष प्रभाऊ। पुरुष डोरि अब तोहि चिन्हाऊ॥
पुरुष शक्ति जब आय समाई। तब नहिं रोके काल कसाई॥

सद्गुरु कबीर साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! सत्यपुरुष का प्रभाव सुन, मैं अब तुमको सत्यपुरुष की डोरी की पहचान कराता हूं। सत्यपुरुष की शक्ति जब जीव में आकर समाती है, तब वह निर्दयी काल-निरंजन जीव को आकर नहीं रोकता, अर्थात उसके कल्याण-पथ में आकर बाधा उपस्थित नहीं करता।

॥ चौपाई ॥

पुरुष शक्ति सुत षोडश आहीं। शक्ति संग जिव लोकहिं जाहीं॥
बिना शक्ति नहिं पन्थ चलाई। शक्तिहीन जिव भौ अरुझाई॥

सत्यपुरुष की शक्ति पूर्व वर्णित उसके सोलह सुत हैं, उन शक्तियों के साथ जीव सत्यलोक को जाता है। बिना शक्ति पंथ नहीं चल सकता, शक्ति-हीन जीव तो इस संसार में उलझ जाता है।

वे शक्तियां सद्गुणों के रूप में नीचे इस प्रकार वर्णित की गई हैं—

॥ चौपाई ॥

ज्ञान विवेक सत्य सन्तोषा। प्रेम भाव धीरज निरघोषा॥
दया क्षमा अरु शील निहकरमा। त्याग वैराग शान्ति निज धरमा॥

ज्ञान, विवेक, सत्य, संतोष, प्रेम-भाव, धीरज, मौन, दया, क्षमा और शील, निहकर्म, त्याग, वैराग्य, शांति एवं निज धर्म।

॥ चौपाई ॥

करुणा करि निज जीव उबारै। मित्र समान सबको चित धारै॥
इन मिलि लहे लोक विश्रामा। चले पंथ निरखि जेहि धामा॥

दूसरों का दुख हरने के लिए तो करुणा की ही जाती है, परंतु अपने-आप पर भी करुणा करके अपने जीव का, अर्थात अपना उद्धार करे और सबको मित्र समान समझकर अपने चित्त में मैत्री-भाव धारण करे।

उपर्युक्त शक्ति-स्वरूप सद्‌गुणों को धारण करके जीव सत्यलोक में विश्राम पाता है। मनुष्य जिस स्थान पर रहे, भली प्रकार निरखि-परखि कर, अर्थात समझ-बूझकर सत्य-पंथ पर चले।

॥ चौपाई ॥

गुरु सेवा गुरुपद परतीती। जिहि उर बसें चले यम जीती॥
आतम पूजा सन्त समागम। महिमा संत कहइ निगमागम॥

गुरु की सेवा और गुरु-चरणों में विश्वास, जिसके हृदय में बसते हैं, वह यम: काल को जीतकर सत्यलोक को चलता है। जड़-पत्थर-पानी की पूजा छोड़कर, चैतन्य जीवात्माओं की पूजा और संतों का सत्संग करे, संत-महिमा वेदशास्त्र सब कहते हैं।

॥ चौपाई ॥

गुरु सम संत भक्ति औराधे। ममता मोह क्रोध गुण साधे॥
अमृत वृक्ष पुरुष सतनामा। पुरुष सखा सत अविचल धामा॥

गुरु के समान ही संत की भी भक्ति-आराधना करे और ममता, मोह एवं क्रोध आदि दुर्गुणों को साधे, अर्थात उन पर संयम रखे। असीम सुख-फल देने वाला अमृत-वृक्ष सत्यपुरुष है, उसका नाम सत्यनाम है। वह सत्यपुरुष सच्चा सखा (सहायक) है तथा उसका अविचल धाम सत्य है।

॥ चौपाई ॥

यह सब डोरि पुरुष को आही। सत्यनाम गहि सतपुर जाही॥
चक्षु हीन घर जाय न प्रानी। यह सब कहेउ पंथ सहिदानी॥

उपर्युक्त वर्णित शक्ति-स्वरूप सद्‌गुण तथा यह जो समझाया सब सत्य-पुरुष की डोर है, इस डोर के साथ जो सत्यनाम को पकड़ता है, वह सत्यलोक को जाता है। जैसे नेत्रहीन प्राणी अपने घर नहीं जा पाता, वैसे सत्यपुरुष की शक्ति एवं सद्‌गुणहीन प्राणी सत्यलोक नहीं जा सकता। सद्‌गुणों को ही सत्यपुरुष की शक्ति बताया गया है और ये ही सब पंथ की पहचान हैं।

॥ चौपाई ॥

पुरुष नाम चक्षु परवाना। लहै जीव तब जाय ठिकाना॥
दिढ़ परतीति गहे गुरु चरना। मिटे तासु जनम औ मरना॥

सत्यपुरुष का सत्यनाम ही जीव के लिए प्रामाणिक नेत्र है, जिसे पाकर जीव तब अपने ठिकाने सत्यलोक जाता है। सत्यनाम-ज्ञान प्रदाता गुरु के चरण जो दृढ़ विश्वास के साथ पकड़ेगा, उसका जन्म और मरण मिट जाएगा।

पंथ की रहनी

धर्मदास वचन सद्गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

हे प्रभु तुम सतपुरुष दयाला। वचन तुम्हार अमान रिसाला॥
अब बरनो प्रभु पंथ निज दासा। विरक्त गिरही कहं रहनि परगासा॥
कौन रहनि वैराग कमावे। कौन रहनि गेही गुन गावे॥

धर्मदास ने कहा कि हे प्रभु! आप सत्यपुरुष दया करने वाले हैं, आपके वचन मान-अपमान से परे सहज-सरल एवं मधुर रसमय हैं। हे प्रभु! अब आप अपने मुझ-दास को पंथ का वर्णन करो। पंथ के अंतर्गत विरक्त एवं गृहस्थ की रहनी पर प्रकाश डालो। कौन-सी रहनी (आचरण) से वैरागी वैराग्य करे और कौन-सी रहनी से गृहस्थी आपके एवं सत्यपुरुष के गुण गाए?

सद्गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास सुन शब्द संदेशा। जीवन कहौ मुक्ति उपदेशा॥
वैरागी वैराग दिढै हो। गेही भाव भक्ति समझै हो॥

सद्गुरु कबीर साहिब ने कहा कि हे धर्मदास! मेरा शब्द-संदेश सुन, मैं तुम्हें जीवों की मुक्ति का उपदेश कहता हूं। उससे वैरागी को वैराग्य का उपदेश समझाना और गृहस्थी को सद्गुण-युक्त भाव-भक्ति समझाना।

वैरागी-विरक्त लक्षण

॥ चौपाई ॥

वैरागी अस चाल बताऊ। तजे अखज तब हंस कहाऊ॥
प्रेम भक्ति आने उर माहीं। द्रोह घात दृग चितवे नाहीं॥

वैरागी के लिए ऐसी चाल (मत-आचरण-नियम) बताता हूं कि वह पहले अभक्ष्य-पदार्थ (आमिष, मादक एवं असात्विक पदार्थ) का त्याग करे, तब हंस कहाएगा। वैरागी-संत सत्यपुरुष की अनन्य प्रेम-भक्ति अपने हृदय में धारण करे। किसी से द्वेष एवं वैर न करना तथा न मारना, इन ऐसे पाप-कर्मों को कभी आंख से भी न देखे, अर्थात मन में न लाए।

विशेष— *सद्गुरु कबीर साहिब ने अपने सदुपदेश में विशेषतः सदाचार एवं सत्यज्ञान को प्रमुख माना है। सदाचार के अंतर्गत अभक्ष्य, अर्थात जो खाने योग्य न हो, के निषेध पर सर्वाधिक जोर दिया है। अतः अभक्ष्य— मांस, अंडा, मछली, तंबाकू, भांग, अफीम, चरस, गांजा एवं मदिरा आदि मादक पदार्थों का सेवन न करे।*

॥ चौपाई ॥

जीव दया राखे हिय माहीं। मन वच कर्म घात कोउ नाहीं॥
लेवे पान मुक्ति की छापा। जाते मिटे कर्म भ्रम आपा॥

सब जीवों के प्रति दया-भाव हृदय में रखे, मन-वचन-कर्म से किसी जीव को न मारे। सत्यज्ञानोपदेश एवं उसका सांकेतिक प्रतीक मान ले, जो मुक्ति की छाप (निशानी) है, जिससे पाप-कर्म, अज्ञान तथा अहंकार मिट जाए।

॥ चौपाई ॥

हंस दशा धरि पन्थ चलावे। श्रवणी कंठी तिलक लगावे॥
रूखा फीका करे अहारा। निस दिन सुमिरे नाम हमारा॥

हंस-दशा, अर्थात सारग्रही नीर-क्षीर का विवेकी हो और उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव एवं रहनी-गहनी धारण करे तथा पंथ को चलाए। सुमरनी (माला), कंठी पहने तथा माथे पर चंदन का तिलक लगाए। रूखा-फीका भोजन करे तथा रात-दिन मेरा नाम-सत्यनाम सुमिरन करे।

॥ चौपाई ॥

और पुनि लेह तुम्हारो नामा। पठवों ताहि अमरपुर धामा॥
कर्म भर्म सब देइ बहाई। सार शब्द में रहे समाई॥

और फिर तुम्हारा नाम ले, तब मैं उसको अमरपुर धाम (सत्यलोक) भेजूंगा। सब निम्न-पाप-कर्म और अज्ञानमय भाव-विचार बहा दे तथा चैतन्य-अविनाशी सार-शब्द में समा रहे, अर्थात सत्यस्वरूप में स्थित रहे।

॥ चौपाई ॥

नारि न परसे बिन्द न खोवे। क्रोध कपट सब दिल से धोवे॥
नरक खानि नारी कहं त्यागे। इक चित होय शब्द गुरु लागे॥

वैरागी ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करे, काम-भावना की दृष्टि से स्त्री का स्पर्श न करे तथा वीर्य को नष्ट न करे। काम-क्रोध आदि विषय एवं छल-कपट सबको हृदय से पूर्णत: धो दे। काम-रूपी नरक की खान स्त्री को सर्वथा त्याग दे और एक चित्त होकर गुरु के शब्द-उपदेश में लगा रहे।

विशेष— *वैराग्य का अर्थ है—सांसारिक विषय-वासनाओं का अभाव अथवा सर्व सांसारिक-बंधनों से विरक्ति (उदासीनता)। वैराग्य के अर्थानुसार यहां पर वैरागी को यथोचित उपदेश किया गया है।*

उपरोक्त चौपाई में स्त्री को 'नरक की खान' कहने का आशय स्त्री को अपमानित करना अथवा नीच समझना बिलकुल नहीं है, अपितु जीवन-कल्याण में बाधा डालने वाली एवं काम-विषय को बढ़ाने वाली अथवा काम में प्रवृत्त करने वाली कामिनी स्त्री को त्यागने के लिए कहा गया है। वस्तुत: जीवन-कल्याण का

प्रबल शत्रु काम-विषय है, जो स्त्री-पुरुष दोनों के संसर्ग से घटित होता है। अतएव, जीवन-कल्याण में काम-विषय को लेकर स्त्री पुरुष के लिए और पुरुष स्त्री के लिए त्याज्य है। यह भी समझना चाहिए कि सामान्य जीवों में अज्ञानवश कामासक्ति बहुत होती है, जिससे स्त्री-पुरुष साथ रहते हुए प्राय: कामातुर हो जाते हैं। इसके विपरीत वैरागी पुरुष का विषयासक्ति से कोई संबंध नहीं होता, अत: वैरागी पुरुष को स्त्री का त्याग करने के लिए कहा है। इसी प्रकार यदि कोई वैराग्यवान स्त्री है, तो वह पुरुष का त्याग करे।

॥ चौपाई ॥

क्रोध कपट सब देइ बहाई। क्षमा गंग में पैठि नहाई॥
विहंसत बदन भजन को आगर। शीतल दशा प्रेम सुखसागर॥

क्रोध-कपट आदि सब दुर्गुण बहा दे और क्षमा की शीतल गंगा में प्रवेश कर स्नान करे। मुस्कराता हुआ प्रसन्न मुख रहे तथा भजन में अत्यंत कुशल हो। अपने-आपकी स्थिति सदैव शीतल रखे और सुख के सागर सत्यपुरुष से प्रेम करे।

॥ चौपाई ॥

रहै अजांच न जांचै काहू। का परजा का राजा साहू॥
पच्छिम लहर जगावै जानी। अजपा जाप भजन धुनि ठानी॥

क्या प्रजा, क्या राजा तथा क्या सेठ-साहूकार हो, वैरागी किसी के आश्रित न हो, अनाश्रित रहे, अर्थात किसी से भीख न मांगे और अपना स्वतंत्र त्यागमय जीवन बिताए, यही सर्वोत्तम है। अपने भीतर मन में नाम जपने एवं ध्यान करने की लहर अथवा जागृति जगाए और अजपा-जाप के भजन-सुमिरन की धुन ठाने, अर्थात लगन लगाए रखे।

विशेष निर्देश—*अजपा-जाप में न तो माला की आवश्यकता है और न कुछ मुंह से बोलने की। अजपा-जाप वह जाप है, जो स्वत: होता है, केवल एकाग्र होकर साक्षी-भाव से उसमें लीन हुआ जाता है। अजपा-जाप में एक शब्द-ध्वनि होती है, जो मन-चित्त को एकाग्र करती है। अजपा-जाप में स्थित हुआ साधक आत्म-साक्षात्कार को उपलब्ध होता है।*

यहां यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि कोई कितना भी बड़ा तपोत्यागी एवं संत-वैरागी हो, जीवन-निर्वाह के लिए भोजन-वस्त्र की आवश्यकता तो सबको होती है। परंतु यदि किसी वैरागी-संत के पास भोजन-वस्त्र का अभाव हो तथा न कोई प्रबंध हो, तब वह वैराग्यभाव में रहता हुआ अपना जीवन-यापन कैसे करे? उस स्थिति में ज्ञानोपदेश द्वारा जीवोपकार करते हुए उस वैरागी-संत के लिए स्वयं सद्गुरु कबीर साहिब ने निर्णय कर कहा है—

उदर समाता मांगि ले, ताको नाहीं दोष।
कहैं कबीर अधिका गहै, ताकी गति न मोष॥
उदर समाता अन्न ले, तनहि समाता चीर।
अधिकहि संग्रह ना करै, तिसका नाम फकीर॥

क्षुधा-निवृत्ति मात्र मांग ले, उसको दोष नहीं है। परंतु जो अधिक संग्रह करे, न उसकी गति होती है और न मोक्ष। निर्वाह मात्र उदर समाता अन्न ले तथा तन में समाता वस्त्र ले। इससे अधिक संग्रह न करे, उसका नाम संत-फकीर है।

वैसे सद्गुरु कबीर साहिब ने भीख मांगने का पूर्णत: निषेध किया है, उन्होंने कहा है—

मांगन मरण समान है, मति कोई मांगो भीख।
मांगन ते मरणा भला, यह सतगुरु की सीख॥

अर्थात, भीख मांगना मरने के समान है, अत: कोई भीख मत मांगो। मांगने से तो मरना अच्छा है, यह सद्गुरु की सीख है। यदि मांगने की स्थिति बन भी जाए, तो उसके बारे में वे कहते हैं—

सहज मिलै सो दूध है, मांगि मिलै सो पानी।
कहैं कबीर वह रक्त है, जामें ऐंचातानी॥

अर्थात, जो सहज-भाव से मिले वह दूध और जो मांगने से मिले वह पानी, परंतु खींचतान से जो मिले वह रक्त समान है।

॥ चौपाई ॥

रहित रहे बहै नहिं कबहीं। सो वैरागी पावै हमहीं॥
हमहिं मिलै हमहीं अस होई। दुविधा भाव मिटावै सोई॥

जो सब पाप-कर्म एवं दुर्गुणों से रहित रहे, इनमें कभी बहे नहीं, वह संत-वैरागी मुझको पाएगा। जो सब संशय-दुविधा के भावों को मिटाएगा और भक्ति-भाव से मुझको मिलेगा, तो वह मेरे ऐसा ही होगा, अर्थात उपासक-उपास्य अथवा ध्याता-ध्येय समान होगा।

॥ चौपाई ॥

गुरु चरणन में रहे समाई। तजि भ्रम और कपट चतुराई॥
गुरु आज्ञा जो निरखत रहई। ताकर खूंट काल नहिं गहई॥

सर्व भ्रम-अज्ञान और कपट, प्रपंच एवं झूठ-चतुराई आदि दुर्गुणों को छोड़कर, गुरु के चरणों में समाया (लीन) रहे। सचेत होकर गुरु-आज्ञा को जो निरखता रहे, अर्थात उसका आशय समझते ही शीघ्र पालन करे, काल-निरंजन उसका खूंट नहीं पकड़ सकता।

॥ चौपाई ॥

गुरु प्रतीत दृढ़कै चित राखे। मोहि समान गुरु कहं भाखे॥
गुरु सेवा में सब फल आवे। गुरु विमुख नर पार न पावे॥

चित्त में दृढ़तापूर्वक गुरु का विश्वास रखे और मेरे समान गुरु को माने तथा उसके गुणों का बखान करे। गुरु-सेवा में सब फल (धर्म-अर्थ-काम एवं मोक्ष) आते हैं, जो गुरु-सेवक को प्राप्त होते हैं। गुरु से विमुख (विरुद्ध) मनुष्य संसार-सागर से पार नहीं पाता, अर्थात वह चौरासी में दुख भोगता है।

॥ चौपाई ॥

जैसे चंद्र कुमोदिनी रीती। गहे शिष्य अस गुरु परतीती॥
ऐसी रहनि रहे वैरागी। जिहि गुरु प्रीति सोइ अनुरागी॥

जैसे चंद्रमा एवं कुमुदिनी के प्रेम की रीति होती है, वैसे गुरु-शिष्य की हो, अर्थात जैसे चंद्रमा को देखकर सफेद कुमुदिनी प्रसन्न होकर खिल उठती है, वैसे शिष्य का गुरु के प्रति प्रेम एवं विश्वास होना चाहिए।

जैसी वर्णित की गई वैरागी ऐसी रहनी रहे। जिसे गुरु से प्रीत है, वही गुरु का सच्चा अनुरागी (प्रेमी) है तथा वैराग्य की उत्तम रहनी रहता है।

गृही लक्षण

॥ चौपाई ॥

गेही भक्ति सुनहु धर्मदासा। जिहि लै गेही परै न फांसा॥
काग दशा सब देइ बहाई। जीव दया दिल रखे समाई॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! गृही (गृहस्थ) की भक्ति सुनो, जिसको धारण करने से गृहस्थी काल-फांस में नहीं पड़ेगा। वह काग-दशा, अर्थात पाप-कर्म, दुर्गुण एवं नीच स्वभाव को सर्वथा बहा दे और हृदय में जीव-दया रखे।

॥ चौपाई ॥

मीन मांस मद निकट न जाई। अंकुर भक्ष सो सदा कराई॥
लेवे पान मुक्ति सहिदानी। जाते काल न रोकै आनी॥

मछली, किसी भी पशु-पक्षियों के मांस तथा अण्डे न खाए और न शराब पिए, यहां तक कि इनका खाना-पीना तो दूर, इनके पास तक न जाए, क्योंकि ये सब अभक्ष्य हैं। वनस्पति अंकुर से उत्पन्न अन्न, फल, शाक-सब्जी एवं कंद-मूल आदि का आहार सदा करे। गुरु का सदुपदेश ग्रहण करे और उसका स्मरणीय सांकेतिक प्रतीक पान-प्रसाद ले, जो मुक्ति की पहचान है, जिससे काल-निरंजन आकर रोक न सके।

विशेष—अध्यात्म-ज्ञान के क्षेत्र में आचार-विचार-आहार-विहार की शुद्धि महत्वपूर्ण है। जिसमें सात्विक आहार तो सदाचार का विशेष अंग है। बिना सात्विक-आहार के आचार-विचार का शुद्ध होना अथवा सदाचारी होना, हास्यास्पद लगता है। सद्गुरु कबीर साहिब ने जीवन पर खान-पान से पड़ने वाले प्रभाव की ओर गहन-संकेत करते हुए कहा है—

जैसा भोजन खाइए, तैसा ही मन होय।
जैसा पानी पीजिए, तैसी बानी होय॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

अर्थात, जैसा भोजन खाओगे, वैसा ही मन होगा और जैसा पानी पियोगे, वैसी वाणी होगी। अतएव, बिना शुद्ध-सात्विक आहार के सदाचार का पालन नहीं हो सकता, तो फिर बिना सदाचार के सत्यज्ञान-साधना में स्थित कैसे हुआ जा सकता है? अभक्ष्य-पदार्थों (मांस, मदिरा, मछली एवं अंडा आदि) का सेवन करने में धन, शरीर-स्वास्थ्य एवं मन-बुद्धि का ह्रास (पतन-नाश) होता है। सीख के लिए अभक्ष्य से संबद्ध सद्गुरु कबीर साहिब की कुछ ज्ञानवर्धक सरल-साखियां नीचे दर्शाई गई हैं, जिन्हें सहज ही समझा जा सकता है। यथा—

मांस मछलियां खात हैं, सुरा पान सों हेत।
ते नर जड़ से जाहिंगे, ज्यों मूरी का खेत॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

मांस मांस सब एक है, मुरगा हिरनी गाय।
आंख देखि नर खात हैं, ते नर नरकहिं जाय॥
मांसाहारी मानवा, परतछ राछस जान।
ताकी संगति मति करै, होय भक्ति में हान॥
भांग तमाखू छूतरा, सुरापान लै घूंट।
कहैं कबीर ता जीव का, धर्मराय सिर कूट॥
मांस भखै मदिरा पिवै, धन बेस्वा सों खाय।
जुआ खेलि चोरी करै, अंत समूला जाय॥
भांग तमाखू छूतरा, जन कबीर जे खांहि।
योग यज्ञ जप तप किए, सबै रसातल जांहि॥
अमल अहारी आतमा, कबहुं न पावे पार।
कहैं कबीर पुकारि के, त्यागो ताहि विचार॥
भांग तमाखू छूतरा, आफू और सराब।
कौन करेगा बन्दगी, ये तो भये खराब॥

चिर-स्मरणीय एवं वंदनीय नाद-वंश प्रतापी परम वैराग्यवान 'पं. श्री हजूर उदितनाम साहेब' अपने ज्ञान-प्रवचन में जीवन-कल्याण के जिन सात महामंत्रों का उपदेश करते थे, वे इस प्रकार हैं—1. मांस निषेध, 2. शराब निषेध, 3. भांग-तंबाकू निषेध, 4. जुआ निषेध, 5. चोरी निषेध, 6. जीव-दया और 7. सद्गुरु की भक्ति। इन सात-मंत्रों में से मांस-शराब एवं भांग-तंबाकू (अभक्ष्य) का निषेध सर्वप्रथम है। अतः न केवल वैरागी-विरक्त, अपितु सर्व संत-भक्त-गृहस्थ अभक्ष्य एवं अनाचार का त्याग करें, यह सबके लिए हितकर है।

॥ चौपाई ॥

कण्ठी तिलक साधु को बाना। गुरुमुख शब्द प्रीति उर आना।
प्रेम भाव सन्तन सो राखे। सेवा सत्य भक्ति चित राखे।

गले में कंठी बांधे और माथे पर तिलक लगाए, यह साधु का बाना (भेष) है। गुरुमुख शब्द को प्रेमपूर्वक हृदय में धारण करे। संतों से प्रेम-भाव रखे, निष्काम सेवा-पूजा करे और चित्त में सत्य-भक्ति रखे।

विशेष—*साधु-संत राग-द्वेष एवं मान-अपमान से रहित, कोमल एवं पावन हृदय, दया-प्रेम की चैतन्य मूर्ति तथा सत्य-शील स्वभाव वाले होते हैं। उनको साहिब (ईश्वर-परमात्मा) का स्वरूप मानकर, उनकी प्रेमपूर्वक सेवा करनी चाहिए। यहां साहिब स्वयं ही स्पष्ट शब्दों में बोल उठते हैं—*

हौं साधुन के संग रहूं, अंत न कितहूं जाऊं।
जु मोहि अरपै प्रीति सो, साधुन मुख ह्वै खाऊं॥

(स.क.सा. ग्रंथ)

अर्थात, मैं और कहीं नहीं जाता, सदैव साधु-संतों के साथ रहता हूं। जो कोई मुझको भोजन एवं फल-फूल आदि प्रेमपूर्वक अर्पण करता है, उसे मैं साधु-मुख होकर खाता हूं एवं तृप्त होता हूं।

॥ चौपाई ॥

गुरु सेवा पर सर्वस वारे। सेवा भक्ति गुरु की धारे॥
सुमिरन जो गुरु देह दृढ़ाई। मन वच करम से सुमिरे भाई॥

सत्यज्ञान प्रदाता एवं मोक्ष-पद परखाने वाले गुरु की सेवा-भक्ति धारण करे और गुरु-सेवा पर अपना सर्वस्व वार दे। हे भाई! गुरु जो सुमिरन दृढ़ता से सिखा-समझा दें, उसे मन, वचन एवं कर्म से सुमिरे।

॥ छंद ॥

पुरुष डोरि सुनहु धर्मनि, जाहि ते गेही तरे।
चक्षु बिनु घर जाय नाहीं, कौन विधि ताकर करे॥

बंस अंस है चक्षु धर्मनि, जीव सब चेतावहू।
विश्वास कर मम वचन को, तब जरा मरण नशावहू॥ 98॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! सत्यपुरुष की डोरी (भक्ति) सुनो, जिससे गृहस्थी तरता है अथवा उसका उद्धार होता है। आंख बिना घर नहीं जाया जा सकता, अर्थात ज्ञान-दृष्टि के बिना वह अपने घर-सत्यलोक नहीं जा सकता, उसका वह कौन उपाय करे? हे धर्मदास! मुक्तामणि-वंश के अंश, सत्यपुरुष एवं सत्यलोक देखने की आंख है, तुम मेरे ज्ञानोपदेश से सब जीवों को चेता दो। मेरे वचन का विश्वास करके, तब जीवों के जरा-मरण, अर्थात आवागमन का नाश करो।

॥ सोरठा ॥

शब्द गहे परतीति, पुरुष नाम अहनिशि जप।
चले सो भवजल जीति, अंक नाम जिन पाइया॥ 102॥

मेरे सार-शब्द को विश्वासपूर्वक ग्रहण करे और सत्यपुरुष का नाम दिन-रात जपे। जिसने सत्यपुरुष का अंक नाम (अविनाशी सत्यनाम) पाया है, वह भवसागर को जीतकर सत्यलोक चलेगा।

आरती माहात्म्य

॥ चौपाई ॥

गेही पुरुष व्रत विधि जाने। प्रति पूनों को आरती ठाने॥
पूनों दिन आरति नहिं होई।ताहि भवन रह काल समोई॥

गृहस्थी सत्यपुरुष के पूनों-व्रत की विधि को जाने और प्रत्येक पूर्णमासी को विधिपूर्वक व्रत रखे तथा आरती करे। पूर्णमासी के दिन यदि आरती नहीं होगी, तो उसके घर में काल का प्रवेश होगा।

॥ चौपाई ॥

पाख दिवस नहिं होवे साजू। प्रति पूनो कर आरती काजू॥
पूनो पान लेइ धर्मदासा। पावे शिष्य होय सुख बासा॥

यदि कोई गृही प्रति दिवस एवं पक्ष आरती का साज नहीं सजा सकता, तो प्रत्येक पूर्णिमा को आरती का पुण्य-कार्य अवश्य करना चाहिए। हे धर्मदास! व्रत धारण कर जो पूर्णमासी को सदुपदेश एवं पान-प्रसाद लेता है, तो वह शिष्य घर में सुख का वास हुआ पाएगा।

॥ चौपाई ॥

चंद्रकला षोडस पुर आवे। ताहि समय परवाना पावे॥
यथा शक्ति सेवा सहिदाना। हंसा पहुंचे लोक ठिकाना॥

जिस समय चंद्रमा अपनी सोलह कला से पूर्ण हो, उस समय शिष्य पान-परवाना पाए। जो साधु-संत एवं भक्त उपस्थित हों, उनकी यथा-शक्ति सेवा करे, उस हंस शिष्य के सत्यलोक-ठिकाने पर पहुंचने की यही पहचान है।

धर्मदास वचन सद्‌गुरु कबीर प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मदास विनती अनुसारा। अस भाखो जिव होय उबारा॥
कलऊ जीव रंक बहु होई। ताकर निर्णय भाखो सोई॥

धर्मदास ने सद्‌गुरु कबीर साहिब से विनती की कि हे साहिब! कुछ ऐसा कहो कि जिससे जीव का उबारा (कल्याण) हो। क्योंकि कलियुग में बहुत जीव धनहीन होंगे, उनकी दशा के अनुसार निर्णय करके कहो, जिससे वे गरीब जीव अपने उद्धार का उपाय आसानी से कर सकें।

॥ चौपाई ॥

सकलो जीव तुम्हारे देवा। कैसे कहौं करे सब सेवा॥
सब जिव आदि पुरुष के अंशा। भाषहु वचन मिटे जिव संशा॥

हे सद्‌गुरुदेव! समस्त जीव आपके हैं, मैं कैसे कहूं कि धनाभाव होने से गरीबी में, सब जीव समान-रूप से साधु-संतों एवं भक्तों की सेवा कर पाएंगे? सब जीव आदि पुरुष के अंश हैं, आप वह वचन कहो कि जिससे मेरे जीव का संशय मिट जाए।

सद्‌गुरु कबीर वचन धर्मदास प्रति

॥ चौपाई ॥

धर्मनि सुनो रंक परभाऊ। छठे मास आरति लौलाऊ॥
छठे मास नहिं आरती भेवा। वर्ष माहिं गुरु चौका सेवा॥

सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! सुनो, समय के प्रभाव से जो धनहीन-गरीब है, वह छः महीने में आरती करे। परंतु, प्रत्येक पूर्णमासी का व्रत करता रहे। यदि छः महीने में भी आरती का रूप न बना सके, तो एक वर्ष में गुरु के द्वारा चौका-आरती करे और उसमें उपस्थित साधु-संत एवं सेवक-भक्तों की सेवा करे।

॥ चौपाई ॥

संबत माहि चूक जो जायी। तबै शिष्य साकट ठहरायी॥
संबत माहिं आरती करई। ताकर जीव धोख ना परई॥

(जहां एक वर्ष में चौका-आरती करने से शिष्य सद्‌गुण संपन्न होकर, कल्याण-पथ पर अग्रसर होता है, वहां—) जो गृही-शिष्य एक वर्ष में भी चौका-

आरती करना चूक जाता है, तब उसमें दुर्गुणों का समावेश होता है और वह साकट (निगुरा), अर्थात गुरु की आज्ञा ठुकराने वाला ठहराया जाता है।

जो गरीब गृहस्थ-शिष्य एक वर्ष में चौका-आरती करेगा, उसका जीव काल के धोखे में नहीं पड़ेगा।

॥ चौपाई ॥

नाम कबीर जपे लौ लाई। तुम्हारो नाम कहे गुहराई॥
करत अखंडित गुरुपद गहई। गुरुपद प्रीति गेहि निस्तरई॥

सद्गुरु 'कबीर' नाम महानता एवं श्रेष्ठता का प्रतीक है, अत: लगन लगाकर 'कबीर नाम' का जाप-स्मरण करे और पुकारकर तुम्हारा नाम कहे। पूर्णमासी का व्रत एवं चौका-आरती अखंडित रूप से करता हुआ शिष्य गुरु-चरणों को ग्रहण करे, इस प्रकार गुरु-चरणों से प्रेम करने वाले गृही-शिष्य का उद्धार होगा।

॥ चौपाई ॥

ऐसो धारण गेहि जो करिहैं। गुरु प्रताप लोक सचरहैं॥
ऐसी रहनि जोहि जो धरिहैं। गुरु प्रताप दोई निस्तरिहैं॥

इस प्रकार जो गृही गुरु की सेवा-भक्ति धारण करेगा, गुरु-प्रताप से वह सत्यलोक में विचरण करेगा। उपर्युक्त वर्णित उत्तम रहनी चाहे जो भी यदि धारण करेंगे, तो गुरु के प्रताप से वैरागी एवं गृहस्थ दोनों निश्चय तरेंगे।

॥ छंद ॥

वैरागि गेहि दोउ कहं धर्मनि, रहनि गहनि चितायहू।
निज निज रहनी दोउ तरिहैं, शब्द अंग सुनायहू॥
निपट अति विकराल अगम, अथाह भवसागर अहै।
नाम नौका गहे दृढ़ करि, छोर भवनिधि तब लहै॥ 99॥

हे धर्मदास! वैरागी और गृही दोनों को रहनी-गहनी समझाकर चेताओ। अपनी-अपनी रहनी से दोनों तरेंगे, उनको सार-शब्द अविनाशी चैतन्य-स्वरूप के अध्याय को सुनाओ। यह संसार-सागर सर्वथा अत्यंत भयंकर, अमर एवं अथाह है। इससे पार पाने का यही उपाय है कि जब जो सत्यनाम की नौका दृढ़तापूर्वक पकड़ता है, तब वह इस संसार-सागर के किनारे को पाता है।

॥ सोरठा ॥

केवट ते कर प्रीति, जो भवसिन्धु पार उतारई।
चले सो भवजल जीति, जब सतगुरु केवट मिले॥ 103॥

उस केवट (मल्लाह) से प्रेम करो, जो भवसागर से पार उतारता है। भवसागर को जीतकर वह (शिष्य) तब चलेगा, जब उसे सच्चा सद्गुरु-केवट मिले।

असावधानी का फल

॥ चौपाई ॥

जब लग तन में हंस रहाई। निरखे शब्द पंथ चले भाई॥
जैसे शूर खेत रह मांड़ी। जो भागे तो होवे भांड़ी॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे भाई! जब तक शरीर में हंस (आत्मा) रहे, मेरे सार-शब्द को निरखे एवं मेरे ज्ञानोपदेशानुसार पंथ पर चलता रहे। जैसे शूरवीर रणक्षेत्र में रहकर युद्ध करते हुए जूझता है, भागता नहीं है और जो भाग जाता है, तो वह शूरवीर नहीं, कायर एवं डरपोक होता है।

॥ चौपाई ॥

सन्त खेत गुरु शब्द अमोला। यम तिहि गहे जीव जो डोला॥
गुरु विमुख जिव कतहुं न बांचै। अगिन कुंड महं जरि बरि नाचै॥

शूरवीर की भांति संत-क्षेत्र में गुरु के अनमोल शब्द पर डटे, किसी भी स्थिति में हटे नहीं। जो गुरु के शब्दोपदेश से डोल जाता है, उस जीव को यम-काल पकड़ता है। जो जीव गुरु से विमुख (विरुद्ध) होता है, वह कहीं भी नहीं बचता, वह दुख के अग्निकुंड में जल--बल कर नाचता है, अर्थात विक्षिप्त हुआ इधर-उधर भटकता फिरता है।

॥ चौपाई ॥

सांसति होय अनेकन भाई। जनम जनम सो नरकहि जाई॥
कोटि जनम विषधर सो पावे। विष ज्वाला सहि जन्म गंवावे॥

हे भाई! उसे अनेकानेक कष्ट होते हैं और वह जन्म-जन्म नरक में जाता है। वह करोड़ों जन्म जहरीले सांप के पाता है तथा विष ज्वाला का दुख सहता हुआ यूं ही जन्म गंवाता है।

॥ चौपाई ॥

विष्ठा माहीं क्रिमि तनु धरई। कोटि जन्म लो नरकहिं परई॥
कहा कहों सांसति जिव केरा। गुरुमुख शब्द गहो दिढ़ बेरा॥

वह विष्ठा में कीड़ा-कीट का शरीर धारण करता है और इस प्रकार चौरासी की योनियों के करोड़ों जन्म तक नरक में पड़ता है। जीव के दुख को क्या कहूं? इस दुख-भोग को नष्ट करने का बस एक यही उपाय है कि गुरुमुख-शब्द को इसी मनुष्य जीवन में दृढ़ता से ग्रहण करो।

॥ चौपाई ॥

गुरु दयाल तो पुरुष दयाला। जेहि गुरुव्रत छुए नहिं काला॥
जीव कहो परमारथ जानी। जो गुरु भक्त ताहि नहि हानी॥

जिस पर गुरु दया करते हैं तो उस पर सत्यपुरुष भी दयाल होता है। जिसने

हृदय में गुरुव्रत धारण किया है, उसे काल छूता भी नहीं है। जीव का परमार्थ-हित जानकर कहता हूं कि जो गुरु-भक्त है, उसे हानि नहीं होती।

॥ चौपाई ॥

कोटिक योग अराधे प्रानी। सतगुरु बिना जीव की हानी॥
सतगुरु अगम गम्य बतलावे। जाकी गम्य वेद नहिं पावे॥

मनुष्य चाहे करोड़ों योग-आराधना करे, किंतु बिना स्वसंवेद शास्ता सद्‌गुरु के जीव की हानि होती है। सद्‌गुरु अगम (मन-बुद्धि की पहुंच से परे) तथा गम्य (मन-बुद्धि की पहुंच तक, जिसे जाना जा सके) दोनों की बात बतलाता है, जिसकी जानकारी वेद भी नहीं पाते।

॥ चौपाई ॥

वेद जाहि ते ताहि बखाने। सत्यपुरुष का मर्म न जाने॥
कोइ इक हंस विवेकी होवे। सत्य शब्द जो गही बिलोवे॥

वेद जिसका-उसका, अर्थात कर्म, योग, उपासना एवं ब्रह्म का बखान करता है। क्योंकि वेद अपराविद्या एवं त्रिगुण विषयक है, अत: वेद सत्यपुरुष का भेद नहीं जानता। कोई एक हंस विवेकी-विचारवान होता है, जो मेरे सत्य-शब्द को ग्रहण करके निर्णय करता है, अर्थात साधना-परायण होकर उसका सत्यानुभव करता है।

॥ चौपाई ॥

कोटि माहिं कोइ सन्त विवेकी। जो मम बानी गहे परेखी॥
फंदे सबै निरंजन फंदा। उलटि न निज घर चीन्हे मंदा॥

करोड़ों में कोई ऐसा विवेकी संत होता है, जो मेरी वाणी को परखकर ग्रहण करता है। काल-निरंजन ने खानी-वाणी के फंदे में सबको फंदाया हुआ है, मंद-बुद्धि जीव उसे नहीं पहचानता और उससे उलटकर अपने घर-सत्यलोक नहीं चलता।

सावधानी—कोयल का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

सुनो सुभाव कोइल सुत केरा। समुझि तासु गुण करो निबेरा॥
कोइल चित चातुर मृदु बानी। बैरी तासु काग अघखानी॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि कोयल के बच्चे का स्वभाव सुनो और उसके गुण को समझकर निर्णय करो। कोयल चित्त से चतुर तथा मीठी वाणी बोलने वाली होती है। उसका बैरी कौआ पाप की खान होता है।

॥ चौपाई ॥

ताके गृह तिन अण्डा धरिया। दुष्ट मित्र इक समचित करिया॥
सखा जानि कागा तिहि पाला। जोगवे अण्ड काग बुधि काला॥

कोयल ने कौए के घर (घोंसला) में अपना अण्डा रखा। विपरीत गुण वाले दुष्ट मित्र कौए के प्रति कोयल ने अपना चित्त एक समान किया। सखा (मित्र) समझकर कौए ने उस अण्डे को पाला और वह काल-बुद्धि कौआ उस अण्डे की रक्षा करता रहा।

॥ चौपाई ॥

पुष्ट भया अण्डा बिहराना। कुछ दिन गत भो चक्षु सुजाना॥
पक्ष पुष्ट पुनि ताकर भयऊ। कोइल शब्द सुनावन लयऊ॥

समय के साथ कोयल का अण्डा मजबूत हुआ और फूट गया, उससे बच्चा निकला। कुछ दिन बीत जाने पर कोयल के बच्चे के नेत्र ठीक प्रकार से हो गए तथा वह जानने-समझने वाला हो गया। फिर उसके पंख भी मजबूत हो गए, तब कोयल समयानुसार आ-आकर उसको शब्द सुनाने लगी।

॥ चौपाई ॥

सुनत शब्द कोयल सुत जागा। निज कुल वचन ताहि प्रिय लागा॥
काग जाय पुनि जबहिं चरावे। तब कोइल तिहि शब्द सुनावे॥

शब्द सुनते-ही कोयल का बच्चा जाग गया, अर्थात सचेत हो गया, उसे अपने कुल का वचन प्यारा लगा। फिर जब भी कौआ कोयल के बच्चे को चराने-घुमाने ले जाए, तब कोयल अपने उस बच्चे को अपना मीठा शब्द सुनाए।

॥ चौपाई ॥

निज अंकुर कोइल सुत जहिया। बायस दिशा हिये नहिं रहिया॥
एक दिवस बायस दिखलायी। कोइल सुत उड़ि चला परायी॥

कोयल के बच्चे में जब कोयल का अपना अंश-अंकुर अंकुरित हुआ, तो उस बच्चे का हृदय कौए की ओर नहीं रहा। एक दिन कौए को दिखलाकर, कोयल का बच्चा पराया होकर उड़ चला।

॥ चौपाई ॥

निज बोली बोलत चलु बाला। धाया बायस बिकल बिहाला॥
धावत थकित भया नहिं पाई। बहुरि मुरछित भवन फिरि आई॥
कोइल सुत मिलिया परिवारा। वायस भया दुखित झख मारा॥

कोयल का बच्चा अपनी बोली बोलता हुआ चला और उसके पीछे कौआ व्याकुल-बेहाल होकर दौड़ा। कौआ दौड़ता (उड़ता) हुआ थक गया, परंतु उसे नहीं पा सका। फिर वह मूर्छित हो गया तथा चेत आने पर निराश अपने स्थान लौट

आया। कोयल का बच्चा अपने परिवार में मिल गया और कौए ने उसके लिए यूं ही झक मारा एवं दुखी हुआ।

॥ छंद ॥

निज बचन बोलत सुत चला, तब धाय मिला परिवार ही।
धाय वायस विकल ह्वै, भयो थकित जब नहिं पावही॥
काग मूर्छित भवन आयो, मनहि मन पछिताय के।
कोइल सुत मिल्यो तात अपने, काग रह्यो झख मारिके॥ 100॥

जब कोयल का बच्चा अपनी बोली बोलता हुआ चला, तब दौड़कर अपने परिवार में ही जा मिला। कौआ व्याकुल होकर उस कोयल के बच्चे के पीछे दौड़ा, परंतु जब उसको नहीं पाया तो वह थक गया। फिर कौआ मूर्छित हो गया और चेत आने पर मन-ही-मन पछताता हुआ अपने घर आया। कोयल का बच्चा अपने तात, अर्थात माता-पिता से मिला तथा कौआ झक-मारकर (व्यर्थ परिश्रम करके विवश-व्याकुल होकर) रह गया।

॥ सोरठा ॥

जस कोइल सुत होय, यहि विधि मोकहं जीव मिले।
निज घर पहुंचे सोय, वंश इकोत्तर तारउ॥ 104॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि जैसे कोयल का बच्चा होता है कि वह कौए के पास रहकर भी उसका साथ छोड़कर अपने घर-परिवार में मिल जाता है, इसी प्रकार जीव मुझको मिले, अर्थात सांसारिक मोह छोड़कर मुझसे आ मिले। तब वह अपने घर-सत्यलोक पहुंचे और मैं उसके एक सौ एक वंश को तार दूं।

॥ चौपाई ॥

कोइल सुत जस शूरा होई। यहि विधि धाय मिलै मुहिं कोई॥
निज घर सुरति करै जो हंसा। तारौं ताहि एकोत्तर बंसा॥

जैसे कोयल का बच्चा बुद्धिमान शूरवीर होता है कि कौए को छोड़कर निज परिवार में आ मिलता हैं, इसी प्रकार कोई जीव दौड़कर मुझे मिले। उस भांति जो जीव निज घर (सत्यलोक) की सुरति करे, तो मैं उसके एकोतर (एक सौ एक) वंश को तार दूं।

हंस लक्षण

॥ चौपाई ॥

काग गवन बुधि छांड़हु भाई। हंस दशा धरि लोकहि जाई॥
बोले काग न काहू भावे। कोइल वचन सबै सुख पावे॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे भाई! कौए की नीच चाल एवं नीच बुद्धि

को छोड़कर, हंस-रहनि (शुभ कर्म, शील स्वभाव, सत्याचरण एवं सद्गुण संपन्न) की उत्तम दशा को धारण कर जीव सत्यलोक जाएगा।

कौआ बोलता है, परंतु वह किसी को नहीं भाता और कोयल की मधुर वाणी सुनकर सब सुख पाते हैं।

॥ चौपाई ॥

असहंसा बोले बिलछानी। प्रेम सुधा सम गहु गुरुबानी॥
काहू कुटिल वचन नहिं कहिये। शीतल दशा आप गहि रहिये॥

कोयल की भांति ऐसे हंस-जीव निर्णायक वाणी विचारपूर्वक बोले। प्रेम-अमृत के समान इस गुरुवाणी को ग्रहण करो। किसी को कठोर-कपटी वचन मत कहिए और अपनी शीतल-दशा ग्रहण करके रहिए।

॥ चौपाई ॥

जो कोई क्रोध अनल सम आवै। आप अम्बु ह्वै तपन बुझावै॥
ज्ञान अज्ञान की यहि सहिदानी। कुटिल कठोर कुमति अज्ञानी॥
प्रेम भाव शीतल गुरु ज्ञानी। सत्य विवेक सन्तोष समानी॥

जो कोई अग्नि की भांति क्रोध में भरकर सामने आए, तो आप शीतल जल के समान होकर उसकी तपन को बुझाए, ज्ञान-अज्ञान की यही पहचान है। जो अज्ञानी होता है, वही कपटी, उग्र तथा दुष्ट-बुद्धि वाला होता है। गुरु-ज्ञानी शीतल प्रेम-भाव से पूर्ण होता है और उसमें सत्य, विवेक एवं संतोष आदि सद्गुण समाए होते हैं।

ज्ञानी का लक्षण

॥ चौपाई ॥

ज्ञानी सोइ कुबुद्धि नशावे। मन का अंग चीन्ह बिसरावे॥
ज्ञानी होय कहै कटु बानी। सो ज्ञानी अज्ञान बखानी॥

ज्ञानी वही है जो झूठ-पाप-अनाचार आदि दुर्गुणों से युक्त दुष्ट-बुद्धि को नष्ट करे और मन के रूप को पहचानकर उसे भुला दे, अर्थात उसकी ओर से अपना ध्यान हटा ले। जो ज्ञानी होकर कटु (कड़ुवी) वाणी बोलता है, वह ज्ञानी अज्ञान बखानता है, अत: उसे अज्ञानी मानना चाहिए।

॥ चौपाई ॥

शूर कांछ कांछे जो प्रानी।सन्मुख मरे सुजस तब जानी॥
तिहि विधि ज्ञान विचार मन आनी।ताकहं कहू ज्ञान सहिदानी॥

जो मनुष्य शूरवीर की भांति धोती का छोर खोंसकर लड़ने को तैयार होता है और रणक्षेत्र में आमने-सामने जाकर मरता है, तब उसका सुंदर यश (कीर्ति) होता है तथा वह सच्चा वीर कहलाता है। इसी प्रकार जीवन में अज्ञान-जनित समस्त पाप-बुराई एवं दुर्गुणों को परास्त कर, ज्ञान-विज्ञान मन में आए, उसको ज्ञान की पहचान कहो।

॥ चौपाई ॥

मूरख हिये कर्म ना सूझे। सार शब्द नहिं गुरु कहं बूझे॥
चक्षुहीन पग विष्ठा परई। हांसी तासु कोइ नहिं करई॥
दृगन अछत पग धरै कुठाई। ताकहं दोष देइ नर आई॥

मूर्ख (अज्ञानी) के हृदय में शुभ-सत्कर्म नहीं सूझता और वह सद्‌गुरु का सार शब्द एवं सद्‌गुरु को नहीं समझता (अत: मूर्ख को प्राय: कोई कहता-समझाता नहीं)। नेत्रहीन का पांव यदि विष्ठा (मैला) पर पड़ जाए तो कोई उसकी हंसी नहीं करता। आंख होते हुए यदि पांव गंदी जगह पर पड़ जाए तो मनुष्य आकर उसको दोष देते हैं।

॥ चौपाई ॥

धर्मदास अस ज्ञान अज्ञाना। परखे सत्य शब्द गुरु ध्याना॥
सर्व मांह है आप निवासा। कहीं गुप्त कहीं प्रगट प्रगासा॥
सबसे नमन अंश निज जानी। गही रहै गुरु भक्ति निशानी॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! ऐसा ज्ञान और अज्ञान है, अर्थात ज्ञान-अज्ञान एक-दूसरे के विपरीत हैं। ज्ञानी गुरु का ध्यान करे और गुरु के सत्य-शब्द को परखे। सबमें आप-सत्यपुरुष का वास है, वह कहीं गुप्त तो कहीं प्रकट प्रकाशमान है[1]। सबको अपना अंश जानकर, अर्थात जैसा मैं आत्मा हूं वैसा सर्व-जीवात्माओं को समझकर, समान-भाव से सबसे नमन (प्रणाम) करे, यह गुरु-भक्ति की निशानी (पहचान) धारण करके रहे।

॥ छंद ॥

रंग काचा कारणें प्रह्लाद, कस दृढ़ ह्वै रह्यो।
यद्यपि तेहि बहु कष्ट दीन्हों, अडिग हो हरिगुण गह्यो॥
अस धारणा धरि सतगुरु गहे, तब हंस होय अमोल हो।
अमरलोक निवास पावे, अटल होय अडोल हो॥ 101॥

रंग कच्चा होने के कारण, अर्थात देह को नाशवान् समझ लेने पर प्रह्लाद,

---

1. सत्यपुरुष आप सबमें विराजमान हैं तथा कहीं गुप्त तो कहीं प्रकट प्रकाशमान हैं। सद्‌गुरु कबीर साहिब कहते हैं—

सब घट मेरा सांइया, सूनी सेज न कोय।
बलिहारी वा घट्ट की, जा घट परगट होय॥

सद्‌गुरु कबीर साहिब की निम्नांकित साखी में सत्यपुरुष का परिचय इस प्रकार दर्शाया है—

लाली मेरे लाल की, जित देखूं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल॥

अत: सर्वत्र सबमें उसका प्रकाश जानकर, सबके साथ प्रेमवत् अपनत्व का व्यवहार करना चाहिए।

अपने सत्य-संकल्प में कैसे दृढ़ होकर रहे ? यद्यपि उसके पिता हिरण्यकशिपु ने उसको बहुत कष्ट दिए, तथापि प्रह्लाद ने अडिग होकर हरि-गुण (प्रभु-भक्ति) ग्रहण किया। ऐसी प्रह्लाद की सुदृढ़ धारणा धरकर यदि सद्‌गुरु (सत्यपुरुष) को ग्रहण करे, अर्थात सब मोह त्यागकर निरंतर भक्ति-साधना करे, तब जीव अमूल्य हो। तब वह अमरलोक में निवास पाए और अटल होकर स्थिर हो एवं आवागमन से मुक्त हो।

परमार्थ वर्णन

॥ सोरठा ॥

भर्म तजे यम जाल, सतनाम लौ लावई।
चले सत्त की चाल, परामारथ चित्त दै गहे॥ 105॥

सर्व-अज्ञान और काल-जाल को छोड़े तथा लगन लगाकर सत्यनाम का सुमिरन करे। असत्य को छोड़कर, सत्य की चाल चले और चित्त देकर परमार्थ (परोपकार एवं अध्यात्म-ज्ञान-साधना) ग्रहण करे।

परमार्थी गऊ का दृष्टांत

॥ चौपाई ॥

गऊ को जानु परमार्थ खानी। गऊ चाल गुण परखहु ज्ञानी॥
आपन चरे तृण उद्याना। अंचवे जल दे क्षीर निदाना॥

गऊ को परमार्थ की खानि जानो। हे ज्ञानी संत! गऊ की चाल एवं गुण को परखो। गऊ खेत-उद्यान में घास चरती है, जल पीती है और अंत में दूध देती है।

॥ चौपाई ॥

तासु क्षीर घृत देव अघाहीं। गौ सुत परके पोषक आहीं॥
विष्ठा तासु काज नर आवे। नर अघ कर्मी जन्म गंवावे॥

उसके दूध-घी से देवता एवं मनुष्य तृप्त होते हैं। गऊ के बच्चे दूसरों का पोषण (पालन करने वाले) होते हैं। उसका गोबर मनुष्य के बहुत काम आता है। परंतु पाप-कर्म करने वाले मनुष्य अपना अनमोल मनुष्य-जन्म यूं ही गंवाता है।

॥ चौपाई ॥

टीका पुरे तब गौ तन नासा। नर राक्षस तन ले तिहि ग्रासा॥
चाम तासु तन अति सुखदाई। एतिक गुण इक गोतन भाई॥

आयु पूरा होने पर तब गऊ का शरीर नष्ट हो जाता है। मनुष्य राक्षस आदि उसके शरीर को लेकर खाते हैं। मरने पर भी उसके शरीर का चमड़ा मनुष्य के लिए बहुत सुख देने वाला होता है। हे भाई! आरंभ से अंत तक एक गऊ के शरीर में इतने गुण होते हैं।

परमार्थी संत लक्षण

॥ चौपाई ॥

गौ सम सन्त गहै यह बानी। तो नहिं काल करै जिव हानी॥
नर तन लहि अस बुद्धि होई। सतगुरु मिले अमर ह्वै सोई॥

उपर्युक्त वर्णित गाय के समान गुण वाला होने का यह वाणी-उपदेश संत पुरुष ग्रहण करे, अर्थात संत गाय के समान परोपकारी हो, तो काल जीव की हानि नहीं कर सकता। मनुष्य शरीर पाकर जिसकी ऐसी शुद्ध-बुद्धि हो और सदगुरु से मिले, तो वह अमर हो जाए, अर्थात भव-जंजाल से छूटकर निज स्वरूप को प्राप्त हो।

॥ चौपाई ॥

सुनि धर्मनि परमारथ बानी। परमारथ ते होय न हानी॥
पद परमारथ सन्त अधारा। गुरुगम लेइ सो उतरे पारा॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! परमार्थ की वाणी-उपदेश सुनो, परमार्थ से कभी हानि नहीं होती। संत परमार्थ-पद का आधार ले और गुरु-ज्ञान को लेकर संसार-सागर से पार हो।

॥ चौपाई ॥

सत्य शब्द को परिचय पावे। परमारथ पद लोक सिधावे॥
सेवा करे बिसारे आपा। आपा थाप अधिक संतापा॥

मनुष्य जीवन रहते पहले मेरे सत्य-शब्द का परिचय-ज्ञान पाए, फिर परमार्थ-पद को प्राप्त हो, तो वह सत्यलोक को जाए। अहंकार को बिसार दे अर्थात मिटा दे और निष्काम सेवा करे। जो अपने धन, बल, कुल एवं ज्ञान आदि किसी भी प्रकार का अहंकार रखता है, वह बहुत अधिक दुख पाता है।

॥ चौपाई ॥

यह नर अस चातुर बुधिमाना। गुण शुभ कर्म कहै हम ठाना॥
ऊंच क्रिया आपन सिर लीन्हा। औगुण करे कहे हरि कीन्हा॥

यह मनुष्य ऐसा चतुर-बुद्धिमान है कि सद्गुण एवं शुभ-कर्म होता है तो कहता है कि मैंने किया। ऊंची (श्रेष्ठ) क्रिया को अपने सिर लेता है और अवगुण (निम्न-कर्म) करता है तो कहता है कि यह हरि (ईश्वर-भगवान) ने किया।

॥ चौपाई ॥

ताते होय शुभ कर्म विनाशा। धर्मदास पद गहो निराशा॥
आशा एक नाम की राखे। निज शुभ कर्म प्रगट नहिं भाखे॥

उससे शुभ-कर्म का नाश हो जाता है। हे धर्मदास! सब आशाओं को छोड़कर तुम निराश (उदास-विरक्त) पद को ग्रहण करो। आशा तो केवल एक सत्यनाम की रखे और अपने किए शुभ-कर्म को प्रकट न कहे।

***विशेष**—सांसारिक-आशाओं में फंसा जीव सदा दुखी रहता है। अतः सद्गुरु कबीर साहिब समझाते हुए कहते हैं—*

आस एक गुरुनाम की, दूजी आस निवार॥
दूजी आसा मारसी, ज्यौं चौपर की सार॥

अर्थात, आशा तो केवल एक गुरु-नाम की रखो, दूसरी आशाओं को छोड़ दो। दूआशा दांव पाकर ऐसे मारेगी, जैसे चौपड़ की गोट (आशाएं चौपड़ के खेल की गोट जैसी हैं)।

॥ चौपाई ॥

गुरुपद रहे सदा लौलीना। जैसे जल महं बिहरत मीना॥
गुरु के शब्द सदा लौ लावे। सत्यनाम निशि दिन गुण गावे॥

सब देवी-देवों से परे सर्वोपरि गुरुपद है, उसमें सदा लवलीन रहे। जैसे जल में अभिन्न-रूप से मछली घूमती है, वैसे गुरु-चरणों में मग्न रहे। गुरु के शब्द में सदा लगन लगाए और रात-दिन सत्यनाम का सुमिरन तथा सत्यपुरुष के गुण गाए।

॥ चौपाई ॥

जैसे जलहि न बिसरे मीना। ऐसे शब्द गहे परवीना॥
पुरुष नाम को अस परभाऊ। हंसा बहुरि न जग महं आऊ॥
निश्चय जाय पुरुष के पासा। कूर्म कला परखऊ धर्मदासा॥

जैसे मछली कभी जल को नहीं भूलती, ऐसे ही चतुर शिष्य गुरु के शब्द को ग्रहण करे, उसे कभी भूले नहीं। सत्यपुरुष के सत्यनाम का ऐसा प्रभाव है कि हंस (जीव) फिर संसार में नहीं आता, अर्थात आवागमन से मुक्त हो जाता है।

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! सत्यपुरुष के नाम-प्रभाव से हंस फिर निश्चय सत्यपुरुष के पास जाता है। तुम कछुए के बच्चे की कला (गुण) को परखो एवं समझो—

कछुई जल से बाहर आकर रेत अथवा मिट्टी में गड्ढा खोदकर अण्डे देती है और उन अण्डों को मिट्टी से ढककर फिर पानी में चली जाती है। परंतु पानी में रहते हुए भी कछुई की सुरति (ध्यान) निरंतर अण्डों से लगी रहती है। वह सुरति से ही अण्डों को सेती है। समयानुसार अण्डे पुष्ट होते हैं, फूटते हैं और उनमें से बच्चे बाहर निकल आते हैं। मां कछुई अपने उन बच्चों को बाहर लेने नहीं आती। बच्चे स्वयं पानी में चले जाते हैं और अपने परिवार में मिल जाते हैं।

॥ छंद ॥

जिमि कमठ बाल स्वभाव तिमि, मम हंस निज घर धावई।
यमदूत हों बलहीन देखत, हंस निकट न आवई॥

हंस निर्भय निडर गाजई, सत्यनाम उच्चारई।
हंस मिलि परिवार निज, यमदूत सब झख मारई॥ 102॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि जैसे कछुए के बच्चे अपने स्वभाव से अपने परिवार में जाकर मिल जाते हैं, वैसे मेरे हंस (जीव) अपने घर-सत्यलोक को दौड़ चलें। उनको सत्यलोक जाते हुए देखकर यमदूत बलहीन हो जाएंगे तथा वे उनके पास नहीं आएंगे। हंस निर्भय-निडर गरजते एवं हर्षित होते हुए और सत्यनाम का उच्चारण करते हुए चलें। अपने परिवार (सत्यलोक के हंस) में जाकर मिलें, यमदूत सब यूं ही झख मारते रहेंगे, अर्थात पछताते रह जाएंगे।

॥ सोरठा ॥

आनंद धाम अमोल, हंस तहां सुख बिलसहीं।
हंसहि हंस कलोल, पुरुष कान्ति छबि निरखहीं॥ 106॥

सत्यलोक आनंद का धाम अनमोल एवं अनुपम है। वहां हंस जाकर परम-सुख भोगते हैं। हंस से हंस मिलकर आपस में केलि-क्रीड़ा करते हैं और सत्यपुरुष की अद्भुत कांति-छवि को निरखते (देखते) हैं।

ग्रंथ की समाप्ति

॥ छंद ॥

अनुराग सागर ग्रंथ कथि तोहि, आगम गम्य लखाइया।
पुरुष लीला काल को छल, सब बरणि सुनाइया॥
रहनि गहनि विवेक बानी, जौहरी जन बूझिहै।
परख बानी जो गहे तेहि, अगम मारग सूझिहै॥ 103॥

सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! अनुराग सागर ग्रंथ को कहकर, मैंने तुमको अगम एवं गम्य दोनों का ज्ञान लखा दिया है। सत्यपुरुष की लीला और काल-निरंजन का छल सब वर्णन कर सुनाया है। रहनी-गहनी तथा विवेक-विचार की वाणी को, कोई जिज्ञासु-जौहरी सज्जन ही समझेगा। अनुराग सागर की वाणी (उपदेश) को जो परखकर ग्रहण करेगा, उसे अगम का मार्ग सूझेगा।

ग्रंथ का सार निचोड़

॥ सोरठा ॥

सतगुरु पद परतीति, निश्चल नाम सुभक्ति दृढ़।
संत सती की रीति, पिया कारण निज तन दहै॥ 107॥

जिसका सद्गुरु के चरण-कमलों में विश्वास है, अर्थात सत्यज्ञान प्रदाता सच्चे सद्गुरु, सद्गुरु कबीर साहिब एवं सद्गुरु स्वामी सत्यपुरुष के चरण कमलों

और निश्चल सत्यनाम पर विश्वास है तथा इनके प्रति सुंदर भक्ति सुदृढ़ है, वह संत एवं सती की रीति का अनुसरण करे, जैसे संत अपने इष्ट-सद्गुरु के प्रति त्याग-वैराग्य धारण कर, उसका नाम पुकार-पुकार कर नित्य प्रति स्वयं को जलाता है और सती अपने पति-प्रेम में अपना शरीर अग्नि में जलाती है (सती हो जाती है)।

॥ सोरठा ॥

सतगुरु पिया अमान, अजर अमर विनशै नहीं।
कह्यो शब्द परमान, गहे अमर सो अमर हो ॥ 108 ॥

सद्गुरु स्वामी (सत्यपुरुष) अनुमान से परे असीम है। वह अजर-अमर है, वह कभी नष्ट नहीं होता। उसके बारे में जो शब्द कहा है, वह प्रामाणिक एवं टकसार है। जो उस अमर-अविनाशी सत्यपुरुष को ग्रहण करेगा, वह भी अमर होगा।

॥ सोरठा ॥

सन्त धरे तिहि आस, गहे जीव अमरहिं तहां।
चित चेतो धर्मदास, सतगुरु चरणन लीन रहु ॥ 109 ॥

संतजन उस सत्यपुरुष की आशा करते हैं। जो जीव उसको ग्रहण करता है, अर्थात उसकी अनन्य भक्ति-साधना करता है, वह उसके सत्यलोक जाता है तथा वहां अमर हो जाता है। सद्गुरु कबीर साहिब कहते हैं कि हे धर्मदास! अपने चित्त से सचेत हो जाओ और भली प्रकार समझो तथा उस सद्गुरु स्वामी के चरणों में सदा लीन रहो।

॥ सोरठा ॥

मन अलि कमल बसाव, सतगुरु पद पंकज रुचिर।
गुरु चरणन चित लाव, इस्थिर घर तबहीं मिले ॥ 110 ॥

जैसे भंवरा कमल पर बसता है, वैसे अपने मन-भौंरा को सद्गुरु स्वामी के सुंदर चरण-कमलों में बसाओ। इस प्रकार गुरु के चरणों में चित्त लगाओ, तब अपना स्थिर-घर (शाश्वत एवं चैतन्य सत्यलोक) मिलेगा।

॥ सोरठा ॥

शब्द सुरति करु मेल, शब्द मिले सतपुर चले।
बुन्द सिन्धु का खेल, मिले तो दूजा को कहै ॥ 111 ॥

शब्द एवं सुरति का मेल करो, अर्थात शब्द-सत्यपुरुष और सुरति-जीव का मेल करो। जब सुरति-जीव शब्द-सत्यपुरुष से मिले, तब जीव सत्यलोक चलेगा। यह बूंद-सिंधु के मिलने का खेल जैसा है, यदि बूंद-रूपी जीव नाम-रूप मिटाकर सागर-रूपी सत्यपुरुष से मिल जाए, तो उन दोनों को दूसरा कौन कहेगा।

॥ सोरठा ॥

शब्द सुरति का खेल, सतगुरु मिलै लखावई।
सिन्धु बुन्द को मेल, मिलै तो दूजा को कहै॥ 112॥

शब्द-सत्यपुरुष और सुरति-जीव के मिलन का खेल, सद्‌गुरु मिले तो दिखला सकता है, अर्थात भली-भांति समझा सकता है। जैसे सिंधु-बूंद का मेल हो जाने पर वे एक हो जाते हैं और कोई उन्हें दूसरा नहीं कह सकता, वैसे शब्द-सुरति का मेल हो जाने पर, उन्हें कोई दूसरा नहीं कह सकता।

॥ सोरठा ॥

मन की दशा बिहाय, गुरु मारग निरखत चले।
हंस लोक कहं जाय, सुख सागर सुख सों लहै॥ 113॥

मन की दशा तो चलायमान एवं मर्यादाहीन है, अत: उसके अनुसार मत चलो। गुरु के ज्ञान-मार्ग पर देखते हुए सचेत होकर चलो। इस प्रकार हंस-जीव सुख के सागर सत्यलोक को जाता है और परम सुख प्राप्त करता है।

॥ सोरठा ॥

बुन्द जीव अनुमान, सिन्धु नाम सतगुरु सही।
कहैं कबीर प्रमान, धरमदास तुम बूझहू॥ 114॥

अनुमान से जीव को बूंद के समान समझो और सिंधु नाम सद्‌गुरु-सत्यपुरुष को मानो। सद्‌गुरु कबीर साहेब कहते हैं कि हे धर्मदास! बूंद एवं सिंधु के मिलन की यह बात प्रामाणिक तथा कल्याणप्रद है, तुम इसे भली-भांति समझो। जैसे—बूंद समुद्र में मिल जाती है तो उसका नाम-रूप नहीं रहता, सब समुद्रमय हो जाता है, वैसे सत्याचरण एवं भक्ति-साधना के द्वारा जीव (हंस) सत्यपुरुष में समाकर मोक्ष-स्थिति को उपलब्ध हो जाता है।

❑❑

सत्यनाम
सद्गुरवे नमः

सामान्य उपदेश

अंतर याहि बिचारिया, साखी कही कबीर।
भौसागर में जीव है, सुनिके लागे तीर॥ 1॥

सद्गुरु कबीर साहेब ने हृदय में यही विचारकर साखी कही कि भवसागर दुखित जीव है, सुनकर पार हो जाए।

गुरु को कीजै दण्डवत, कोटि कोटि परनाम।
कीट न जानै भृंग को, गुरु करिले आप समान॥ 2॥

गुरु को दण्डवत कीजिए और करोड़ों बार प्रणाम करो। जैसे कीट भृंग को नहीं जानता, परंतु भृंग उसे अपने समान बना लेता है, वैसे-ही गुरु सत्यज्ञान से शिष्य को अपने समान बना लेता है।

गुरु गोविन्द करि जानिये, रहिए शब्द समाय।
मिलै तो दण्डवत बन्दगी, नहिं पल-पल ध्यान लगाय॥ 3॥

गुरु को ईश्वर के समान जानिए, उसके शब्द-उपदेश में समाकर रहो। यदि गुरु मिल जाए तो दण्डवत-बंदगी करो, नहीं तो पल-पल उसका ध्यान लगाओ।

जा मानुष गृहि धर्म युत, राखै शील विचार।
गुरुमुख बानी साधु संग, मन बच सेवा सार॥ 4॥

जो मनुष्य गृहस्थ-धर्म में युक्त, शील विचार रखता है। गुरुमुख-वाणी का श्रवण, आचरण एवं संतों का सत्संग करता है और मन-वचन से सार-सेवा करता है, वह धन्य है (उसका कल्याण अवश्य होता है)।

जीवन जोबन राजमद, अविचल रहै न कोय।
जु दिन जाय सतसंग में, जीवन का फल सोय॥ 5॥

जीवन, यौवन और राज्य-संपत्ति का अहंकार आदि, कोई स्थिर नहीं रहता। जो दिन सत्संग में बीत जाए, वही जीवन का फल है।

क्यों खोवे नरतन वृथा, परि विषयन के साथ।
पांव कुल्हाड़ी मारही, मूरख अपने हाथ॥ 6॥

सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे मानव! काम, क्रोध एवं लोभ आदि विषयों के संग पड़कर, अनमोल मानव-शरीर को व्यर्थ में क्यों खोता है? ऐसे तो हे मूर्ख! तू अपने हाथ से अपने ही पांव पर कुल्हाड़ी मार रहा है।

मानुष जन्म नर पायके, चूके अबकी घात।
जाय परे भवचक्र में, सहे घनेरी लात॥ 7॥

हे मनुष्य! अपना यह मनुष्य-जन्म पाकर, यदि तुम अबकी बार चूक गए, तो फिर संसार-चक्र (आवागमन) में जा पड़ोगे और बहुत दुखों की मार सहोगे।

मानुष जन्म दुर्लभ है, बहुरि न दूजी बार।
पक्का फल जो गिर पड़ा, बहुरि न लागै डार॥ 8॥

मनुष्य-जन्म दुर्लभ (अनमोल) है, फिर दूसरी बार नहीं मिलता। जैसे—जो पका हुआ फल टूटकर गिर पड़ा, फिर डाल पर नहीं लगता।

मानुष तेरा गुण बड़ा, मांस न आवै काज।
हाड़ न होते आभरण, त्वचा न बाजण बाज॥ 9॥

हे मनुष्य! तेरा गुण (ज्ञान) बड़ा है, तेरे शरीर का मांस किसी काम नहीं आता। हाड़ (हड्डियां) आभूषण नहीं होते और त्वचा का बाजा नहीं बजता।

मानुष सोई जानिये, जाहि विवेक विचार।
जाहि विवेक विचार नहिं, सो नर ढोर गंवार॥ 10॥

यथार्थ में मनुष्य उसी को जाने, जिसे विवेक एवं विचार है। परंतु जिसमें विवेक-विचार का गुण नहीं है, वह मनुष्य तो पशु एवं गंवार (मूर्ख) है।

आछे दिन पाछे गये, गुरु सों किया न हेत।
अब पछितावा क्या करै, चिड़ियां चुगि गइ खेत॥ 11॥

सत्संग-भक्ति के सब शुभ दिन बीत गए, तब सद्गुरु से प्रेम नहीं किया। अब पछतावा करने से क्या? जब काम-मोहादि विषय रूपी चिड़ियां शरीर रूपी खेत चुग गईं।

चेत सबेरे बावरे, फिर पीछे पछिताय।
तोको जाना दूर है, कहैं कबीर बुझाय॥ 12॥

सद्गुरु कबीर साहेब समझाते हुए कहते हैं कि हे बावले! तू शीघ्र चेत जा, अर्थात सावधान हो ज्ञान प्राप्त कर ले, अन्यथा फिर पीछे पछताएगा। ध्यान कर कि तुझे बहुत दूर (भवसागर से पार) जाना है।

❑ ❑ ❑